नारी-निन्दा मत करो, नारी नर की खान ·
नारी ते नर होत हैं, ध्रुव-प्रह्लाद समान

यह छोटी सी पुस्तिका भारतकी माताओं और बहनों के लाभार्थ लिखी गयी है। यद्यपि यह देखनेमें बहुत ही छोटी है, पर स्त्रियोपयोगी ऐसा कोई प्रधान विषय नहीं, जो इसमें न आया हो। बाल-शिक्षा, गृह-कार्य, घरवालोंके साथ बर्ताव सन्तान-पालन रोग-चिकित्सा, व्यंजन बनानेकी रीति आदि सभी विषयों-पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। पुस्तक कैसी है क्या है, यह लिखने का मुझे अधिकार नहीं। भला अपनी रचना किसे प्यारी नहीं लगती? अतः इसका निर्णय विदुषी पाठिकायें ही करें कि पुस्तिका कैसी है।

किन्तु इतना तो मुझे भी कहना ही पड़ता है कि यदि मातायें और बहनें इसे एकबार आद्योपान्त पढ़नेका कष्ट करेंगी, तो वे अवश्य ही यह निष्कर्ष निकालेंगी कि प्रत्येक घरमें इस पुस्तककी एक प्रति अवश्यमेव रहनी चाहिये। अस्तु। भूमिकाकी उलझनमें फँसा कर पाठिकाओंके आगे पढ़नेमें विलम्ब करना सर्वथा अनु-चित समझ, अब क्षमा मांगना ही उचित जान पड़ता है। यदि यह पुस्तक स्त्री-समाजका कुछ भी उपकार पहुंचा सकी, तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगी।

—लेखिका

द्वितीय संस्करण की भूमिका

यदि प्रथम संस्करण की प्रतियां समाप्त होते ही "नारी-धर्म-शिक्षा" छापाई गयी होती तो अबतक कदाचित इसका तीसरा संस्करण छपता किन्तु एक अनिवार्य कारण-वश प्रकाशक महोदयको छपानेमें विलंब हुआ। तथापि साहित्य जगत्में इस पुस्तक को प्राप्त करनेके लिये अधिक उत्सुकता होनेके कारण यही आशा है कि प्रकाशन-विलम्ब कोई विशेष क्षतिकर न होगा। हमारी बहनें अधिकाधिक संख्या में इस पुस्तक से लाभ उठावें एवं तदनुकूल आचरण करने का अभ्यास करें, तभी मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगी।

माघ कृष्ण ५ सं० १९८८
मिर्जापुर मंडलान्तर्गत

—लेखिका

सम्मतियाँ

'नारी-धर्म-शिक्षा" के सम्बन्धमें हिन्दी जगत्के सुपरिचित श्रीयुत प्रेमचन्द्रजीने ठीक ही लिखा था कि "जो देवियां अपनी कन्याओंको फैशनेबुल लेडी नहीं, सहधर्मिणी बनाना चाहती हैं उन्हें इस किताबसे बड़ी सहायता मिलेगी।" वास्तवमें पुस्तक बड़ी ही उपयोगी है। नीति, स्वास्थ्य गृह-चिकित्सा, सन्तान-पालन हिसाब-किताब, चिट्ठी-पत्री आदि विषयोंमें किन्तु स्पष्ट लिखकर श्रीमती लेखिका महोदयाने पुस्तककी उपयोगिता बहुत अधिक बढ़ा दी है। दुख है कि अबतक ऐसी उपयोगी पुस्तक कन्या-विद्यालयों की ऊँची कक्षाओं में नहीं रखी गई। इससे बालिकाओंका विशेष उपकार होता।

—पार्वती दे

नारी-धर्म-शिक्षा—श्रीमती मनव्रता देवी ने इस पुस्तक में स्त्रियों के जानने के योग्य प्रायः सभी बातों का समावेश करनेका प्रयत्न किया है । पुस्तक सात अध्यायों में विभक्त है किसी भी सदाचारिणी स्त्री को पति तथा उसके अन्य कुटुम्बियों के साथ कैसा बर्ताव करना चाहिये और वह अपने परिवार एवं सन्तान आदि को किस तरह सुखी एवं हृष्टपुष्ट बना सकती है. इन सब बातों पर इसमें विस्तार के साथ विचार किया गया है । पुस्तक उपयोगी है। इसके प्रकाशक हैं श्रीयुत एस० बी० सिंह ऐण्ड को० बनारस सिटी। "सरस्वती" १९२९ अप्रैल।

नारी-धर्म-शिक्षा—लेखिका श्रीमतीमनव्रतादेवी तथा प्रकाशक एस० बी० सिंह एण्ड को बनारस सिटी पृष्ट संख्या १६२। मूल्य १।)

श्रीमती जी के प्रतिभा का फल-स्वरूप नारीधर्म-शिक्षा हमारे सामने है। यद्यपि यह पुस्तक सिर्फ १६२ पृष्टों की ही है पर स्त्रि-योपयोगी ऐसा कोई प्रधान विषय नहीं जो इसमें न आया हो। बाल-शिक्षा. गृहकार्य घरवालों के साथ वर्ताव, सन्तान-पालन रोग चिकित्सा व्यंजन बनाने की रीति पतिसेवा आदि सभी विषयों पर बड़ी खूबी के साथ प्रकाश डाला गया है। पुस्तक इतने काम की है कि यदि मातायें व बहिने इसे एक बार आद्योपान्त तक पढ़ने का कष्ट उठावेंगी तो वे अवश्य यही निष्कर्ष निकालेंगी कि प्रत्येक घरमें इस पुस्तक की एक दो प्रति अवश्यमेव रहनी चाहिये।

श्रीमती जी पहिली स्त्री-रत्न हैं जिन्होंने इस शैली की पुस्तक की रचना की है। इस पुस्तक को बनाकर आपने स्त्री-समाज का जो उपकार किया है वह अवर्णनीय है। हमें पूरी आशा है कि हिन्दी संसार अवश्य नारी-धर्म-शिक्षा" का समुचित आदर करेगा।

"मनोरमा" फरवरी १९२९

विषय-सूची

* पृष्ठ १०० से पाचवां अध्याय समझना चाहिए।

उपक्रम

"का तव कान्ता कस्ते पुत्रः
संसारोऽयमतीव विचित्रः।"

अर्थात् " कौन तुम्हारी स्त्री है और कौन तुम्हारा पुत्र है ? यह संसार बड़ा ही विचित्र है।" यह कथन माया-वादी वेदान्तियोंका है जो संसारको मिथ्या समझते हैं। किन्तु जब हम इस संसारमें गार्हस्थ-जीवन बिता रहे हैं, तब हमारा यह कहना नहीं फबता और न इसके कहनेसे काम ही चल सकता है। ज़मीनपर रहकर बादल चाटनेकी कोशिश करना किस कामका ? यदि हम घर-गृहस्थी में रहते हैं, तो हमारा धर्म है कि हम उसको सुखमय बनाकर रहें। हमारा जीवन सुख-

मय तभी हो सकता है, जब घरकी मालकिनें समझदार हों। घरकी मालकिन हैं, औरतें। घरमें स्त्रियोंका राज्य रहता है। देखिये, एक अंग्रेज विद्वान्ने क्याही अच्छा कहा है—

"The home is the woman's domain—her kingdom, where she exercises entire control."

—Smiles

घर स्त्रियोंका राज्य है। वे रानियोंकी भांति स्वतंत्र रूपसे इस राज्यका शासन करती हैं। जिस तरह राजामें राजकीय गुणोंका होना जरूरी है, उसी तरह स्त्रीमें गृहस्थाको ठीक रीतिसे चलानेका ज्ञान होना बड़ा ही आवश्यक है। इसलिए स्त्री-जातिको उचित उपदेशोंसे समझदार बनाये बिना संसारमें रहनेवाला कोई भी आदमी सुखी नहीं हो सकता।

गृह-सुख गृहिणीके ऊपर ही निर्भर है। अधिक धन रहनेसे घरकी बढ़िया व्यवस्था नहीं की जा सकती। बहुतसे धनीपात्रोंका घर श्री-हीन दिखायी पड़ता है, और कितने ही दरिद्रोंका घर मणिकी तरह जगमगाता देखनेमें आता है। बहुतसे घरोंमें एक-से-एक कीमती चीजें ऐसी हालतमें रहती हैं कि उन्हें छूनेका जी नहीं चाहता; बढ़िया-बढ़िया ताम्बा, कांसा और फूल आदिके बर्तन बिना मांजे-धोये रखे मालूम होते हैं। घरमें अनेक तरहकी चीजें भरी रहती हैं पर मौकेपर कोई चीज नहीं मिलती—बाजारसे मँगानी पड़ती है या कोई चीज खर्च हो जानेपर मँगानेकी याद नहीं रहती और ठीक अवसरपर उसे मंगानेके लिए दौड़-धूप होने

लगती है। किन्तु कुछ दरिद्र घर ऐसे भी होते हैं, जिनमें मामूली-से मामूली चीजें भी साफ-सुथरी रहनेके कारण भली मालूम होती हैं। घरमें थोड़ीसी चीजें रहती हैं, पर जरूरत के समय वही झोपड़ी भानुमतीकी पिटारी हो जाती है। इसका क्या कारण है? स्त्रीकी योग्यता। जिस घरकी देवियां शिक्षिता रहती हैं, उस घरमें सदा कुबेर टिके रहते हैं और जिस घरकी देवियां मूर्खा रहती हैं उस घरमें लाखोंकी सम्पत्ति रहनेपर भी भूतोंका डेरा पड़ा रहता है।

धनीके घरका लम्बा-चौड़ा खर्च रहता है, घी-दूध, साग-तरकारी तथा तरह-तरहकी चीजें छकी रहती हैं किन्तु घरमें चतुर गृहिणी न होनेके कारण भोजन ऐसा बनता है कि थालीकी ओर ताकनेमें भी दुःख मालूम होता है। कहीं नमक अधिक है, कहीं रोटी कच्ची जली है, कहीं चावल मांड़ हो गया है। किन्तु दरिद्र घरकी समझदार स्त्री सादा भोजन ही बनाती है और मन बरबस खिंच जाता है।

केवल धनसे संसारमें सुख नहीं मिलता। खासकर गृहिणीकी कुशलतापर ही संसारका सुख-दुःख निर्भर है। इसलिए माताओं और बहनोंको ऐसी शिक्षा देनी चाहिये, जिससे वे घरके काममें चतुर हो जायँ। उन्हें इस बातका ज्ञान हो जाय कि गृहस्थीकी सारी जिम्मेदारी स्त्री-समाजपर ही है, संसारकी बागडोर स्त्री-जातिके ही हाथमें है। वे उसे जिधर चाहें उधर घुमा सकती हैं। ऐसी दशामें स्त्री-शिक्षाकी बड़ी आवश्यकता है।

अब यह बात विचार करने लायक है कि स्त्री-शिक्षा पुरुषोंके ढङ्गकी होनी चाहिये या दूसरे तरहकी। हमारे विचारसे स्त्री-शिक्षामें कुछ विशेषता रहनी चाहिये। स्त्रियोंको घरके काम-काजकी शिक्षा मिलनी चाहिये। घरके लोगोंके साथ कैसा वर्ताव करना चाहिये, सन्तान-पालनकी क्या विधि है, आदि बातोंकी पूरी जानकारी होनी चाहिये। थोड़ा बहुत हिसाब-किताब जानना रामायण, महाभारत, सती-साध्वी देवियोंकी जीवनियां तथा सुन्दर उपदेश-प्रद पुस्तकें पढ़ानी चाहियें। अच्छी तरह लिखने और पढ़नेका अभ्यास कराना चाहिये।

कम अवस्थाकी लड़कियोंपर घरके खर्चका हिसाब लिखनेके लिए सौंप देना चाहिये। बालिकाओंको चाहिये कि वे इस बातपर सदा ध्यान रक्खें कि भंडारमें कौनसी चीज है और कौनसी नहीं, किस चीजका प्रतिदिन कितना खर्च है। बहुधा देखा जाता है कि स्त्रियां बराबर अपने हाथसे चावल, दाल, आटा, घी, तेल आदि खर्च किया करती हैं किन्तु महीनेमें कौनसी चीज कितनी खर्च हुई, यह पूछनेपर कुछ भी नहीं बतला सकतीं। लड़कपनमें इन बातोंकी शिक्षा देनेसे पतिके घर जानेपर वे अपनी बुद्धिमानीसे सबको वशमें कर सकती हैं।

दूसरा अध्याय

पति-पत्नी-सम्बन्ध

मनु महाराजने कहा है—जबतक कन्या पतिकी मर्यादा और सेवाकी महिमा न जान ले, अपने धर्मको पालनेका ज्ञान न प्राप्त कर ले, तबतक पिताको चाहिये कि उसका विवाह न करे। परन्तु दुःख है कि आजकल हिन्दू-समाजमें ऐसा नहीं हो रहा है। कुछ लोग तो शिक्षाका समय आनेसे पहले ही विवाह करके लड़कियोंको पतिके घर भेज देते हैं।

पति ही स्त्रीका सबकुछ है। पतिकी सेवा ही उसका एकमात्र धर्म है। पतिके सिवा स्त्रीके लिए दूसरा देवता नहीं। जो स्त्री अपने पतिकी देवताकी तरह पूजा करती है, सदा उसकी आज्ञा मानती है, वह इस लोकमें आनन्दसे जीवन बिताती है, संसारमें उसकी प्रशंसा होती है और अन्तमें मरनेके बाद उसे सुन्दर गति मिलती है। पतिपर भक्ति रखनेवाली स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न होनेवाले बच्चे भी तन्दुरुस्त तथा माता-पितापर श्रद्धा रखनेवाले होते हैं। ऐसे बच्चोंसे माता-पिताको सुख मिलता है।

विवाहसे ही गृहस्थीका आरम्भ होता है। विवाह एक महा-यज्ञ है। हिन्दुओंका विवाह केवल इन्द्रिय-सुखके लिए नहीं होता। विवाह, दो शरीरोंको एक करके, उत्तम सन्तान पैदा करने तथा लोक-परलोक सुधारनेके लिए होता है। विवाहके बिना शरीर आधा रहता है। पुरुष-स्त्रीका शरीर मिलकर पूरा शरीर बनता है। कोई भी मङ्गल-कार्य दोनोंको मिलकर किये बिना पूरा नहीं होता। इसीसे मनुजीने लिखा है—विवाहित स्त्री या पुरुषको अकेले यज्ञ-व्रत या उपवास आदि करनेका अधिकार नहीं—दोनों-को एक साथ करना चाहिये।

पतिको प्रसन्न रखनेके उपाय

पतिकी इच्छाके विरुद्ध कोई भी काम नहीं करना चाहिये। पतिसे कभी कोई बात छिपानी भी नहीं चाहिये। यदि पति किसी अनुचित कामसे प्रसन्न होता हो तो स्त्रीका धर्म है कि नम्रता-पूर्वक अपने पतिको उस अनुचित कामकी हानि दिखलाकर समझा दे। एकबार सत्यभामाने द्रौपदीसे पूछा—तुमने किन उपायोंसे अपने स्वामीको वश कर लिया, यह मैं जानना चाहती हूँ। द्रौपदीने कहा—मैंने किसी खास उपायसे पतिको वश नहीं किया है। मैं काम, क्रोध तथा अभिमानको छोड़कर दिन-रात पांडवों तथा उनकी स्त्रियोंकी सेवा किया करती हूँ। बड़े प्रेमसे पतियों-का मन प्रसन्न रखनेकी चेष्टा किया करती हूँ। सवेरे उठकर घर

धोना, वर्तन मांजना अपने हाथसे भोजन वनाना घरकी देख-रेख करना, स्वामियोंको आदरके साथ भोजन कराना मैं अपना धर्म समझती हूँ। मैं कभी भी किसीको कड़ी वात नहीं कहती, किसी काममें आलस नहीं करती, हंसी-दिल्लगी नहीं करती, रात-दिन पति-सेवामें प्रसन्न रहती हूँ।

पुरुषोंमें क्रोध जल्दी आता है इसलिए स्त्रियोंको चाहिये कि वे अपने स्वाभाविक कोमलतासे उसे दूर कर दें। यदि कभी किसी कारणसे स्वामी रूठ जायं अथवा नाराज होकर कोई कड़ी वात कह दें, तो शान्तिके साथ प्रसन्न रहकर उसे सहन कर लेना चाहिये। क्योंकि स्त्री तो अपने पतिसे अलग है ही नहीं। सहन-शीलता स्त्रियोंका प्रधान गुण है। जिस स्त्रीमें यह गुण नहीं होता, वह कभी अपने पतिको प्रसन्न नहीं रख सकती और पतिको खुश रक्खे विना स्त्रीका जीवन कभी सुखी नहीं हो सकता।

स्त्रीको भार्या और सहधर्मिणी कहते हैं। इससे मालूम होता है कि प्रत्येक स्त्रीको चाहिये कि वह अपने पतिको सदा धर्म-कार्यकी ओर झुकावे। किन्तु आजकल वहुधा ठीक इसका उल्टा हो रहा है। यदि पुरुष कोई अच्छा काम करना भी चाहता है तो स्त्री पैर पकड़कर पीछे खींचती है। ऐसा करना पतिव्रता स्त्रीका धर्म नहीं है। दूसरेकी भलाई करना दुखियाके दुःखमें शामिल होना परायेके लिए अपने सुखोंको छोड़ देना प्रत्येक स्त्री-पुरुष का धर्म है। यदि परोपकारके लिए अपने स्वामीसे हाथ धोना पड़े तो स्त्रीको कभी नहीं हिचकना चाहिये। वह स्त्री, स्त्री नहीं है जो

अपने पतिको धर्ममें प्रवृत्त न करे। स्त्रीका प्रत्येक कार्य स्वामीके लिए—स्वामीके यशके लिए होना चाहिए। जिस प्रकार शरीर स्वामीकी सेवाके लिए है, उसी प्रकार शृङ्गार भी स्वामीको प्रसन्न करनेके लिए है। अच्छे गुण ही स्त्रियोंके शृङ्गार हैं। किन्तु आज-कल अच्छे कपड़े और गहनेका स्त्री-समाजको रोग-सा हो गया है। वे पतिको प्रसन्न करनेके लिए ऐसा नहीं करतीं, बल्कि लोगों-को दिखलानेके लिए करतीं हैं। पुराने जमानेमें भारतकी स्त्रियां अपने पतिकी आज्ञा पाकर बढ़िया कपड़े और गहने पहनती थीं और पतिके विदेश चले जानेपर वे सब शृङ्गार त्यागकर सादगीसे रहती थीं। प्रत्येक पुरुष अपनी स्त्रीको सुन्दर देखना चाहता है, यह मामूली बात है। इसीसे दोनों एक दूसरेकी सजावटकी कोशिश किया करते हैं। यदि प्रेममें कमी न रहे तो वे एक दूसरे-की सुन्दरता बढ़ानेकी अपने-आप ही चेष्टा करेंगे। इसलिए ऐसी दशामें पतिसे गहने आदिके लिए कहना और उसके लिए हठ करना अधर्म है क्योंकि वह तो अपनी शक्ति-भर खुद ही पहनाने-का प्रयत्न करेगा कहनेकी क्या जरूरत। और फिर यह भी तो समझना चाहिये कि गहना है किसके लिए। असलमें गहना है पतिको प्रसन्न करनेके लिए। संसारको दिखलानेके लिए नहीं। ऐसी दशामें यदि पति गहना न दे, तो औरतको कभी नाराज नहीं होना चाहिये। स्त्रियोंका असली आभूषण है—कोमलता, दया, मधुर-भाषण, उदारता। जिसमें ये गुण न हों वह उत्तमसे-उत्तम गहने-कपड़े पहनकर भी सुन्दरी नहीं हो सकती। इसलिए

गहने और कपड़ेके लिए पतिको तङ्ग करना, रूठ जाना, खुद दुःख सहना और पतिको दुःख देना उचित नहीं हैं।

कुछ स्त्रियां अपने पतिको दरिद्र समझकर उनसे घृणा करती हैं। इसीसे साधारण बातोंपर वे कड़ी बातें कहकर फटकार दिया करती हैं। यह बहुत बुरी बात है। ऐसी स्त्रियां कभी भी सुखी नहीं-रहतीं। स्त्रियोंको सदा प्रसन्न रहना चाहिये। दरिद्र पतिसे घृणा करना भारी अपराध है। गुसाईं तुलसीदासने लिखा हैः—

" धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परखिये चारी॥ "

विपत्तिके समय साथ देनेवाली ही स्त्री है। इस बातपर ध्यान रखना चाहिये कि किसी भी मनुष्यकी अवस्था सदा एक-सी नहीं रहती। सुख और दुःखके जालसे मनुष्यका जीवन ज़कड़ा हुआ है। इसलिए सन्तोषके विना किसीको सुख नहीं मिल सकता। विपत्तिके समय पतिको उत्साहित करना चाहिये। दुःखके समय धीरज देना चाहिये। मनुजीने लिखा है कि पतिके दरिद्र होने या बीमार पड़नेपर जो स्त्री उससे नफरत करती है, वह बार-बार सूअरी, कुतिया या गिधनीका जन्म पाती है। किसी भी अवस्थामें पतिका साथ छोड़ना उचित नहीं। सुखमें तो सभी साथ देते हैं, किन्तु सच्चा मित्र वह है, जो दुःखमें साथ दे। पति-पत्नीका सम्बन्ध संसारमें सबसे बड़ा है। स्त्री अर्द्धांगिनी कही जाती है। यदि अपना ही अंग दुःखमें साथ न दे, तो इससे बढ़कर लाजकी बात और क्या हो सकती है?

देखिये, वन-यात्राके समय जगज्जननी जानकीजीकी क्या दशा हो गयी थी और उन्होंने क्या कहा थाः—

" सुनि मृदुवचन मनोहर पियके । लोचन ललित भरे जल सियके ॥
सीतल सिख दाहक भइ कैसे । चकइहि सरदचन्द निसि जैसे ॥
उतरु न आव विकल वैदेही । तजन चहत सुचि स्वामि सनेही ॥
बरबस रोकि बिलोचन बारी । धरि धीरज उर अवनिकुमारी ॥
लागि सासु पग कह करजोरी । छमबि देवि बड़ि अविनय मोरी ॥
दीन्हि प्रानपति मोहिं सिख सोई । जेहि बिधि मोर परम हित होई ॥
मैं पुनि समुझि दीखि मनमाहीं । पिय-वियोग-सम दुख जगनाहीं॥
दोहा—प्राननाथ करुनायतन, सुन्दर सुखद सुजान ।
तुम बिनु रघु-कुल-कुमुद-बिधु सुरपुर नरक समान ॥
मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥
सासु ससुर गुरु सजन सहाई । सुत सुन्दर सुसील सुखदाई ॥
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते । पियबिनु तियहिं तरनिहुते ताते ॥
तन धन धाम धरनि पुरराजू । पति बिहीन सब सोक-समाजू ॥
भोग रोग सम भूषन भारू । जम-जातना-सरिस संसारू ॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं । मोकहँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं ॥
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी । तइसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे । सरद-बिमल-बिधु-बदन निहारे ॥
दोहा—खग मृग परिजन नगर बन, बलकल बिमल दुकूल ।
नाथ साथ सुर-सदन सम, परन साल सुख मूल ॥"

—रामचरित मानस

. इसका नाम पति-भक्ति है। सीताजीने सारे सुखोंको त्याग दिया और जङ्गलमें नाना प्रकारके कष्टोंके होते हुए भी पति-सेवा करनेमें ही सुख माना।

पारिवारिक सेवा

पतिको सन्तुष्ट रखने तथा उसका सम्मान बढ़ानेके लिए स्त्रियोंको परिवारसे भी प्रेम रखना चाहिये। क्योंकि वह स्त्री भी बुरी समझी जाती है जो केवल अपने पतिकी सेवा तो खूब करती है किन्तु घरके और लोगोंको देखकर सदा जला करती है। ऐसा भाव रखनेसे एक तो स्त्रियोंको दुःख सहना पड़ता है—क्योंकि घरके लोग प्रियवचन नहीं बोलते. दूसरे स्वामीकी बदनामी होने लगती है क्योंकि लोग यह कहने लगते हैं कि पतिकी नालायकीसे ही स्त्री सिरचढ़ी हो जाती है। इसीसे ऋषियोंने पतिकी सेवाके अतिरिक्त परिवारकी सेवा करनेका भी उपदेश दिये हैं। सास-ससुरको देवताकी तरह मानना चाहिये क्योंकि ये पतिके भी पूज्य हैं। पर आजकल बहुतसी स्त्रियां सासको अपने सुखमें कांटा समझती हैं। वे पिताके घरसे आते ही घरकी मालकिन बन जाना चाहती हैं। फल यह होता है कि सास-बहूमें मनमुटाव होजाता है रात-दिन कलह हुआ करती है सुखकी घड़ी दुर्लभ हो जाती है।

मेरा तो यह अनुमान है कि नयी बहूके लिए घरमें सासका जीवित रहना बड़ा जरूरी है। नयी बहूका पहले जितना आदर

सास करती है, उतना और किसीका किया नहीं हो सकता। जो बहू सासको गुरु नहीं समझती वह अपने सुखके मार्गमें कांटा बोती है। ऐसी सास बहुत कम होती हैं जो बिना कारण नयी बहूसे नाखुश रहें। यदि बहूमें कोई दोष नहीं है और वह समझ-बूझकर काम करनेवाली है तो सास उसपर क्रोध क्यों करेगी? अपनी पतोहूके लिए सासके दिलमें कितना हौसला रहता है यह बात नयी बहूको सास बननेपर ही मालूम हो सकती है। हम मानते हैं कि कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बहूको अपना कोई कसूर मालूम नहीं होता और सास रुष्ट हो जाती हैं। पहले कुछ दिनोंतक तो बहू सहती है बाद बराबरी करने लगती है। किन्तु इसके लिए भी दवा है। यदि बहू शान्ति-पूर्वक सासकी बातोंको सहन करके उसकी सेवासे मुख न मोड़े तो सासको पानी होना ही पड़ेगा। एक हाथ झलनेसे आवाज कभी नहीं हुआ करती। आवाज तो तभी होती है जब दोनों हाथोंका संघात होता है। ठीक यही बात बहूके सम्बन्धमें है। यदि वह कुछ न बोले तो झगड़ेकी जड़ ही कट जाय। विनतीसे पशु-पक्षी भी प्रसन्न हो जाते हैं।

यदि सास अच्छे स्वभावकी न हो तब भी उसकी सेवा ही करनी चाहिये। यदि तुम्हारे पिता या माताका स्वभाव बुरा है तो क्या तुम उनपर स्नेह-ममता करना छोड़ दोगी? क्या तुम अपने बुरे लड़केको छोड़ देती हो? यदि नहीं, तो फिर सासके बुरे स्वभावसे चिढ़नेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं।

सासु-ससुरके अलावा घरके और लोगोंके साथ भी प्रेम रखना जरूरी है। ससुर, देवर, जेठानी, देवरानी, ननद, भतीजे सबको अपना समझना चाहिये। क्योंकि परिवारके सभी लोग पतिके भागमेंके होते हैं। वह गृहिणी धन्य है जो अपनी बद्धिमानीसे समूचे परिवारको रख सके। ससुरको पूज्य-भावसे देखना चाहिये। देवरको अपने छोटे भाईके समान बड़ी ननद और जेठानीको अपनी सगी बड़ी बहनके समान तथा देवरानी और छोटी ननदको छोटी बहनके समान समझना चाहिये। यदि इनके जरियेसे तुम्हें कभी कोई महान् कष्ट भी उठाने पड़ें, तब भी तुम धीरज न छोड़ो, प्रेम-भाव न हटाओ। वे जो चाहे सो करें, तुम्हें अपने धर्मका पालन करना चाहिये। तुम सावधानीसे उनका आदर करो, प्रेम करो, नम्रतासे उनके साथ व्यवहार करो। कुछ ही दिनोंमें तुम्हें इसका अच्छा फल मिलेगा। तुम्हारे अच्छे गुणोंके सामने इनके बुरे गुण छिप जायँगे। ये तुम्हारे वश हो जायँगी, सबलोगोंकी तुमपर श्रद्धा हो जायगी। इसलिए पहले पतिके घर आनेपर खूब सँभालकर चलनेका प्रयोजन रहता है। कोई कुछ करे, तुम्हें अपना काम करते जाना चाहिये! तुम्हें मालूम हो जायगा कि सहनशीलता और नम्रतामें कितनी अधिक शक्ति है। यदि वे तुम्हारे साथ कोई बुरा बर्ताव भी करें, तब भी तुम उधर ध्यान न दो। ऐसा करनेसे तुम्हें अपने-आप ही सबकुछ प्राप्त हो जायगा। गुसाईं तुलसीदासजीने लिखा भी हैः—

"जहां सुमति तहँ सम्पति नाना। जहां कुमति तहँ बिपति निधाना॥"

किन्तु घरमें सुमति तभी रह सकती है, जब स्त्रियां ऊपर लिखी बातोंपर चलेंगी। एकबार महाराज युधिष्ठिरने भीष्म पितामहके पास जाकर साध्वी रमणियोंका चरित्र सुननेकी इच्छा प्रकटकी। भीष्मजीने कहा—एक बार कैकय देशकी राजकुमारी सुमनाने शाण्डिलीसे ऐसा ही प्रश्न किया था। पण्डिता शाण्डिली-ने जो कुछ सुमनासे कहा था, वही मैं तुमसे कहता हूँ। सुमनाने पूछा—हे देवि! किस प्रकारके चरित्र और आचारद्वारा आपको स्वर्ग मिला है, दया करके वह मुझसे कहो। यह मैं जानती हूँ कि थोड़ी तपस्यासे आपको स्वर्ग नहीं मिला है। शाण्डिलीने प्रस-न्नताके साथ कहा—मैं गेरुआ वस्त्र या पेड़की छाल पहनकर तपस्या करनेवाली योगिनी नहीं हूँ और न मैंने मुण्डा और जटिला बनकर ही स्वर्ग प्राप्त किया है। मैंने तन्मय होकर मन, वचन और कर्मसे अपने पति देवकी सेवा की है। क्रोधके वशीभूत होकर मैंने अपने पतिको कभी कड़ी बात नहीं कही और न उनकी कोई बुराई ही की। मैं देवताओं पितरों और ब्राह्मणोंकी पूजा करती रही। सास-ससुरकी सेवा करनेसे कभी मैंने जी नहीं चुराया। अबतक मैंने न तो कोई अनुचित काम सोचा और न उसे किया ही। विवाहके बाद मैं कभी दरवाजेपर नहीं खड़ी हुई। देरतक किसीसे बातें भी नहीं करती थी। परिजनोंके आदर-सत्कारमें मैं कुछ भी उठा नहीं रखती थी। मैं अपने कर्त्तव्योंका पालन बड़ी सावधानीसे किया करती थी। पतिदेवके परदेश जानेपर केवल मङ्गल-चिह्न धारण करनेके किसी प्रकारका शृङ्गार

नहीं करती थी। पतिकी गुप्त बातोंको कभी प्रकट नहीं करती थी। मैं सदा प्रसन्न रहती थी और स्वामीको प्रसन्न रखनेकी चेष्टा करती थी। पतिके सो जानेपर भी उन्हें छोड़कर कहीं नहीं जाती थी। जो स्त्री सच्चे दिलसे इन नियमोंका पालन करती हैं वह महामुनि वसिष्ठकी स्त्री अरुन्धतीकी भांति स्वर्गलोकमें निवास करती हैं।

इससे यह साबित होता है कि चतुर गृहिणी बननेके लिए परिवारमें प्रेम रखनेकी आवश्यकता है। प्रेम ही सुखका मूल है। घरके प्राणियोंके प्रति प्रेम करना तथा अपने गुणोंसे उन्हें वश करना ही पारिवारिक सुख है। जिस कुटुम्बके लोग मिल-जुलकर रहते हैं सदा एक दूसरेको खुश रखनेकी कोशिश करते हैं वही कुटुम्ब सुखी रहता है। जहां प्रेमका अभाव रहता है वहीं दुःख अपना डेरा डालता है। प्रेम न होनेसे सुखी गृहस्थी भी चौपट हो जाती है। बड़े ही दुःख और लाज की बात है कि आजकल भाई-भाईको अलग करनेवाली स्त्रियां हो रही हैं। वे ही डाहके कारण पवित्र पारिवारिक प्रेमकी जड़ काट रही हैं। विवाहसे पहले जिन भाइयोंका मन-प्राण एक था जो एक दूसरेके पसीनेकी जगह अपना खून बहानेके लिए तैयार रहते थे वही विवाह हो जानेपर स्त्रीकी बातोंमें आकर अपने सगे भाईकी जानतक ले लेनेके लिए कमर कस लेते हैं।

स्त्रियोंको इस कलंकसे बचनेकी कोशिश करनी चाहिये। इस बातको समझ लेना चाहिये कि अधिक परिवार होनेसे ही शान

रहती है, दस आदमी मानते हैं हर तरहका आराम रहता है। जिस परिवारमें कम आदमी रहते हैं उस परिवारका साधारणसे साधारण आदमी भी समयपर अपमान कर देता है। अधिक परिवार रहनेसे दुःखमें एक ग्लास पानीकी कमी नहीं रहती। और फिर एक बात यह भी है कि मनुष्यका स्वभाव ही ऐसा है कि वह अकेला रहना पसन्द नहीं करता। फुरसतके समय स्वाभाविक ही बातचीत करनेके लिए चित्त व्याकुल हो जाता है। ऐसी दशामें मिलजुलकर रहना ठीक है। यह बड़ी भूल है कि स्त्रियां अपने घरके लोगोंकी निन्दा गांवके लोगोंसे करती हैं। स्त्रियोंको समझना चाहिये कि गांवके लोग घरवालोंसे अधिक हित चाहनेवाले कभी नहीं हो सकते। गांवकी स्त्रियोंसे मित्रता बढ़ाकर तुम सुखी रहना चाहती हो यह तुम्हारी गलती है। जिस स्त्रीको तुम अपनी सखी-सहेली समझकर दिलकी बात कहती हो वही स्त्री तुम्हारे गलेपर छुरी चलाती है। एकका चार जोड़कर वह तुम्हारे घरके लोगोंसे कहती है। उसका बुरा फल तुम्हें ही भोगना पड़ता है।

जब यह तय है कि तुम अकेली नहीं रह सकती घरके लोगोंसे अलग होनेपर भी तुम्हें दिल-बहलावके लिए पास-पड़ोसकी औरतोंसे नाता जोड़ना पड़ता है तब अलग होनेकी क्या जरूरत है ? तुम जितना आदर पड़ोसकी औरतोंका करके मित्रता करती हो उसका आधा आदर भी यदि तुम घरकी औरतोंका करो तो घरकी रानी बनकर रहो घरके सबलोग तुम्हें हथेलीपर रखें।

आजकल बहुधा स्त्रियां अपने जेठ या देवरके लड़के-बच्चोंको

देखकर यह सोचने लगती हैं कि उनका खर्च बड़ा है, इसलिए एकमें रहनेसे नुकसान है। किन्तु ऐसा नहीं समझना चाहिये। जेठ या देवरके बच्चोंको अपनी सन्तात समझनी चाहिये। कोई किसीकी कमाई नहीं खाता। सबका जन्म प्रारब्धके अनुसार हुआ करता है और तकदीरके मुताबिक ही सबको भोजन-वस्त्र मिलता है। इस संसारमें कोई किसीके सहारे नहीं, सबको परमात्माका सहारा रहता है। वही जीव मात्रकी रक्षा करनेवाले हैं। इसलिये यह न समझो कि किसीको तुम खिला रही हो।

जरासी बातपर तन बैठनेसे परिवारकी एकता नहीं रहती है। परिवारकी एकता रहती है, सहन-शीलता और प्रेमसे. या यों भी कहा जा सकता है कि पारिवारिक नियमोंका पालन करनेसे। किसीकी निन्दा न करे, सबपर प्रेमभाव समान रखे. घरके काम-धन्धेमें खींचातानी न करे, कोई बात न छिपावे, चोरीसे कोई काम न करे. आलस न करे, किसीको कड़ी बात न कहे। यदि कोई कुछ कह भी दे तो कुछ जली-कटी न सुनावे बल्कि सहन कर जाय. सदा उन्नतिकी बातें करे, पवित्रता रखे. प्रसन्नचित्त रहे—पारिवारिक स्नेह अपने-आप ही बढ़ता जायगा।

संसारमें सबकी अवस्था एकसी नहीं होती। कोई दुर्बल होता है, कोई बलवान, कोई पंडित होता है, कोई मूर्ख। सबका समान होना असम्भव है। कोई धन पैदा करनेवाला है और कुछ-न-कुछ बराबर पैदा किया करता है और कोई फूटी कौड़ी भी पैदा नहीं करता। किन्तु जो गृहिणी सबको समान भावसे मानती

है और सदा अपने धर्मका पालन करती रहती है उसके घरमें कभी भी सुख और शान्तिकी कमी नहीं रहती.—सदा गृहस्थीकी बढ़ती होती रहती है।

यदि तुम प्रेमभाव रखोगी तो सबलोग तुमसे प्रेम करेंगे। यदि तुम चाहोगी कि मेरे किसी कामसे या बातसे किसीको पीड़ा न हो तो घरके लोग सदा तुम्हारे लिए जान देनेको तैयार रहेंगे। यदि कोई तुमसे नाखुश हो जाय, तो तुम अपने मनमें समझ लो कि मुझसे कोई अनुचित काम हो गया है। यदि कोई तुम्हारी बुराई करने लगे, तो समझ लो कि मैंने उसकी बुराई की है, इसीसे वह मेरी बुराई कर रही है। ऐसा ऊँचा भाव रखनेसे हित होता है। तुम दूसरेसे जैसा व्यवहार चाहो, उसके प्रति वैसा ही व्यवहार करो। यदि कोई तुम्हें कड़ी बात कह दे, तो तुम भी कड़ी बात कहकर उसे उत्तर न दो। क्योंकि ऐसा करनेसे तुममें और उसमें फर्क ही क्या रह जायगा? तुम्हारा धर्म है सहन कर जाओ। तुम्हारा सहन कर जाना ही उस कड़ी बात कहनेवालेके लिए उत्तर हो जायगा। ऐसा कड़ा उत्तर होगा कि तुम्हारे सामने वह कभी भी सिर न उठा सकेगा। ऐसा करनेसे झगड़ेकी जड़ ही कट जाती है। याद रहे कि यदि कोई तुम्हारे घरमें चोरी करे तो तुम भी उसके घरमें चोरी करके बड़ी नहीं हो सकतीं।

नीच लोग ही यह समझते हैं कि यह अपना है और यह पराया है। बड़े लोग तो समूचे संसारको अपना समझते हैं। इसीसे कहा गया है कि केवल अपने बाल-बच्चोंकी परवरिश कर-

लेना किसी कामका नहीं, जबतक दूसरेके बच्चोंका दुःख देखकर दया न करे या उसकी यथाशक्ति सहायता न करे। मनुष्यको चाहिये कि वह दूसरेको सुखी देखकर अपनेको सुखी समझे। जो मनुष्य संसारके तमाम लोगोंपर दयाभाव रखता है, वह धन्य है। किसीसे बनावटी बातें करके अपने दिलका भाव छिपानेकी चेष्टा करना मूर्खता है। गुसाईंजीने लिखा है:—

" *हित अनहित पसु-पच्छिउ जाना* "

अपने मित्र और शत्रुको पशु-पक्षी भी पहचान लेते हैं, मनुष्यकी तो बातही क्या है। इसलिए कोई यह न समझे कि जो कुछ नेकी या बदी हमसे हो रही है, वह उसकी समझमें नहीं आ सकती।

मनुष्यकी अवस्थाके अनुसार उसके कर्त्तव्य भी बदला करते हैं। क्योंकि आज जो कन्या है वही कुछ दिनोंके बाद माता हो जाती है और आज जो वधू है, वही समय पाकर सास हो जाती है—घरकी मालकिन कही जाती है।

घरमें यदि कोई विधवा ननद हो, तो उसका आदर बड़ी सावधानीसे करना चाहिये। क्योंकि पिता-मातापर सब विषयोंमें पुत्रकी भांति कन्याका अधिकार रहनेपर भी हमारे समाजमें साधारणतः पुत्र ही पिताकी धन-सम्पत्तिका अधिकारी होता है। विवाहिता होनेपर कन्या पतिके घर जाकर स्वामीकी धन-सम्पत्तिकी अधिकारिणी होती है। इसलिए पिताके धनकी वह बिलकुल आशा नहीं करती, परन्तु कारणवश यदि उसे पिताके घर रहना पड़े तो उसकी सेवा बड़े यत्नसे करनी चाहिये। ऐसा बर्ताव कभी

न करना चाहिये जिससे उस विधवा ननदके मनमें किसी प्रकार की ग्लानि आवे। पति और पुत्रहीना तथा निस्सहाया विधवाका निरादर करना बड़ा भारी पाप है।

ननदके सिवा परिवारमें यदि और कोई विधवा हो तो उसको भी वैसीही खातिर करनी चाहिये। ऐसी चेष्टा करनी चाहिये, जिसमें उसके हृदयमें शान्ति रहे उसकी आत्मा सुखी रहे और सदा आशीर्वाद देती रहे।

घरमें यदि दास-दासियां हों, तो उनपर दया-भाव रखना चाहिये। नौकर के प्रति कभी ऐसी बात मुंह से न निकालनी चाहिये, जिससे वह यह समझे कि मैं नौकर हूँ। ऐसा वर्त्ताव करना जरूरी है जिससे नौकर-चाकर अपना घर समझें और दिल लगाकर काम करें तथा हानि-लाभपर सदा ध्यान रखें। नौकरों को मुंह लगाना भी अच्छा नहीं। इसलिए इस बातका ख्याल रखना चाहिये जिसमें वे सदा तुम्हारा अदब किया करें। दास-दासियोंके खाने-पीने तथा सुख-दुःखकी ओर भी स्त्रियोंको ध्यान रखना चाहिये। खुद अच्छा भोजन करना और दास-दासियोंको नीच समझकर खराब भोजन देना उचित नहीं क्योंकि इससे उनका चित्त दुःखी होता है, और वे चोरी करनेके आदी हो जाते हैं। सबसे अधिक दास-दासियोंके प्रति उत्तम व्यवहारकी आवश्यकता है। घरके जिन कामोंसे दास-दासियोंका सम्बन्ध हो, उनके विषयमें उनसे सलाह लेकर काम करना उचित है। इससे काम भी अच्छी तरह होता है, और वे खुश भी रहते हैं।

गहनोंका शौक

स्त्रियोंके हितकी बात। महात्मा गांधीकी चेतावनी।

संयुक्त प्रान्तके सफरमें गरीब और अमीर बहिनोंके गहने देख-देख कर मैं घवड़ा उठता था। यह शौक कहांसे और क्यों पैदा हुआ होगा? मैं इसके इतिहासको नहीं जानता। इस कारण मैंन थोड़ी अटकलसे कुछ अनुमानसे काम लिया है। स्त्रियां हाथों और पैरोंमें जो गहने पहनती हैं, वे उनके कैदीपनकी निशानी है। पैरके गहने तो इतने वजनदार होते हैं कि स्त्री उन्हें पहन कर, दौड़ना तो दूर तेजोसे चल भी नहीं सकती। कई स्त्रियां हाथमें इतने गहने पहनती हैं कि उन्हें पहनने पर हाथसे ठीक तरह काम भी नहीं लिया जा सकता। इसलिये ऐसे गहनोंको मैं हाथ-पैरको बेड़ी ही समझता हूँ। कान नाक बिंधा कर जो गहने पहने जाते हैं, मेरी नजरमें तो उनकी उपयागिता यही साबित हुई है कि उनके जरिये आदमी औरतोंको जैसा नाच नचावे उसे वैसा नाचना पड़ता है। एक छोटासा बचा भी अगर किसी मजबूत स्त्रीकी नाक या कानका गहना पकड़ ले; तो उसे बेबस होजाना पड़ता है। इसलिये मेरी रायमें तो खास-खास गहने सिर्फ गुलामोंकी ही निशानी हैं।

गहनोंकी उत्पत्तिकी जो कल्पना मैंने की है. अगर वह ठीक हो तो चाहे जैसे हलके और खूब सूरत क्यों न हों हर हालतमें गहने त्याज्य ही हैं।

यह व्यक्ति-स्वातन्त्र्य नहीं है, व्यक्तिगत अधिकारकी बात भी इसमें नहीं है, यह तो निरी स्वच्छन्दता है और त्याज्य है। क्योंकि इसमें निर्दयता और बेरहमी है।

अन्तमें मैं पूछूँगा कि इस कंगाल देशमें, जहां प्रति व्यक्ति को औसत आमदनी प्रायः सात, या बहुत हो तो आठ पैसेसे ज्यादा नहीं है, किसे अधिकार है कि वह एक रत्ती वजनकी भी अँगूठी पहने? विचारवती स्त्री, जो देशकी सेवा करनी चाहती है गहनोंको कभी छू भी नहीं सकती।

भारतीय सभ्यता

किसी भी देशमें किसी भी सभ्यताके नीचे सब मनुष्योंने सम्पूर्णता नहीं आई हिन्दुस्तानी सभ्यताका झुकाव नीति दृढ़ करनेकी ओर है। पश्चिमकी सभ्यताका झुकाव अनीति दृढ़ करने की ओर है। पश्चिमकी सभ्यतामें नास्तिकता है, हिन्दुस्तानकी सभ्यतामें आस्तिकता। इस तत्त्वको समझ कर हिन्दुस्तानके हितैषियोंको हिन्दुस्तानी सभ्यतासे इस तरह चिपटे रहना उचित है जैसे बालक अपनी मातासे चिपटा रहता है।

पास-पड़ोसके साथ बर्ताव

यदि गांवका कोई लड़का तुम्हारे लड़केको कुछ कह दे या चिढ़ाले और उसके मां-बाप अपने लड़केको ताड़ना न दें, तो इसी बातको लेकर तुम्हें कभी न झगड़ना चाहिये। ऐसी साधारण

बातें स्वामीके कानोंतक पहुँचाना भी ठीक नहीं। क्योंकि छोटी छोटी बातोंके पीछे बड़े-बड़े उपद्रव खड़े हो जाते हैं। यदि किसी-का लड़का तुम्हारा कोई नुकसान कर दे तो उस लड़केको कोई कड़ी बात न कहो। प्रेमके साथ उसे समझा दो ताकि फिर वह वैसा न करे। घरमें आनेवाली स्त्रियोंसे प्रेम करो। उनसे अच्छी बातें करो। यदि कभी वे कोई बुरी बात करें भी तो उधर ध्यान न दो। साध्वी स्त्रियोंके पास बैठो, बुरी स्त्रियोंका साथ छोड़ दो। यदि कोई साधारण बात सुनो तो उसे स्वामीसे कहनेमें समय बर्बाद न करो। यदि कोई स्त्री कभी कुछ बुराई कर बैठे तो उसे सह लेना उचित है। क्योंकि यदि तुम भी उसकी बुराई करोगी तो तुममें और उसमें अन्तर ही क्या रह जायगा ? इस बातकी ईखसे शिक्षा लेनी चाहिये। जो लोग ईखको काटते-पेरते हैं उनके साथ वह कैसा बर्त्ताव करती है। ईखको जितना ही कष्ट पहुँचाया जाता है वह उतना ही सुस्वाद-पूर्ण होती जाती है।

अपने घरमें आये हुए शत्रुका भी आदर करना चाहिये। सहन करनेका पाठ सीखना उपकारी है। पास-पड़ोस या गांवके लोगोंसे यदि कोई वास्ता पड़े तो उनके साथ ऐसा बर्त्ताव करो कि वे तुम्हारे वश हो जायें।

अतिथि-सेवा

यदि कोई पाहुना अपने घर आवे तो उसके सत्कारमें किसी बातकी कमी होने देना ठीक नहीं। पहले पाहुनको भोजन कराना

चाहिये, बाद घरके सरदारोंको और सबसे पीछे खुद भोजन करना उचित है।

दरवाजेपर यदि कोई अभ्यागत या भूखा-दूखा आ जाय तो उसकी सेवा करनेमें कुछ उठा नहीं रखना चाहिये। अतिथिकी खातिर अपने रिश्तेदारोंसे भी बढ़कर करनी चाहिये। रिश्तेदार तो सब दिनके लिए हैं किन्तु आया हुआ अतिथि फिर नहीं आनेका। शास्त्रकारोंके मतके अनुसार "अतिथि" वह है जो रातभर विश्राम करनेके लिए बिना बुलाये गृहस्थके घर आ जाता है। एक गृहस्थके घर दो तिथि अर्थात् दो दिन न रहनेके कारण ही वह अतिथि कहलाता है।

हमारे शास्त्रोंमें अतिथि-सेवासे बढ़कर पुण्यका काम कोई नहीं माना गया है। जिस गृहस्थके घरसे अतिथि दुःखी होकर लौट जाता है उस घरका वह सब पुण्य-फल लेकर उसे अपना पाप देता जाता है। लिखा भी है:—

अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते ।
स तस्मै दुष्कृतं दत्वा पुण्यमादाय गच्छति ॥

—विष्णु-पुराण।

यदि तुम्हारे पास कुछ भोजन अतिथिको देनेके लिए न हो तो यह न समझो कि कुछ है ही नहीं, सत्कार कैसे किया... अतिथिका सत्कार तो हृदयसे किया जा...

की सेवा करनेमें किसी प्रकारका दुःख नहीं मानना चाहिये। क्योंकि झिझक और दुःखके साथ यदि किसीको अमृत भी दिया जाता है, तो वह भी विष हो जाता है। दुःखके साथ की हुई सेवाका कुछ भी फल नहीं होता। परिश्रम व्यर्थ हो जाता है।

एकबार भीष्मजीने युधिष्ठिरको अतिथि-सेवाका उपदेश देते हुए एक कपोतकी कथा सुनायी थी। कपोतकी कथासे बड़ा सुन्दर उपदेश मिलता है इसलिए उसका लिखना आवश्यक है।

पितामह भीष्मजीने कहा—हे युधिष्ठिर! एक पेड़पर अपने बाल-बच्चोंके साथ एक कबूतर रहता था। एक दिन उस कपोतकी स्त्री कपोती आहार लानेके लिये सबेरे घोंसलेसे गयी और शाम तक न लौटी। कपोत अपनी प्यारीके लिए बहुत दुःखी हुआ और गहरी चिन्तामें पड़ गया। स्त्रीके वियोगसे उसे सारा संसार सूना दिखायी पड़ने लगा। सच भी है स्त्रीके बिना घर वनके समान है। कबूतर दुःखी होकर विलाप करने लगा—हाय! मेरी प्यारी न-जाने कहां चली गयी। जो बिना मुझे खिलाये कभी नहीं खाती थी बिना मेरे नहाये कभी नहाती न थी. मेरी प्रसन्नता में ही अपनी प्रसन्नता समझती थी मेरे परदेश चले जानेपर व्याकुल हो जाती थी और जो मेरे क्रोध करनेपर बड़ी नम्रताके साथ मुझे शान्त करती थी, वह प्राणाधिका पतिव्रता न-जाने कहां गयी। जो सदा मेरा हित चाहती थी, जिसके समान इस संसारमें कोई स्त्री नहीं है वह पति-भक्ता प्रिया यदि यह जान पाती कि मैं भूखा हूं तो तुरन्त मुझे भोजन कराया करती थी। अपनी प्यारीको छोड़कर

यदि मुझे स्वर्गमें भी रहना पड़े तो मेरा चित्त प्रसन्न नहीं हो सकता। जिसके घरमें ऐसी स्त्री हो वह धन्य है। इस प्रकार पत्नीके गुणों और सेवाओंकी याद करके वह कबूतर फूट-फूटकर रोने लगा।

इधर कपोती वनमें आयी और थोड़ी ही देरके बाद भयानक आंधी और मूसलाधार पानीके कारण समूचे वन में पानी-ही-पानी दिखायी पड़ने लगा। इतनेमें एक विचित्र आकारका बहेलिया सर्दीसे कांपता हुआ एक ऊँचे टीलेपर जाकर खड़ा हुआ। वर्षाके कारण वनके जीव-जन्तु पानीसे लथ-पथ हो इधर-उधर फिरने लगे। बहुतसे पक्षियोंके घोंसले उजड़ गये। कितने ही भीगे हुए पक्षी तेज हवाके झोंकेमें पड़नेके कारण मर गये शेर, चीते, बाघ, भालू और भेड़िये आदि हिंसक जानवर भूखसे घबड़ाकर जहां-तहां शिकार खोजने लगे। कड़ी सर्दी तथा हिंसक जानवरोंके भयसे बहेलिया कहीं न जा सका। उस बहेलियेके पास ही वह कपोती भी पानीसे भीग जानेके कारण बेहोश पड़ी थी। बहेलियेने उसे उठाकर अपने पिंजड़ेमें रख लिया और आकर उसी पेड़की छायामें सो गया जिस पेड़पर बैठकर कबूतर अपनी प्राण-प्यारीकी विरह-वेदनासे अधीर होकर विलाप कर रहा था। बहेलियेके पिंजड़ेमें बन्द कपोती अपने पतिदेवका विलाप सुनकर मन-ही-मन सोचने लगी—अहा! मैं बड़ी ही सौभाग्यवती हूँ। मुझमें कोई गुण न होनेपर भी मेरे स्वामी मेरी इतनी प्रशंसा कर रहे हैं। जिस स्त्रीका पति उससे प्रसन्न और सन्तुष्ट रहता है.

उससे बढ़कर भाग्यशालिनी और कोई नहीं । क्योंकि स्वामीके प्रसन्न रहनेसे देवता लोग भी प्रसन्न रहते हैं। पति ही स्त्रीके लिए देवता है और पति ही स्त्रोका सर्वस्व है इस बातके शाक्षी अग्निदेव हैं। जिस तरह फूलोंसे लदी हुई लता आगकी प्रचण्ड ज्वालामें पड़कर भस्म हो जाती है उसी प्रकार पतिके असन्तुष्ट होनेपर स्त्री भी जल मरती है।

इस प्रकार मन-ही-मन अपने सौभाग्यकी सराहना करती हुई वह कपोती अपने पतिको सम्बोधित करके बोली—स्वामिन् मैं आपकी भलाईके लिए एक बात कहती हूँ। मुझे आशा है कि आप मेरी बात अवश्य मानेंगे। देखिये. यह भूखा-प्यासा तथा शीतसे पीड़ित बहेलिया आपकी शरणमें आया है । ऐसी दशामें इस समय आप इसे अतिथि समझकर इसका सत्कार कीजिये। गो, ब्राह्मण, गर्भवती स्त्री और शरणमें आये हुए प्राणीकी रक्षा करना परमधर्म है जो गृहस्थ अपनी शक्तिके अनुसार धर्म-कार्य करता है, वह बड़ा ही पुण्यात्मा है । आपने पुत्र और कन्याका मुख देख लिया है । अब आपको ऐसा करना उचित है जिसमें बहेलिये की तृप्ति हो। प्राणनाथ ! आप मेरे लिए चिन्ता न करें। मेरे न रहनेपर आप अपने जीवन-निर्वाहके लिए दूसरा विवाह कर लीजियेगा । अब मुझे अपनी जान देकर बहेलियेकी रक्षा करने दीजिये।

अपनी स्त्रीके मुखसे यह बात सुनकर कपोत बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने बहेलियेकी कुशल पूछी और कहा—आप किसी

बातकी चिन्ता न करें। यहां आपको किसी प्रकार दुःख न होगा। समझिये कि आप अपने ही घरमें हैं। अब यह कहिये कि मैं आपकी क्या सेवा करूँ? आज आप मेरे अतिथि हैं। अतिथिकी सेवा करना मेरा परमधर्म है। यदि अपना शत्रु भी अतिथिके रूपमें अपने द्वारपर आवे तो तन-मन-धनसे उसकी सेवा करना उचित है। देखिये न, पेड़ अपने काटनेवालेको भी छायाहीमें रखता है। इसलिए आपकी सेवा करना मेरा धर्म है। पंच महायज्ञ करनेवाले गृहस्थको शरणमें आये हुएकी सेवा अवश्यमेव करनी चाहिये। इसलिए आप मुझपर विश्वास कीजिये। आप जो कुछ आज्ञा दें, मैं करनेके लिए तैय्यार हूँ। अब आप किसी बातका दुःख न करें।

कपोतकी बातें सुनकर बहेलियेने कहा—जाड़ेसे बड़ी तकलीफ पा रहा हूँ। यदि इसके लिए तुम कोई उपाय कर सको तो मेरी जान बच जाय।

इतना सुनते ही कपोत अपने घोंसलेसे निकला और एकजगहसे थोड़ीसी आग लाकर उसके सामने रख दिया। बाद कुछ सूखे पत्ते तथा तृण बटोर लाया। बहेलिया आंचका सहारा पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ। कहा,—अब तो भूख मालूम हो रही है, कुछ खिलाओ। कबूतरने कहा—मैं बनका पक्षी हूँ। जिस तरह ऋषिलोग अगले दिनके लिए कुछ नहीं रखते, उसी तरह हमलोग भी। इसलिए खानेकी कोई चीज मौजूद नहीं है। मैं प्रतिदिन जो कुछ खानेके लिए लाता हूँ, उसे शामतक खा जाता हूँ। इस हालतमें क्या खिलाऊँ?

यह कहकर कपोत उदास मनसे अपनी संचय न करनेकी आदतपर अफसोस करने लगा। थोड़ी देर बाद बोला,—"अच्छा, मैं आपके लिए भोजनका प्रबन्ध अभी करता हूँ।" यह कहकर वह फिर सूखे पत्ते आदि लाकर आगपर छोड़ने लगा। जब आग खूब धधकने लगी तब कहा—मैंने अच्छे लोगोंके मुंह-से सुना है अतिथि-पूजासे बढ़कर धर्म दूसरा कोई नहीं है। इस-लिए ऐ मेरे अतिथि! अब आप मुझपर दया करिये। अतिथिकी पूजापर मेरा पूरा विश्वास है।

इतना कहकर कपोत आगमें कूद पड़ा। उसका अपूर्व आत्मो-त्सर्ग देखकर बहेलियेका कठोर हृदय भी पिघल गया। वह मन-ही-मन पछताने लगा—हाय! मैं कैसा निठुर और निर्दय हूँ। मेरे इस कामसे मुझे घोर अधर्म होगा। बड़ा भारी अनर्थ हुआ। मैं बड़ा ही नीच हूँ। आज इस महात्मा कपोतने अपना शरीर आगमें जलाकर मुझे धिक्कारते हुए यह उपदेश दिया है कि एक पक्षी यहांतक त्याग कर सकता है, किन्तु तू आदमीका तन पाकर कुछ भी नहीं कर सकता—केवल पाप ही कमा रहा है। अब मैं भी अपनी स्त्री और बच्चोंको छोड़कर प्राण दूँगा।

इसके बाद उस बधिकने पिंजड़ेमें बन्द कपोतीको छोड़ दिया और पिंजड़ा तथा फम्पा आदि फककर वहांसे चल दिया। बहे-लियेके जाते ही विधवा कपोती बिलख-बिलखकर रोने लगी। अपने पतिके गुणोंकी याद करके कहने लगी—नाथ! जीवनमें आपने एक भी ऐसा काम नहीं किया था जो मुझे अप्रिय हो। बहुतसे

पुत्रोंवाली स्त्री भी पतिके मरनेपर शोक करती है। आपने बराबर मेरा पालन किया। तरह-तरहकी मीठी बातें सुनाकर आप हमेशा मेरी खातिर करते थे। पहाड़ोंकी कन्दराओंमें, झरनोंके किनारे तथा सुन्दर पेड़ोंपर बैठकर मैंने आपके साथ आनन्द मनाया है। आकाशमें उड़नेके समय भी मैंने आपका साथ कभी नहीं छोड़ा। आपके साथ मुझे जो आनन्द मिला, वह मुखसे नहीं कहा जा-सकता। हाय! अब वह आनन्द इस जीवनमें प्राप्त न होगा! मां-बाप, भाई-बहन और बेटा-बेटीसे मिलनेवाले सुखकी सीमा है, किन्तु पतिद्वारा जो सुख मिलता है, उसकी सीमा नहीं। ऐसे पतिकी सेवा ऐसी कौन अभागिनी स्त्री है जो न करेगी? पतिके समान सुख देनेवाला संसारमें और कोई नहीं है। स्त्रियोंका एक-मात्र सहारा पति ही है। हे जीवनके आधार! अब तुम्हारे बिना मेरा जीना वृथा है। अपने पतिको खोकर कोई सती स्त्री जीनेकी इच्छा नहीं कर सकती।

इस प्रकार विलाप करके वह कपोती आगमें कूद पड़ी। बाद उसने देखा कि उसका पति सुन्दर शरीर धारण करके एक उत्तम विमानपर बैठा है और सब संस्कृतियां उसकी पूजा कर रही हैं। उत्तम वस्त्राभूषणोंसे लैस सैकड़ों स्वर्गवासियोंने विमानपर सवार होकर उसे घेर रक्खा है। कपोती भी उसी विमानद्वारा स्वर्गमें जाकर अपने प्रियतमके साथ आनन्द करने लगी।

ऊपरकी कहानीसे हमारी पाठिकाओंको अतिथिकी सेवाका महत्त्व भली-भांति मालूम हो जायगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि

अपने घर आये हुए आदमीकी सेवा करनेसे बढ़कर पुण्यका काम दूसरा नहीं। अतिथियों और पाहुनोंका सत्कार करना स्त्रियोंके ही हाथमें है। अतिथि-सेवासे परमार्थ तो सुधरता ही है, लौकिक लाभ भी कम नहीं होता। जिस गृहस्थके घर अतिथियोंकी सेवा होती है, वहां साधु-महात्मा बराबर आते रहते हैं। ऐसी दशामें उनके सत्संगसे गृहस्थको अच्छे-अच्छे उपदेशोंका लाभ घर बैठे होता रहता है। साधुओंकी दयासे बुराइयां भी अपने-आप दूर हो जाती हैं। लोकमें यश फैलता है। सबलोग ऐसे गृहस्थका आदर करते हैं।

किन्तु अतिथि-सत्कार करनेमें भी सावधानीकी जरूरत है। आजकलका समय बहुत बुरा है। पाखंडियोंकी चारों ओर अधिकता हो रही है। ऐसी दशामें हमारी माताओं और बहनोंको सतर्क भी रहना चाहिये।

तीसरा अध्याय

! दिनचर्या !

प्रतिदिन सूर्योदयसे पहले उठकर ईश्वराराधन करन चाहिये। हे प्रभो! इस संसारमें मेरा कुछ भी नहीं है। यह घर आपका है। हमसब आपकी दासी हैं। हे भगवन्! ऐसी दया करो कि मेरा दिन प्रसन्नतासे बीते, लाभदायक उपदेश मिलें, दुष्टा स्त्रियोंसे भेंट न हो, मेरेद्वारा किसीको पीड़ा न पहुँचे आपकी आज्ञाओंके विरुद्ध मुझसे कोई काम न हो। आप जो कुछ देंगे, उसीको प्रसाद समझकर माथे चढ़ाऊँगी।

इस तरह परमात्मासे प्रार्थना करके दीनता और नम्रता-पूर्वक अपने पतिके चरणोंपर माथा गिरा प्रणाम करना चाहिये। पतिके दर्शन करनेके बाद शौचादिसे निवृत्त होकर अच्छी तरहसे हाथ मुख धो डालना धर्म है। बाद घरकी सफाई कराना उचित है झाड़ू-बुहारूका काम हो जानेपर अपने काममें लग जाना चाहिये। कामसे फुरसत मिलने पर स्त्रियोंको चाहिये कि वे थोड़ा आराम करें और कुछ पढ़ें-लिखें या अच्छी-अच्छी बातें करें। कभी गन्दी बात मुँहसे न निकालें। किसीकी निन्दा न करें। क्योंकि निन्दा करनेसे अपना हृदय भी निन्दाके योग्य हो जाता है।

स्त्रियोंको बहुत बकवाद न करना चाहिये। यदि कोई भूल हो जाय तो उसके लिये ईश्वरसे क्षमा मांगें औरआगेके लिए सावधान हो जाएँ। साफ सुथरा बस्त्र रखें। सब काम समयपर करें। आलस्य न करें। अधिक राततक जागना उचित नहीं। अधिकसे अधिक दस बजे रातको सो जाना चाहिये। किन्तु सोनेसे पहले सब बातोंको देख-रेख कर लेना जरूरी है। घरकी चीजें कायदेसे रखी गयीं या नहीं, दिनभरका हिसाब-किताब लिखा गया या नहीं, दरवाजे बन्द हैं या नहीं आदि।

गृह-कार्य

घरकी देख-रेख करना स्त्रीका मुख्य काम है। बहुतसी स्त्रियां अपने घरका काम करनेमें भी लजाती हैं। यह उनकी भूल है। अपना काम करनेमें लाज किस बातकी? जो स्त्री अपने घरका काम अपने हाथसे नहीं करती और प्रत्येक कामको देखती-भालती नहीं वह अपना सर्वस्व खो बैठती है। जितना अच्छा काम अपने हाथका किया हुआ होता है उतना अच्छा दूसरेके हाथका नहीं। इसलिए धनी घरकी स्त्रियोंको भी तन्दुरुस्तीके लिए कुछ-न-कुछ परिश्रमका काम अपने हाथों करना आवश्यक है। क्योंकि शरीरसे कुछ मिहनत किये बिना तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है और तन्दु-रुस्ती खो जानेपर धन-दौलतका भोग नहीं किया जा सकता—सब दो कौड़ीका हो जाता है।

स्त्रियोंको चाहिये कि खाने-पीनेकी प्रत्येक वस्तुको ढककर

रखें। क्योंकि खुला रखनेसे चूहे नुकसान करते हैं। चीजें भी खराब हो जाती हैं। किसी काममें ओत नहीं करना चाहिये। सब चीजोंके रखनेके लिए निश्चित स्थान होना चाहिये। निश्चित स्थान-पर चीज रखनेसे काम पड़नेपर कोई चीज ढूंढ़नी नहीं पड़ती। नमक कहां है, हल्दी कहां है, घी कहां है इन बातोंका ध्यान रखना चाहिये। जो चीज जहां रखी जाती हो वह चीज हमेशा वहीं रखनी चाहिये। यदि किसी कारणवश हटानेकी जरूरत पड़े तो बात दूसरी है। ऐसा करनेसे अन्धेरे घरके भीतरसे भी सब चीज निकाली जा सकती है। इसके अलावा एक बात और है वह यह कि सब चीजें घरमें कायदेसे रखी रहें। जैसे, भोजनके लिए जिन-जिन चीजोंकी प्रतिदिन जरूरत पड़ती है, वे सब एक जगह रखी जायं, कपड़े-लत्ते एक जगह रखे जायं आदि। यह नहीं कि नमक तो इस घरमें है और हल्दी उस घरमें तथा मसाला तीसरे घरमें। इस प्रकार चीजें रखनेसे व्यर्थ ही कष्ट होता है। बेतरतीब चीजोंके रखनेसे फजूल बहुत दौड़ना पड़ता है और जरासे कामोंमें देर भी बहुत लग जाती है। इसलिये दो बातोंका ध्यान रखना जरूरी है, एक तो यह कि सब चीजें निश्चित स्थानपर रखी जायें और दूसरे यह कि एक मेलकी सब चीजें एक जगह रहें। ऐसा करनेसे काम भी जल्दी होता है और मौकेपर कोई चीज खोजनेकी जरूरत नहीं पड़ती न तो अधिक परिश्रम ही करना पड़ता है।

विद्याके अभावसे आजकल बहुधा स्त्रियां अपवित्र रहा करती हैं। उन्हें यही नहीं मालूम कि कब क्या करना चाहिये। जो पंटा,

दिन चढ़े उठती हैं। दिलमें आया तो एकाध चिल्लू पानी मुखपर डाल लिया, नहीं वह भी नहीं। आंखका कींचड़ (मैल) हाथसे निकालकर पोंछ लेती हैं। किसी तरह कच्ची-पक्की दो रोटियां सेंककर रख दी दाल पकायी, पानी अलग और दाल अलग, चावल यातो रींझ गया या कच्चा ही रह गया। इस प्रकार बेगार टालती हैं। तात्पर्य यह कि घरके काम-काजमें उनका दिल नहीं लगता। जिस घरमें ऐसी स्त्रियां रहती हैं, वहां सदा दरिद्र टिका रहता है। इसलिए स्त्रियोंको चाहिये कि वे प्रत्येक कामको प्रसन्नताके साथ दिल लगाकर करें। हर काममें सफाई रखना बहुत जरूरी है। घरमें क्या है क्या नहीं है, इसका सदा ध्यान रखना चाहिये। घरके काममें स्त्रियोंको इतनी बुद्धिमानी रखनी चाहिये कि घरके सरदारोंको उसके लिए किसी प्रकारकी चिन्ता न करनी पड़े। नीचे लिखी बातोंकी जानकारी होना स्त्रियोंके लिए बहुत जरूरी है—

१—शाक-तरकारी चीरना, धोना, तथा दाल चावल आदि अनाजका पछोरना, बिनना, पंचांगके अनुसार तिथि तारीख महीना, सम्वत् आदि बातोंका ज्ञान। चिट्ठी लिखना और पढ़ना।

२—घर-खर्चका हिसाब रखना। भोजन बनानेकी विधि जानना। अनेक तरहकी चीजें तैयार करना। किस अतिथिके लिए कैसा भोजन बनाना चाहिये, इसका ज्ञान रखना। कितने मनुष्योंके लिए कितना भोजन तैयार करना चाहिये, इसका ठीक-ठीक अन्दाजा लगाना। समय-समयपर भोजनकी चीजें बदलते रहना। मफरके जायक चीजें बनानेकी विधि जानना।

३—अचार, मुरब्बा, पापड़ आदि बनानेकी तरकीब जानना। देशके किस प्रान्तके लोग किस प्रकारका भोजन पसन्द करते हैं, यह जानना और हर प्रान्तके लोगोंके अनुकूल भोजन बनानेकी रीति जानना।

४—कपड़ा काटने और सीनेकी जानकारी। काममें आनेवाली चीजोंके अच्छे-बुरेपनका ज्ञान रखना तथा किस वस्तुका क्या मूल्य है इसका अन्दाजा लगानेकी जानकारी हासिल करना।

५—साधारण रोगोंकी दवाइयां जानना। शिक्षाप्रद पौराणिक कहानियोंका स्मरण रखना। पूजन-अर्चनकी सामग्रियोंका ज्ञान। ऋषि-पंचमी दिवाली, विजयादशमी आदि व्रत-महोत्सवोंकी पूजन-तिथि, और व्रतादिके दिनोंकी विधि जानना।

६—घरकी सफाई रखना। धोबीको लिखकर कपड़े देना, वापस मिलनेपर उसे काट देना।

किन्तु इन सब बातोंकी शिक्षा बचपनमें ही मिलनी चाहिये, ताकि पतिके घर जानेपर वे गृहस्थीका सम्भार कर सकें और पतिके घरकी आदरणीया बनकर रह सकें।

पहलेकी स्त्रियां घरके कामोंकी पूरी जानकारी रखती थीं। वे घरके सब प्राणियोंको सुख रखती थीं। सबको समयसे खाना-पानी देती थीं, किसीको नाराज नहीं करती थीं, किसको क्या कष्ट है, यह बात मुख देखकर ताड़ जाती थीं और आदर तथा उपदेशोंसे उस व्यथाको दूर करनेकी चेष्टा करती थीं। किसको कौनसी चीज अच्छी लगती है और क्या चीज बुरी लगती है इसे

वे भली-भांति जानती थीं। लड़कोंको शिक्षा देना जानती थीं। जिन कामोंसे बच्चे विगड़ जाते हैं, उन्हें वे भूलकर भी नहीं करती थीं। वे बच्चोंका ऐसा आदर भूलकर भी नहीं करती थीं जिनसे बच्चोंकी जिन्दगी चौपट हो जानेका डर रहता है। घरके प्राणियोंकि सेवा करनेमें ही वे सुखी रहती थीं। स्वामीके प्रति प्रेम रखती थीं, किन्तु भीतरसे। आजकलकी भांति दिखौवा नहीं। समय पड़नेपर स्वामीको खिलाकर वे स्त्रियां हँसी-खुशीसे उपवास कर जाती थीं, पर भेद किसीको मालूम नहीं होने देती थीं। ऐसी स्त्रियोंकी रक्षा परमात्मा अवश्य करते हैं।

वहुतसे लोग कहेंगे कि यह स्त्री-जातिके ऊपर अत्याचार करना है. यह कोई प्रशंसाकी बात नहीं है। इससे तो यह साबित होता है कि पुरुष-जाति बड़ी स्वार्थी है। किन्तु स्मरण रखना चाहिये कि प्रेमके लिये जो कष्ट सहा जाता है, वह कष्ट नहीं—तपस्या है। ऐसे कष्टसे जीवन उन्नत होता है। प्रेमके पीछे महान् कष्ट होनेपर भी असह्य नहीं होता। कारण यह कि वह स्नेह-ममताका कष्ट है। स्नेहके वशीभूत हो, मां क्या नहीं करती ? किन्तु उसमें क्या वह कष्ट मानती है ? बल्कि उन कष्टोंमें माताको सुख होता है।

इसलिए स्त्रियोंको उचित है कि वे पहलेकी स्त्रियोंके आदर्शपर चलें। लक्ष्मीचरित्रमें लिखा है कि—"जो स्त्री आंवलेसे सिर मलती है, घरको गोवरसे लीपकर साफ रखती है, सफेद वस्त्र पहन कर विकसित कमल धारण करती है तथा अपने घरकी चीजोंको सफाईसे सजाकर रखती है, उसपर लक्ष्मीजी कृपा करती हैं।"

जिस घरमें सफाई नहीं होती. वहांकी हवा खराब हो जाती है। जिस घरमें स्वच्छता रहती है, उस घरमें कोई भी रोग नहीं फटकने पाता।

हम पहले ही कह आये हैं कि हरएक वस्तुको यथास्थान रखना स्त्रियोंका पहला काम है। क्योंकि ऐसा न करनेसे मसाला ढूंढनेके लिए अचारके बर्तनमें, चावलके लिए आटाके बर्तनमें हाथ डालना पड़ता है, चीनीके धोखेमें नमक उठाकर डाल देना भी अव्यवस्थित चीजें रखनेका ही परिणाम है और फिर यदि कोई स्त्री रसोईके घरमें कपड़ोंकी पिटारी रख दे और कपड़े काले हो जायें तो क्या यह मूर्खता नहीं है?

घरमें एक भी निकम्मी चीजको नहीं रहने देना चाहिये। हमारे घरोंमें बहुतसी चीजें बिना प्रयोजन पड़ी रहती हैं। यहां तक कि ऐसी चीजोंसे घर भरा रहता है—जरूरतकी चीज रखनेके लिए जगह नहीं मिलती। जिस घरमें केवल दो-तीन सन्दूकोंसे काम चल सकता है, वहां इतनी पिटारियां और सन्दूकें भरी रहती हैं कि घरमें पैर रखनेकी भी जगह कठिनाईसे मिलती है। ऐसा होना भी स्त्रियोंकी मूर्खता प्रमाणित करता है। इससे एक तो घर गन्दा रहता है, दूसरे जगहकी तंगी हो जाती है।

बहुत सी स्त्रियां नाक साफकर हाथको दीवारमें पोंछ देती हैं तथा दीवारपर ही थूक भी दिया करती हैं। यह आदत बहुत ही बुरी है। इससे घर गन्दा हो जाता है, बीमारी फैलती है तथा ऐसी फूहर स्त्रियोंके हाथका बनाया हुआ भोजन करनेका जी नहीं

चाहता। स्त्रियोंको चाहिये कि वे ऐसी-ऐसी छोटी बातें बिना किसी के सिखाये ही अपने स्वाभाविक ज्ञानसे जान जायं। जो चीज़ जहांसे उठायी जाय, उसे काम हो जानेके बाद तुरन्त पहलेकी जगह रख देनी चाहिये। इसमें आलस्य करना उचित नहीं। मान लो कि कोई फल काटनेके लिए चाकूकी आवश्यकता पड़ी। अब चाकू लाकर फल काट लो, और फौरन् उसे उसी जगह रख दो। यह कभी न सोचो कि अभी बैठी हूँ, उठूंगी तो रख दूंगी, जल्दी क्या पड़ी है। इसलिए चीज वहीं पड़ी रह जाती है। घरमें तरह-तरहके स्वभावकी स्त्रियां आया करती हैं पड़ी देखकर चुरा लेजाती हैं। इस प्रकार चीज भी चोरी जाती है और ठीक मौकेपर उस चीजके बिना हर्ज भी होता है। इसलिए चतुरा गृहिणीको कभी आलस्य नहीं करना चाहिये।

यदि घरमें और स्त्रियां हों, तो आपसमें काम बांट लेना चाहिये। हर कामको सुलह-सलाहसे करना चाहिये। कभी किसी-के मुखसे अपने लिए कोई कड़ी बात निकल पड़नेपर उसे सह लेना उचित है। बांटे हुए कामको बदलते रहना भी अच्छा होता है। मान लो एक घरमें दो औरतें हैं, घरमें कोई मजदूरिन नहीं है, इसलिए छोटे-मोटे सब काम दोनोंको करने पड़ते हैं। ऐसी दशामें एकने चौका-बर्तन करनेका काम ले लिया और दूसरीने रसोई बनानेका। इसी प्रकार और भी घरके सब काम बांट लिये। अब यदि एक स्त्री बारहों मास चौका-बर्तन ही करती रहे और दूसरी सदा रसोई बनाती रह जाय तो यह बात ठीक

क्योंकि एक ही काम करती रहनेसे जी ऊब जाता है और यह भी खयाल होने लगता है कि मेरे काममें अधिक मिहनत है और उसके काममें कम। कुछ दिनोंतक तो निभता है भीतर ही जलन रहती है, किन्तु भंडा फूट जाता है। असली बातको दोनों स्त्रियां प्रकट नहीं करतीं, उसके बहाने ज़रा-ज़रासी बातपर आपसमें कलह करने लगती हैं। फिर तो उनका सारा सुख कोसों दूर भाग जाता है। इसलिए कामका बँटवारा कर लेनेपर भी अदल-बदल कर लेना जरूरी है। इसी प्रकार एक महीनेके बाद या पन्द्रह दिनोंके बाद रसोई बनानेवाली स्त्रीको घर-बासनका काम ले लेना चाहिये और दूसरीको रसोई बनानेमें लग जाना चाहिये।

इस बातको कभी दिलमें न लाओ कि मैं कम काम करूं और घरकी अन्यान्य स्त्रियां अधिक काम करें। क्योंकि ऐसा सोचनेसे अन्य स्त्रियां भी ऐसा ही सोचने लगेंगी। हमेशा सबसे अधिक काम करनेके लिए तैयार रहो और यह भाव रखो कि मैं ही अधिक काम करूंगी ताकि और स्त्रियोंको आराम मिले। मेरे शरीरसे यदि किसीको कुछ आराम मिले, तो इससे बढ़कर खुशीकी बात और क्या हो सकती है। ऐसा भाव रखनेसे अन्य स्त्रियां भी ऐसा ही सोचने लगेंगी—खुद ही तुम्हें अधिक काम न करने देंगी। ऐसा करनेसे घरके काम-काजमें खींचातानी नहीं होती।

याद रहे कि आत्मा सबके शरीरमें एक ही है। इसलिए जैसा भाव तुम दूसरेके प्रति रखोगी, वैसा ही भाव दूसरेके हृदयमें भी तुम्हारे प्रति उत्पन्न हो जायगा। यदि तुम घरकी स्त्रियोंको प्रसन्न

रखना चाहोगी, तो वे भी तुम्हें प्रसन्न रखनेकी चेष्टा करेंगी। यदि तुम उन्हें जलाओगी तो वे भी तुम्हें जलावेंगी। यदि तुम उन्हें आराम पहुँचाओगी, तो वे भी तुम्हें आराम पहुँचावेंगी। इसलिए यदि तुम यह चाहो कि लोग मुझे मानें, मेरी खातिर करें तो तुम खुद लोगोंको मानने लगो खातिर करने लगो। देखोगी कि लोगोंका हृदय अपने-आप ही तुम्हारी रुचिके अनुकूल हो जायगा। शीशेमें अपना ही मुख उलटकर दिखायी पड़ता है। ठीक यही बात संसारके व्यवहारकी है। मनुष्य जैसा काम दूसरोंके साथ करता है वैसा ही काम दूसरे लोग भी उसके साथ करने लग जाते है। इसलिए इस मूल-मंत्रको गांठ बांधकर बड़े यत्नसे अपने हृदयमें रख लेना चाहिये।

जो स्त्री यह समझती है कि मैंने उसका बहुत सहन किया, पर अब नहीं सहा जाता—कहांतक सहूँ, वह भूल करती है। सोचनेको बात है कि सहन करनेवाला आदमी क्या अपने सिर-पर बोझा लाद लेता है? सहनकी कोई गठरी नहीं हुआ करती। यह तो एक ऐसी वस्तु है जिससे शरीर और हलका हो जाता है। मैं मानती हूँ कि कुछ स्त्रियोंका ऐसा भी स्वभाव होता है कि उनकी बात सहनेसे वे और आगे बढ़ जाती हैं। किन्तु हमेशाके लिये नहीं। सहनशीलता एक ऐसी चीज है जो दुष्ट स्वभावको भी शान्त कर देती है। जलमें आग पड़कर खुद ही बुझ जाती है। हां, यह बात दूसरी है कि जलका संसर्ग होनेपर एकबार आग जोरोंसे भभक उठती है।

क्योंकि एक ही काम करती रहनेसे जी ऊब जाता है और यह भी ख्याल होने लगता है कि मेरे काममें अधिक मिहनत है और उसके काममें कम। कुछ दिनोंतक तो निभता है भीतर ही जलन रहती है, किन्तु भंडा फूट जाता है। असली बातको दोनों स्त्रियां प्रकट नहीं करतीं, उसके बहाने ज़रा-ज़रासी बातपर आपसमें कलह करने लगती हैं। फिर तो उनका सारा सुख कोसों दूर भाग जाता है। इसलिए कामका बँटवारा कर लेनेपर भी अदल-बदल कर लेना जरूरी है। इसी प्रकार एक महीनेके बाद या पन्द्रह दिनोंके बाद रसोई बनानेवाली स्त्रीको घर-बासनका काम ले लेना चाहिये और दूसरीको रसोई बनानेमें लग जाना चाहिये।

इस बातको कभी दिलमें न लाओ कि मैं कम काम करूं और घरकी अन्यान्य स्त्रियां अधिक काम करें। क्योंकि ऐसा सोचनेसे अन्य स्त्रियां भी ऐसा ही सोचने लगेंगी। हमेशा सबसे अधिक काम करनेके लिए तैयार रहो और यह भाव रखो कि मैं ही अधिक काम करूंगी ताकि और स्त्रियोंको आराम मिले। मेरे शरीरसे यदि किसीको कुछ आराम मिले, तो इससे बढ़कर खुशीकी बात और क्या हो सकती है। ऐसा भाव रखनेसे अन्य स्त्रियां भी ऐसा ही सोचने लगेंगी—खुद ही तुम्हें अधिक काम न करने देंगी। ऐसा करनेसे घरके काम-काजमें खींचातानी नहीं होती।

याद रहे कि आत्मा सबके शरीरमें एक ही है। इसलिए जैसा भाव तुम दूसरेके प्रति रखोगी, वैसा ही भाव दूसरेके हृदयमें भी तुम्हारे प्रति उत्पन्न हो जायगा। यदि तुम घरकी स्त्रियोंको प्रसन्न

रखना चाहोगी, तो वे भी तुम्हें प्रसन्न रखनेकी चेष्टा करेंगी। यदि तुम उन्हें जलाओगी तो वे भी तुम्हें जलावेंगी। यदि तुम उन्हें आराम पहुँचाओगी, तो वे भी तुम्हें आराम पहुँचावेंगी। इसलिए यदि तुम यह चाहो कि लोग मुझे मानें, मेरी खातिर करें तो तुम खुद लोगोंको मानने लगो खातिर करने लगो। देखोगी कि लोगोंका हृदय अपने-आप ही तुम्हारी रुचिके अनुकूल हो जायगा। शीशेमें अपना ही मुख उलटकर दिखायी पड़ता है। ठीक यही बात संसारके व्यवहारकी है। मनुष्य जैसा काम दूसरोंके साथ करता है वैसा ही काम दूसरे लोग भी उसके साथ करने लग जाते हैं। इसलिए इस मूल-मंत्रको गांठ बांधकर बड़े यत्नसे अपने हृदयमें रख लेना चाहिये।

जो स्त्री यह समझती है कि मैंने उसका बहुत सहन किया, पर अब नहीं सहा जाता—कहांतक सहूँ, वह भूल करती है। सोचनेको बात है कि सहन करनेवाला आदमी क्या अपने सिरपर बोझा लाद लेता है? सहनको कोई गठरी नहीं हुआ करती। यह तो एक ऐसी वस्तु है जिससे शरीर और हलका हो जाता है। मैं मानती हूँ कि कुछ स्त्रियोंका ऐसा भी स्वभाव होता है कि उनकी बात सहनेसे वे और आगे बढ़ जाती हैं। किन्तु हमेशाके लिये नहीं। सहनशीलता एक ऐसी चीज है जो दुष्ट स्वभावको भी शान्त कर देती है। जलमें आग पड़कर खुद ही बुझ जाती है। हां, यह बात दूसरी है कि जलका संसर्ग होनेपर एकबार आग जोरोंसे भभक उठती है।

गन्दे गीत और मेले-तमाशे

आजकल ऐसी प्रथा बिगड़ गयी है कि विवाहादिके समय स्त्रियां मांगलिक गीतोंके स्थानपर गन्दे गीत गाया करती हैं। देशके स्त्री-समाजकी यह चाल बहुत बुरी है। इससे बहुतसी बुराइयां पैदा होती हैं। एक तो सुननेवालोंको अनुचित मालूम होता है दूसरे ऐसे शब्दोंसे मनमें स्वभाविक ही बुरे भाव पैदा होते हैं। सती-साध्वी देवियोंको सदा इससे बचना चाहिये। क्योंकि बारम्बार गन्दे शब्दोंके कहने और सुननेसे उत्तम हृदय भी बिगड़ जाता है। इसलिए इसका सर्वथा त्याग करना बहुत ही आवश्यक है। यह याद रखना चाहिये कि स्त्री-जातिका, लज्जा नम्रता आदि ही भूषण है। ऐसी दशामें ईश्वरके दिये हु गुणोंको छोड़कर निर्लज्ज बनना, बाप-भाई और बड़ोंके सामने भद्दे शब्द मुखसे निकालना, बड़े ही शर्मकी बात है। और फिर यह भी तो सोचनेकी बात है कि ऐसे गानोंका असर छोटे-छोटे बालक-बालिकाओंपर क्या पड़ता है!

देहातकी स्त्रियां बहुधा मेले-तमाशेमें जाया करती हैं। यह बात भी बहुत बुरी है। आजकलका पुरुष-समाज इतना नीच हो गया है कि स्त्रियोंको अपने धर्मकी रक्षा करनेके लिए पूरी सावधानी रखनेकी जरूरत है। मेलों-तमाशोंमें बहुतसे दुष्ट स्वभावके मनुष्य तरह-तरहकी बोली बोलते हैं हंसी-दिल्लगी की गन्दी बातें कहते हैं। इसलिए इन सब बातोंसे सदा दूर रहनेमें ही कुशल है!

हां, जब देशकी दशा अच्छी हो जायगी, लोगोंका नैतिक चरित्र सुधर जायगा, तब ऐसा करनेमें कोई हानि नहीं है।

लज्जा

" लज्जा परं भूषणम् " यानी लज्जाके समान स्त्रियोंके लिए दूसरा गहना नहीं। और चाहे संसार भरके गुण हों, किन्तु जिस स्त्रीमें लज्जा नहीं, उसमें कुछ नहीं। लज्जा करनेवाली स्त्रीका सबलोग आदर करते हैं। स्त्रियोंकी खास सुन्दरता लज्जा ही है।

किन्तु अत्यन्त लज्जा भी करना दोष है। कितनी ही स्त्रियोंमें लज्जाकी मात्रा इतनी बढ़ जाती है कि वे उसकी रक्षा करनेके लिए अपना धर्म भी भूल जाती हैं। पति थका हुआ घरमें आता है, किन्तु वे लज्जाके कारण उसे एक ग्लास ठंढा जल भी नहीं देतीं। ऐसी लज्जा किस कामकी ? लज्जा करनी चाहिये बाहरी आदमियों-से, नकि घरके लोगोंसे। परन्तु आजकल ठीक इसका उलटा हो रहा है। स्त्रियां बाहरी आदमियोंके सामने तो कुछ भी लज्जा नहीं करती, पर अपने घरके आदमियों तथा पतिके सामने हाथ भरका घूँघट निकाल लेती हैं। बहुतसी स्त्रियां ऐसी भी होती है जो घरके और लोगोंसे तो बिलकुल नहीं लजातीं, किन्तु अपने पतिको देखतेही लज्जाके समुन्द्रमें डूब जाती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि स्वामीसे इस तरहकी लज्जा करना मूर्खता है। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि अपने पतिसे लजायें ही न। स्वामीमें भक्ति रखनी चाहिये, प्रेम करना चाहिये और सीमातक उसके सामने लज्जा भी करनी चाहिये।

गम्भीरता

स्त्रियोंको सदा गम्भीरतासे रहना उचित है। छिछोरापन ठ
नहीं। गम्भीर स्वभावकी स्त्रियोंसे अत्याचारी मनुष्य सदा डर
रहते हैं। गम्भीर रहनेसे बुद्धि स्थिर रहती है, उसमें कभी
चञ्चलता नहीं आती, विपत्तिकालमें जी नहीं घबड़ाता और
कोई अनुचित काम होनेकी सम्भावना रहती है। गम्भीर-स्वभा
वकी स्त्रियां हर कामका आगा-पीछा सोच लिया करती हैं, किन्तु
चञ्चल स्वभावकी स्त्रियां ऐसा नहीं कर सकतीं और सदा धोखा
खाया करती हैं। किन्तु गम्भीरता ऐसे ढङ्गकी होनी चाहिये
जिसमें अभिमान न घुस सके। बहुधा देखा जाता है कि गम्भीर
स्वभाववालोंको लोग अभिमानी कहने लगते हैं। इसलिए गम्भीर
तामें सरलताका रहना बहुत जरूरी है।

विलासिता और सन्तोष

विलासिता इच्छाकी सहचरी है। ज्यों-ज्यों इच्छा बढ़ती है,
त्यों-त्यों विलासिता भी बढ़ती जाती है। इसलिए बढ़ती हुई
इच्छाओंको रोकना चाहिये। इस युगमें इच्छाकी बढ़तीके कारण
ही विलास बढ़ता जा रहा है। देशमें नित्य नये-नये सुगन्धित
तेल, एसेन्स आदि निकल रहे हैं। शहरकी स्त्रियोंमें इसकी काफी
खपत भी हो रही है। पर किसीके दिलमें यह बात नहीं आती
कि प्रायः सभी सुगन्धित तेल अधिक लाभ होनेके लिए किरासिन

लसे बनाये जाते हैं और किरासिन तेल सिरके लिए बड़ा ही हानिकारक है।

आज यदि विलासिता इतनी न बढ़ गयी होती, तो इतने बड़े-बड़े शहरोंका निर्माण कदापि न हो पाता। तरह-तरहके शीशे, कंघी, कपड़े आदि कहांतक गिनाया जाय, जिधर नजर पड़ती है उधर विचित्रता ही दिखलायी पड़ती है। हमारी विलासिता इतनी बढ़ गयी है कि बड़े-बड़े लखपती और करोड़पतिको भी पैसेके लाले पड़ गये हैं। कोई सुखी नहीं दिखता। चारों ओर हाय-हाय मचा हुआ है। ठाट-बाट खूब तड़क-भड़कका रहता है। कपड़े-लत्तेका कुछ कहना ही नहीं पर है भीतर पोल-ही-पोल। वे हमेशा अपनी पोल छिपानेकी चिन्तामें पड़े रहते हैं! यहांतक कि उनकी स्त्रियां भी जल्द असली भेदको नहीं जान पातीं। जानें कैसे? वे तो इसीमें मस्त रहती हैं कि हमारा पति खूब कपड़े-लत्तेसे लैस है हमें भी खूब तरह-तरहकी चीजें लाता है। किन्तु वे यह नहीं जानतीं कि पतिके हृदयमें कितनी चिन्ता है।

इसलिए स्त्रियोंको चाहिये कि वे विलासिताको कम करें और अपने पतियोंको भी सादी चालसे रहनेके लिए विवश करें। क्योंकि सादा जीवन वितानेसे ही पति सुखी रह सकता है। यह याद रहे कि सुन्दरता कपड़े लत्ते और बाल सँवारनेसे नहीं बढ़ती, बल्कि गुणोंसे और संयमसे बढ़ती है। किन्तु ऐसा वही स्त्री कर सकती है, जिसमें सन्तोष होगा। सन्तोषके बिना इच्छाएँ नहीं रुक सकतीं। सन्तोष ही सुखकी जड़ है। किसी कविने कहा भी है:—

नहिं धन धन है परम धन, तोषहिं कहहिं प्रवीन।
विन सन्तोष कुवेरऊ, दारिद दीन मलीन॥

जहां सन्तोष है, वहां सबकुछ है, ...
कुछ नहीं। इसलिए विलासितासे दूर रहनेके लिए सन्तोष
जरूरी है। क्योंकि विलासितामें तमाम दुर्गुण भरे रहते हैं। वि
सिनी स्त्री, मिहनत नहीं करना चाहती। क्योंकि पहले तो शृङ्गा
पिटारसे उसे फुरसत ही नहीं मिलती और यदि कुछ समय मिल
भी है, तो कपड़े मैले होनेके भयसे वह कोई काम नहीं कर
चाहती। इसी प्रकारके बहुतसे दोष हैं।

संक्षिप्त भोजन-विधि

और गुणोंके साथ ही भोजन बनानेका गुण होना स्त्रियों
लिए बड़ा जरूरी है। इसलिए खास-खास चीजोंके बनानेकी री
लिख देना भी हमारी बहनोंके लिए बड़े कामका होगा।

रोटी—आटेको खूब रोंदना चाहिये। जब वह पिघले
मोमकी तरह मुलायम हो जाय और हाथ तथा थाली में न चिप
तब समझो कि आटा तैयार हो गया। फिर मोटी रोटी हाथ
या चौके-बेलनसे बनाकर छोटेके तवेपर सेंको। एकबार जिसअं
सेंक चुको, उसे फिर तवेपर मत उलटो। दोनों ओर सेंक चुकने
बाद उसे उतार लो और तवेपर दूसरी रोटी . . . । और फि

सेंको जो तवेपर पीछे सेंका गया हो। आगपर रखकर उसे बराबर घुमाती जाओ। जब वह फूल जाय और उसपर अच्छी तरह सुर्खी आ जाय, तब दूसरी ओर उलटकर सेंको। जब उधरसे भी सुर्खी आ जाय तब उसे झाड़कर रख दो।

यह याद रहे कि मोटे आटेकी मोटी रोटीमें बहुतसे गुण हैं और महीन आटेकी पतली रोटीमें बहुतसे रोग। बड़े-बड़े डाक्टरोंने इस बातको सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक वस्तुके छिलकेमें पाचन-शक्ति मौजूद रहती है। इसलिए जो चीज महीन छिलकेकी हो और बिना कष्टके छिलके सहित खायी जा सके, उसका छिलका निकाल देना ठीक नहीं। जैसे गेहूँ है, अब इसका छिलका पतला होता है। यदि चलनीसे न निकाला जाय तो कोई हर्ज नहीं। क्योंकि आटेको चोकर सहित खानेमें, न तो कोई कष्ट ह: हो सकता है और न स्वाद ही बिगड़ सकता है। इसके अलावा गुण भी अधिक रहता है। मोटे आटेकी मोटी रोटी खानेके लिए इसलिए कही गयी है कि ऐसी रोटी शीघ्र पचती है और कब्ज नहीं करती, किन्तु महीन आटेकी पतली रोटी देरमें पचती है और कब्ज भी करती है। रोटीमें घी कभी नहीं पोतना चाहिये, क्योंकि इससे रोटी गरिष्ट हो जाती है। एक रोटी घी पोतकर दालमें भिगो दीजिये और एक रूखी रोटी भी भिगो दीजिये। मालूम हो जायगा कि रूखी रोटी जल्द गल जायगी, किन्तु घी वाली रोटी देरमें गलेगी।

दाल—हल्दीको अदहनके साथ ही छोड़ देना चाहिये। जब पानी कुछ गर्म हो जाय तब दाल भी बीनकर छोड़ देनी चाहिये।

ऐसा करनेसे दालमें जो कुछ कराई रहती है, वह फूलकर उबालके साथ बाहर हो जाती है। किन्तु जो दाल खौलते हुए पानीमें छोड़ी जाती है, उसकी कराई बाहर नहीं होती। दाल छोड़ चुकनेके बाद पिसा हुआ गर्म मसाला छोड़कर उसे ढक दे। जब उबाल आ जाय तब थोड़े समयके लिए ढक्कनको उतार दे और उबालको साफ करके आंच कुछ मधुर कर दे—ताकि दालका पानी अधिक न बहे। कुछ देरके बाद नमक खटाई भी अन्दाजसे छोड़ दे। पावभर दालके लिए रुपयेभर नमक काफी होता है। अदहनका पानी ऐसे अन्दाजसे डालना चाहिये जिसमें दूसरी बार पानी छोड़नेकी जरूरत न पड़े। क्योंकि दुबारा पानी छोड़नेसे दालमें मिठास नहीं रह जाती। आंच भी बराबर लगती रहनी चाहिये। कम आंचसे जो दाल पकती है वह भी मीठी नहीं होती। जब दाल अच्छी तहरसे पक जाय और उसका पानी भी बिलकुल मिल जाय तब उसे उतारकर छौंकके ढक देना चाहिये।

चावल—इसे बीनकर दो बार धो डाले। जब पानी कुछ गर्म हो जाय तब धोये हुए चावलको जलमें छोड़कर ऊपरसे थोड़ासा घी छोड़कर चला देना चाहिये। किन्तु घी छोड़नेके पहले पानी को नाप लेना चाहिये ताकि पीछे मांड़ निकालनेकी जरूरत न पड़े। नापनेका सीधा तरीका यह है कि चावलके ऊपर बिचली अंगुलीके एक पोरके बराबर पानी रहे। इस प्रकार चलाकर उसे ढँक दे। पक जाने पर उतार ले। यदि पानी कुछ अधिक रहे तो चावलपकनेसे थोड़ी देर पहले ही पकनेभरके लिए पानी रखकर बाकी पानी निकाल दे।

तरकारी—कई तरहसे बनायी जाती है। किन्तु इसका मामूली तरीका यह है कि कड़ाहीमें घी डालकर उसमें जीरा, मेथी, थोड़ी लाल मिर्च या गर्म मसाला पीसकर डाल दे और खूब भूने। जब सुगन्ध उड़ने लगे और देखनेमें भी लाली मालूम हो. किन्तु जलने न पावे. तब चीरी हुई तरकारी उसमें डालकर खूब भूने। बाद यदि रसादार तरकारी बनाना हो तो पानी छोड़ दे. अन्यथा योंही पका डाले। मसाला भी यदि पहले न छोड़ा गया हो, तो पानीके साथ छोड़कर चला देना चाहिये। इसी समय अन्दाजसे नमक भी छोड़कर ढक दे। पक जानेपर उतार ले। प्रायः सब तरकारियोंमें थोड़ी खटाई या दही छोड़नेसे स्वाद बढ़ जाता है। इसकी कुछ विधियां आगे बतलायी जायँगी।

यह तो हुई साधारण भोजनकी विधि, जो सब स्त्रियां जानती हैं। अब कुछ और चीजें बनानेकी रीति बतलायी जायगी। क्योंकि प्रतिदिन इन्हीं चीजोंके खाते रहनेसे मनुष्य एक प्रकारके दुःखका अनुभव करता है।

चाशनी—खांड़-(राब) का आधा पानी डालकर कड़ाहीको चूल्हेपर चढ़ा दे और काठकी हाथी या कलछुलसे राब और पानी-को मिला दे। जब कुछ उफान आने लगे तब उसमें मन पीछे दो सेर पानी ऊपरसे चारों ओर कड़ाहीमें डाल दे और आंच मधुर कर दे। ऐसा इसलिए किया जाता है कि राबमें मैल अधिक होती है. और तात-जुड़े पाकर ऊपर आ जाती है। जब मैल ऊपर आ जाय, तब पौनीसे निकाल-निकालकर उसे किसी बर्तनमें रखती

जाय। सब मैल निकल जानेपर मन पीछे सेरभर दूध और तीन सेर पानी मिलाकर फिर कड़ाहीमें ऊँचो धारसे चारों ओर डाले। इससे रही-सही मैल भी ऊपर आ जाती है। बाद उस मैलको भँपौनीसे निकाल ले। चाशनी तैयार हो जायगी।

किन्तु यह चाशनी पतली गाढ़ी कई तरह बनायी जाती है इसका नाम है एक तार, दो तार, तीन तार आदि। इसकी पहचान यह है कि सींकसे कड़ाहीकी चाशनीको निकालकर थोड़ी ठण्ढी हो जानेपर एक अंगुलीपर रखे और दूसरी अंगुली उसपर चिपकाकर आहिस्तेसे ऊपरको उठावे। उन दोनों अंगुलियोंके बीचमें जितने तार उठें, उतने तारकी चाशनी समझनी चाहिये। मान लो एक तारकी चाशनी तैयार हो गयी, किन्तु हमें तीन तारकी चाशनी बनानी है, ऐसी दशामें थोड़ी और आंच लगानेसे तीन तारकी चाशनी तैयार हो जाती है। किस चीजके बनानेमें एक तारकी और किसमें दो तथा तीन तारकी चाशनी बनायी जाती है यह स्थान स्थानपर बतला दी जायगी।

मूंगके लड्डू बनानेकी रीति—मूंगके महीन दाने निकालकर भाड़में भुनवा ले। दलकर उसे फटक ले, ताकि छिलके अलग हो जायें। बाद दालको चक्कीमें पीसे। किन्तु बिलकुल महीन नहीं। चूनसे आधा घी डालकर थोड़ा भून डाले और फिर सेरमें तीन पाव या ढाई पाव साफ चीनी डालकर मिला दे। बाद मसाले, पिस्ता, बादाम आदि छोड़कर लड्डू बांध ले। इसी रीतिसे भूने हुए चनेके भी लड्डू बनाये जते हैं।

बेसनके लड्डू बनानेकी रीति—बेसनके बराबर घी कड़ाहीमें डाले। जब घी पक जाय, तब उसमें धीरे धीरे बेसन छोड़ता जाय और दूसरे हाथसे चम्मच लेकर उसे चलाता जाय। इस प्रकार सब बेसन छोड़कर खूब धीमी आंचसे भून डाले। जब बेसनमें खूब सोंधापन आ जाय, तब उसे उतारकर ठण्ढा कर ले। बाद बेसनकी सवाई चीनी छोड़कर मिलावे। किन्तु गरम बेसनमें चीनीका मिलाना ठीक नहीं। पीछे मेवादि चीजें डालकर लड्डू बांध ले। ठीक इसी प्रकार सूजी या मगदका लड्डू भी बनाया जाता है।

सूजीका हलुआ—सूजीके बराबर घी डालकर कड़ाहीमें उसे खूब भूने। जब सूजीमें बादामी रङ्ग आ जाय, तब सूजीसे तिगुना खौलता हुआ पानी या गरम दूध और सूजीकी पौने दोगुनी (यानी पावभर सूजीमें सात छटांक) चीनी डालकर चलाता रहे। ऊपरसे मेवादि चीजें डालकर पक जानेपर उतार ले। चलाना बन्द न करे नहीं तो गोलियांसी बँध जाती हैं।

दूसरी रीति—पहले मिश्रीकी चाशनी करके अलग ढककर रख दे। (याद रहे कि मिश्रीकी चाशनी बनानेमें रावकी भांति अधिक अड़ंगेकी जरूरत नहीं, क्योंकि इसमें मैल नहीं रहती) फिर सूजीको घीमें डालकर मधुर आंचसे भूने और बराबर चलाता रहे। जब सूजी पक जाय, तब चाशनी छोड़ दे। बाद छीलकर कतरे हुए बादाम उसमें डाल दे। थोड़ी देर आंच लगनेके बाद जब बादाम भी सुर्ख हो जाय, तब पिस्ता और किसमिस डालकर

गुलाबजलका हलका छींटा देने लगे। इस प्रकार हलुएमें गाढ़ाप आ जानेपर उसे उतार ले। यदि केसरिया हलुआ बनाना हो, तो एक सेर सूजीके हलुएमें एक तोला केसर पीसकर चाशनीके सा डाल देना चाहिए।

कचौड़ी बनानेकी रीति—इसमें पीठी भरी जाती है। जैसे उड़दकी पीठी, आलूकी पीठी आदि। पांच सेर आटेके लिए सवा सेर पीठी काफी होती है। पीठीमें इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि दाल खूब धुली हुई हो और बारीक पिसी गयी हो। पीठी अच्छी रहनेसे कचौड़ी स्वादिष्ट होती है। सवा सेर उड़दकी पिसी हुई पीठीमें सोंठ एक छटांक, धनियां एक छटांक काली-मिर्च एक छटांक, लौंग और जीरा एक-एक तोला इन सबको महीन कूटकर मिला दे। बाद कड़ाहीमें घी डालकर खूब भून डाले। जब पीठी पक जाय, तब उतारकर रख दे और हींगके पानीमें हाथ लगाकर पीठी काटकर भरे। हींगका पानी लगानेसे कचौड़ियां फूलती खूब हैं। इसके बनानेकी रीति यह है—एक माशे हींगको पावभर पानीमें घोलकर मिट्टी या पत्थरके बर्तनमें रख ले और पीठी काटते समय उसी पानीमें हाथ लगाती जाओ। इस प्रकार आटेकी लोई काटकर उसमें पीठी भरती जाओ और उसे चिपटी करके आंचपर रखी हुई कड़ाहीके घीमें छोड़ती जाओ। कचौड़ीका आटा थोड़ा ढीला होना जरूरी है। आंच बहुत तेज न रहे। क्योंकि तेज आंचसे घी अधिक जलता है और कचौ-ड़ियां भी ऊपरसे तो लाल हो जाती हैं किन्तु भीतरसे खूब नहीं

पक पातीं। जब कचौड़ी लाल हो जांय, तब पौनेसे छानकर उसे निकाल लो।

परांवठे—यह कम घीसे भी बनता है और पूरियोंसे दूना घी भी चाट जाता है। आटेको दूधमें गूँधनेसे ये अच्छे बनते हैं। अथवा पानीसे साने हुए आटेको वेलनसे वेलकर रोटी बना ले, बाद उसपर खूब घी पोतकर दोहरा करके फिर घी पोतकर उलट दे। इस प्रकार चार पर्दे हो जाते हैं। बाद वेलकर तवेपर थोड़ा घी छोड़कर उसे रख दे। चम्मचसे परांवठेके ऊपर घी लगाती और सेंकती जाओ। जब दोनों ओर खूब लाल हो जाय, तब उतार ले। इसके सेंकनेमें थोड़ी देर लगती है। इसलिए जल्दी करनेसे कच्चा रह जाता है।

मालपूवा—आध-पाव सौंफको ढाई-पाव पानीमें औटाकर छान लो। उस पानीको पांच सेर घोली हुई चीनीमें मिलाकर फिर छान डालो। बाद आठ सेर मैदा और एक सेर दहीको इस मीठे पानीमें मिलाकर खूब मथो। पानीका अन्दाज़ ठीक रहे ताकि मैदा अधिक पतला न हो जाय। इसके बाद चौड़ी कड़ाहीमें घी डालकर आंचपर रख दे। जब घी पक जाय, तब उसमें मथे हुए आटेको लोटेमें भरकर उसी लोटेसे छोड़ो और फैलाती जाओ। फिर उलट-पलटकर खूब पका डालो और पौने या थापीसे उसका घी निचोड़कर बाहर निकाल लो।

नानखताई—मैदा, घी और चीनी तीनोंको बराबर-बराबर लेकर उसन डालो। पानी बिल्कुल न छोड़ो। सेर पीछे तीन माशे

समुद्रफेन भी उसमें छोड़ दो। इसकी गोली लोई बनाकर आधे पर काटकर दो टुकड़े कर दो। एक थालीमें कागज बिछाकर थोड़ी थोड़ी दूरपर सब टुकड़ोंको रखती जाओ। फिर भस्मीको—बिना धुएँके सुलगे हुए कोयलोंको—रख दो और उसके ऊपर कोयलोंका तवक्का रखो। जब सुर्ख हो जाय तब निकाल लो और दूसरी थालीको आंचपर रखनेके लिए पहलेहीसे तैयार रखो।

बेसन की कचौड़—अच्छे और महीन बेसनमें नमक और मिर्च पीसकर मिला दे, थोड़ी अजवाइन भी डाल देना अच्छा है। बाद बेसनको पतला करके खूब मथ डालो। यह जितना अधिक मथा जाता है, उतनी ही अच्छी पकौड़ियां बनती हैं और फूलती हैं। पीछे कड़ाहीमें घी डालकर उसमें पकौड़ियां पकावे। बेसन पुदीना और मेथी डाल दे जैसे पकौड़ी और भी स्वादिष्ट होजाती है।

मीठा भात—पावभर बढ़िया चावल धोकर उसमें उतना ही घी और उतनी ही चीनी तथा उतना ही दूध और उतना ही पानी डालकर एकसाथ चूल्हे पर चढ़ा दो और धीमी आंचसे पकाओ।

केसरिया भात—पहले चावल धोकर थोड़ेसे घीमें भून डालो। बाद अदहन चढ़ाकर उसमें इस चावलको छोड़ दो। फिर सेरभर चावलमें छः माशे केसर पीसकर डाल दो और साथ ही सेरभर चीनी भी छोड़ दो। फिर गरम मसालेका छौंका देकर थोड़ी जावित्री और खटाई भी छोड़ दो।

खीर—पहले दूधको लोहे या पीतलकी कड़ाहीमें मन्दी आंचसे खूब औटावे। जब दो सेर दूधका डेढ़ सेर रह जाय यानी

ौथाई दूध जल जाय, तब उसमें (धोकर घीमें भुने हुए) आध-ाव चावल छोड़ दो, ऊपरसे कतरे हुए बादाम और पिस्ते, धुली ई किसमिस भी छोड़ दो। सेर पीछे पावभर साफ चीनी भी ालकर पका दो। यदि इच्छा हो तो घी भी छोड़ दो, नहीं तो ोई आवश्यकता नहीं। खीर ठण्डी हो जाने पर गुलाब या केवड़े-ा जल डाल दो। गरम खीर अच्छी नहीं होती, इसलिए ठण्डी ो जाने पर खाना अच्छा है और तभी स्वादिष्ट भी होती है। इसी ्रकार चावलकी जगह पर मखाने डालनेसे मखानेकी खीर बनाई ाती है, यह फलहारी है और व्रतमें खाने योग्य है।

कढ़ी बनानेकी विधि—पहले मट्ठेमें बेसनको घोल लो और उसमें अन्दाजसे नमक-मसाला भी पीसकर मिला दो। बाद कड़ाहीमें घी डालकर जीरा छोड़ दो। जब जीरा पक जाय और छौंकनेके लायक हो जाय, तब मट्ठेमें घोले हुए बेसनको उसमें छोड़ दो। फिर खूब पकाओ। कढ़ी जितनी ही पकायी जाती है, उतनी ही स्वादिष्ट होती है।

दही जमानेकी रीति—बिना पानीका दूध लेकर औटावे। आठवां हिस्सा यानी दो सेरमें पावभर दूध जल जाने पर उतार ले। किन्तु औटाते समय बराबर चलाती रहो, जिसमें मलाई न पड़ने पावे। जब दूध ठण्डा हो चले किन्तु बिलकुल ठण्डा न हो जाय, तब उसमें थोड़ेसे दहीका जामन डालकर मिट्टीके बरतनमें जमा दो। यदि गर्मीका दिन हो, तो उसमें रुपया डालकर ठण्डे स्थानमें, वर्षाका दिन हो तो हवादार जगहमें रख दो। जामन

मीठे दहीका देना चाहिये, और उसमें पानी कम रहे। थोड़ेसे दही को कपड़ेमें बांधकर लटका दे, जब पानी चू जाय, तब उसी सूखे दहीका जामन डाले। बिना पानीके दहीका जामन डालनेसे दही गाढ़ा जमता है। यदि दूध खूब औटाया हुआ हो, जामन भी अच्छा हो और कोरे मिट्टीके बर्तनमें जमाया जाय, तो वह दही कई दिनोंतक खराब नहीं हो सकता।

रबड़ी—दूधको लोहेकी कड़ाहीमें रखकर आग पर चढ़ावे। जब दूधके ऊपर मलाई पड़ने लगे, तब पंखेसे दूधको हवा देती जाओ और महीन तथा चिकनी लकड़ीसे मलाई उठाकर दूधके ऊपर कड़ाहीके किनारेपर लगाती जाओ। इस प्रकार जब आठवां हिस्सा दूध कड़ाहीमें रह जाय, तब उतारकर उस गर्म दूधमें ही इच्छाके मुताबिक चीनी, लौंग और बड़ी इलायची पीसकर डाल दो। बाद खूब चलाकर दूधको ठण्ढा करलो और किनारों पर जमी हुई मलाईको चाकू या खुरपीसे उतारकर उसी दूधमें मिला दो। बढ़िया रबड़ी तैयार हो जायगी। बस यही रीति है।

पेड़ा—गाय, भैंसके दूधका खोवा होना चाहिये। कड़ाहीमें घी डालकर उसीमें खोवेको खूब भूनो। भूनते समय उसमें लौंग, इलायची भी पीसकर डाल दो। बाद इच्छाके मुताबिक चीनी और पीसा हुआ कन्द डालकर पेड़े बना लो।

चावलकी मीठी बर्फी—पहले चीनी डालकर दूधको खूब औटाकर गाढ़ा करके रख लो। बाद अच्छे चावलका भात बनाकर पत्थरकी सिल पर पीस डालो और उसमें किसमिस सनूची

तथा इलायची कूककर मिला दो। फिर छोटी-छोटी वरी बनाकर कचौड़ीकी तरह घीमें निकालो और रखे हुए गाढ़े दूधमें छोड़ती जाओ। सब निकाल चुकनेके बाद पिस्ता और बादाम कतरकर छोड़ दो। दो घंटेके बाद जब वरियां फूल जायँ तब खाओ।

अरवी—यह बहुत ही गरिष्ठ चीज़ है, किन्तु अजवाइन इसे जल्द पचाती है। इसका पानी सुखा डालनेसे इसकी गरिष्ठता दूर हो जाती है। यों तो यह कई प्रकारकी बनाई जाती है पर यहां दो-एक खास तरीके ही लिखे जायँगे।

१—मोटी अरवीको छीलकर अजवाइनका छौंका देकर भूने। बाद मसाला डालकर जितनी अरवी हो. उतना ही पानी डालकर पकावे। जब पक जाय, तब उतार ले।

२—नई अरवीको पहले ही छील लो और पुरानीको उबालकर छीलो। बाद अजवाइनसे बघारकर घीमें भूनो और काली मिर्च, मसाला तथा नमक डालकर पका लो। ऊपर थोड़ा नीबूका रस मिला दो।

पापड़—सेरभर मूंगके आटेमें छटांकभर लोटका सज्जी पीसकर डाले। (यदि लोटका सज्जी न मिले तो सवा तोला सोडा डाल दे) एक छटांक नमक, गरम मसाला, काली मिर्च, जीरा, डालकर उसन ले। बाद ओखलमें खूब कूटे। पीछे छोटी-छोटी लोई तोड़कर तेलके हाथसे बेलन द्वारा बेलकर जरा धूपमें सुखाकर रख दे। फिर भोजनके समय आवश्यकताके अनुसार घीमें भून ले या आगपर सेंककर रख दे।

आलू—एक सेर कच्चे आलूको उवालकर या योंही छील डालो। वाद घीमें पांच रत्ती हींग और दस लौंगका वघार देकर पीसी हुई आधी छटांक धनियां अठन्नीभर हल्दी और थोड़ी लाल मिर्च, इन सव चीजोंको उसमें भून लो। जव हल्दी पक जाय तव समझ लो कि सव चीजें पक गयीं। फिर उसमें आलूको छोड़ दो। ऊपरसे काला जीरा तीन माशे, वड़ी इलायची तीन माशे, काली मिर्च छः माशे, मुआफिकका पानी और छटांकसे कुछ कम नमक डालकर पकाओ। गलने पर उतार लो। यदि रसादार वनाना हो तो पानी और नमककी मात्रा वढ़ा दो। पकते समय थोड़ा दही छोड़ दो तो और भी अच्छा। कुछ लोग इसमें राई भी पीसकर डालते हैं पर वहुतसे लोगोंको यह पसन्द नहीं।

कद्दू—छिले हुए सेरभर कद्दूको टुकड़े-टुकड़े करके रख ले। दो तोले धनियां, हल्दी और मिर्च पांच-पांच माशे पानीमें पीस ले। तीन छटांक घीमें गरम मसाले और दो माशे जीरेका वघार देकर पिसे हुए मसालेको उसमें भून डाले। फिर कद्दूको डाल दे। थोड़ा चलाकर ऊपरसे नमक और आधपाव पानी डालकर ढाप दे। मन्दी आंचसे पकावे। जव पानी जल जाय और कद्दू भी पक जाय, तव ढाई तोला पुदीना कूटकर उसमें डाल दे और खूव चला कर उसे मिला दे। वाद उतार ले।

वैंगन—सेरभर वैंगनको एक-एक अंगुलके टुकड़े कर डाले। पावभर घीमें जीरेका वघार दे। वाद छः माशे हल्दी, दो तोला धनियां दो तोला लाल मिर्च इन सवको पीसकर उसमें भूने और

ऊपरसे सवा पाव दही डाल दे। बाद बैंगन छोड़कर आध सेर पानी डाल दे। आधे घण्टेतक पकावे। फिर तोलाभर कतरा हुआ हरा पुदीना और चार माशे पिसा हुआ गरम मसाला डालकर चला दे और नमक मिलाकर उतार ले।

भिंडी—दही इसकी जान है। भिंडीके दोनों सिरोंको काटकर चाकूसे फांक करके कूटा हुआ मसाला भर दो। घीमें हींगका बघार देकर इन्हें थोड़ा भूनो, पर हल्के हाथसे चलाओ। पीछे थोड़ासा दही और पानी डालकर चला दो। ऊपरसे पानीका कटोरा भरकर रख दो। जब भिंडियां गल जायँ, तब उतार लो।

दूसरी विधि—मुलायम भिंडी सेरभर लेकर पावभर घीमें भून डालो और निकालकर अलग रख लो। छः माशे हल्दी, दो तोले धनियां और लाल मिर्चको पानीमें पीसकर घीमें जीरेका बघार देकर इन्हें भून लो। बाद भिंडी, नमक और थोड़ासा पानी पिसा हुआ आध छटांक अमचूर और छः माशे मसाला डालकर पका डालो।

दूधकी तरकारी—भैंसके दूधको खूब औटावे। मलाई न पड़ने दे। जब दूध खूब औट जावे, तब उसमें थोड़ासा खट्टा दही डालकर जोश देती रहो। इससे दूध फट जायगा। बाद फटे हुए दूधको छानकर कपड़ेमें बांधकर लटका दो। जब सब पानी टपक जाय, तब उसको गोलियाकर चाकूसे काट-काटकर धीमी आंचसे घीमें तलो। फिर घीमें हल्दी मिर्च, मसाला भूनकर इन तले हुए टुकड़ोंको भी उसमें भूनो और थोड़ेसे मेथीके पत्ते डाल दो। ऊपर

से नमक और पानी छोड़कर पकाओ। जब कुछ पानी जल जा
(सब पानी नहीं), तब उतार लो।

नमक का साग—साम्हर नमककी बड़ी-बड़ी डली लेक
थूहर (सेहुँड़) के दूधमें भिगो दो। जब खूब भींग जाय त
दूधको पोंछकर घीमें बघार देकर उसमें सागकी भांति इन्हें मसाल
डालकर छौंक दो। ऊपरसे नमक डालकर चला दो. फिर उतार
कर रख दो। इसमें यदि ऊपरसे नमक न डालो तो और चीजोंकी
भांति अलोना ही रह जायगा।

रायता—एक रायता मीठा बनता है और दूसरा नमकीन।
मीठे रायतेमें बतासेका रायता भी बनता है। उसकी विधि यह
है—बतासेको गरम घीमें डाल दे। किन्तु घी अधिक गरम न
रहे नहीं तो बतासे गल जायँगे। घी बिलकुल ठण्ढा भी न रहे
नहीं तो बतासेमें घुल न सकेगा। पहले घीको खूब खरा कर ले।
बाद उतारकर नीचे रख दे। उस कुनकुने घी में बतासे डालकर
पौनीसे छानकर निकाल ले। इससे पहलेही दहीको मथकर उसमें
मीठा मिलाकर तैयार रखे। उसीमें इन बतासोंको डाल दे। बतासे
का रायता बन गया। ये बतासे दहीमें भिगोनेपर भी नहीं गलते।

नमकीन—इसमें भुने जीरेकी तथा धींगारकी खास जरूरत
पड़ती है। यह बहुतसी चीजोंका बनता है। जैसे कद्दू, ककड़ी,
बथुआ आलू, मूली आदि। जीरेको नमक मिर्च के साथ इसके
लिए कभी न पीसे। अलग पीसकर रख ले। जिस बर्तनमें रायता
बनाना चाहो, उसे खूब साफ करके रख लो। फिर आगके अङ्गारे-

पर थोड़ीसी राई या हींग रखकर ऊपरसे थोड़ा घी डाल दो और उसके ऊपर उस साफ वर्त्तनमें औंधाकर रख दो—ताकि सब धुआं उसी वर्त्तनमें रह जाय, बाहर न निकल सके। जब समझो कि अब हींग या राई जल गई होगी, तब वर्त्तनको उठाओ और बड़ी शीघ्रतासे छाछ या पानीमें घुला हुआ दही उसमें डालकर ढंक दो। धुआं बाहर न निकलने पावे। बाद जिस चीजका रायता बनाना हो उसमें उसे छोड़ दो। ऊपरसे पिसा हुआ नमक, मिर्च, भुना तथा पिसा हुआ जीरा छोड़ दो। रायता तैयार हो जायगा। ककड़ीका रायता बनाना हो तो उसे छीलकर कद्दूकसमें महीन कसकर निचोड़ डालो और कचाही उसमें डाल दो और यदि कद्दूका बहुतही बढ़िया रायता बनाना हो तो कद्दूको छीलकर उसे कद्दूकसमें कस लो और उसे थोड़ा बफारा देकर निचोड़ डालो। दूधको खूब औटाकर, उसमें दहीका जामन देकर इस कसे हुए कद्दूको उसी दूधमें डालकर रातभर रहने दो। दहीमें कद्दू भी जम जायगा। सबेरे दहीको चलाकर उसमें नमक, मिर्च और भुना हुआ जीरा डाल दे। बथुआ, आलू, बैंगन आदिको भी उबालकर ही रायतेमें डालना चाहिये।

अब अचार, चटनी तथा मुरब्बोंकी कुछ रीतियां बतलाई जायंगी। आमका अचार बनाना हमारी सब बहनें जानतीं हैं इसलिए उसके लिखनेकी कोई जरूरत नहीं। नीबूका अचार डालनेमें इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि नीबू कार्तिकका होना जरूरी है। क्योंकि इस समयके नीबूका अचार अधिक ठहरता है और सावन-भादोंका कम।

से नमक और पानी छोड़कर पकाओ। जब कुछ पानी जल जा (सब पानी नहीं), तब उतार लो।

नमक का साग—साम्हर नमककी बड़ी-बड़ी डली लेकर थूहर (सेहुँड़) के दूधमें भिगो दो। जब खूब भींग जाय तब दूधको पोंछकर घीमें बघार देकर उसमें सागकी भांति इन्हें मसाला डालकर छौंक दो। ऊपरसे नमक डालकर चला दो, फिर उतार कर रख दो। इसमें यदि ऊपरसे नमक न डालो तो और चीजोंकी भांति अलोना ही रह जायगा।

रायता—एक रायता मीठा बनता है और दूसरा नमकीन। मीठे रायतेमें बतासेका रायता भी बनता है। उसकी विधि यह है—बतासेको गरम घीमें डाल दे। किन्तु घी अधिक गरम न रहे नहीं तो बतासे गल जायेंगे। घी बिलकुल ठण्ढा भी न रहे नहीं तो बतासेमें घुल न सकेगा। पहले घीको खूब खरा कर ले। बाद उतारकर नीचे रख दे। उस कुनकुने घी में बतासे डालकर पौनीसे छानकर निकाल ले। इससे पहलेही दहीको मथकर उसमें मीठा मिलाकर तैयार रखे। उसीमें इन बतासोंको डाल दे। बतासे का रायता बन गया। ये बतासे दहीमें भिगोनेपर भी नहीं गलते।

नमकीन—इसमें भुने जीरेकी तथा धींगारकी खास जरूरत पड़ती है। यह बहुतसी चीजोंका बनता है। जैसे कद्दू, ककड़ी, बथुआ, आलू, मूली आदि। जीरेको नमक मिर्च के साथ इसके लिए कभी न पीसे। अलग पीसकर रख ले। जिस बर्तनमें रायता बनाना चाहो, उसे खूब साफ करके रख लो। फिर आगके अङ्गारे-

र थोड़ीसी राई या हींग रखकर ऊपरसे थोड़ा घी डाल दो और उसके ऊपर उस साफ वर्त्तनमें औंधाकर रख दो—ताकि सब धुआं उसी वर्त्तनमें रह जाय, बाहर न निकल सके। जब समझो कि अब हींग या राई जल गई होगी, तब बर्त्तनको उठाओ और बड़ी शीघ्रतासे छाछ या पानीमें घुला हुआ दही उसमें डालकर ढंक दो। धुआं बाहर न निकलने पावे। बाद जिस चीजका रायता बनाना हो उसमें उसे छोड़ दो। ऊपरसे पिसा हुआ नमक, मिर्च, भुना तथा पिसा हुआ जीरा छोड़ दो। रायता तैयार हो जायगा। ककड़ीका रायता बनाना हो तो उसे छीलकर कद्दूकसमें महीन कसकर निचोड़ डालो और कच्चाही उसमें डाल दो और यदि कद्दूका बहुतही बढ़िया रायता बनाना हो तो कद्दूको छीलकर उसे कद्दूकसमें कस लो और उसे थोड़ा बफारा देकर निचोड़ डालो। दूधको खूब औटाकर, उसमें दहीका जामन देकर इस कसे हुए कद्दूको उसी दूधमें डालकर रातभर रहने दो। दहीमें कद्दू भी जम जायगा। सवेरे दहीको चलाकर उसमें नमक, मिर्च और भुना हुआ जीरा डाल दे। बथुआ, आलू, बैंगन आदिको भी उबालकर ही रायतेमें डालना चाहिये।

अब अचार, चटनी तथा मुरब्बोंकी कुछ रीतियां बतलाई जायंगी। आमका अचार बनाना हमारी सब बहनें जानतीं हैं इसलिए उसके लिखनेकी कोई जरूरत नहीं। नीबूका अचार डालनेमें इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि नीबू कार्तिकका होना जरूरी है। क्योंकि इस समयके नीबूका अचार अधिक ठहरता है और सावन-भादोंका कम।

और दालचीनी एक-एक माशे, पुदीना डेढ़ तोला, अदरख छटांक, बादामके बीज एक तोला, पिस्ता छः माशे, किस.. आधपाव (घीमें भूनकर) छुहाड़ा आधापाव इन सब ... साथ पीस डालो। ऊपरसे आधासेर चीनीकी चाशनी ... अमृतवानमें रख दो।

जिमींकन्दकी चटनी—इसे सूरन भी कहते हैं। क.. जिमीकन्द लेकर उसके छिलके उतार डालो। बाद उसके छोटे-छो.. टुकड़े करके खिलुवे चनेका आटा, नमक मिर्च और मसालों.. साथ पीस डालो। इस जिमींकन्दमें खुजली नहीं रह जायगी।

आमकी चटनी—सेरभर आमको छीलकर उसके गूदे उतार लो और इन मसालोंके साथ महीन पीस डालो—साम्हर-और सेंधा नमक एक-एक छटांक, एक छटांक अदरख दो माशे लौंग, एक तोला लाल मिर्च एक तोला काली मिर्च, एक तोला धनियां, तीन तीन माशे जायफल जावित्री और दालचीनी, एक तोला सूखा पुदीना, छटांकभर नीबूका रस।

सीना-पिरोना

मैं पहले कह आई हूँ कि स्त्रियोंके लिये सीने-पिरोनेका काम जानना बहुत जरूरी है। इससे एक तो सिलाईके पैसे बचते हैं, दूसरे बेकार समय कटता है। इसलिए सब स्त्रियोंको चाहिये कि वे अपनी लड़कियोंको सीने-पिरोनेकी भी शिक्षा दें। पहले कपड़े का काटना उन्हें सिखलावें। इसका सहज तरीका यह है कि खुद

कपड़ा काटकर बच्चियोंको दिखलाना चाहिये। जब दस-पांच बार देख लेनेपर उनके ध्यानमें आजाय तब कागज या पुराने कपड़ेको काटकर उन्हें दे देना चाहिये और उसीके मुताबिक उनसे कटवाना चाहिये। धीरे-धीरे उन्हें कपड़ा व्योंतना आजायगा।

उसके बाद सीनेका काम सिखलाना चाहिये। पहले खुद सी करके उन्हें दिखलाना चाहिये फिर अपनी की हुई सिलाईको उधेड़कर लड़कियोंसे सिलवाना चाहिये। ऐसा करनेसे वे डोरेके निशानपर सी लेंगी। जब कुछ हाथ बैठ जाय, तब पुराने कपड़ोंपर सिलवाना चाहिये। किन्तु पहले सीधा-सीधा काम ही उन्हें देना चाहिये—ताकि उनकी समझमें आवे। जैसे—थैली, टोपी आदि। जब सीना आजाय तब तुर्पना बतलाना चाहिये। जब अच्छी तरह हाथ सध जाय, तब नये कपड़े सीनेके लिये देना उचित है। पहले पट्टे रजाई, दोहर, चदरा आदि आसन काम ही देना चाहिये। पहले सीनेका कामही सिखलाना ठीक है। जब यह आजाय तब पिरोनेका काम बतलाना अच्छा है। सीनेका काम है—अङ्गरखा, कुर्ता, पाजामा, चोली, बटुआ, सुजनी आदि, और पिरोनेका काम है—मोजे, दस्ताने बुनाना फीता बेल कमरबन्द आदि।

सीनेके लिए इतनी चीजोंकी जरूरत पड़ती है—सूई, धागा, कैंची, एक अंगुलीमें पहननेके लिये दर्जीकी तरह चौदी अंगूठी और गज। सूईको दाहने हाथके अंगूठे और बीचकी अंगूठेके पासवाली दो अंगुलियोंसे पकड़ो। अनामिकामें दर्जीकी अंगूठी पहनो। यदि सूई कपड़ेसे बाहर न निकले तो इस अंगूठीसे सूईको

आगेकी ओर ठेल दो। इसके विना सूई हाथमें धंस जाती है। यह अंगूठी लोहे, पीतल और तांवेकी होती है। इसका आकार टोपी-कासा होता है। अंगुलीके अगले भागमें पहनी जाती है। इसके अलावा एक बैठकी मशीन रहे तो और भी अच्छा। इस मशीनसे बैठकर सीया जाता है। एक हाथसे घुमानेका काम लिया जाता है और दूसरेसे कपड़ा सम्भालने तथा सरकानेका। इससे सिलाई भी जल्द होती है और काम भी महीन होता है। लिखकर सीने-पिरोनकी शिक्षा नहीं दी जा सकती, इसलिये अब इसपर अधिक न लिखूंगी। यह काम तो सामने बतलानेसे ही अच्छी तरह आ सकता है।

चर्खा

पहले हमारे देशमें घर-घर चरखा चलता था, घर-घर सूत तैयार होता था और कपड़ा खरीदनेमें एक पैसा भी नहीं खर्च होता था। यह बचत स्त्रियोंके जरियेसे ही होती थी। किन्तु दुःख की बात है कि समयके फेरसे हमलोग अपनी इस विद्यासे हाथ धो बैठीं। दूसरोंकी मुहताज बन गयीं। यदि विलायत वाले किसी कारणसे कपड़ा न भेजें, तो हमलोग लज्जा निवारण भी नहीं कर सकतीं। क्या यह लज्जाकी बात नहीं है?

हर्षकी बात है कि महात्मा गांधीने उसी खोई हुई वस्तुको फिर देशके सामने रख दिया। अब हमारा धर्म है कि हम अपने हाथों अपनी लज्जाका निवारण करें, किसीके भरोसे न रहें। विलायती कपड़ा पहननेसे एक तो रुपयेकी बर्बादी है, दूसरे पाप भी है। हर

साल साठ-सत्तर करोड़का कपड़ा हमारे देशमें आता है। यदि इतनी बड़ी रकम देशकी देशहीमें रह जाय, तो कितना बड़ा उपकार हो। इसको दूरतक सोचना चाहिये। यह नहीं सोचना चाहिये कि कपड़ेमें यदि सौ-पचास रुपये खर्च हो जाते हैं, तो इससे क्या हो सकता है। नौकामें यदि छोटासी सूराख हो और बूँद-बूँद करके पानी आता हो, तो यह सोचना भूल है कि इन बूँदोंसे क्या होगा। क्योंकि ऐसा सोचनेसे कुछही देरमें नौकाके भीतर इतना पानी जमा हो जायगा कि वह आपको लेकर अवश्य डूब जायगी। यही हाल कपड़ेके लिए बाहर जानेवाले रुपयेका है। यदि आपको सौ-पचास रुपयोंकी परवाह न हो, तो आप अपने देशकी गरीब बहनोंकी सहायतामें उसे खर्च करें, दूसरे देशवालोंको क्यों देती हैं? क्यों विलायती कपड़ा पहनकर पापका टोकरा सिरपर लादती हैं? आप समझती होंगी कि इसमें पाप क्या है! किन्तु प्यारी बहनो! यह समझना भूल है। विलायती कपड़ा पहननेमें बहुत बड़ा पाप है। सुनो, मैं बतलाती हूँ। हमलोग हिन्दू-स्त्री हैं। गऊ-ब्राह्मणकी सेवा करना हमारा परम-धर्म है। अंग्रेज लोग गऊका मांस खाते हैं। वे लोग तरह-तरहकी चीजें बनाकर हमारे हाथ बेचते हैं और काफी नफा उठाते हैं। यदि हमलोग उनके हाथकी बनी हुई चीज न खरीदें, तो उन्हें नफा कहां से हो? यदि उन्हें नफा न हो तो वे महँगा गो-मांस कैसे खरीदें और कैसे खाय? ऐसी दशामें तो उन्हें मुट्ठी-भर अन्नके लाले पड़े रहेंगे. मांसके लिए पैसे कहां पावेंगे। क्योंकि पैसोंसे ही तो तरह-तरह से अनर्थ किये जा सकते हैं. यदि पैसा ही न रहे.

तो अनर्थ अपने-आपही कम हो जांय। इससे आप सोच सकती हैं कि हमलोगोंकी मूर्खताके कारण ही गौयें कटी जा रही हैं घी महंगा हो रहा है, शुद्ध घी दुर्लभ होगया, हमारे बच्चे कमजोर होने लग गये और तरह-तरहके रोगोंसे हमारा शरीर जकड़ गया। यदि शुद्ध चीजें खानेको मिलतीं, तो आज हमारी यह दशा क्यों होती! इसलिए स्त्रियोंका धर्म है कि वे अंग्रेजोंको पैसे देकर उनसे गो-हत्या न करावें। और चीजोंकी बात जाने दीजिये केवल विदेशी कपड़ेके लिए प्रतिज्ञा कर लेनेसे ही हमारे देशका बहुत सुधार हो सकता है।

क्या कभी आपके दिलमें विलायतकी मिलोंका भी चित्र आया है? वहां पर अंग्रेज लोग कपड़ेके कारखानेमें काम करते जाते होंगे और उन्हीं हाथोंसे गो-मांस खाते जाते होंगे। वही हाथ कपड़ेमें भी लगता होगा। वही गौओंके खूनसे सना हुआ कपड़ा हमें पहनने को मिलता है। शोक! शोक!! इसलिए प्यारी बहनो! मेरी बात मानकर आज ही प्रतिज्ञा कर लो कि विलायती वस्त्र न पहनेंगी और अपने हाथसे चरखा चलाकर सूत तैयार करेंगी। ऐसी प्रतिज्ञा करके काम करनेसे सहजहीमें हमारा पापसे छुटकारा हो जायगा—गो-हत्याका पाप न लगेगा। क्योंकि वह आदमी भी पापी ही है जो कसाईको पैसे देकर हत्या कराता है।

ज़रा सोचो तो सही. महात्मा गांधीने हमारे-तुम्हारे उपकारके लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया। ऐसे महान् त्यागी-पुरुषकी आज्ञा न माननेसे हमें नर्कमें भी रहनेकी जगह न मिलेगी। लोक-मान्य तिलक और महात्मा गांधीको क्या तुम मनुष्य समझती हो?

ये लोग देवता हैं। जो आदमी देशकी रक्षाके लिए अनेक प्रकारके दुःख भोग रहा है. जिसने अपने शरीरसे उत्पन्न बाल-बच्चोंकी ओर ध्यान तक नहीं दिया, जो देशको समझानेमें दीवाना हो गया, उसकी बातको जो आदमी न मानेगा, उस पर ईश्वरका कोप होगा। हाय! एक आदमी तो हमारे उपकारके लिए कष्ट सहे और हम उसकी बात तक न सुनें, यह कितनी अधम बात है? संसारके इतिहासमें हमें कौनसा स्थान दिया जायगा, समझमें नहीं आया। प्यारी बहनों! याद रखो कि यदि हमलोग चरखेको अपने हाथका सुदर्शन नहीं बनावेंगी, तो भविष्यमें इतिहासके पढ़नेवाले हमलोगोंके नामपर थूकेंगे।

इसलिए चरखा चलाना हमलोगोंका धर्म है। घर-गृहस्थीके कामोंसे फुरसत मिलनेपर तो इसे चलाना ही चाहिये, साथही अन्य कामोंकी तरह इसके लिए भी घन्टे-आध-घन्टेका समय निश्चित् कर लेना चाहिये। चाहे किसी कामका कितनाही हर्ज हो, उस समय सूत अवश्यही काता जाय। इस प्रकार यदि घर-घरमें प्रत्येक स्त्रियां चरखेसे सूत तैयार करने लग जांय. तो देशका उद्धार चन्द दिनोंमें हो सकता है। इसके लिए यह भी समझनेकी जरूरत नहीं है कि हमें तो चरखा चलाना नहीं आता। क्योंकि चरखा चलाना बहुत आसान काम है। दस-पन्द्रह दिनके अभ्याससे ही आ जाता है।

महात्मा गांधी मर्दोंको समझाकर थक गये पर पत्थर दिल न पिघल सका। अब स्त्रियोंको दिखला देना चाहिये कि स्त्रियोंका दिल कितना कोमल होता है और वे किस प्रकार जल्द कामपर

तैयार हो जाती हैं। एक बार महात्माजीकी बातोंपर तो ध्यान दो। उन्होंने पटनामें व्याख्यान देते हुए कहा था—"यदि तुम्हारी माँ मोटी रोटी पकावे, और तुम्हारे पड़ोसी एक विधर्मीके घरमें बढ़िया और महीन रोटी पके, तो क्या तुम्हें अपने घरकी मोटी रोटीके बदले पड़ोसीके घरकी महीन रोटी स्वीकार होगी? यदि नहीं, तो फिर विदेशके महीन कपड़ोंके फेरमें पड़ना नादानी है। यदि कपड़ा महीन है तो हमारा है और मोटा है, तब भी हमारा है—हमारे देशका बना है।" किन्तु अब तो यह बात भी नहीं रही। चरखेने तो बारीकीमें भी विलायतकी मिलोंके कान काट लिये। क्या तुम्हें यह नहीं मालूम कि जब इन मिलोंका जन्म भी नहीं हुआ था तब हमारे देशमें हाथके सूतसेही इतने महीन कपड़े तैयार होते थे कि उसकी चर्चा सुनकर आज भी संसार आश्चर्यके साथ दांतोतले अंगुलियां दबाता है। आज भी कहीं-कहीं हाथके सूतसे ऐसे कपड़े तैयार होने लग गये हैं कि मिलवाले इतनी उन्नति करने पर भी अबतक वैसा कपड़ा तैयार नहीं कर सकते। इसलिए थोड़े दिनोंके लिए महीन कपड़े पहननेकी आशा छोड़कर। हमें इस पुण्य कार्यमें तैयार होना चाहिये। फिर तो कुछही दिनोंके बाद अभ्यास हो जानेपर हमारेही हाथोंसे इतना बारीक सूत तैयार होने लगेगा कि महीन वस्त्रके लिए भी झीखना नहीं पड़ेगा।

जो बहन अच्छी हालतमें हों उन्हें भी इस काममें हाथ लगा देना चाहिये। उनको चाहिए कि वे मुहल्ले या गांवकी गरीब तथा विधवा स्त्रियोंको चरखा दें और उनसे सूत तैयार करावें। ऐसा

करनेसे गरीब घरोंको अन्न-वस्त्र मिलने लगेगा, और तुम्हें भी नुकसान नहीं सहना पड़ेगा।

शिल्प-विद्या तथा कपड़ा रँगना

आजकल शिल्प-विद्यासे संग-तराशीका मतलब निकाला जाता है। पर वास्तवमें यह बात नहीं है। इस देशमें चौदह विद्याएं और चौंसठ कलाएं प्रसिद्ध थीं। चौदह विद्याओंमें चतुरताकी बातें हैं और चौंसठ कलाओंमें हाथसे सम्बन्ध रखनेवाली चीजें हैं। वे चौदह विद्यायें ये हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद ये चार वेद। शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरुक्त ये चार उपवेद तथा छन्द ज्योतिष मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र और पुराण या पिछले चारके स्थानपर आयुर्वेद धनुर्वेद गान्धर्व और स्थापत्य (शिल्प) ये छः वेदांग। बस यही चौदहों विद्याएं हैं।

यहीं चौंसठ कलाएं सो क्षेमेन्द्र कविने इस प्रकार गिनाकर स्त्रियोंके उपयोगी माना है। १ गान, २ वाद्य, (बाजा बजाना) ३ नाचना, ४ नाटक, ५ चित्रकारी, ६ बेंदी आदि लगाना ७ तडुल कुसुमावलि विकार अर्थात्—सुन्दर चावलोंसे घरमें बेल, फूल बनाना, ८ फूलोंकी सेज बनाना ९ दशन-वसनांग-रागा यानी—दांत और कपड़े रंगनेकी रीति जानना, १० गर्मीमें ठंढकके लिए मरकत माटी आदिसे आंगन पूरना ११ जलतरंग आदि बजाना, १२ जल में तैरना, १३ चित्राभ्ययोगउयानी—भीतरी रुचिको बिना कहे केवल भावोंसे जाहिर करना १४ माला और हार बनाना १५

वेणी तथा फूलोंका गुच्छा बनाना, केश सँवारना आदि, १६ नेपथ्य योग (वेष बदलना) १७ कर्ण-पत्र-भंग (कानोंमें पहननेकी वस्तु तैयार करना), १८ अंगोंमें सुगन्धित पदार्थोंके लगानेकी विधि १९ भूषण पहननेकी विधि जानना (यानी कौनसी चीज कहां पहनी जाती है), २० इन्द्रजाल (कौतुक दिखाना) १२ अपनेको सुन्दरी बननेकी रीति जानना २२ हस्तलाघव (फुर्तीसे और सफाईसे सब काम करना), २३ शाक-तरकारी बनाना, २४ चटनी आदि बनाना, २५ सीना-पिरोना, २६ सूत्रक्रीड़ा, २७ प्रहेलिका (पहेली या गूढ़ अर्थ पूछना और जानना), २८ प्रतिमाला (जल्द उत्तर देना), २९ बोलनेमें चातुरी, ३० पुस्तक-वाचन, ३१ किस्से कहानी जानना, ३२ समस्या-पूर्ति (काव्य करनेकी रीतिजानना), ३३ कुर्सी आदि बुनना, ३४ समयपर युक्ति सोचना, ३५ घर सजाना, ३६ चीजोंकी हिफाजत और रक्षा, ३७ चांदी आदिकी पहचान, ३८ सब धातुओंका गुण जानना, ३९ मणिराग ज्ञान, ४० आकार-ज्ञान, अर्थात्—नगोंके रखने और पहचाननेको जानकारी जैसे—सच्चे हीरेकी पहचान यह है कि कागजमें छेद करके चश्मेकी तरह हीरेको आंखोंपर लगाकर उस छेदको देखे, यदि एकही छेद दीखे, तब तो हीरा असली नहीं तो नकली। या हीरेके नीचे अंगुली रखकर देखे, यदि अंगुलीकी रेखायें ऊपरसे दिखलाई पड़ें तब तो नकली और यदि न दिखें, तो असली, ४२ वृक्षायुर्वेद (यानी पौधोंके बोनेका समय और उपराजनेकी रीति जानना), ४२ भेंड़ा, मुर्गा, तीतर आदिके युद्धकी बातें जानना, ४३ तोता मैना पालकर पढ़ाना,

४४ उत्साहन (पतिका शरीर मर्दन करना बाल काला करना), ४५ केशमार्जन, ४६ थोड़े शब्दोंमें भाव जाहिर करना, ४७ दूसरे देशोंकी भाषाएं जानना, ४८ देशके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंकी भाषाओंका ज्ञान, ४९ पुष्पके निमित्त पतिको अधीन करना, ५० धारणा-शक्तिको बढ़ाना, ५१ यन्त्रोंकी बातें जानना, ५२ दूसरेके स्वर-में-स्वर मिलाकर गानेकी रीति, ५३ मानसकाव्य, ५४ कोप-छन्द-ज्ञान, ५५ क्रिया विकल्प, ५६ यह जानना कि कैसे-कैसे छलोंसे लोग दूसरेको छलते हैं ५७ वस्तु-गोपन, ५८ चौसर जुआ आदिका दाव-पेंच जानना ५९ दूसरेको वश करना, ६० बच्चोंको खुश करने और शिक्षा देनेकी रीति जानना, ६१ विनय करना ६२ विनय करनेकी विधि, ६३ कसरत, ६४ विद्या ज्ञान।

इनमें अधिकांश बातोंका ज्ञान होना जरूरी है। सबका वर्णन करना कठिन है। किन्तु कुछ बातें यहां अवश्य बतला दी जावेंगी। सबसे पहले रँगाईका काम बताना उचित है, क्योंकि घरमें इसकी बड़ी जरूरत पड़ती है। मुख्य रङ्ग चार हैं—काला, पीला लाल और आसमानी। इन्हीं चार रङ्गोंसे सैकड़ों तरहके रङ्ग होते हैं। अब कौनसा रङ्ग किस तरह तैयार होता है, यह देखो—

पीला रङ्ग—हल्दी हरसिंगारकी डंडी, केसर टेसूके फूल और पीली मिट्टीके मेलसे तैयार होता है

लाल रङ्ग—पतङ्ग कसूम, आल, शिंगरफ लाख, गेरू मेंहदी, मंजीठ कत्था महावर आदिसे तैयार होता है।

काला रङ्ग—मांजू कसीस और लोहेसे तैयार होता है।

नीला रङ्ग—लील. लाजवर्दीकी पुड़िया आदिसे तैया होता है।

चूना और सज्जीसे रङ्ग उड़ानेका काम लिया जाता है। आ चूर खट्टा नीबू फिटकिरी, सुहागा आदिसे रङ्गको गहरा कि जाता है। यदि किसी कपड़ेका रङ्ग काटना हो तो किसी धातु बर्तनमें पानी डालकर कपड़ेको खौलावे। पानी कपड़ेके ऊपर रहे ऊपरसे थोड़ीसी पिसी फिटकिरी छोड़ दे। सब रंग कटकर पानी आ जायगा। किन्तु इस तरहसे केवल कच्चा रंगही कटता है प नहीं। कच्चे रंगके कपड़ेको हमेशा छायामें सुखाना चाहिये।

यदि कलप देना हो तो चावल पीसकर या गेहूंके मैदेको सो हगुने पानीमें घोलकर गसदार कपड़ेसे छान लो। पीछे आग खूब पकाओ। पर बहुत गाढ़ा न होने पावे।

सब्ज़—पहले कपड़ेको पक्के लीलके पानीमें डुबोदे फि हल्दीके गर्म जलमें थोड़ी देर तक कपड़ेको पड़ा रहने दे। बाद साफ पानीसे धो डाले और फिर फिटकिरीके पानीमें डुबोव सुखा दे। कलप देना हो तो उसे भी इसी पानीमें डाल दे।

काही—डेढ़-पाव करवेरकी जड़को सवा-सेर पानीमें रातको भिगो दे सवेरे औटाकर छान ले। इसमें थोड़ा-सा कसीस पीस कर मिला दे। फिर कपड़े रंग डाले। जितना कसीस दिया जायगा उतना ही गहरा रंग होगा।

पीला—हल्दीको पीसकर उसमें थोड़ी-सी सज्जी मिला दो पीछे कपड़ेको रंग डालो। बाद पानी डाल-डालकर कई बार कपड़े

ा मल-मलकर धो दो। जब हल्दीकी गन्ध जाती रहे तब फिट-
करीके पानीमें डुबोकर सुखा दो।

केसरिया—अनारके छिलके हरसिंगारके डंठको औटाकर
छान लो। फिर मजीठको पानीमें औटाकर रंग निकाल लो। इसे
ो छान लो। कपड़ेको पहले फिटकिरीके पानीमें डुबाओ बाद दोनों
गके पानीको एकमें मिलाकर कपड़ेको रंगो।

शर्बती—तीन हिस्सा हरसिंगारके फूलोंका रंग, एक भाग
कसूमका रङ्ग मिलाकर रङ्ग लो।

गुलाबी—कसूमकी थोड़ीसी गादको पानीमें मिलाकर रङ्ग लो।

लाल—गुलाबीसे पंचगुनी कसूमकी गाद देकर रङ्गो बाद
खटाईके पानीमें डुबोकर सुखा डालो।

पिस्तई—कपड़ेको पक्के लीलके पानीमें बहुत हलका रङ्गो।
ार हल्दीके पानीमें एक बार डुबाकर साफ पानीसे धो डालो।
ाद कपड़ेको दहीके टपकाये हुए पानीमें थोड़ीदेर तक तर रहने
। जब हल्दीकी गन्ध मिट जाय, तब खटाईके पानीमें धो डालो।
लप देना हो, तो कल्पको भी खटाईके पानीमें मिला दो।

उन्नाबी—पहले कपड़ेको हर्रेके पानीमें रङ्ग डालो। बाद दो
ला कटके पानीमें रङ्गो। फिर छटांक-भर पतङ्गके औटाये हुए पानी-
डुबोकर दो तोला फिटकिरीके पानीमें डुबो दो और सुखा लो।

सूचना—एक सेर लोहेके चूर्णको साढ़े-सात सेर पानीमें डाल-
र मिट्टीके बर्तनमें रख दो। पन्द्रह दिनमें पानी काला हो
जायगा। बस यही कट कहलाता है।

दुरङ्गा—सीप, मूंगेकी जड़ तथा सफेद गोंद इनको बा
पीसकर गुड़ और पानीके साथ खूब औटावे। बाद खूब स
करे। मलमल लेकर उसके एक ओर इस रङ्गका लेप करे।
सूख जाय, तब पहले पक्के रङ्गमें कपड़ेको डुबो दे। फिर सुखा
और कच्चे रङ्गमें डुवावे। जैसे लीलका रङ्ग पक्का है, इसलिए प
लीलमें और पीछे कसूममें क्योंकि कसूम कच्चा है। इससे
ओर आबी रङ्ग और दूसरी ओर जाफरानी रङ्ग हो जायगा।
पहले लीलमें रङ्गकर सुखानेके बाद हल्दीमें रंगे। इससे कप
एक ओर पीला और दूसरी ओर हरा रङ्ग दिखलाई पड़ेगा।

धब्बा छुड़ानेकी रीति

खून—नमकके पानीमें धो डालनेसे खूनका दाग छुट जाता

स्याही—पुराने सिर्केको पानीमें गरम करके उसी पान
कपड़ा धो दो, तो स्याहीका धब्बा मिट जायगा।

लील—ताजी दूबको पानीमें गरम करके धोनेसे लील
दाग छूट जाता है।

मेहँदी या फलोंका दाग—कबूतरकी बीट पान
औटाकर धोनेसे छूट जाता है।

ऊँटकी मेंगनको पीसकर पानीमें घोलो, बाद उसीमें चौ
घन्टे तक कपड़ेको पड़ा रहने दो। दूसरे दिन धो डालो। फिर
और साबुनके पानीसे साफ कर दो। इससे सब तरहका दाग
जाता है।

चौथा अध्याय

गर्भाधान

गर्भाधान ही मनुष्य के जीवनकी खास जड़ है। आज इसका ज्ञान क्या पुरुष क्या स्त्री किसीको नहीं रह गया है, इसीसे मनके अनुसार बच्चे पैदा नहीं हो रहे हैं। पहले यहांके लोगोंको यह बात मालूम थी कि मैथुन केवल सन्तानोत्पत्तिके लिए है; किन्तु अब लोगोंने उसे इन्द्रिय-सुखकी वस्तु बना लिया है। यही कारण है कि बहुतोंके तो सन्तान ही उत्पन्न नहीं होती और बहुतोंके नालायक बच्चे पैदा होते हैं तथा बहुतोंके रोगी और अल्पायु बालक जन्मते हैं। पुराने ज़मानेमें ब्रह्मचर्यका पालन करके स्त्री-पुरुष गृहस्थाश्रममें प्रवेश करते थे, शास्त्रोंका रहस्य जानते थे, युवावस्थामें विवाह करते थे। सोलह वर्षकी स्त्री और पचीस वर्षके पुरुषोंका विवाह होता था। किन्तु आज-कल तो जो कुछ हो रहा है, वह आंखोंके सामने है—लिखने की जरूरत नहीं। इसीसे तुम्हारे देशकी यह हीन दशा हो रही है।

इसलिये गर्भाधानके सम्बन्धमें जानने योग्य खास-ख बातोंका लिखना जरूरी है। बहुधा स्त्रियां अपनी मूर्खताके का गुप्त रोगोंको जानती ही नहीं, जब वह रोग जड़ पकड़ लेता तब वे जान पाती हैं। कितनी ही स्त्रियां लज्जाके कारण अपने गु रोगोंका हाल किसीसे नहीं कहतीं, और अपनेसे अपने जीवन चापट कर डालती हैं। किन्तु ये दोनों ही बातें बुरी हैं। तन्दुरु ठीक रहनेपर स्त्रीको एक महीने पर मासिक-धर्म हुआ करता है इसका दूसरा नाम है रजस्वला होना। किसी-किसी स्त्रीको कभी कभी महीनेसे दो-एक दिन पहले या पीछे भी रजोदर्शन हो जाता है, किन्तु इससे कोई हानि नहीं। यदि इससे अधिक समय टल कर रजोदर्शन हो तो समझ लेना चाहिये कि तन्दुरुस्तीमें फर्क है। इसके सिवा शुद्ध रजकी पहचान यह है कि उसका दाग धोनेसे मिट जाता है और वह पतला होता है। विकार-युक्त रजका दाग नहीं मिटता। इसकी दवा करनेमें देर करनेसे बड़ी हानि होती है। रजस्वला होनेपर स्त्रीको बहुत शान्त और प्रसन्न रहना चाहिये। क्योंकि यह समय उनके विश्राम करनेका है और इसी समय गर्भकी तैयारी करनी पड़ती है। जो स्त्री इस समय क्रोध करती है, अच्छे व्यवहारसे नहीं रहती और अशुद्ध होने पर गर्भ धारण कर लेती है, उसका बच्चा क्रोधी और बुरे आचरणका हो जाता है। इसलिए इस समय बड़ी सावधानी रखनी चाहिये।

गर्भ धारण करनेके लिए रजोदर्शनके दिनसे तीसरी या चौथी रात्रिके बादके दिन अच्छे हैं। क्योंकि कोई स्त्री तो तीन दिन और

ोई चार दिन तक अशुद्ध रहती है। जब रक्त निकलना बन्द हो
ाय, तब स्नान करके प्रसन्न चित्तसे स्वामीका दर्शन कर लेना
ाहिये। यदि पुत्र की कामना हो, तो ४-६-८-१०-१२-१४-१६वीं
ात्रिमें गर्भ धारण करे और यदि कन्याकी लालसा हो तो ५-७-
-११-१५वीं रात्रि को गर्भ धारण करना चाहिये। तेरहवीं
ातको शास्त्रों ने काट दिया है इसलिए उस दिन किसीको भी
र्भ धारण नहीं करना चाहिये। यदि गर्भ न रहे तो समझना
ाहिये कि स्त्री या पुरुषमें कोई-न-कोई विकार है। फिर उसकी
केसी अच्छे और निर्लोभी वैद्यसे चिकित्सा करनी चाहिये।
र्भाधान हो जानेके बाद स्त्रियोंको सदा प्रसन्न चित्त रहकर अच्छी-
अच्छी बातें करनी चाहिये। क्योंकि माताके गर्भमें बालकपर
जितना भला-बुरा असर पड़ता है उतना और किसी समय भी
नहीं पड़ता। इसीसे माताओंको इसकी पूरी जानकारी रखनी
चाहिये और गर्भ धारण करनेकी तथा उसकी रक्षा करनेकी चेष्टा
करनी चाहिये।

गर्भ-रक्षा

गर्भकी रक्षा करनेके लिए गर्भिणीको हर समय सावधान
रहना चाहिये। किसी तरहका कुपथ्य करनेसे अथवा उलटा-सीधा
काम करनेसे गर्भके नष्ट होनेका भय रहता है। गर्भिणीको दौड़कर
नहीं चलना चाहिये। सीढ़ीपर तेजीसे चढ़ना-उतरना नहीं चाहिये।

यदि कोई प्रिय प्राणी मर जाय तो शोक नहीं करना चाहिये। कोई डरावनी बात न कहे न सुने और न सोचे। जुलाब न ले और न वमन ही करे। क्योंकि ये सारी बातें गर्भको नष्ट करनेवाली हैं। गर्भिणीको चाहिये कि वह कभी क्रोध न करे; बुरी वस्तुको न देखे, ग्रहण लगनेसे दो-तीन घंटा पहलेही किसी कोठरी में जा बैठे, क्योंकि ग्रहणकी छाया पड़नेसे गर्भस्थ बालकका अंग भंग हो जाता है, बहुत न सोवे, अधिक जागरण न करे। गरम या तीक्ष्ण वस्तु न खाय, उपवास न करे पुरुषका समागम न करे, मल-मूत्रके वेगको कभी न रोके जोरसे न बोले, अधिक मिहनत न करे। इनसे हानि पहुँचती है।

गर्भिणी स्त्रीको चाहिये कि वह अच्छे-अच्छे काम करे, शरीरको सदा शुद्ध रक्खे, हल्का भोजन करे, अपनी इच्छाको कभी न रोके यानी जिस चीजके खानेकी इच्छा हो उसे जरूर खाय, यदि कोई हानिकारक चीज खानेकी इच्छा हो तब भी उसे खाना चाहिये, किन्तु बहुत थोड़ा, जिसमें इच्छा भी मिट जाय और किसी तरहकी हानि भी न पहुँचे। वह सदा प्रसन्न रहे पति और परमेश्वरका ध्यान करे भगवान् रामचन्द्र, श्रीकृष्ण आदि अवतारोंकी कथा सुने।

यदि किसी कारणवश गर्भके नष्ट होनेके लक्षण दिखलाई पड़ें तो तुरन्त उसके रोकनेका यत्न करना चाहिये। क्योंकि एक बार जिस स्त्रीका गर्भ नष्ट हो जाता है उसका बहुधा बिगड़वा ही जाता है।

गर्भ-नष्टके लक्षण और यत्न

अचानक शरीर शिथिल पड़ जाय, व्याकुलता बढ़ जाय जी डूबने लगे, खड़ी होने से शिरमें चक्कर आने लगे, कलेजेमें और दोनों जांघोंमें रह-रहकर वेदना हो, पेशाबके रास्ते तरबूजकासा पानी झरने लगे तो समझो कि गर्भ नष्ट होनेवाला है। यदि कमर, जंघा या गुदामें अधिक पीड़ा हो, शूल हो, रुधिर बाहर आने लगे, तो समझ लो कि गर्भाशयसे गर्भ अलग हो गया है।

यदि नष्टताके लक्षण दिखलाई पड़ें तो प्रारम्भहीमें नीचे लिखे यत्नोंसे गर्भकी रक्षा करनेमें देर नहीं करनी चाहिये।

१—पावभर पदमाखको दो सेर जलमें २४ घंटे भिगोनेके बाद उसे पकावे। जब आधसेर रह जाय तब पावभर घीमें पकावे और जब सब पानी जल जाय, केवल घी शेष रह जाय तब उसे उतार ले। फिर एक तोला घी बराबरकी मिश्री मिलाकर नित सबेरे सेवन करे।

२—मुलहठी, देवदारु और दुद्धी पीसकर दूधमें पिये।

३—यदि रुधिर निकलने लग गया हो तो दूधमें कसेरू या कमल औटाकर ठण्ढा करके पिलावे अथवा दो रत्ती अफीमका सत किसी सूखी चीजके साथ खिला दे।

अब प्रत्येक महीनेकी चिकित्सा अलग-अलग लिखी जाती है।

प्रथम मास—मंजीठ, लालचन्दन, कूट, तगर इन सब चीजों

को बराबर-बराबर लेकर दूधमें पीसकर पीनेसे गर्भकी वेदना तथा उपद्रवोंका शमन होता है।

दूसरा महीना—यदि दूसरे महीनेमें कोई उपद्रव खड़ा हो तो सिंघाड़ा, कसेरू, सफेद जीरा, बेलपत्र और छुहाड़ा समान लेकर ठण्ढे पानीमें पीसकर दूधमें छानकर पीना चाहिये।

तीसरा महीना—सफेद चन्दन, पद्माख खस और तगर को बराबर-बराबर लेकर ठण्ढे पानीमें पीसकर बकरीके दूधमें छानकर पीना हितकर है।

चौथा महीना—खस, केलेकी जड़ और कमल ककड़ीको ठण्ढे पानीमें पीसकर बकरीके दूधमें पीनेसे लाभ होता है।

पाँचवाँ महीना—सांठीकी जड़, सिरस, बेरकी गिरीको ठण्ढे पानीसे पीसकर बकरीके दूधमें पीनेसे पांचवें महीनेका गर्भोपद्रव शान्त होता है।

छठवाँ महीना—गजपीपल, नागरमोथा, नारंगी, सफेदजीरा, स्याहजीरा, पद्माख, लालचन्दन और बचके समान भागको घिसकर बकरीके दूधमें पीनेसे सुख मिलता है।

सातवाँ महीना—पीपलकी जड़ बड़की जड़, जलभगरा सूर्यमुखीकी जड़, सांठेकी जड़ और [illegible] बराबर-बराबर लेकर बकरी[illegible]धमें पीसकर पी[illegible]

आठवाँ [illegible] कमलका पत्र,

नवाँ महीना—काकोली, पलासका बीज, चीतेकी जड़, खस इनको जलमें पीसकर पिये और पुराने अन्नका भोजन करे।

दसवाँ महीना—कमलके फूल, मुलहठी, मूंग और मिश्री को पानीसे पीसकर गायके दूध में पीना चाहिये।

ग्यारहवाँ महीना—मुलहठी, पदमाख, कमलगट्टा, कमलनाल, इनको पानीसे पीसपर गो-दुग्धमें पीवे।

बारहवाँ महीना—कमलगट्टा, सिंघाड़ा, कमलका फूल और कमलनाल इनको पानीसे पीसकर गायके दूधमें पिये।

यद्यपि बहुधा बच्चे नवें या दसवें महीनेमें ही पैदा हो जाते हैं, किन्तु आयुर्वेदके मतसे गर्भकी अवधि बारह महीनेतक है और कभी-कभी ऐसा होता भी है, इसलिए बारहों महीनेका यत्न लिख दिया गया। यदि बारह महीने बीत जानेपर भी बच्चा पैदा न हो और पेट फूला रहे तब समझ लेना चाहिये कि रोग है। फिर उसकी दवा करानी चाहिये।

यदि गर्भिणी स्त्रीको सवेरे उठते ही भूख लग जाय तो मल मूत्र त्याग करके हाथ-मुख धोकर थोड़ा-सा दूध पी लेना चाहिये। इससे भूख भी मिट जाती है और कोई हानि भी नहीं पहुंचती। पेटको शुद्ध रखनेकी ओर अधिक ध्यान रखना चाहिये। यदि कभी पेट भारी मालूम हो और दस्त साफ न हो तो दो तोला अरंडी (रेंडी) का तेल, चीनी और गऊका शुद्ध दूध मिलाकर पी लेना चाहिये। इससे कोठा भी साफ हो जाता है और गर्भ के लिए कोई हानि भी नहीं पहुँचती। इसी प्रकार छातीमें दर्द या

जलन होनेपर चिरायतेका अर्क पीना चाहिये। गर्भिणी स्त्रीका पित्त कभी न बढ़ने पावे। पेड़ू जांघ या पेटमें दर्द होनेपर थोड़ासा नारियलका तेल गरम करके हलके हाथसे मलना चाहिये।

सूतिका-गृह

इस प्रकार नियम पूर्वक रहकर जो स्त्री गर्भकी रक्षा करती है उसे बालक जन्मते समय अधिक कष्ट नहीं होता। जब बच्चेके जन्मका समय आ जाय तब गर्भिणी को बहुत ही साफ और हवादार कमरेमें कर देना चाहिये। किन्तु अधिक हवा न लगने पावे। यदि जाड़ेका दिन हो तो सूतिका-गृहको गरम रखनेकी चेष्टा करनी चाहिये। आग हमेशा रखनी चाहिये। किन्तु धुआं बिलकुल न हो।

बच्चा पैदा करनेवाली स्त्री बहुत होशियार होनी चाहिये। वह प्रिय वचन बोलनेवाली हो। बच्चा होते समय घरके भीतर दो-तीनसे अधिक स्त्रियां न रहने दे। बालक पैदा होनेपर पूरी सावधानी रखनी चाहिये। क्योंकि यह समय बड़ा ही नाजुक होता है। जन्म होनेके बाद कई दिनोंतक बच्चे प्रायः बीस घण्टे तक सोया करते हैं। यह सोना लाभ ही पहुंचाता है। इसलिए कच्ची नींदमें बच्चोंको कभी न जगाना चाहिये। बच्चेको तेज रोशनीकी ओर नहीं ताकने देना चाहिये। सौरके घरमें तेज प्रकाशका दीपक जलाना ठीक नहीं।

इस अवस्थामें स्त्रियोंको वहुधा रोगमें जकड़ जाना पड़ता है। मूत्र रुक जाता है, पेट भारी पड़ जाता है। इसलिए प्रसूता स्त्रीको बहुत सावधानीसे रखना चाहिये, ताकि रोग अपना अधिकार न जमाने पावें। प्रसूत रोग इसी समय हो जाता है और जन्म-भर पिण्ड नहीं छोड़ता। प्रसूत रोगसे कितनी ही स्त्रियां तो शीघ्र ही इस संसारसे कूच भी कर जाती हैं। इस रोगके लक्षण ये हैं— शरीरमें मन्द पीड़ा हो, भीतर ज्वर लगा रहे, प्यास अधिक लगे, हाथ-पैर या पेट सूज जाय, बारम्बार कै हो, जी मिचलाता रहे, ज्योति धुंधली हो जाय, माथेसे पसीना निकले, मूत्र अधिक या कम अथवा बिलकुल नहीं आवे तथा मर्मस्थानमें शूल हो स्त्रीके लिए इस रोगसे भयंकर दूसरा कोई भी रोग नहीं है। इससे स्त्रीका जीवन ही चौपट हो जाता है।

इस रोगसे बचनेके लिये सूतिका-गृह की पूरी सावधानी रखनी चाहिये। चालीस दिनतक प्रसूताको पूर्ण रीतिसे नियमोंका पालन करते रहना जरूरी है। नियम ये हैं—

सूतिका-गृहमें ठण्ढी हवा न जाने दे। अजवाइन इत्यादि गरम वस्तुओंकी धूनी दे। जाड़ेमें उस घरको गरम रखे। दशमूलका काढ़ा पहले तीन दिनोंतक दे। सोंठ पीपल, गज पीपल पीपला-मूल इत्यादि डालकर औटाया हुआ पानी पीनेको दे। बलकारक किन्तु हलका और पाचक भोजन करावे।

यदि प्रसूतके लक्षण दिखायी पड़ें, तो शीघ्र ही ढाई तोले गोखरू कुचलकर आधसेर पानीमें औटावे और छटांकभर रह जाने-

पर एक छटांकबकरीका दूध मिलाकरसंझा-सवेरे सात दिन सेवन करे। ठण्डी चीजोंसे बची रहे, आराम हो जायगा। लाक्षादि तथा शतावरि तैलका प्रयोग करना भी इस रोगमें बड़ा ही हितकर है।

स्त्री-चिकित्सा

ऊपरकी दवाके अतिरिक्त प्रसूत-रोगमें विषगर्भ तैल और मरीच्यादि तैल भी बहुत ही गुणदायक हैं। इनके बनानेकी विधि नीचे लिखी जाती है—

विषगर्भ तैल—धतूरकी जड़, निर्गुण्डी, कड़वी तूंबीकी जड़ अरंडकी जड़ असगन्ध पमार चित्रक, सहिजनकी जड़, कागलहरी, करियारीकी जड़ नीमकी छाल बकाइनकी छाल दशमूल शतावरी, चिरपोटन, गौरीसर, बिदारीकन्द, थूहरका पत्ता, आकका पत्ता, सनाय, दोनों कनेरकी छाल, अपामार्ग (चिचिड़ी) सीप—इन सबको तीन-तीन टकेभर ले और इन्हींके बराबर काले तिलका तेल ले। इतना ही अरण्डीका तेल भी ले और इनसे चौगुना पानी डाले। फिर सब दवाइयोंको कूटकर इसमें छोड़ मधुर आंचसे पकावे। जब पकते-पकते दवाइयां और पानी जल जायं, केवल तेल रह जाय, तब उतारकर उसमें सोंठ, मिर्च पीपल, असगन्ध रास्ना कूठ, नागरमोथा बच, देवदारु, इन्द्रयव, जवाखार पांचों नमक, नीलाथोथा, कायफल पाढ़, नारङ्गी, नौसादर, गन्धक, पुष्करमूल, शिलाजीत और हरताल ये सब धेले-धेलेभर और सिंगीमुहरा

एक टकेभर, सबको महीन पीसकर मिला दे। फिर इस तेलको शरीरमें मर्दन करनेसे प्रसूतके कारण होनेवाली पीड़ा फौरन दूर हो जाती है; इसमें सन्देह नहीं है, ऐसा प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है।

मरीच्यादि तैल—काली मिर्च, निसोत, दात्यूणी आकका दूध गोबरका रस देवदारु, दोनों हल्दी, छड़, कूट, रक्त चन्दन, इन्द्रायनकी जड़, कलौंजी, हरताल, मैनसिल, कनेरकी जड़ चित्रक, कलिहारीकी जड़ नागरमोथा बायबिडङ्ग पमार सिरसकी जड़, कुड़ेकी छाल नीमकी छाल सतोपकी छाल, गिलोय, थूहरका दूध, किरमालाकी गिरी, खैरसार बावची, वच मालकांगिनी इनको दो-दो रुपये भर, सिंगीमुहरा चार रुपये भर कड़आ तेल चार सेर गो-मूत्र सोलह सेर ले। सबको एकत्र करके मधुर आंचसे पकावे। जब केवल तेल रह जावे- तब उतारकर छान ले। फिर इस तेलका मर्दन करे। यह वायुके रोगोंको समूल नष्ट कर देता है।

इनके अतिरिक्त प्रसूतके लिए एक मासे लोहबानका सत और दो रत्ती कस्तूरी मिलाकर सात गोली बनावे। प्रति दिन बासी मुँह एक गोली खिलानेसे लाभ होता है। या बीरबहूटियोंको पकड़कर एक डिबिया में बन्द कर दे और उसीमें चावल भी डाल दे। महीने-दो-महीनेके बाद जब बीरबहूटियां मर जावें, तब उन चावलोंमेंसे एक चावल नित प्रसूत रोगमें खानेको दे।

गर्भिणीकी वायु—पांच-सात बादामके बीज और एक मासे गेहूँकी साफ भूसी खानेसे गर्भिणी स्त्रीका वायु विकार दूर

हो जाता है। यदि गर्भिणीको मूत्र न उतरे तो दाभकी जड़ दूबकी जड़ और कांसकी जड़को थोड़ा-थोड़ा लेकर दूधमें औटाकर पिलावे। यदि भोजन न पचे, खाते ही दस्तमें निकल जाय तो चावलके सत्तूको आम और जामुनके छिलकेके काढ़ेसे खावे। यदि गर्भिणीके रुधिर बहे, तो फिटकिरीके पानीमें कपड़ा भिगोकर गुप्त स्थानमें रख ले, और फलोंका सेवन करे।

प्रसव-वेदना—यदि बालक जनते समय अधिक पीड़ा हो तो सवा तोले अमलतासके छिलकेको पानीमें औटा शक्कर मिलाकर पी जाय। या चुम्बक पत्थरको प्रसूता अपने हाथमें लिये रहे। अथवा मनुष्यके बाल जलाकर गुलाबजल मिला स्त्रीके तलवेमें मले या स्त्रीकी लट उसके मुखमें दे दे। अथवा चक्रव्यूह बनाकर गर्भिणीको दिखला दे। यह व्यूह बहुतसे लोग जानते हैं इसलिए व्यूह-चित्र देनेकी आवश्यकता नहीं है।

थनैला—दूध पिलानेवाली स्त्रियोंके स्तनोंमें कई कारणोंसे गांठ पड़कर फोड़े हो जाते हैं। इससे समूचा स्तन ही पक जाता है। इसको थनैला कहते हैं। नागरमोथा और मेथीको बकरीके दूधमें पीसकर लगानेसे या अरंडके पत्तोंके रसमें कपड़ा भिगो-भिगोकर बारम्बार लगानेसे यह रोग अच्छा हो जाता है। गुलाबकी पत्ती, सेवकी पत्ती, मेंहदीकी पत्ती, अनारकी पत्ती, बराबर-बराबर लेकर महीन पीसकर ज़रा गरम करके तीन-चार बार स्तनोंपर लगावे। फौरन आराम हो जाता है। सहिजनके पत्ते पीसकर लेप करनेसे भी फुरसत मिलती है।

प्रदर—यह रोग कमजोरीके कारण होता है। प्रदर रोग केवल स्त्रियोंको होता है, और प्रमेह पुरुषोंको। यह साधारणतः दो प्रकार का होता है। १—श्वेत-प्रदर २—रक्त-प्रदर। इसके लक्षण ये हैं कि स्त्रीकी योनिसे गाढ़ा पानी-सा बहता रहता है, जो कई प्रकारका होता है। यह चिकना, लसोर और गाढ़ा होता है। श्वेत प्रदरमें चावलके मांड़की तरह और रक्त प्रदरमें खूनकी तरह निकलता है। कभी-कभी पीला और नीला भी निकलता है, पर बहुत कम।

श्वेत-प्रदरकी औषधियाँ—कैथकी जड़ पीस-छानकर पुराने चावलका पानी शहद और मिश्री मिलाकर पीनेसे नया श्वेत-प्रदर दूर हो जाता है। यदि पुराना पड़ गया हो तो रतालू लाल और शकरकन्दको बराबर-बराबर-लेकर सुखा ले। बाद कूटकर कपड़-छान करके उसकी आधी मिश्री मिलाकर रख दे। छः माशे चूर्णमें चार बूँद बरगदका दूध डालकर खावे और ऊपरसे गायका दूध पिये। पन्द्रह-बीस दिनमें अच्छा हो जायगा। या पठानी लोध डेढ़ तोला महीन पीसकर तीन पुड़िया बनावे। सवेरे तीन दिनतक ठंढे पानीके साथ फांके और ऊपरसे पक्का केला खावे।

रक्त-प्रदर—आमकी गुठलीका चूर्ण करके घी, चीनीमें मैदा मिला हलुआ बनाकर खिलानेसे अच्छा हो जाता है। अथवा आमकी गुठलीको आगमें भूनकर खिलानेसे भी आराम होता है।

सब तरहके प्रदर रोगोंकी चिकित्सा—सुपारीके फूल, पिस्ताके फूल, मँजीठ सिरपालीके बीज ढाककी गोंद, चार-चार माशे लेकर पानीके साथ फांकनेसे रक्त, श्वेत पीला, स्याह आदि

सब तरहका प्रदर रोग दूर हो जाता है। गूलरके सूखे फल और मिश्रीको बारीक पीसकर शहदमें तोले-तोलेभरकी गोली बना सात दिन खावे और टिंक्चरस्टील-(Tincture of steel) की पांच बूँदें पानीमें डालकर नित सवेरे पीवे।

नेत्र-रोग—यदि आंखें लाल रहती हों तो छः मासे बकरीके दूधमें चार रत्ती अफीम पीसकर नेत्रके ऊपर लगावे किन्तु भीतर ज़रा भी न जाने पावे नहीं तो बड़ा कष्ट होगा। या दो रत्ती फिटकिरीको एक तोले पानीमें पीसकर चार बूंद शाम-सवेरे आंखमें टपका दे तो ललाई जाती रहेगी।

रतौंधी—कमजोरीके कारण यह रोग होता है। इसके लिए मुख्य उपाय तो मस्तकको पुष्ट करना है। गौका घी मिश्री और काली मिर्चका सेवन सवेरे करनेसे यह रोग दूर हो जाता है। देशी स्याही दावातमेंसे निकालकर तीन-चार दिन आंखोंमें आंजनेसे भी आराम हो जाता है। या पानके रसकी तीन-चार बूंदें आंखोंमें डालकर पीछे साफ पानीसे धो डाले। दस-बारह दिनमें रतौंधी-रोग अच्छा हो जाता है।

बवासीर—यह रोग खूनी और बादी दो तरहका होता है। खूनीमें पाखानेके साथ खून गिरता है और बादीमें मस्से सूज आते हैं। खूनीमें छोटे-छोटे लाल रंगके मसोंसे लोहू गिरता है। मल त्यागनेमें बड़ा कष्ट होता है। कभी-कभी इनके संग भीतर आंत भी निकल आती है। खूनीमें आदमी निर्बल बहुत हो जाता है। पर पीड़ा कम होती है। इसकी दवा मणिकर्णिकाघाट काशीमें

एक घाटियेके पास बड़ी अच्छी है। सूजे हुए मस्सोंके लिए अखरोटके तेलमें रुई भिगोकर गुदामें रखनेसे मस्से जल जाते हैं। गेंदेकी पत्ती कालीमिर्चके साथ घोंटकर पीनेसे लाभ होता है। थूहर-वृक्षका दूध ६ छटांक हल्दी तीन छटांक, दोनोंको बारीक पीसकर मरहम बना लेवे। अर्श रोगीके मंगलके दिनसे शुक्रवार तक यानी चारों दिन लेप करे तो नयी-पुरानी बवासीर नष्ट होती है।•

फोड़ा—यदि फोड़ा निकलनेकी सम्भावना हो तो थोड़ेसे तूतमलंगेको पानीमें फेटकर बांधे। इससे फोड़ा दब जाता है और यदि पकता भी है तो पीड़ा बिलकुल नहीं होती। दिन रातमें तीन-चार बार इसको बांधते रहना चाहिये। यह काले रंगके जीरेसे कुछ छोटा होता है पंसारियोंके यहां मिलता है। एक फोड़ेके लिए एक पैसेका तूतमलंगा काफी होता है। यह इतना गुणकारी है कि कांखके फोड़ेको भी आनन-फानन अच्छा करदेता है और जरा भी कष्ट नहीं होने देता।

फुन्सी—खून खराब होनेके कारण शरीरमें छोटी-छोटी फुन्सियां होने लगती हैं। इसके लिए क्यूटीक्यूरा सोप (साबुन) लगाना बड़ा ही फायदेमन्द है। या चैतके महीनेमें प्रतिदिन एक महीनेतक शहदका शर्बत पीना सबसे अच्छा है। इससे शरीरका रक्त ही शुद्ध हो जाता है। इसी महीनेमें नीमकी पत्ती (कोमल) खाकर ऊपरसे गायका ताजा दूध पीनेसे भी रक्त-विकार दूर हो जाता है। किन्तु इसे भी एक महीनेतक अवश्य सेवन करना चाहिये।

• यह नुस्खा 'कल्याण' में पं० भानुदत्त शर्माने 'थूहर-वृक्ष' शीर्षक एक लेखमें लिखा था।

सब तरहका प्रदर रोग दूर हो जाता है। गूलरके सूखे फल और मिश्रीको बारीक पीसकर शहदमें तोले-तोलेभरकी गोली बना सात दिन खावे और टिंक्चरस्टील-(Tincture of steel) की पांच बूँदें पानीमें डालकर नित सवेरे पीवे।

नेत्र-रोग—यदि आंखें लाल रहती हों तो छः माशे बकरीके दूधमें चार रत्ती अफीम पीसकर नेत्रके ऊपर लगावे किन्तु भीतर जरा भी न जाने पावे नहीं तो बड़ा कष्ट होगा। या दो रत्ती फिटकिरीको एक तोले पानीमें पीसकर चार बूंद शाम-सवेरे आंखमें टपका दे तो ललाई जाती रहेगी।

रतौंधी—कमजोरीके कारण यह रोग होता है। इसके लिए मुख्य उपाय तो मस्तकको पुष्ट करना है। गौका घी मिश्री और काली मिर्चका सेवन सवेरे करनेसे यह रोग दूर हो जाता है। देशी स्याही दावातमेंसे निकालकर तीन-चार दिन आंखोंमें आंजनेसे भी आराम हो जाता है। या पानके रसकी तीन-चार बूंदें आंखोंमें डालकर पीछे साफ पानीसे धो डाले। दस-बारह दिनमें रतौंधी-रोग अच्छा हो जाता है।

बवासीर—यह रोग खूनी और बादी दो तरहका होता है। खूनीमें पाखानेके साथ खून गिरता है और बादीमें मस्से सूज आते हैं। खूनीमें छोटे-छोटे लाल रंगके मसोंसे लोहू गिरता है। मल त्यागनेमें बड़ा कष्ट होता है। कभी-कभी इनके संग भीतर आंव भी निकल आती है। खूनीमें आदमी निर्बल बहुत हो जाता है। पर पीड़ा कम होती है। इसकी दवा मणिकर्णिकाघाट काशीमें

एक घाटियेके पास बड़ी अच्छी है। सूजे हुए मस्सोंके लिए अखरोटके तेलमें रुई भिगोकर गुदामें रखनेसे मस्से जल जाते हैं। गेंदेकी पत्ती कालीमिर्चके साथ घोंटकर पीनेसे लाभ होता है। थूहरवृक्षका दूध ६ छटांक हल्दी तीन छटांक, दोनोंको बारीक पीसकर मरहम बना लेवे। अर्श रोगीके मंगलके दिनसे शुक्रवार तक यानी चारों दिन लेप करे तो नयी-पुरानी बवासीर नष्ट होती है।*

फोड़ा—यदि फोड़ा निकलनेकी सम्भावना हो तो थोड़ेसे तूतमलंगेको पानीमें फेंटकर बांधे। इससे फोड़ा दब जाता है और यदि पकता भी है तो पीड़ा बिलकुल नहीं होती। दिन रातमें तीन-चार बार इसको बांधते रहना चाहिये। यह काले रंगके जीरेसे कुछ छोटा होता है पंसारियोंके यहां मिलता है। एक फोड़ेके लिए एक पैसेका तूतमलंगा काफी होता है। यह इतना गुणकारी है कि कांखके फोड़ेको भी आनन-फानन अच्छा करदेता है और जरा भी कष्ट नहीं होने देता।

फुन्सी—खून खराब होनेके कारण शरीरमें छोटी-छोटी फुन्सियां होने लगती हैं। इसके लिए क्यूटीक्यूरा सोप (साबुन) लगाना बड़ा ही फायदेमन्द है। या चैतके महीनेमें प्रतिदिन एक महीनेतक शहदका शर्बत पीना सबसे अच्छा है। इससे शरीरका रक्त ही शुद्ध हो जाता है। इसी महीनेमें नीमकी पत्ती (कोमल) खाकर ऊपरसे गायका ताजा दूध पीनेसे भी रक्त-विकार दूर हो जाता है। किन्तु इसे भी एक महीनेतक अवश्य सेवन करना चाहिये।

---

* यह नुस्खा कविराज पं० कृष्णदत्त शर्माने 'गृहस्थ-धर्म' शीर्षक एक लेखमें लिखा था।

नवजात बच्चेके प्रति कर्त्तव्य

बच्चा पैदा होते ही उसे सबसे पहले रुलानेकी चेष्टा करनी चाहिये। दो वर्तनोंमें, एकमें ठंढा और एकमें गरम जल पहलेहीसे तैयार रखना चाहिये। बच्चों को पहले कुनकुने पानीसे और फिर ठंढे पानीसे धो देना उचित है किन्तु उसके मुखमें जरा भी पानी न जाने पावे। ऐसा करनेसे बच्चा तुरन्त रोने लगता है। जितना रोवे, उतना ही अच्छा।

बच्चेकी आंखों को सावधानीसे पोंछ देना चाहिये। क्योंकि प्रसवके समय बालकोंकी आंखोंमें मैला लग जाता है। इस समय आंखें साफ न करनेसे पीछे बच्चोंको नेत्र-रोग होनेकी सम्भावना रहती है। यहांतक कि कितने ही लड़के लापरवाहीके कारण सूतिका-गृहमें ही अन्धे हो जाते हैं।

बाद बालकके मुखमें अँगुली डालकर उसे साफ कर देना चाहिये। किन्तु अँगुलीके नाखून बढ़े हुए न हों। ऐसा न करनेसे कितने ही लड़के नहीं भी रो पाते।

पहले बालकको मधु चटा देना उचित है। बाद स्तन-पान करानेकी चेष्टा करनी चाहिये। कुछ लोगोंका कहना है कि २-३ दिनोंतक बालकको माताका स्तन-पान करना ठीक नहीं है, किन्तु यह भूल है। माताके स्तनमें बालकके उपयोगी पदार्थ सदा ही मौजूद रहता है। पहली बारके दूधसे बालकका पेट साफ हो जाता है।

इसलिए विरेचनके तौरपर माताका दूध पिला देना बहुत जरूरी है। बालकको कब-कब दूध पिलाना चाहिये, यह नीचेकी तालिकासे मालूम हो जायगा। फिर भी बालकके बलाबलका विचार करके बच्चेकी खुराक घटा-बढ़ा देनी चाहिये।

स्वस्थ बालकको किस-किस वक्त दूध देना चाहिये, इसकी सूची।

एक सप्ताहसे	एक महीनेसे	दो महीनेसे	पाँच महीनेसे	सात महीनेसे	नौ महीनेसे	दस महीनेसे
दिनके-	दिनके-	दिनके-	दिनके-	दिनके-	दिनके-	दिनके-
६ बजे	६ बजे	६॥ बजे	७ बजे	६॥ बजे	७ बजे	७ बजे
८ बजे	८॥ बजे	९ बजे	१० बजे	९ बजे	१० बजे	१० बजे
१० बजे	११ बजे	११॥ बजे	१ बजे	१०॥ बजे	१ बजे	१ बजे
१२ बजे	१॥ बजे	२ बजे	४ बजे	२ बजे	४ बजे	४ बजे
२ बजे	४ बजे	४॥ बजे	रातके-	४॥ बजे	रातके-	रातके-
४ बजे	५॥ बजे	रातके-	७ बजे	रातके-	७ बजे	७ बजे
शामको-	रातके-	७ बजे	१० बजे	७ बजे	१० बजे	
६ बजे	८ बजे	१० बजे	१ बजे	१० बजे		
रातके-	१०॥ बजे	१ बजे				
८ बजे	२॥ बजे					
१० बजे						
२ बजे						

कितनी मात्रामें बालकको दूध देना उचित है, इसकी सूची।

अवस्था	कितने दफे पिलाना चाहिये	बड़े च० भर मीठा मिला		एक दफे कितने	दिन भर कितने चम्मच
		दूध गायका	पानी		
१ हफ्तेतक	१० बार	१ चम्मच	१॥ च०	२॥ च०	२५ ,,
१ मास	९ बार	१॥ ,,	२॥ ,,	४ ,,	३६ ,,
२ ,,	८ ,,	३ ,,	३ ,,	६ ,,	४८ ,,
३ ,,	८ ,,	३॥ ,,	२॥ ,,	६ ,,	४८ ,,
४ ,,	७ ,,	४ ,,	३ ,,	७ ,,	४९ ,,
५ ,,	७ ,,	५ ,,	३ ,,	८ ,,	५६ ,,
६ ,,	७ ,,	६ ,,	२ ,,	८ ,,	५६ ,,
७ ,,	७ ,,	७ ,,	२ ,,	९ ,,	६३ ,,
८ ,,	७ ,,	८ ,,	१ ,,	९ ,,	६३ ,,
९ ,,	६ ,,	१० ,,	———	१० ,,	६० ,,
१० ,,	५ ,,	१२१३ ,,	———	१२-१३,,	६०-६५,,

यद्यपि गायका दूध बड़ा ही गुणकारी है तथापि छोटे बच्चों-को खालिस दूध कभी न देना चाहिये। ऊपरकी तालिकाके अनु-सार पानी और थोड़ी मिश्री मिलाकर देना उचित है। क्योंकि खालिस दूध बालकको नहीं पचता। गायका कच्चा दूध कभी न पिलाना चाहिये। हमेशा उबालकर पिलाना अच्छा है। बालक ज्यों-ज्यों बड़ा होता जाय—त्यों-त्यों पानी कम करते जाना चाहिये। नौ महीनेके बालकके लिए पानी मिलानेकी जरूरत नहीं रह जाती, फिर तो शुद्ध दूध पचानेकी शक्ति उसमें हो जाती है।

दांत—सात-आठ महीनेकी अवस्था होनेपर प्रायः बालकोंके दांत निकलने लगते हैं। उस समय कुछ बच्चोंको बुखार और हरे-पीले दस्तको बीमारी हो जाया करती है। यदि माताएं पहलेसे ही बालकोंके खिलाने-पिलानेमें सावधानी रखें तो दांत निकलते-समय उन्हें किसी प्रकारका कष्ट नहीं हो सकता। जो माताएं दिन-रात बच्चेके मुखमें दूध डालती ही रहती हैं. समय-असमयका कुछ भी खयाल नहीं करतीं, अथवा दांत निकलनेके पहले ही अन्न खिलाने या चटाने लगती हैं और अपने तथा बच्चेके कोठेकी सफाईकी ओर ध्यान नहीं देतीं, उन्हींके बालक दांत निकलते समय भयानक कष्ट पाते हैं। इसलिए. बच्चोंको ऊपरकी तालिकाओंके अनुसार दूध देना चाहिये और यदि दस्त साफ न हो तो कभी-कभी हलकी मात्रामें रेंड़ीका तेल पिलाकर कोठे को साफ कर देना चाहिये। अंगूर और सेवका रस भी कभी-कभी बच्चोंको पिलाना चाहिये। दांत निकलनेपर बालकोंके दांत भी हलके हाथसे साफ करने लगना उचित है।

सन्तान-पालन

सन्तान-पालनका ज्ञान होना बहुत जरूरी है। सन्तानके प्रति माताका कर्तव्य दो भागोंमें बांटा जा सकता है:—एक तो सन्तान-पालन और दूसरा सन्तान-शिक्षा तथा चरित्र-सुधार। मैं पहले ही कह आयी हूँ कि गर्भाधान होते ही यथेष्ट स्वास्थ्यको

ओर ध्यान देना चाहिये। अब यहां यह बे, इसकी सूची।
बच्चा पैदा होनेपर माताको क्या करना चाहिये
सबसे पहले यह बतलाना आवश्यक है
होना चाहिये। क्योंकि माताका दूध दूपित हो
रोगी हो जाते हैं। इसलिए माताका यह
रक्षाके साथ ही वह अपनी तन्दुरुस्तीपर भी
को नीरोग रखनेके लिए साफ़ पानीसे प्रतिदिन
साथ ही तीन महीनेके बाद बालकको भी रोज नहवाना चा
यदि बालक हृष्ट-पुष्ट हो तो ताजे पानीसे और निर्बल हो तो कुन
कुने जलसे स्नान कराना चाहिये। नहानेसे शरीरमें फुर्ती आती
है, ताकत बढ़ती है, रोम-छिद्रोंमें मैल नहीं जमने पाती, इसलिए
पसीनेके साथ शरीरका विकार बाहर निकल जाता है।

एक दफे कितने	दिन भर्में कितने चम्मच
२॥ च०	२५ ,,
४ ,,	३६ ,,
६ ,,	४८ ,,
	७८

बच्चोंका तथा अपना कपड़ा साफ रखना चाहिये। बालकोंका कपड़ा प्रतिदिन धोकर सुखाना चाहिये। क्योंकि पसीना लगा हुआ कपड़ा हानि पहुँचाता है। बालकोंकी अगरखी ढीली होनी चाहिये गर्मी-सर्दीके मुताबिक ही बालकोंका कपड़ा भी होना चाहिये।

शरीरकी रक्षाके लिए कसरत बहुत ही जरूरी चीज है। इसलिए माता को चाहिये कि अपने बच्चेको पहलेहीसे कसरतकी महिमा बतला दे और उसका अभ्यास करावे। इसका सहज उपाय यह है कि १—किसी चीजको थोड़ी दूरपर रख दे और बालकोंसे कहो कि, देखें उसे कौन पहले लाता है। इससे बालकोंकी

हो जायगी। २—किसी चीजको ऊँचे स्थानपर हे कि देखें इसे कौन उछलकर छूता है। इसी र्द्धा उत्पन्न करके कसरत करानी चाहिये। दौड़ने-ने-कूदनेसे बच्चोंको न रोके। किन्तु इसका यह लड़के अवारा हो जायं। बचपनमें बच्चोंकी कसरत-ए नहीं करनी पड़ती, क्योंकि उस समय वे खुद लकर कसरत कर लिया करते हैं। उस समय धिक देरतक गोदमें लिये रहना या बारम्बार सुलानेकी कोशिश करना अच्छा नहीं। बाद जब बच्चे खड़े होकर चलने-फिरने लगते हैं, तब भी उनकी कसरतके लिए मांको कुछ नहीं करना पड़ता। उस समय उनकी स्वाभाविक स्वाधीनतामें बाधा न देकर सतर्क भावसे इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि अपनी चंचलता और अज्ञताके कारण वे चोट न खा जायं। जब बालक पांच-छः वर्षका हो जाय, तब उसे कसरतकी शिक्षा देनी चाहिये। चाहे लड़का हो अथवा लड़की दोनोंको कसरतकी शिक्षा देनेकी जरूरत है। बहुतसी माताएं ऐसी होती हैं जो अधिक देरतक बच्चोंको खेलने-कूदने ही नहीं देतीं। समझती हैं कि कहीं ऐसा न हो कि धूप लग जानेसे बच्चेका चेहरा कुम्हिला जाय। इस खयालसे माताएँ उन्हें दिन-रात घरमें बन्द रखती हैं। किन्तु ऐसा करनेसे बालकोंकी तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है।

गहनेकी चर्चा कर-करके बच्चोंकी रुचि को बिगाड़ना उचित नहीं। क्योंकि ऐसा करनेसे बच्चे गहनोंके लिए जिद करने लगते

हैं। गहना कितना हानिकारक है यह कौन नहीं जानता ? फिर भी बहुतसी माताएं बच्चोंके अंग-प्रत्यंगको गहनोंसे कस देती हैं। इससे एक तो बच्चोंकी बाढ़ मारी जाती है उनकी तन्दुरुस्ती बिगड़ जाती है, क्योंकि उनका शरीर बहुत ही कोमल होता है, इसलिए छटांकभरका बोझ ही उनके शरीरको टेढ़ा या बेडौल कर देता है। दूसरे बच्चोंकी जानपर खतरा रहता है। ऐसे बच्चोंको बहुतसे नीच स्वभावके लोग बहका ले जाते हैं और गहने उतारकर कुएं आदिमें काटकर फेंक देते हैं। इसलिए माताओंको चाहिये कि वे अपने बच्चोंको गहने पहनाकर सुन्दर बनानेकी कोशिश न करें, बल्कि अच्छे-अच्छे गुण सिखलाकर उन्हें ऐसा सुन्दर बनावें कि सबलोग उसकी चाह करें।

बालकोंके कानोंमें तथा बालोंमें कम-से-कम चौथे दिन कडुवा तेल डालना उचित है। इससे आंख नहीं दुखती। तेलसे धूलमें खेलनेके कारण बालकोंके मस्तकमें मैल बहुत बैठती है, इसलिए उसे निकालकर तेल डालना चाहिये। बच्चोंकी इच्छाके विरुद्ध कोई काम न करना चाहिये क्योंकि इससे बच्चे चिड़चिड़े हो जाते हैं। उनकी कब क्या इच्छा है यह समझनेकी पूरी चेष्टा करनी चाहिये। यदि वे रोने लगें तो फौरन मुंहमें दूधका घूंट न डालकर यह समझना चाहिये कि बच्चा क्यों रो रहा है। सम्भव है कि अधिक दूध पी जानेके कारण उसके पेटमें पीड़ा होती हो या किसी कष्टके कारण वह रोता हो। ऐसी दशामें स्तन-पान कराने या दूध पिलाने से वह अवश्य ही रोगी हो जायगा। यह बात नहीं है कि केवल भूख

ागनेपर ही बच्चे रोया करते हैं। बच्चोंमें मुखसे कहनेकी शक्ति नहीं
ोती, इसलिए वे अपने कष्टोंको भी रोकर ही प्रकट किया करते हैं।
ुद्धिमती माताको बच्चेके रोनेसे ही उसका अभिप्राय समझना चाहिये
ौर उसीके अनुसार काम करना चाहिये। जो माता बच्चेका अभि-
ाय नहीं समझ सकती वहमूर्खा है—माता होनेके योग्य नहीं है।

दांत निकलते समय बच्चोंको खांसी, अपच, दस्त, उल्टी खाज
ादि रोग हो जाते हैं। ऐसी अवस्थामें माताओंको चाहिये कि वे
फीम आदि देकर खांसी वगैरहको रोकनेकी कोशिश न करें।
योंकि इससे बड़ी हानि होती है। हां, थोड़ी मात्रामें अरंडीका तेल
कर यदि दस्त करा दिया जाय तो कोई हानि नहीं हो सकती।

छोटे-छोटे बच्चोंको मिट्टी खानेकी आदत पड़ जाती है। किन्तु
ह बहुत बुरा है। इससे बच्चोंको बचाना चाहिये। दूसरे-तीसरे
दन बालकोंको थोड़ासा गुड़ खिला दिया जाय, तो बड़ा अच्छा
। बालकोंको कभी भयावनी बात कहकर न डरावे। क्योंकि
ालकके दिलमें भय उत्पन्न करनेसे उसके स्वास्थ्यपर बुरा असर
ड़ता है और सदाके लिए वे डरपोंक हो जाते हैं। ऐसे बालक
े होनेपर भी निबल स्वभावके बने रहते हैं। यदि बालक किसी
तरहसे डर गया हो तो उसका उपाय यह है कि उस समय उससे
ीखो आवाजमें न बोले। बड़े प्यारसे बोले।

यदि बालकको नीचे लिखी औषधियां खिलायी जायं, तो
बड़ा अच्छा हो। ये औषधियां शुश्रुत-संहितामें लिखी हैं। जबतक
बालक दूध पीता रहे, तब तक इन पांचों चटाना चाहिये।

सफेद सरसों; बच, दुद्धी, चिरचिड़ी, शतावरी, सरिवन ब्राह्मी, पीपल, हल्दी, कूट और सेंधा नमक को घीमें पकाकर छान डाले और उसी घीको प्रतिदिन चटाया करे।

जब बालक अन्न भी खाने लगे और दूध छुड़ानेका समय हो, तब मुलहठी बच पीपल चीता, त्रिफला इनको घीमें पकाकर खिलावे।

जब स्तन-पान करना छूट जाय तब दशमूल, दूध तगर देवदारु, काली मिर्च शहद, बायबिड़ंग, मुनक्का, दोनों ब्राह्मी, इनको घीमें पकाकर वही घी खिलावे। इससे बच्चे तन्दुरुस्त होते हैं और उनकी बुद्धि भी बढ़ती है।

सन्तान शिक्षा

माताके समान गुरु संसारमें कोई नहीं है। लिखा भी है— "नास्ति विद्या समं चक्षुर्नास्ति मातृ समोगुरुः।" भीतरी और बाहरी उन्नति जितनी माताके द्वारा होती है, उतनी और किसीसे नहीं। इसीसे घरको सबसे बड़ा विद्यालय माना गया है। इसी विद्यालयमें अबोध और कोमल स्वभावके बालकोंको सारे गुण दोषोंकी शिक्षा मिलती है। बालकको बहादुर विद्वान् धर्मात्मा तथा आलसी बनाना माताहीका काम है। विद्यालयके सैकड़ों शिक्षक जिस बातको नहीं सिखला सकते उसे माता बिना मिहनतके ही सिखला देती है। क्योंकि शिक्षक तो बातें सिखलाते हैं और माता बुद्धि और स्वभावको गढ़ती है।

बचपनमें जैसा स्वभाव बालकोंका हो जाता है, वही जन्मभर बना रहता है। इसलिए माताको पहलेहीसे बच्चेकी ऐसी आदत डालनी चाहिये जिसे छुड़ानेकी जरूरत न पड़े। एकबार जो आदत पड़ जाती है उसका छूटना कठिन हो जाता है। क्योंकि छोटे बालक कोरे घड़े और शीशेकी तरह होते हैं उसमें जो कुछ भरा जाता है, उसकी गन्ध उसमें भर जाती है या उसके सामने जो चीज पड़ती है उसीका प्रतिबिम्ब उसमें दिखायी पड़ता है। माता-पिताका यह समझना भूल है कि अभी तो हमारी सन्तान अबोध है, बड़ी अवस्था होनेपर इसे सारी बातें अपने-आपही आ जायंगी। ऐसा सोचनेसे मां-बापको जन्मभर पछताना पड़ता है।

कन्या-पुत्र दोनोंको शिक्षा देनी चाहिये किन्तु कन्याकी शिक्षापर विशेष ध्यान रखना चाहिये। क्योंकि संसारकी जिम्मेदारी भविष्यमें कन्याओंपर ही विशेष आती है। और फिर पुत्रको अपने ही घरमें रहना है किन्तु कन्याको दूसरे घरमें जाना पड़ता है। दुःखकी बात है कि आजकल ठीक इसका उल्टा हो रहा है। पुत्रोंकी शिक्षापर तो लोग थोड़ा-बहुत ध्यान भी देते हैं, किन्तु कन्याओंको तो अधिकांश लोग अपने रुपयसे उत्पन्न समझते ही नहीं। यह नहीं समझते कि आज जो हमारे घरमें कन्याके रूपमें है वही कुछ दिनोंमें गृहिणी होगी और माता कहलावेगी उसपर सन्तान-पालन और सन्तान-शिक्षाका भार पड़ेगा। लोगोंको यह समझना चाहिये कि माता बननेके लिए बड़ी योग्यता होनी चाहिये। एक विद्वानने कहा है—"संसारमें माताकी भांति दूसरा

पदार्थ पैदा नहीं हुआ। जिस जातिमें उचित रीतिसे मातृधर्मका पालन होता है वही जाति धीर वीर, ज्ञानी और चरित्रवान् मानी जाती है। माताके ही दोषसे सन्तान नष्ट होती है। जिस तरह माता के गर्भ और दूधसे सन्तान रक्षित होती और पलती है: उसी तरह माताके चरित्रद्वारा उसका चरित्र भी गठित होता है।" ऐसी दशामें यदि कन्याओंको शिक्षा न दी जाय तो किसका दोष? इसलिए लड़कोंको योग्य बनानेके लिए लड़कियोंको शिक्षा देनेकी खास जरूरत है, क्योंकि लड़कियां एक दिन लड़का पैदा करेंगी और जैसी इन्हें शिक्षा मिली रहेगी. उसीके अनुकूल लड़कोंको शिक्षा देंगी।

शिक्षाका उपयुक्त समय शैशवावस्था ही है। इसलिए इसी अवस्थासे शिक्षा देना माताका धर्म है। इसी समयसे बच्चेके हृदयपर अच्छे-अच्छे उपदेशोंका संस्कार डालना चाहिये। कुछ लोगोंका मत है कि पांच वर्षतक बालकको किसी प्रकारकी शिक्षा देनेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु यह उनकी भूल है। क्योंकि उस समयतक बालकोंके मनमें बहुत कुछ कठोरता आ जाती है। इतना तो मैं भी मानती हूँ कि पांच वर्षतक बच्चोंको अक्षरारम्भ नहीं कराना चाहिये और न एक जगह कैद ही कराना चाहिये, क्योंकि इससे उनकी तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है। किन्तु इससे यह थोड़े ही कहा जा सकता है कि उस अवस्थातक बालकोंको शिक्षा ही न दी जाय, या केवल अक्षरारम्भ कराना ही शिक्षा देना है। यदि सच पूछिए तो पहले-पहल अक्षरारम्भ कराना. उत्तम शिक्षा-प्रणाली है ही नहीं। पहले तो बच्चोंको जबानी शिक्षा देनी चाहिये। संसार

की प्रत्येक वस्तुओंको समझाना चाहिये। उनमें समझनेकी शक्ति पैदा करनी चाहिये। जब उनमें समझ पैदा हो जायगी, तब तो वे सालभरमें सीखनेवाली बातको दो महीनेमें अपने-आपही सीख जायँगे। इसीसे एकबार किसी अंग्रेज-महिलाके यह पूछनेपर कि—'मेरे लड़केकी अवस्था चार सालकी हो गयी, मैं कबसे उसकी शिक्षा आरम्भ करूं।" उसके पुरोहितने कहा था—"यदि अबतक आपने बच्चे की शिक्षा आरम्भ नहीं की, तो मानो उसके जीवनका बड़ा ही मूल्यवान इतना समय व्यर्थ खो दिया। इसके लिए आपको अफसोस करना चाहिये। क्योंकि जब बच्चा पलंगपर सोया हुआ अपनी मांका मुंह निहारकर हंसने लगता है, तभी उसकी शिक्षाका समय आ जाता है। उसी समयसे शिक्षाका आरम्भ होना चाहिये।"

बच्चोंमें अनुकरण करनेकी शक्ति बहुत होती है। पैदा होनेके कुछ दिन बाद-ही से वे अलक्षित भावसे शिक्षा ग्रहण करने लगते हैं। वे जो कुछ देखते हैं, उसे फौरन सीख लेते हैं। चाहे माता अपनी मूर्खताके कारण उनकी शिक्षापर ध्यान न दे, पर वे शिक्षा ग्रहण करते जाते हैं। वे जो कुछ सुनते हैं उसे कहनेकी चेष्टा करते हैं। उस समय किसी प्रकारके उपदेशका असर उनपर नहीं पड़ता। क्योंकि समझ नहीं रहती। किन्तु कामोंको देखकर वे शिक्षा ग्रहण करने लगते हैं। ऐसी दशामें माताओं तथा घरवालोंको चाहिये कि वे बच्चोंके सामने बड़ी सावधानीसे रहें समझ-बूझकर बोलें, बुद्धिमानीसे काम करें। बुरी बात मुंहसे न निकालें कोई अनुचित

काम न करें। बहुतसे लोग बच्चोंको अबोध समझकर किसी बात का विचार नहीं करते, किन्तु यह बहुत बड़ी भूल है। याद रखना चाहिये कि बच्चोंका हृदय साफ शीशेकी तरह होता है उसके सामने जो कुछ भला या बुरा काम होता है तथा अच्छी या बुरी बातें होती हैं, उन सबका अक्स बच्चेके हृदयपर तुरन्त ही पड़ जाता है। फिर किसीकी ताकत नहीं जो उस अक्सको मिटा सके।

यद्यपि समीपमें रहनेवाले सभीलोगोंका कुछ-न-कुछ असर बच्चे के हृदयपर पड़ता है, किन्तु जितना असर माताका पड़ता है उतना और किसीका नहीं। कारण यह कि एक तो बच्चेका अधिक समय मांके पास बीतता है और दूसरे बच्चेका स्वाभाविक स्नेह मातापर अधिक होनेके कारण वह जितना ध्यान अपनी माताके कामोंपर रखता है उतना दूसरेके कामोंपर नहीं। इसलिये माता का कर्त्तव्य है कि वह बच्चेके सामने ऐसा आचरण करे जिससे उसमें सुन्दर गुण संचित हों। यदि माताकी यह इच्छा हो कि बच्चा माता-पितापर भक्ति रखनेवाला और धर्मात्मा हो, तो उसे चाहिये कि वह बच्चे के सामने ऐसा ही आचरण करे।

माता-पिताको पुत्र-पुत्रीमें भेद नहीं रखना चाहिये। दोनोंको समान दृष्टिसे देखना चाहिये। पुत्र-पुत्रीके पालनमें भेद रखनेका फल अच्छा नहीं होता। बालक पढ़ने-लिखनेकी ओर ध्यान न दे, हठ अधिक करे, कहना न माने, उसे मारकर या भय दिखाकर राहपर लानेकी कोशिश करना अच्छा नहीं। उसके सामने किसी लिखने-पढ़नेवाले मिहनती तथा कहना माननेवाले लड़केकी अधिक

वस्तु दे। जैसे मिठाई खिलौना आदि। फिर उस अच्छे लड़केकी प्रशंसा करे और कहना न माननेवालेकी निन्दा करे। इसपर जब वह बालक लज्जित हो, तब यह कहकर शिक्षा दे कि यदि तुम भी इसी लड़केकी तरह कहना मानोगे पढ़ोगे-लिखोगे तो तुम्हें भी इसी तरह सब चीजें अधिक मिला करेंगी। आज तो यह दिये देती हूँ, मगर अब यदि कहा न करोगे तो फिर कभी कोई भी चीज न दूंगी। अब ऐसा न करना। बच्चोंको झूठी बातें कहकर फुसलाना भी नहीं चाहिये। क्योंकि ऐसा करनेसे एक तो वे झूठ बोलनेके आदी हो जाते हैं, दूसरे फिर किसी बातपर विश्वास नहीं करते। जो बालक कहना न माने उसे हर समय दुत्कारना भी अच्छा नहीं है। केवल कभी-कभी ही ऐसा करना ठीक होता है। बहुधा प्रेमसे ही समझाना चाहिये कि बेटा ऐसा नहीं करना चाहिये, तू तो राजा है। फलां लड़का जो कहना नहीं मानता वह बुरा है तभी तो सबलोग उसे पाजी कहते हैं। देखना तुम ऐसा न करना बेटा, नहीं तो तुम्हें भी सबलोग पाजी बना देंगे। इस प्रकारसे समझाती जाय, जिसमें बच्चा निर्लज्ज न हो जाय और कोई बात न टाले।

यदि बालक किसीको गाली दे, तो तुरन्त ही उसे उपदेश कर दे कि आपसमें लड़ना या मुंहसे गाली निकालना बुरे लड़कोंका काम है। तुम राजा होकर गाली निकालते हो ? राम-राम, फिर ऐसी बात मुंहसे न निकालना। बुरे लड़कोंके साथ न बैठने दो। क्योंकि इससे बच्चोंकी आदत बिगड़ जाती है। बालकोंका गहनेके

दोष बतलावे, जिसमें उनके मनमें गहनेके प्रति घृणा पैदा हो जाय बड़ोंका आदर-सत्कार करना तथा उनसे भय और लज्जा करना बच्चोंको समझावे। यदि बालक क्रोधमें हो, तो उस समय खफा हो जाना अच्छा नहीं, वरन् उस समय कोई खेलकी चीज देकर बच्चेको शान्त कराना चाहिये।

हमेशा बालकका लाड़-प्यार करते रहना भी ठीक नहीं क्योंकि इससे भी लड़के बिगड़ जाते हैं। पर इसका यह अर्थ नहीं कि बात-बात पर उन्हें चपत जमाती रहो। इसके अलावा बालकों को इस बातकी भी शिक्षा दो कि यदि वे कहींसे कोई चीज लावें तो अकेले न खा जायं। और लड़कोंको देकर हंसी-खुशीसे खायं।

एक अंग्रेज विद्वान्ने लिखा है कि, " क्या, क्यों, कब, कैसे, कहां, और कौन (What, why, when, how, where and who) इन्हीं छः मित्रों-द्वारा हम संसारका ज्ञान प्राप्त करते हैं। बच्चे जब बोलने लगते हैं, तब इन्हीं प्रश्नोंसे वे सब कुछ सीखना शुरू करते हैं। उस वक्त वे बड़े चावसे सीखना और जानना चाहते हैं। हर समय वे पूछते रहते हैं—यह क्या है, क्यों है, कौन है आदि। किन्तु दुःख है कि माताएं शिक्षिता न होनेके कारण उनके सारे प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सकतीं और अंट-संट उत्तर देकर बालकोंके दिमागमें कूड़ा-करकट भर देती है। उन्हें चाहिये कि वे सब बातोंकी पूरी जानकारी रखें और बच्चोंके पूछने पर ठीक-ठीक समझावें। पर यह साधारण काम नहीं है क्योंकि बालकोंके प्रश्न साधारण नहीं हुआ करते। कभी-कभी

ो वे ऐसे-ऐसे प्रश्न करते हैं कि अच्छे-अच्छे विद्वान्‌के लिए उत्तर ना कठिन हो जाता है।

एक और आवश्यक बातपर माताओंको ध्यान देना चाहिये। हुतसी माताएं स्नेहवश अपने बच्चोंसे उनके विवाहकी चर्चा किया रती हैं। यह बहुत ही अनुचित बात है। क्योंकि इससे उनके नमें विवाहका अर्थ समझनेकी प्रबल इच्छा उत्पन्न हो जाती है, जेसका प्रभाव उनके हृदयपर बहुत ही बुरा पड़ता है

रोते हुए बालक को भयदायक बातें कहकर या किसी चीजका झूठा लालच दिखाकर चुप कराना भी बहुत अनुचित है। क्योंकि यह बात पहले ही लिखी जा चुकी है कि ऐसा करनेसे लड़के डरपोक हो जाते हैं तथा जल्द किसी बातपर विश्वास नहीं करते। जो माता अपने बच्चेको मारनेके लिए तो हर समय धमकाया करती है, किन्तु मारती कभी नहीं, वह भी भद्दी भूल करती है। इस तरहसे बच्चे निडर हो जाते हैं और कहना नहीं मानते।

बच्चोंको हमेशा अपनी देख-रेखमें रखना चाहिये। बहुतसी माताएं अपने बच्चोंको नौकरों और दाइयोंके पास करके निश्चिन्त हो जाती हैं। किन्तु इससे बच्चोंकी हानि होती है। क्योंकि बहुधा नौकरों और दाइयोंका आचरण अच्छा नहीं होता। इससे बच्चोंपर उनके बुरे चरित्रका प्रभाव पड़जाता है। बिना प्रयोजन बच्चोंको दाई या नौकरके पास रहने देना अच्छा नहीं है। इसलिए प्रत्येक माता-का कर्तव्य है कि वह अपने बालकोंको अधिक देरतक अपने ही समीप रखे तथा अपने उत्तम आचरणोंका प्रभाव उनपर

दोष बतलावे, जिसमें उनके मनमें गहनेके प्रति घृणा पैदा हो बड़ोंका आदर-सत्कार करना तथा उनसे भय और लज्जा बचोंको समझावे। यदि बालक क्रोधमें हो, तो उस समय खफा हो जाना अच्छा नहीं, वरन् उस समय कोई खेलकी चीज देकर बचेको शान्त कराना चाहिये।

हमेशा बालकका लाड़-प्यार करते रहना भी ठीक नहीं क्योंकि इससे भी लड़के बिगड़ जाते हैं। पर इसका यह अर्थ नहीं कि बात-बात पर उन्हें चपत जमाती रहो। इसके अलावा बालकों को इस बातकी भी शिक्षा दो कि यदि वे कहींसे कोई चीज लावें तो अकेले न खा जायं। और लड़कोंको देकर हंसी-खुशीसे खायं।

एक अंग्रेज विद्वान्ने लिखा है कि, "क्या, क्यों, कब, कैसे, कहां, और कौन (What, why, when, how, where and who) इन्हीं छः मित्रों-द्वारा हम संसारका ज्ञान प्राप्त करते हैं। बच्चे जब बोलने लगते हैं, तब इन्हीं प्रश्नोंसे वे सब कुछ सीखना शुरू करते हैं। उस वक्त वे बड़े चावसे सीखना और जानना चाहते हैं। हर समय वे पूछते रहते हैं—यह क्या है, क्यों है, कौन है आदि। किन्तु दुःख है कि माताएं शिक्षिता न होनेके कारण उनके सारे प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सकतीं और अंट-संट उत्तर देकर बालकोंके दिमागमें कूड़ा-करकट भर देती है। उन्हें चाहिये कि वे सब बातोंकी पूरी जानकारी रखें और बच्चोंके पूछने पर ठीक-ठीक समझावें। पर यह साधारण काम नहीं है क्योंकि बालकोंके प्रश्न साधारण नहीं हुआ करते। कभी-कभी

तो वे ऐसे-ऐसे प्रश्न करते हैं कि अच्छे-अच्छे विद्वान्के लिए उत्तर देना कठिन हो जाता है।

एक और आवश्यक बातपर माताओंको ध्यान देना चाहिये। बहुतसी माताएं स्नेहवश अपने बच्चोंसे उनके विवाहकी चर्चा किया करती हैं। यह बहुत ही अनुचित बात है। क्योंकि इससे उनके मनमें विवाहका अर्थ समझनेकी प्रबल इच्छा उत्पन्न हो जाती है, जिसका प्रभाव उनके हृदयपर बहुत ही बुरा पड़ता है

रोते हुए बालक को भयदायक बातें कहकर या किसी चीजका झूठा लालच दिखाकर चुप कराना भी बहुत अनुचित है। क्योंकि यह बात पहले ही लिखी जा चुकी है कि ऐसा करनेसे लड़के डरपोक हो जाते हैं तथा जल्द किसी बातपर विश्वास नहीं करते। जो माता अपने बच्चेको मारनेके लिए तो हर समय धमकाया करती है, किन्तु मारती कभी नहीं, वह भी बड़ी भूल करती है। इस तरहसे बच्चे निडर हो जाते हैं और कहना नहीं मानते।

बच्चोंको हमेशा अपनी देख-रेखमें रखना चाहिये। बहुतसी माताएं अपने बच्चोंको नौकरों और दाइयोंके पास करके निश्चिन्त हो जाती हैं। किन्तु इससे बच्चोंकी हानि होती है। क्योंकि बहुधा नौकरों और दाइयोंका आचरण अच्छा नहीं होता। इससे बच्चोंपर उनके बुरे चरित्रका प्रभाव पड़जाता है। बिना प्रयोजन बच्चेको दाई या नौकरके पास रहने देना अच्छा नहीं है। इसलिए प्रत्येक माता-का कर्त्तव्य है, कि वह अपने बालकको अधिक देरतक अपने ही समीप रक्खे तथा अपने उत्तम आचरणोंका प्रभाव उनपर

पड़ने दे। बुरे आदमीके साथमें रहनेसे लड़कोंका चरित्र नष्ट हो जाता है।

इसलिये जो माता सन्तान-सुखकी अभिलाषा रखती हो, उसे चाहिये कि वह शुरूसे ही बच्चेकी तन्दुरुस्ती, शिक्षा तथा चरित्र गठनपर ध्यान दे। क्योंकि वृक्ष बड़ा हो जानेपर लाखों प्रयत्न द्वारा भी किसी ओर नहीं झुकाया जा सकता और छोटा रहने पर मनुष्य अपनी इच्छाके अनुसार उसे आसानीसे झुका सकता है। ठीक यही हाल बालकोंका है। जो माता यह चाहे कि मेरी सन्तान तन्दुरुस्त रहे तथा जीवित रहे, नामधारी हो—उसे पहले हीसे सावधानी रखनी चाहिये। याद रहे कि अपनी ही लापरवाही के कारण माताओंको पुत्र-शोक सहना पड़ता है। यह कहना ईश्वरीय नियमके विरुद्ध है कि ऐसा ही प्रारब्ध था। क्योंकि प्रारब्धके भरोसे रहकर उद्योग न करना घोर नीचता और अकर्मण्यता है। यदि मनुष्य संयमसे रहकर उपयुक्त अवस्था होनेपर गार्हस्थ्य-जीवनमें प्रवेशकरे, शास्त्रमें बतलाये हुए नियमोंपर चले, किसी काममें आलस्य न करे, विद्या-व्यसनी बना रहे, तो उसे संसारमें कोई दुःख नहीं हो सकता। जो मनुष्य इन बातोंका उल्लंघन करता है, शास्त्रकी आज्ञाओंपर नहीं चलता, वही नाना प्रकारकी यन्त्रणाएं भोगता है।

बाल-रोग-चिकित्सा

आजकल हमारे देशमें अशिक्षाके कारण बच्चोंके बीमार होते ही औरतें झाड़-फूंक कराने लगती हैं, यह जाननेकी कोशिश

नहीं करतीं कि क्या रोग है। आयुर्वेदके आचार्य महात्मा सुश्रुत-जीने इन सबको भ्रमजन्य ठहराया है और कारण बतलाते हुए लिखा है कि यह सब अपवित्रताके कारण होता है। उन्होंने यन्त्र-मन्त्र, जप, तपादिके अतिरिक्त दवाइयां भी लिखी हैं। वास्तवमें बात भी यही है कारण यह कि बच्चोंका स्वभाव अत्यन्त कोमल होता है। थोड़ीसी भी अपवित्रता और दुर्गन्ध उन्हें हानि पहुँचा देती है। अतएव जहांतक हो सके, इनसे बालकको बचावे। सौरमें बदबू न जाने दे। हवादार घरमें रहे। बालकका नार बहुत सावधानीसे काटे। सर्दी न पहुँचने दे। बालकका शरीर मैला-कुचैला न रखे। जन्म लेते ही दस्त करा दे बासी दूध न पिलावे।

बालकोंको नीरोग रखनेका मुख्य उपाय यही है कि सौरहीसे उनको स्वच्छ रखे तथा इन काढ़ोंसे चौथे या आठवें दिन स्नान करा दिया करे। १—गोरखमुण्डी और खसका काढ़ा। २—हल्दी, चन्दन, कूट इनको पीसकर बालकके उबटन करके स्नान करावे। ३—राल, गूगल खस और हल्दीका धुआं दे दिया करे। प्रति दिन उबटन तथा तेलसे बालकके शरीरको चार-छः बार मल दियाकरे।

यदि जन्मसे ही दस्त न हो तो घबड़ानेकी जरूरत नहीं। माता का दूध पिलाने पर दस्त अवश्य हो जाता है। यदि पीछे दस्त न हो रेंडीके तेलकी दस बूंदें शहदमें मिलाकर चटा दे अवश्य ही दस्त आ जायगा। इस दस्तके न आनेसे बालक रोग-ग्रस्त हो जाते हैं। दूधकी मात्रा पर हमेशा ध्यान रखना चाहिये। दूधकी मात्रा अधिक हो जानेपर बच्चे पटक (कै) देते हैं। दूध पिलाकर बच्चोंको

चित सुलानो उचित है । माताएं समझती हैं कि अधिक दूध पिलानेसे बच्चा मोटा होगा किन्तु यह बात नहीं है । शरीरके लिये जितने दूधकी जरूरत हो, उतना ही पिलाना लाभदायक है। अधिक दूधसे उपकारको कौन कहे अपच होता है । यदि बच्चा उल्टी कर दे तो समझना चाहिये कि उसके दूधमें दोष था या अधिकता थी । मांकी तबीयत खराब रहने तथा अधिक दूध पिलानेसे बच्चे उल्टी करते हैं ।

बच्चोंके पेटमें साधारणतः दो तरहके कीड़े देखे जाते हैं । यह आगे चलकर बतलाया जायगा । सबसे पहले यहां यह बतलाने की जरूरत है कि बच्चोंके रोगकी पहचान किस प्रकारकी जाती है। क्योंकि बड़ी उम्रवाले तो अपना दुःख-सुख बतलाते हैं किन्तु बच्चे तो बोल ही नहीं सकते । बच्चोंके रोग पहचाननेके उपाय ये हैं:—

जब बच्चे रोने लगें, तो समझना चाहिये कि कोई कष्ट है। क्योंकि वे अपने दुःखको रुदन द्वारा ही प्रकट करते हैं । यदि बालक रोता हो और मुखमें झाग आते हों तो जानना चाहिये कि कपड़ोंमें जूं है और वह बच्चे को काट रही हैं । जहां काट खाया हो, वहां जरासा घी मल देना चाहिये । यदि बालक बारम्बार पैरोंको पेटकी ओर समेटे और पेटको दबानेसे खुश न हो बराबर रोता ही रहे तो समझना चाहिये कि पेटमें दर्द है । इसका उपाय यह है कि अपने हाथको आगपर सेंककर बच्चेका पेट सेंके । गुलरोगनको जरा गरम करके पेटपर मल दे । या नमक को खूब बारीक पीसकर गरम करके बच्चेके पेटपर मले । अथवा

लायचीके दो बीज तथा सौंफके दो दाने गौके दूधमें पीसकर
ला दे।

यदि सोकर उठनेके बाद बालक जीभ निकाले और इधर-
धर दूधकी खोजमें माथा हिलावे तो समझना चाहिये कि
भूखा है।

कभी-कभी देरतक एक करवटसे रहनेके कारण भी या चींटी
खटमल आदिके काटनेसे भी बच्चे रो पड़ते हैं। इसलिए इन
बातोंपर भी ध्यान देना चाहिये। यदि बालक बार-बार रोता ही
हे, चुप न हो तो समझना चाहिये कि कहीं दर्द अवश्य है।
जहां पीड़ा रहती है वहां बच्चा बार-बार हाथ ले जाता है और
वहां दूसरेके छूनेपर रोता है। यदि बालकके मस्तकमें पीड़ा होती
है तो वह आंखें मूंदे रहता है। गुदामें दर्द होनेपर बच्चेको प्यास
अधिक लगती है और मूर्च्छा आ जाया करती है। मलके, कोठेमें
दर्द होनेपर मल-मूत्र रुक जाता है और मुख धुंधला पड़ जाता
है, सांस अधिक चलती है आंतोंसे आवाज होती है।

दूध पीनेवाले बालकोंकी बीमारीमें मांको दवा करनी चाहिये
ताकि उसका दूध शुद्ध हो जाय। अन्न खानेवाले बच्चेको गुद
दवा खिलानी चाहिये। यदि बालक दूध और अन्न दोनों खाता हो,
तो बालक और दूध पिलानेवाली दोनोंका इलाज करना चाहिये।
बालकोंको मांके दूध अथवा शहदमें घिसकर दवा दी जाती है।

नाभी रोग—यदि नारके खींचनेसे नाभी पक गयी हो तो
मोमका मल्हम कपड़ेपर लगाकर रख दे अथवा कपड़ेको फटूके

या नारियलके तेलमें भिगोकर रख दे। यदि सूजन हो तो पीली मिट्टीको आगमें गरम करके दूध डाले और उसका बफारा दे या सेंक दे।

रोटी बनाकर उठनेपर या कोई मिहनतका काम करनेसे माताका दूध गरम हो जाता है। इसलिए ऐसी दशामें बिना अच्छी तरहसे शरीरके ठण्ढा हुए बच्चेको दूध नहीं पिलाना चाहिये। क्योंकि उस दूधसे वच्चेको रोग हो जाता है। यदि माताको अजीर्ण रहता हो तो उसे हल्का और थोड़ा भोजन करना चाहिये। ककड़ासिंगी, अतीस, मोथा और पीपल पीस कर शहदमें चाटे या आमकी गुठली, धानकी खील तथा सेंधा नमक पीसकर शहदमें चाटे।

यदि बालक दूध पिये तो उसका दुःख जाननेकी कोशिश करनी चाहिये। कभी-कभी गर्भिणी स्त्रीका दूध पीनेसे बच्चोंको मन्दाग्निकी बीमारी हो जाती है। इसलिये जबतक बच्चा दूध पीता रहे तबतक गर्भ-धारण ठीक नहीं।

आंख दुखनेपर तीन दिन तक कोई दवा न करे। आंख दुखनेके कई कारण हैं। कभी गर्मीसे कभी दांतोंके निकलनेसे कभी दूध पिलानेवालीकी आंख दुखनेसे आदि। छोटे बालकोंके कानमें कड़आ तेल डालकर तलवेमें भी थोड़ा तेल मल देनेसे लाभ होता है। दूध पिलानेवालीको खट्टा-मीठा तथा नमक छोड़ देना चाहिये। चनेकी कोई चीज न खाना चाहिये। नीमकी कोंपल पीसकर टिकिया बना ले और कोरे घड़ेपर चिपका दे

रातको या दोपहरके समय उसीको बांधे या गेरूको पानीमें घिसकर उसमें रुई भिगो दे और उसीको बांधे । यदि दांत निकलनेके कारण आंख दुखे, तो घिकुआरका रस आंखोंमें टपकाना चाहिये । अथवा अमचूरको लोहेपर पीसकर आंखोंपर लेप कर दे । लाल, चन्दन मुलहठी, लोध, चमेलीके फूल, गेरूको पीसकर नेत्रोंपर लेप करनेसे पीड़ा बन्द हो जाती है ।

खाँसी—यह कई प्रकारकी होती है । ढांसी, कुकुरखांसी, जुकामकी खांसी, सर्दीकी खांसी आदि । अनारका छिलका और नमक पीसकर चटानेसे खांसी मिट जाती है । सर्दीकी खांसीमें आकके पत्तोंको तवेपर भूनते-भूनते जला डाले । बाद उसमें खारी नोन डालकर पीसे और बँगला पानमें रखकर चूसे । अथवा पानके रसमें एक या दो रत्ती जायफल घिसकर दे । सूखी खांसीमें मुलहठीका सत मुखमें डाल रखे । यदि ज्वर, खांसी अतिसार संग हों तो फकड़ासिंगी, पीपल, अतीस, मोथा इनको पीसकर शहदमें चटावे । या बादामका बीज पानीमें घिसकर चटावे । सरसोंको पीसकर शहदमें चटाना भी गुण करता है । इनके साथ दस्त भी होते हों, तो काकड़ासिंगी, पीपल, अतीस और मोथा पीसकर शहदमें चटावे ।

पेट चलना—इसे अतिसार भी कहते हैं । यह कई कारणों से होता है । अजीर्णसे, सर्दीसे तथा दांत निकलनेके समय यह बहुधा हो जाता है । यदि दांत निकलनेके समय यह हो, तो कदापि नहीं रोकना चाहिये । और यदि अजीर्णके कारणसे हो तो घूंटी

दे अथवा भुना हुआ सुहागा आदि पाचक चीजें दे। साधारण दस्तोंके लिए बेलगिरी, कत्था, धायके फूल बड़ी पीपल और लोध इनको पीसकर शहदमें चटावे। अथवा हल्दी, कुड़ेके बीज, काकड़ासिंगी, बड़ी हड़ पानीमें भिगोकर वही पानी पिलावे।

यदि दस्तके साथ ज्वर भी बालकको हो, तो नागरमोथा, पीपल अतीस काकड़ासिंगी इनका चूर्ण शहदमें चटावे। इस दवासे खांसी और दूध गिरना भी बन्द हो जाता है। यदि प्यास भी हो, तो मोथा, सोंठ, अतीस, इन्द्रजो और खसका काढ़ा दे।

दस्तके साथ आंव गिरनेपर बायविडंग, अजमोद और पीपलको बारीक पीसकर चावलके पानीमें पिला दे। यदि रक्तातिसार हो यानी दस्तमें खून गिरता हो, तो पाषाण-भेद और सोंठको पानीमें पिलाना चाहिये।

ज्वरातिसार—धायका फूल, बेल, धनियां, लोध इन्द्रजौ और नेत्रबालाका चूर्ण शहदमें चटानेसे अच्छा हो जाता है। अथवा नागरमोथा, पीपल, मँजीठ और सोंठके चूर्ण शहद में चटाना भी गुणकारी है। इससे खांसी भी दूर हो जाती है।

अफरा—पेट फूल आनेको कहते हैं। यह अजीर्णसे होता है। सेंधा नमक, सोंठ इलायची, भुनी हींग और नारंगीको महीन पीसकर गरम पानीके साथ पिलावे। हींग को भून और पानीमें घिसकर नाभीके चारों ओर पोत देना चाहिये।

कान दुखना—बरोह और कालीमिर्चको पीसकर गरम कर ले। कुनकुना रहनेपर किसी कपड़ेपर रखके कानमें निचोड़

दे। दो-तीन बार डालनेसे कानका दुखना बन्द हो जाता है। यदि बहता हो तो नीमके पानीसे धोकर इसे टपकाना चाहिये। बरगद की डालियोंमें जो जटाकी तरह लटका रहता है उसीका नाम बरोह है। अथवा नारियलका तेल डालनेसे भी कानकी पीड़ा शान्त होती है। स्त्रीके दूधमें रसोतको घिसकर फिर शहद मिलाके कान में डालनेसे कानके सब रोग दूर हो जाते हैं। भेड़का मूत्र सेंधा नमक और नीमके पत्ते तिलके तेलमें पकावे। जब तीनों दवाइयां जल जायं तब उस तेलको शीशोमें रख ले और कानमें डाल दिया करे। मेथीको पानीमें पकाकर वही पानी कानमें डालनेसे भी आराम होता है। आमके पीले पत्ते को तेल चुपड़के आगपर सेंके और उसीका रस निचोड़नेसे भी कान अच्छा हो जाता है।

दांत निकलना—जब रोते समय बालकके गालोंका रंग लाल हो जाया करे, तब समझना चाहिये कि शीघ्र ही दांत निकलनेवाले हैं। दांत निकालनेके लिए सरल उपाय यह है कि शहद में सुहागा, नमक अथवा सोरा पीसकर मिलावे और दिन भरमें कई बार मसूड़ों पर लगा दिया करे। यह याद रहे कि दांत निकलनेका समय पांचवे महीनेके बाद आता है। पहले जो दांत निकलते हैं, वे दूधके दांत कहलाते हैं। मुलेठीके डण्ठलको छीलकर बालकको पकड़ा दे और उसे चूसने दे। इससे भी बच्चेको आराम मिलता और दांत जल्द निकल आते हैं। दूधका दांत ४-७ महीने की अवस्था में निकलने लगता है और २० वर्षकी अवस्था दोनों-दोनों सब निकल आता है। फिर पक्के दांतोंका निकलना ७ वर्षके

अवस्थाके बाद शुरू होता है और २५-३० वर्षकी उम्रमें सब निकल आता है। ज्यों-ज्यों दूधके दांत गिरते जाते हैं त्यों-त्यों ये पक्के दांत निकलते आते हैं। दांत निकलते समय बालकोंका आहार घटा देना चाहिये, क्योंकि उस समय उनकी जठराग्नि मन्द पड़जाती है। और नाना प्रकारके रोगोंकी सम्भावना रहती है

अधिक प्यास—यदि बच्चोंको अधिक प्यास लगे और पानी पीनेसे उन्हें सन्तोष न हो तो कमलगट्टेके हरे बीजको नीमके साथ घोटकर पानीमें पिलाये। या मुनक्का-(दाख)को धोकर उसका बीज निकाल डाले, बाद नमकके साथ घोंटकर सबेर बालकको चटा दिया करे। अथवा भुनी हींग सेंधा नमक और पलास पापड़ाका चूर्ण शहद मिलाकर चटानेसे तृषा मिट जाती है।

हिचकी—छोटी हड़के चूर्ण को शहदमें चटानेसे हिचकी बन्द हो जाती है अथवा नारियल पीसकर शक्करके साथ चटानेसे भी मिट जाती है। या सोहागेको पीसकर शहदमें चटानेसे हिचकी बन्द होती है।

संग्रहणी—अर्थात् भोजनका न पचना। पीपल, भांग और सोंठके चूर्णको शहदके साथ चटानेसे बच्चोंकी संग्रहणी नष्ट हो जाती है। अथवा आधी छटांक खानेका बढ़िया चूना एक परातमें रखो और ऊपरसे ढाई सेर पानी पतली धारसे उसके ऊपर छोड़ो। चूना घुल जायगा। दो घंटेके बाद उस पानीको निथार कर चूनेको फेंक दो। इस पानीको आध घंटे तक फिर स्थिर रहने दो। बाद धीरेसे उस पानीको निथार कर किसी बोतलमें भर लो और नीचे

जमे हुए चूनेको फेक दो। पीछे इसी पानीको थोड़ासा दूधमें मिलाकर प्रति दिन बच्चेको पिलाया करो। इससे बालककी उल्टी और हरे दस्तोंका आना भी बन्द हो जाता है।

बवासीर—अजवाइन, सोंठ, पाठा, अनारदाना और कूड़ेकी छाल, इन सबोंका चूर्ण गुड़ और मट्ठे (तक्र) में मिलाकर पिलानेसे बवासीर अच्छी होती है। अथवा सफेद जीरा, पोहकर मूल कश्मीरी पट्टा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता हड़ इनके चूर्णमें गुड़ मिलाकर गोली बनाकर खानेसे बवासीरका नाश हो जाता है। नागकेसर, मक्खन और मिश्रीके खानेसे बच्चोंका खूनी बवासीर अच्छा होता है। या नागरमोथा, मोचरस, कैथके पत्ते इनका चूर्ण शहदके साथ चाटनेसे भी खूनी बवासीर नष्ट हो जाता है।

जलमें डूबने पर—यदि कोई बालक जलमें डूबता हुआ निकाला जाय और पानी अधिक पी चुका हो तो फौरन जलके बाहर करके उसकी चिकित्सा करनी चाहिये। पांच मिनटसे अधिक जलमें डूबते रहनेसे बचना कठिन हो जाता है। किन्तु अधिक यत्न करनेसे कितने ही मृतप्राय लड़के भी अच्छे होते देखे गये हैं। सबसे पहले पेटका पानी मुखद्वारा बाहर निकालनेकी चेष्टा करनी चाहिये। थोड़ी देरके डूबे हुए बच्चोंको सिर बल खड़ा कर देना चाहिये और दोनों पैरोंको ऊपर करके पकड़े रहना चाहिये। फिर उसे सुला देना चाहिये और जीभको पकड़ कर थोड़ा खींचना चाहिये। चित्त सुलाये रहो। लड़केके दोनों हाथोंको एकबार सिरके बगलमें करो, फिर नीचे झुकाकर दबा रखो इस

प्रकार घन्टे भर तक रहने दो। गरम पानी बोतलोंमें भरकर उसके शरीरपर घुमाओ, ताकि शरीर गरम हो जाय। नीचे लिखी दवाओंको अपने पास रखनेसे मौकेपर बड़ा काम निकलता है। इनका उपयोग आगे चलकर बतलाया जायगा।

१—टिंचर इकोनाइट (Tincture Aconite) एक बूंद।
२—सोडा बाइकार्ब (Soda Bicarb) ५ से १० ग्रेन।
३—पोटास ब्रोमाइड (Potash Bromide) २ से ५ ग्रेन।
४—रेंडीका तेल (Caster Oil) १ से ४ ड्राम।
५—काड-लिवर आयल (Cod liver Oil) $\frac{1}{2}$ से ४ ड्राम
६—डिल वाटर (Dill Water) १ से २ ड्राम।
७—ग्लैसरिन (Glycerine) १ से २ ड्राम।
८—मैना (Manna) १ से २ ड्राम।
९—सैंटोनिन (Santonine) $\frac{1}{6}$ से १ ग्रेन।
१०—कैलोमेल (Calomel) १ से २ ड्राम।
११—ओलिव आयल (Olive Oil) १ से २ ड्राम।
१२—पिपरमेंट।
१३—अर्क कपूर।
१४—अर्क पुदीना।
१५—सत अजवाइन।

खुजली—चूनेके पानीमें कड़ुवा तेल डालकर खूब हिलावे। जब हिलाते-हिलाते गाढ़ा हो जाय, तब उसमें रूईका फाहा भिगोकर खुजलीके स्थानपर लगा दे।

आगसे जलना—इमलीकी छालको जलाकर गायके घीमें फेटकर जले हुए स्थानपर लगा दें। यदि घाव हो गया हो तो कड़ुवा तेल लगाकर ऊपरसे पत्थरका खूब बारीक कोयला बुरक दे। अथवा चूनेका पानी जैसा कि ऊपर खुजली रोगमें है लगा दे।

नाकसे रुधिर जाना—यह बहुधा गर्मीके कारण होता है। शंखपुष्पी या कौड़ेनीको मिर्चके साथ पीस-छानकर पिलानेसे अच्छा हो जाता है। अथवा फिटकिरीका पानी नाकसे सूंघे। यदि नाकमें कीड़े पड़ गए हों तो पिंडोल मिट्टी कूटकर रोगीके मुख और नाकपर महीन कपड़ा ढीला करके डाल दे और फिर औंधा सुलाकर उसकी नाकके नीचे मिट्ठी रख दे। आंखें बन्द कराके उसके मस्तक को मिट्टीसे ढंककर ऊपरसे उसी मिट्टीपर पानी छिड़के। जब सब मिट्ठी तर हो जाय तब पानी डालना बन्द कर दे। पर रोगीको थोड़ी देरतक उसी प्रकार औंधा पड़ा रहने दे। ज्यों-ज्यों इस मिट्टीकी सौंधी गन्ध नाककी राहसे मस्तकमें जायगी त्यों-त्यों कीड़े बाहर निकलने लगेंगे।

हैजा—प्याजका अर्क दुअन्नी भर पिला दे और जब तक कै-दस्त न बन्द हों बराबर २०-२० मिनटके बाद पिलाती जाओ। फौरन अच्छा हो जायगा। यदि बड़ी उम्रवालेके हैजा या विशूचिका रोग हो गया हो तो खूराक एक तोलेकी देना उचित है। यदि प्यास न बुझे तो डेढ़ फूल लौंग आधी भूनकर और एक एक फलीको पत्थरपर घिसकर चवन्नीभर पानीमें पिला दे। यह अनुभूत दवा है। अथवा पिपरमेंट और अर्ककपूर मिलाकर पिला दे।

फूली—चिरचिटेकी जड़का रस शुद्ध शहदमें मिलाकर आंखोंमें अंजनकी तरह लगानेसे फूली कटकर आंखकी ज्योति ठीक हो जाती है। इस अंजनको बराबर लगाते रहना चाहिये। फूली कट जाने पर बन्द कर दे। यदि आंखमें कुछ पड़ जाय जैसे धूल किरकिरी आदि तो गर्म जलकी धारा देकर साफ कर देना चाहिये। अथवा एक बूंद रेंड़ीका तेल डालकर ठण्डे पानीकी पट्टी बांध देना चाहिये।

कब्ज—यदि बालकको खुलासा दस्त न हो तो काला नमक सुहागा और भूनी हींगको पानीमें घिसकर ज़रा गरम करके पिला दे। अथवा मुर्दासंखको पानीमें घिसकर शक्कर मिला औटावे और थोड़ा गरम रहते ही पिला दे।

मकड़ी—मकड़ी फरे जाने पर नीबूके रसमें चूना मिलाकर लगावे। अथवा अमचूर पीसकर लगा दे।

बच्चे को यदि बुखार हो जाय, तो एकोनाइट टिंचर आधी बूंद-से एक बूंद हाथमें मलकर बदनमें घिस दे। इससे बड़ा उपकार होता है। किन्तु यह एक ज़हरीली चीज है। एक वर्षसे कम अवस्थाके बालकों पर बिना किसी अच्छे डाक्टरसे पूछे इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। दांत निकलते समय बच्चोंको दो ग्रेन पोटाश ब्रोमाइड देना हितकर है। दो वर्षसे ऊपरके बच्चेको यदि किसी कारण वश नींद न आती हो और सुलानेकी जरूरत हो तो इसी दवाकी पांच बूंद सोनेके समय पिला देनेसे खूब नींद आ जाती है। यदि बालक दुर्बल और रोगी हो तो काड लिवर आयल पिलाना

चाहिये। तीन मासके बच्चेको अंगुलीमें लगाकर चुसाना चाहिये। और एक वर्षके बच्चेको छोटे चम्मच-भर पिलाना लाभदायक है। किन्तु कुछ खिलानेके बाद इसे पिलाना चाहिये, खाली पेट नहीं। यदि बच्चेको अधिक कड़ा दस्त होता हो, तो मैनाको दूधमें मिला कर पिला देना चाहिये। बड़ा लाभ पहुँचता है

अस्तु। बच्चोंकी चिकित्सा समाप्त कीजाती है। माताओंको चाहिये कि वे कोई भी दवा करनेके पहले खूब सोच-समझ लें। यह नहीं कि विना समझे या जरा सी बात पर दवा करने लग जायं और पेट दुखता हो तो बुखारकी तथा दांत निकलनेके समय उल्टी आदि होती हो तो हैजेकी अथवा गर्मीको शान्त करनेकी अंट-संट दवा दे दिया करे। ऐसा करनेसे बच्चोंका स्वास्थ्य बहुत जल्द बिगड़ जाता है। अतः इसमें बड़ी सावधानी रखनेकी जरूरत है। क्योंकि बच्चोंका शरीर और स्वभाव बड़ा ही कोमल होता है।

अब इस प्रकरणमें मैं अपनी मां-बहनोंको पत्र लिखनेकी रीति बतलाऊंगी। हमारे यहां दो तरहसे पत्र लिखे जाते हैं, एक पुराने ढंगसे और दूसरे नये ढंगसे। पुराने ढंगकी प्रथा तो अब बहुत कम रह गयी है फिर भी दो चार तरीके दिखला देनेमें लाभके सिवा कोई हानि नहीं है। क्योंकि बहुत सी बहनें पुराने तरीकेको ही अधिक पसन्द करती हैं।

॥ श्रीः ॥

सिद्धि श्री सर्वोत्तमोपमार्ह पूज्य पाद श्रीमान् पिताजीको लिखा काशीसे प्रमिलाका चरण छूकर प्रणाम। यहां कुशल है, आपकी कुशल परमात्माजीसे चाहती हूँ। आगे बाबूजी मैंने सुना था कि आप बाहर जानेवाले हैं। किन्तु कब जायंगे और कहां जायंगे, यह मुझे अब तक मालूम नहीं हुआ इससे चित्त लगा है। कृपा कर जल्द सूचित कीजिये। किमधिकम्। आज मिती आश्विन कृष्ण १२ बुधवार विक्रम सम्वत् १९८५।

इसी प्रकार मामा, चाचा ताऊ बड़े भाई आदि बड़ोंको भी लिखा जाता है। अन्तर केवल इतना ही रहता है कि सम्बोधन

'श्रद्धेय पिताजीके" स्थानपर श्रद्धेय मामाजी" या जिसको लिखना हो उसका नाम बदल जाता है। यदि मांको पत्र लिखना हो. तो सब कुछ यही रहेगा केवल 'सर्वोत्तमोपमार्हके' स्थान पर सर्वोत्तमोपमार्हा 'पूज्यपाद, श्रद्धेय' के स्थानपर केवल 'पूजनीया' या परम पूजनीया स्नेहमयी माताजी' लिखा जाता है। और जब अपनेसे छोटेको पत्र लिखना हो जैसे छोटे भाई लड़के भतीजे आदिको, तो इस तरह लिखना चाहियेः—

स्वस्ति श्री युक्त चिरं० गोपालको तुम्हारी बड़ी बहन चम्पाका आशीर्वाद पहुँचे। कुशल-क्षेम दोनों ओरका परब्रह्म परमात्मासे चाहती हूँ जिसमें आनन्द है। भाई गोपाल, मैंने सुना है कि आजकल तुम पढ़नेमें खूब परिश्रम कर रहे हो। यह बड़े हर्षकी बात है। मैं भी तुम्हारे लिए परमात्मासे प्रार्थना करती हूँ कि वह तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध करे। अब तो विजय दशमीकी छुट्टी होगी न ? इस छुट्टीमें मेरे यहां जरूर आना। ज्यादा क्या लिखूं। मुझे भूल न जाना। शुभ। मिती भादों सुदी १४ वार शनि सं० १९८४ विक्रमाब्द।

यह तो हुई पत्र लिखनेकी पुरानी रीति। अबकी नयी रीति भी आगे देखिये। क्योंकि आजकल पढ़े-लिखे लोगोंमें अधिकतर यही रीति प्रचलित है और यही अच्छी भी समझी जाती है।

श्रीः

पूज्यवर पिताजी,

प्रणाम। आपका ता० ७-९-२६ का लिखा हुआ पत्र यथा समय मिला। पढ़कर चिन्तित हृदयको शान्ति मिली। किन्तु भाभीके

अस्वस्थ रहनेका हाल पढ़कर दुःख भी हुआ। उनके लिए बुखार व
दवा भेजती हूँ। प्रतिदिन सवेरे एक पुड़िया पानके रसमें खाने
दीजियेगा। इस दवासे बहुतोंको आराम हुआ है। ईश्वरकी द
होगी तो इससे बहुत जल्द भाभीकी तबीयत ठीक हो जायगी
लल्लूपर बहुत चित्त लगा है। उसे एकबार अवश्य यहां भेजिये—

आज ता० १०-९-२६ ई०
खानपुर पोष्ट चन्दौली

आपकी पुत्री—
सरला

यदि माताको पत्र लिखना हो, तो इस प्रकार लिखना चाहिये-

श्रीः

ता० १५-१०-२८
प्रयाग

मां,

चरण छूकर प्रणाम। तुमने अपने पिछले पत्रमें ५-७ दिनके भीतर कोई आदमी भेजनेके लिए लिखा था। मैं रात-दिन तुम्हारा समाचार मिलनेकी बाट जोहा करती हूँ पर आज १५ दिन हो गये, कोई भी नहीं आया। गोविन्दकी बीमारीका हाल सुननेसे जी नहीं लग रहा है। यही सोचती हूँ कि किस वजहसे मांने अभीतक किसी को नहीं भेजा। इसलिए बहुत जल्द कुशल-समाचार भेजो। यहां सबलोग अच्छी तरहसे हैं। सरस्वती अब अच्छी हो गयी, दो दिनसे पढ़ने भी जाने लगी है किन्तु अभी निबलता बहुत है।

तुम्हारी प्यारी बेटी—
ललिता

छोटे भाईके नाम पत्र:—

श्रीः

प्यार सुशील

तुम्हारा पत्र मिला। तुम परीक्षामें उत्तीर्ण हो गये, यह वांचकर विशेष खुशी हुई। अब तो मुझे मिठाई खिलाओगे न? मैं तुम्हारी बीज ८-१० दिनमें अवश्य भेज दूंगी। पर मेरे यहां आओगे कब-तक? तुम्हारा भांजा विनय तुम्हें बहुत याद करता है। मांसे यहां का समाचार कह देना। विशेष हाल अच्छा है

झांसी ता० ५-४-२८

तुम्हारी बहन—
देवलता

पतिके नाम पत्र:—

श्रीः

प्राणनाथ,

पत्रोत्तर देनेमें देर हुई, इसलिए क्षमा कीजियेगा। आप तो जानते ही हैं कि आपकी यह दासी आपके समीप सदा ही भिखा-रिनी बनी रहती है। इसीसे पत्रद्वारा और कुछ नहीं तो क्षमाकी ही याचना कर रही है। पर क्या करूं मुझे इसीमें आनन्द आता है। महीने भरमें लौट आनेके लिए कह गये थे, पर दो महीने हो गये अभीतक न आनेका क्या कारण है? शरीर तो अच्छा है न? मैं यह कैसे लिखूं कि आप जल्द आवें। क्योंकि यह तो आज्ञा करना है। पर हां, इतना अवश्य है कि मेरी दशापर ध्यान देकर आप जैसा उचित समझें, वैसा करें। हानू दिनभर ऊधम मचाये

रहता है, यहांतक कि कभी-कभी स्कूल भी नहीं जाता। इधर दो दिनसे वर्षा हो रही है। और सब हाल अच्छा है। क्या मैं आशा करूँ कि पत्रोत्तरके स्थानपर आपकी पद-धूलि माथे चढ़ानेका शीघ्र सौभाग्य प्राप्त होगा ? विशेष कृपा।

सावन सुदी ७   आज्ञाकारिणी—
सं० १९८५   प्रभा
मु० व्यासपुर-कलां

बड़ी बहनके नाम पत्रः—

श्रीः

कार्तिक बदी ११ सं० १९८५
मिर्जापुर

बहन,

मैंने सुना है कि बड़े भैया तुम्हें लेनेके लिए १२-१३ दिनमें जायँगे। इसलिए भैयाको पत्र लिखकर तुम्हें भी लिखे देती हूँ। मुझे दर्शन देकर, तब माँके घर जाना। एक पंथ दो काज होगा। तुम्हारे आनेसे मुझे सन्तोष भी हो जायगा और तुम्हें विन्ध्य-वासिनी देवीका दर्शन भी मिल जायगा। न आओगी, तो मुझे बड़ा दुःख होगा बस यही लिखूंगी।

तुम्हारी छोटी बहन—
राजेश्वरी

विवाहित बेटीके नाम पत्रः—

ता० २६-४-२८
वासलीगंज, मिर्जापुर

प्यारी बेटी रमा,

आशा है कि तू सानन्द होगी। यहां का समाचार भी साधारणतः अच्छा ही है। इधर कोई गया नहीं, इससे तू किसी प्रकारकी चिन्ता न करना। रोज-रोज जाना-आना भले आदमियोंकी रीति नहीं है। चिरं० राधेके यज्ञोपवीतमें मैं तुझे अवश्य बुलाऊंगी। बेटी देखना अपनी तथा मेरी बदनामी न कराना। जिस प्रकार अबतक तू वहां सास-ससुर, पति तथा घरके अन्य लोगोंकी कृपा-पात्री बनकर रही है, उसी प्रकार जन्मभर रहनेकी चेष्टा करना। यदि कभी कोई कुछ कह दे, तो उलटकर जवाब न देना। "कम खाना और गम खाना बड़े लोगोंका काम है," इस कहावतको उठते-बैठते सदा अपने मनमें जपा करना। यदि तू दो बात सहकर रहेगी, तो सुख पावेगी और सबलोग तुझपर स्नेह रखेंगे। सहनशीलताके बराबर स्त्रीके लिए दूसरा कोई भी गुण नहीं है। इसपर मुझे एक अच्छी सी बात याद आयी है। वह इस प्रकार है, ध्यानसे सुनः—

किसी स्त्री-पुरुषमें सदा झगड़ा हुआ करता था। बाहरसे घर आते ही स्वामी बहुत तरहसे अपनी स्त्री पर चिढ़ता और उसका अपमान किया करता था। वह स्त्री भी अपने पतिकी बातोंका मुंहतोड़ जवाब दे दिया करती थी। एक भी बातको सहन करना मानो उसकी शक्तिसे बाहर था। फलतः झगड़ा कभी मिटता ही

न था। दोनों ही एक दूसरेके मिलनसे दुखी रहने लगे। अन्तमें पास-पड़ोसकी स्त्रियोंने उस स्त्री से कहा—तुम्हारा पति मंत्रके बलसे तुम्हारे वश हो सकता है। उस स्त्रीने इस युक्तिको स्वीकार कर लिया। उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि किसी ओझाके मंत्र बल-द्वारा यह काम किया जा सकता है। फिर क्या था, एक दिन वह एक नामी ओझाके पास गयी और साफ-साफ अपना अभिप्राय कह सुनाया। ओझा बुद्धिमान् था। उसने उस स्त्रीके विश्वासको बिगाड़ना उचित नहीं समझा। उसने एक लोटा जल मगाकर उसे मंत्र-द्वारा फूंक दिया और उस रमणीको देकर कहाकि जब तेरा पति घर आवे तब तू एक घूंट जल अपने मुंहमें रखलेना और जबतक वह सो न जाय, तबतक मुंहका जल मत गिराना। इस प्रकार लगातार इक्कीस दिनतक करते रहनेसे तेरा पति अवश्य ही तेरे वश हो जायगा।

उस स्त्रीने ऐसा ही किया। पतिके घरमें पैर रखतेही वह मुंहमें पानी भर लिया करती थी। इससे उसे अपने पतिकी कड़ीसे-कड़ी बातें चुपचाप सहन कर लेना पड़ता था। क्योंकि यदि उत्तर देती, तो मुंहका पानी नीचे गिर जाता। इस प्रकार जब १५-२० दिन बीत गये, तब उसके पतिने देखा कि आजकल यह इतनी शान्त हो गयी है कि मेरा एक भी बातका जला-कटा जवाब नहीं देती। मैं जो कुछ कहता हूँ, उसे चुपचाप सह लेती है। ऐसी दशामें अब उसे कड़ी बातें सुनाकर व्यर्थ कष्ट पहुँचाना, उचित नहीं है। फलतः ओझाके इस कौतूहल-पूर्ण उपायसे पति और

पत्नोंके स्वभाव में विचित्र परिवर्त्तन हो गया और उनकी पारस्परिक कलह अनायास ही मिट गयी।

इसलिए बेटी, तू सदा सहकर रहना, ऐसा करनेसे कभी किसीके साथ तेरा झगड़ा बिगाड़ होगा ही नहीं। मैं तुझे हर चिट्ठीमें कुछ-न-कुछ उपदेशकी बातें लिखा करती हूँ, इतने पर भी यदि तू कभी मेरी शिक्षाके विरुद्ध काम करेगी, तो मैं सच कहती हूँ कि यद्यपि तू मेरी एकमात्र और अत्यन्त लाड़ली लड़की है, फिर भी मैं तुझे जन्म भरके लिए त्याग दूँगी, तेरा मुंह भी न देखूंगी। क्योंकि मैं संसारमें सब कुछ सह सकती हूँ, पर बदनामी नहीं सह सकती। बस, अब इस पत्रमें और कुछ न लिखूंगी। मेरी बातोंका बुरा न मानना बेटी, मैंने तेरे हितकी बात लिखी है।

शुभचिन्तिका—
तेरी मां

बड़े भाईके नाम पत्र :—

श्रद्धेय भैया

आपकी आज्ञाके अनुसार मैंने कार्यारम्भ कर दिया है। सफलता होना आपहीके हाथ है। क्योंकि मुझमें इतनी विद्या बुद्धि नहीं कि ऐसे गुरुतर कामको बिना आपकी सहायताके कर सकूं। पुस्तक समाप्त होने पर आपकी सेवामें भेजूंगी। आपके कहनेसे शुरू तो कर दिया पर गृहस्थोकी झंझटोंमें लिखनेका अवसर बहुत ही कम मिलता है। आप जल्द आनेकी कृपा कीजियेगा नहीं

तो सम्भव है, मेरा उत्साह भंग हो जाय। दया-दृष्टि बनी रहे। अपनी इस छोटी बहनको भूल न जाइयेगा।

भाद्रपद कृष्णाष्टमी सं० १९८५
लखीमपुर।

आपकी—
विमला

अखबारोंमें लेख आदि भेजनेके लिए इस प्रकार लिखना चाहिये:—

श्रीमान् सम्पादक "सरस्वती" की सेवामें—

महोदय,

सेवामें इस पत्रके साथ "स्त्री-समाजकी दुर्दशा" शीर्षक लेख भेज रही हूँ। कृपया अपनी प्रतिष्ठित पत्रिकामें इस लेखको प्रकाशितकर मुझे आगे फिर कुछ लिखनेके लिए प्रोत्साहित करते हुए अनुगृहीत करें।

आज ता० २६–१–२८ ई०

कच्ची सराय, काशी

निवेदिका—
चन्द्रकला

यदि किसी बाहरी आदमीको पत्र लिखनेकी आवश्यकता आ पड़े, तो आगे लिखे ढङ्गसे लिखना चाहिये। यद्यपि हमारी बहनोंको बाहरी लोगोंसे पत्र-व्यवहार करनेकी जरूरत नहीं है और ऐसा होना भी नहीं चाहिये, तथापि लिखनेका ढंग जान लेना आवश्यक है। सम्भव है, कभी काम आ पड़े।

महाशयजी,

कृपाकर यह सूचित कीजिये कि आपके यहां पशु-चिकित्सा-सम्बन्धी कौन-कौन सी पुस्तकें हैं। उनके लेखकोंके नाम तथा मूल्य भी लिख भेजनेकी दया करें।

प्रार्थिनी—
बाबू विजयप्रताप बहादुरसिंहकी पत्नी
गांव बेदौली, पोष्ट भेलूपुर
जिला बनारस

ता० २९—११—२८ ई०

इसी प्रकार यदि किसी स्त्रीको पत्र लिखना हो तो "श्रीमतीजी" "महोदया" "महाशया" आदि करके लिखना चाहिये। यदि किसी समाचार-पत्र या मासिक पत्रिकाका सम्पादन किसी स्त्री द्वारा होता हो और उसे पत्र लिखना पड़े तो "श्रीमती सम्पादिका महोदया" लिखना चाहिये। अब नीचे पत्र पर पता लिखनेकी रीति बतलायी जा रही है:—

सेवामें—
श्रीमान् बा० भानुप्रसादसिंह जी
मु० देवखरी
पो० रामपुर
जि० गोरखपुर

पार्वे पं० उमाशंकरजी दीक्षित
नं० ४१ काटनस्ट्रीट बड़ाबाजार
कलकत्ता

सम्पादक "विश्वमित्र"
नं० २१ टेमर लेन,
कलकत्ता

श्रीमती भानुकुमारी देवी
गांव बेलखरी
पो० भोरखपुर
जिला लखनऊ

मैनेजर,
एस० बी० सिंह ऐंड कम्पनी
पुस्तक-विक्रेता
चौक, बनारस सिटी।

मंत्री,
अखिल भारतवर्षीय
हिन्दू-महासभा
गिरगांव, बम्बई

पता लिखनेमें ऊपर थोड़ा स्थान छोड़कर पहले पत्रके पाने-वालेका नाम साफ अक्षरोंमें लिखना चाहिये। बाद नीचे बायीं ओर थोड़ा स्थान छोड़कर मुकाम फिर मुकामके नीचे बायीं ओर थोड़ा स्थान छोड़कर पोष्ट आफिस और उसके नीचे जिला लिखना चाहिये। इस तरह पता लिखकर पोष्ट आफिसके नीचे आड़ी लकीर खींच देनी चाहिये। जो बहनें अंग्रेजी जानती हों, वे पूरा पता हिन्दीमें लिखकर सबके नीचे यदि प्रसिद्ध पोष्ट-आफिस हो. तो पोष्ट आफिसका नाम अन्यथा जिलेका नाम अँग्रेजीमें लिखकर उसके नीचे थोड़ी लकीर खींच दें। ऐसा करनेसे दूरके पत्रोंमें एक दिनकी शीघ्रता हो जाती है. क्योंकि डाकखाने-वालोंको पत्रपर ऊपरकी बातको अंग्रेजीमें लिखना पड़ता है। इसका क्रम इस प्रकार है :—

मैनेजर
इण्डियन सोप कम्पनी
९ चटर्जी लेन कलकत्ता
Calcutta.

ॐ संगीत विद्या ॐ

इस विषय पर पीछे बहुत कुछ लिखा जा चुका है। अब यहां अपनी बहनोंके लिए अच्छे-अच्छे महात्माओंके कुछ सुन्दर पद इसलिए लिखे जायंगे कि वे गन्दे गीतोंको छोड़कर इन्हीं गानोंको गावें और घरकी लड़कियोंको याद करावें।

(१)

अखियां हरि दरसनकी प्यासी।
देख्यौं चाहत कमल नैनको निसदिन रहत उदासी॥ १॥
आये ऊधो फिरिगे आंगन डारि गये गर फांसी॥ २॥
केसर-तिलक मोतिनकी माला वृन्दावनको वासी॥ ३॥
काहुके मनकी कोउ न जानत लोगनके मन हांसी॥ ४॥
सूरदास प्रभु तुमरे दरस बिनु लैहौं करवट कासी॥ ५॥

(२)

चरण-कमल वन्दौं हरिराई।
जाकी कृपा पंगु गिरिलंघै अन्धेको सब कछु दरसाई॥
बहिरो सुनै मूक पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराई।
सूरदास स्वामी करुनामय बारबार वन्दौं तिहिपाई॥ १॥

(३)

जागिये रघुनाथ कुंवर पंछी बन बोले।
चन्द्र-किरन सीतल भई चकई पिय मिलन गई,
त्रिविध मन्द चलत पवन पल्लव-द्रुम डोले॥ १॥

प्रात भानु प्रगट भयो रजनीको तिमिर गयो,
भृङ्ग करत गुञ्जगान, कमलन दल खोले ॥ २ ॥
ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुर-नर-मुनि करत गान
जागनकी वेर भई नयन पलक खोले ॥ ३ ॥
तुलसीदास आनन्द निरखिके मुखारविन्द,
दीननको देत दान भूपन बहुमोले ॥ ४ ॥

(४)

मोरी लागी लटक प्रभु-चरननकी ॥
चरन विना मोंहिं कछु नहिं भावे,
झूठ माया सब सपननकी ॥ १ ॥
भवसागर सब सूख गया है
फिकर नहीं मोहिं तरननकी ॥ २ ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर
उलट भई मोरे नयननकी ॥ ३ ॥

(५)

अब हौं कासों वेर करौं।
कहत पुकारत प्रभु निज मुखते घट-घट हौं विहरौं ॥
आपु समान सबै जग लेखौं भक्तन अधिक डरौं ॥
श्रीहरिदास कृपाते हरिकी नित निर्भय विचरौं ॥

माताओं और बहनोंको इसी प्रकारके पद याद करके गाना चाहिये। इन पदों से हृदय शुद्ध होता है और छोटे बच्चोंपर अच्छा प्रभाव पड़ता है। मंगलकार्योंमें ऐसे ही पदोंका गाना उचित है।

हिसाब लिखनेकी रीति

घरका जमा-खर्च लिखनेसे बड़ा लाभ होता है। सबसे अधिक लाभ तो यह होता है कि कभी व्यर्थ खर्च या अधिक खर्च होनेपर पता चल जाता है। इसलिए संभलकर खर्च करनेकी आदत पड़ती है। बिना लिखे-पढ़े पता ही नहीं चलता कि किस महीनेमें क्या खर्च हुआ। परिणाम यह होता है कि धीरे-धीरे खर्च बहुत बढ़ जाता है और फिर चेष्टा करने पर भी बढ़ा हुआ खर्च नहीं घटता, हमेशा चिन्तित रहना पड़ता है। क्योंकि खर्चेका बढ़ा देना सरल है, पर बढ़े हुए खर्चेका घटाना बड़ा ही कठिन काम है। इसलिए महीने भरके लिए स्वामीसे एक साथ रुपया ले लेना चाहिये। उसे एक कापीमें जमा करके ज्यों-ज्यों खर्च होता जाय त्यों-त्यों लिखते जाना चाहिये। खर्च करते समय इस बात पर भी ध्यान रखना जरूरी है कि गृहस्थीका सब काम अच्छे ढंगसे हो और कम खर्चमें हो। जिस कामको घरकी दूसरी स्त्री दस रुपयेमें भी अच्छी रीतिसे न कर सके, उसको तुम आठ-नौ रुपयेमें ही स्वच्छतासे करनेकी चेष्टा करो। ऐसा करनेवाली स्त्री ही घरकी मालकिन होनेके योग्य हुआ करती है।

इसके अलावा संचयकी ओर भी ध्यान रखना जीवनके लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए हर महीनेमें जो कुछ आमदनी हो उसमेंसे कुछ-न-कुछ पहले ही निकालकर संचित धनमें रख देना चाहिये और बाद बचे हुए रुपयोंको गृहस्थीके कामोंमें खर्च

करना चाहिये। ऐसा करनेसे कुछ ही दिनोंमें खासी रकम इकट्ठी हो जाती है, और अपने तथा स्वामीके संकट-कालमें काम आती है। यदि इसका भेद स्वामीको न मालूम रहे तो और भी अच्छा हो। किन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि चोरी करे। क्योंकि यदि स्वामीके दिलमें यह भाव पैदा हो जायगा कि तुम चोरी करती हो, तो उनकी नजरोंसे गिर जाओगी। इसलिए यह धन ऐसे ढङ्गसे जुटाना चाहिये कि गृहस्थीके किसी काममें त्रुटि न हो। घरके लोग यह समझें कि इतने कम खर्चमें यह कैसे इतना बढ़िया प्रबन्ध करती है और तुम्हारा संचित-कोप बढ़ता जाय। जब कभी स्वामीको रुपयोंके लिए संकटका सामना करना पड़े तब अपनी बुद्धिमानीसे बचायी हुई सारी सम्पत्तिको उनके सामने रखकर उन्हें चकित कर दो। ऐसा करनेवाली स्त्री अपने स्वामीकी अधिकाधिक प्रिया हो जाती है और देशमें उसकी प्रशंसा होती है। घरके खर्चका हिसाब इस प्रकार लिखना चाहिये:—

जमा	खर्च
५०) ता० १अप्रैल सन् १९२८को जमा स्वामी द्वारा प्राप्त	२०।) ता० १अप्रैल सन् १९२८का खर्च
१०) ता० ५अप्रैल सन् १९२८को जमा स्वामी द्वारा प्राप्त	१९॥) आटा दाल १० सेर घी५सेर चावल९सेर
३०) ता० १०अप्रैल सन्१९२८को रामेश्वर द्वारा मिले	२) २॥) १२) ३)
	॥) हल्दी मसाला धोबीको

२४) ता० २०अप्रैल सन्१९२८को
शिवसहायसे मिला
४०) ता० ३० अप्रैल सन् १९२८
को स्वामीसे मिले
१५४) कुल जमा

आज तककी धुलाई
=) ।) ।=)
२०।)
१) ता० २ अप्रैल सन् १९२८ का
खर्च
१) तरकारी दो दिनके लिए
कत्था
॥) ॥)
॥।=) ता० २० अप्रैल सन् १२९८
का खर्च
॥।=) पान १ ढोली जर्दा-सुपारी
।=) ।) ।)
४१) ता० ३० अप्रैल सन् १९२८
का खर्च
१०) मकानका भाड़ा अप्रैल
महीनेका
५) मजदूरिनकी तनख्वाह
अप्रैलकी
२६) मोदीके पुर्जेका
४१)
१३=)
९०॥=) बाकी रहा ता० ३०
अप्रैल सन् १९२८ को
१५४)

इसी प्रकार हर महीनेका हिसाब तारीखवार लिखते जाना चाहिये और महीनेके अन्तमें जोड़ देकर बाकी निकालना चाहिये। ऊपरके हिसाबमें कुल १५४) जमा हुए हैं और महीने भरमें ६३=) घरके कामोंमें खर्च हुआ है। अब १५४) मेंसे ६३=) घटा देने पर ९०॥।=) बच रहता है। इससे मालूम हुआ कि खर्च करने पर ९०॥।=) बच गया। फिर रुपये गिनकर देखो कि ९०॥।=) तुम्हारे पास हैं या नहीं। यदि हैं तब तो ठीक है यदि न्यून या अधिक हों, तो समझो कि खर्च लिखनेमें भूल हुई है।

पुत्र-वधूके साथ वर्ताव

जब स्त्री पहले-पहल अपने पतिके घर जाती है, तब उसे लज्जाके कारण बहुतसे कामोंमें बड़ी-बड़ी असुविधाओंका सामना करना पड़ता है। यदि उसे किसी तरहका कष्ट होता है जैसे पेट दुखना, जुकाम होना, मस्तकमें दर्द होना आदि—तो वह चुपचाप सहन करती है, पर संकोचवश किसीसे कहती नहीं। यहांतक कि भूख लगनेपर भी वह अपने दिलका भाव किसीसे प्रकट नहीं करती। कुछ दिनों तक नववधूको पतिका घर नया-संसारसा प्रतीत होता है। वास्तवमें है भी नया संसार ही। वह किसीके स्वभावसे परिचित नहीं रहती किसीसे उसका स्नेह नहीं रहता। बचपनके स्नेही उससे छूट जाते हैं, इसलिए उसका चित्त स्वाभाविक ही खिन्न और उदास रहता है किसी काममें दिल नहीं लगता। ऐसी दशामें मनुष्यसे किसी काममें गलती हो जाना मामूली बात है।

अतएव प्रत्येक स्त्रीका कर्तव्य है कि जब उसे सास बननेका सौभाग्य प्राप्त हो और पुत्र-वधू घरमें आवे, तब उसे पुत्रीकी भांति माने तथा जिस प्रकार अबोध बालिकाके दुःख-सुख पर माता ध्यान रखती है, उसी प्रकार सास अपनी बहू पर सदा ध्यान रखे। इस समय सासका धर्म है कि वह नव-वधूकी किसी त्रुटि पर महाकाली-की भांति विकराल रूप न धारण करे बल्कि प्रेमके साथ उसे उपदेश दे और सब कामोंको समझा दिया करे। जो सास ऐसा न करके ज़रा-ज़रा-सी बात पर झुँझलाने लगती है, खरी-खोटी सुनाती है, उसे पीछे पछताना पड़ता है। क्योंकि कुछ दिनों तक तो नव-वधू सासकी कड़ी बातें सहन करती है बाद मुंहतोड़ जवाब देने लगती है और सासको जलानेके लिए कितने ही कामोंको जान-बूझकर बिगा-ड़ने लगती है। परिणाम यह होता है कि फिर सासको जन्मभर दुःख ही भोगना पड़ता है। ऐसी सासको सुखकी रोटी दुर्लभ होजाती है।

सासको चाहिये कि वह अपने पूर्व जीवन पर दृष्टि डाले। वह सोचे कि जब मैं पहले-पहल इस घरमें आयी थी, तब मेरे हृदयकी क्या दशा थी, किन-किन बातोंका मुझे कष्ट होता था उस समय दिल कैसा अन्य-मनस्क रहता था, इत्यादि। क्योंकि इस प्रकार अपने ऊपर बीती हुई बातोंका स्मरण करनेसे हृदयमें कोमलता आ जाती है और नव-वधूके सारे कष्ट बिना उसके बतलाये ही मालूम हो जाते हैं। जब किसीका कष्ट मालूम हो जाता है तब उसका पता करना बिलकुल सरल हो जाता है। इसके अलावा सासका यह भी कर्तव्य है कि वह बहूको इस प्रकार देखे जिससे वह अन्न

देनेवाली मांकी भांति अपनी सासको समझने लग जाय। जिस प्रकार कन्या अपनी मां से कोई बात कहनेमें संकोच नहीं करती, उसी प्रकार पुत्र-वधू भी साससे कोई बात कहनेमें व्यर्थकी लज्जा न करे। किन्तु यह तभी हो सकता है जब सासका स्नेह-पूर्ण बर्ताव हो। जब तक वह अपनी सासको मांके समान नहीं समझती तथा अपने ऊपर सत्य स्नेह नहीं देखती, तब तक वह अपने दिलका भाव कदापि नहीं कह सकती।

जो स्त्री इस प्रकार नव-वधूको स्नेहकी दृष्टिसे देखती है उपदेश देती है तथा उसको अपनी कन्या समझकर उसके दुःखमें दुखी होती है वह सदा सुखसे रहती है। वास्तवमें पुत्र-वधू है भी कन्याके समान ही। देखिये गोस्वामी तुलसीदासजीने भी कहा है:—

अनुज-वधू भगिनी सुत-नारी। सुनु सठ ये कन्यासम चारी॥

—रामचरित-मानस।

अर्थात्—भाईकी स्त्री, बहन, लड़केकी स्त्री और कन्या ये चारों समान हैं। इसलिए सासको शास्त्रकारोंके कथनका सदा स्मरण रखते हुए बहूको अपने तनसे पैदा हुई पुत्रीकी तरह मानना उचित है। किन्तु दुःखकी बात है कि आजकल ठीक इसका उल्टा हो रहा है। पहले तो नयी बहूके घरमें आनेके लिए स्त्रियां खूब लालायित रहती हैं और उसके आनेपर वे एकबार बड़े हौसलेसे उसकी आव-भगत भी खूब करती हैं। किन्तु कुछ ही दिनोंमें अकारण ही उनका हौसला धूलमें मिल जाता है मामूली बातोंपर वे पासपड़ोसकी स्त्रियों से शिकायतें करने लगती हैं। परिणाम यह होता है कि सासकी

इस अज्ञानताके कारण बहुत जल्द घरमें फूटका अंकुर उत्पन्न हो जाता है और सुखमय गृहमें सदाके लिए कलहकाडेरा पड़जाता है।

स्त्री-ब्रह्मचर्य

जीवनको सुखमय बनानेके लिए पीछे बतलायी गयी बातोंके अतिरिक्त ब्रह्मचर्य रूपसे रहनेकी बड़ी आवश्यकता है। दुखकी बात है कि हमारे देशकी स्त्रियां इस अत्यन्त प्रयोजनीय शिक्षासे एकदम वंचित हैं। ब्रह्मचारिणीका मतलब है, सोलहवर्षकी अवस्थातक पूर्ण ब्रह्मचर्यसे रहकर यानी पति-सहवास तथा विषयपूर्ण बातोंसे सर्वथा अलग रहकर पतिके घर जाना और नियमित रूपसे जीवन व्यतीत करते हुए संयम-पूर्वक पति-सहवास करना।

सोलहवर्षके भीतर पति-सहवास करनेसे स्त्रियोंकी तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है। क्योंकि आयुर्वेदका मत है कि इससे पहले स्त्रियोंका रज अपरिपक्व रहता है। ऐसी अवस्थामें गर्भाधान होनेसे या तो गर्भपात होजाता है अथवा यदि बच्चा पैदा भी होता है, तो वह अल्प-जीवी होता है। इससे ऐसी स्त्रियोंकी गोदसे जब हँसता-खेलता हुआ बच्चा रूप खिलौना अनायास ही चला जाता है, तब उन्हें अगाध शोकमें डूबना पड़ता है।

इसलिए आगे चलकर आनेवाले कष्टसे बचनेके लिए पहले ही से सावधान रहना चाहिये। क्योंकि और चीजें तो एकबार खो जानेपर फिर प्राप्त हो सकती हैं, किन्तु एक बारकी खोयी हुई तन्दुरुस्ती फिर लाख प्रयत्न करने पर भी हाथ नहीं आती। और जिसकी तन्दुरुस्ती नष्ट हो जाती है, उसका सर्वस्व नष्ट हो जाता है।

पतिके घर जानेपर उचित अवस्था पाकर सन्तानोत्पत्तिकी शुद्ध कामनासे पति-सहवास करना सती-साध्वी स्त्रियोंका लक्षण है। वह स्त्री ब्रह्मचारिणी ही है जो सोलह वर्षतक उचित रीतिसे ब्रह्मचर्यका पालन करके गृहस्थाश्रममें प्रवेश करती है। जिस प्रकार पुरुषोंके लिए पचीस वर्षकी अवस्थातक ब्रह्मचारी रहकर पढ़नेके लिए वेदाज्ञा है, उसी प्रकार स्त्रियोंके लिए भी सोलह वर्षकी अवस्थातक सब विषयोंसे अलग रहकर पवित्रता-पूर्वक पढ़नेकी वेदाज्ञा है। बाद पतिके घर जाकर भी ब्रह्मचारिणी रहना प्रत्येक स्त्रीका धर्म है। यहांपर ब्रह्मचारिणी कहनेका यह अभिप्राय है कि रातदिन वैषयिक बातोंमें न फँसा रहना चाहिये तथा पति-सम्भोग इन्द्रिय-सुखके लिए कभी भी नहीं करना चाहिये। जो स्त्री नियमित रूपसे पति-सहवास करती है एवं इन्द्रियोंकी दासी कभी नहीं होती वह भी ब्रह्मचारिणी ही है। विना ब्रह्मचर्यका पालन किये किसी भी स्त्रीको पति-प्राप्त करनेका अधिकार नहीं है। वेदाज्ञा है:—

"ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवान विंदते पतिम् ।
अनूडवान् ब्रह्मचर्य्येणाश्वो घासंजिगीर्षति॥"

इस वेद-मन्त्रका अभिप्राय यह है कि ब्रह्मचर्य-पालन करनेके पश्चात् कन्या अपने योग्य पतिको प्राप्त करती है। बैल और घोड़ा भी ब्रह्मचारी रहते हैं इसलिए घास खाकर पचा सकते हैं।

रातदिन विषयमें लीन रहनेवाली स्त्रीका स्वास्थ्य भी बहुत जल्द नष्ट हो जाता है। परिणाम यह होता है कि युवावस्थामें ही उसे वृद्धावस्थाका अनुभव करना पड़ता है तथा सन्तान-शोकमें फंसकर जीवन को बर्बाद करना पड़ता है।

सातवाँ अध्याय

विधवा-कर्तव्य

अब अपनी उन बहनोंकी ओर ध्यान देना आवश्यक है जिनका संसार ही अलग है। उसका नाम है विधवा-संसार। पूर्वजन्मार्जित कर्मोंके फलसे हमारी कितनी ही बहनें असमयमें ही विधवा हो जाती हैं। उनके जीवनके कष्टोंपर ध्यान देते ही आंखोंसे आंसू गिरानेके सिवा कुछ सुझाई नहीं पड़ता। हे प्रभो! स्त्रियोंको उनके कर्मानुसार और चाहे जैसा दंड दो, पर वैधव्य-दंड कभी भी न दो। हाय! समयके फेरसे या समाजकी मूर्खतासे आज हमारी कितनी ही बहनें युवावस्थाके आगमनसे पहले ही विधवा हो जाती हैं। यदि बाल-विवाहकी प्रथा टूट जाती, तो समाजका संहार करनेवाला एक बहुत बड़ा रोग दूर हो जाता। गत मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टोंसे पता चलता है कि हिन्दू-समाजमें १२ वर्षसे कम उम्रकी कई लाख विधवायें हैं। यदि छोटी अवस्थामें विवाह न होता तो आज इस अवस्थामें हमारी बहनोंको विधवा होना ही क्यों पड़ता? मेरे अनुमानसे विधवा होने तथा उनकी संख्या बढ़नेके मुख्य कारण ये हैं:—

१—पूर्वजन्मके कर्मानुसार कितनी ही स्त्रियोंको वैधव्य दे मिलता है। किन्तु इसका निवारण करना मानवी-शक्तिसे बाहर है तथा उद्योगी संसारके लिए यह कारण ध्यान देने योग्य भी नहीं है

२—बाल-विवाह—इससे विधवाओंकी संख्या बढ़ रही है यदि बाल-विवाह रुक जाय, तो अपने-आपही युवावस्थासे पहले विधवा होनेवाली बहनोंकी संख्या घट जाय। यह यत्न समाज हाथमें हैं। इसके अतिरिक्त वे बहनें भी विधवा होनेसे बच जायें जिनके पति कमजोरीके कारण जवानीमें ही चल बसते हैं। क्योंकि कम अवस्थासे ही वीर्यको नष्ट करनेसे आयु क्षीण हो जाती है।

३—पुरुषों की बुद्धि अत्यन्त विषय-ग्रस्त हो गयी है, इसलिये उनकी आयु अधिक ब्रह्मचर्य नष्ट होनेके कारण शीघ्र समाप्त हो जाती है और वे अपनी स्त्रियोंको विधवा बनाकर छोड़ जाते हैं।

४—स्त्री-समाजकी मूर्खता है। क्योंकि स्त्रियां अपने विषयी और व्यभिचारी पतियोंको यथासाध्य रोकनेका प्रयत्न नहीं करतीं। उनके व्यभिचारमें स्वयं सहायता पहुँचाकर उन्हें विषय रूपी आगमें ढकेल देती हैं और फिर वैधव्य-दुःख सहती हैं।

खासकर मुख्य कारण ये ही हैं जिनसे आज विधवाओंकी संख्या इस प्रकार बढ़ रही है और दिन-पर-दिन बढ़ती जारही है। हमारी ये विधवा बहनें कैसे-कैसे रत्न उत्पन्न करतीं, उनके बच्चे कितने बड़े पण्डित, नामधारी, देश-सेवक और शक्ति-सम्पन्न होते, यह कौन कह सकता है ? दुःखकी बात है कि समाज अपनी मूर्खतासे उन रत्नोंको खो रहा है और उधर तनिक भी ध्यान

नहीं दे रहा है। क्या यह समाजके लिये अत्यन्त लज्जाकी बात नहीं है ? नाथ ! वह दिन कब आवेगा, जब हिन्दू-जातिको अपनी यह भद्दी भूल स्पष्ट रीतिसे दिखलायी पड़ेगी और वह इसे दूर करनेके लिए कमर कसकर तैयार होगी ? क्या विधवाओंकी आह भरी पुकार तुम्हारे कानों तक अभी भी नहीं पहुँची ? कितना सोते हो स्वामिन् ? क्या कलिके प्रभावसे तुम भी असमयमें ही सोने लग गये ? तुम तो प्रलयकालमें सोया करते थे. फिर यह क्या कर रहे हो ? क्या सृष्टिका काम करते-करते अधिक थकगये ? यदि यही बात है तो प्रलय करके चैनसे क्यों नहीं सोते ? क्यों अपने सिरपर विधवाओंसे टांय-टांय कराते हो ? स्वतंत्र-चेता होकर डरो न नाथ ! एक बार विधवाओंकी ओर ध्यान दो, विधवा-संसार तुम्हारी दया-दृष्टिकी भीखमांग रहा है। सिवा तुम्हारे उसका कोई सहायक नहीं है। एक बार अपने वचनपर भी तो ध्यान दोः—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥

—श्रीमद्भगवद्गीता ।

क्या संसारमें इससे भी अधिक अनर्थ होने पर ध्यान दोगे ? किन्तु इससे अधिक अनर्थ और क्या होगा कि अबोध बालिकायें असमयमें ही व्यर्थ विधवा बना दी जाती हैं ? बता दो न ? कलंक-रहित बालिकाओंपर समाज इतना गहरा प्रहारकर रहा है और तुम ध्यान नहीं देते हो ? उतना ही गुदगुदाओ जितना नीक लगे लाला !

अस्तु, विधवा बहनोंके लिए परमात्मासे प्रार्थनाकर आ पुर्कं,

अब उनके कर्तव्योंपर प्रकाश डालना आवश्यक है। क्योंकि किसी कविने कहा है—"आइ परी सिर आपने छांडु, विरानी आस।"

दिन-चर्या—विधवाओंको अपने दिन बड़ी शान्तिसे बिताना उचित है। उनका धर्म है कि वे अपना क्षण-भरका समय भी व्यर्थ न जाने दें। क्योंकि बेकारीके समय मनमें नाना प्रकारकी दुश्चिन्ताओंके उत्पन्न होनेकी पूरी आशंका रहती है, जिनसे विधवाओंके जीवनकी बर्बादी हो जाती है। विधवाओंको चाहिये कि वे अपनी तपस्याके बलसे विश्व-ब्रह्माण्डको हिला दें। परमात्माकी सृष्टिमें यह बड़ी विचित्रता है कि सबके जीवनमें कुछ-न-कुछ विशेषता रहती है। विधवाओंको जहां संसारके तमाम सुखोंसे वंचित होना पड़ता है, वहां उन्हें इतना अवकाश भी मिल जाता है कि वे चाहे जितनी मानसिक उन्नति कर सकती हैं।

इसलिए विधवा बहनोंको प्रतिदिन सवेरे उठकर नित्य-कर्मोंसे निश्चिन्त हो, अपने पति अथवा किसी अन्य देवताका ध्यान करना चाहिये। किन्तु स्त्रियोंके लिए सबसे उत्तम और सुख-साध्य ध्यान पतिका ही है, अतः विधवाओंको पतिदेवका ही ध्यान करना चाहिये। वे अपने पतिको ही ईश्वर मानकर सारी दुर्लभ वस्तुएं प्राप्त कर सकती हैं। कम-से-कम कुशासन पर बैठकर घंटे-दो-घंटे तक अवश्य अपने स्वामीका स्मरण करना चाहिये। उन्हें इतने सवेरे उठनेकी जरूरत है कि जब वे इतना काम कर चुकें तब घरकी और स्त्रियां सोकर उठती रहें। बाद घरके काम-काजमें लगना चाहिये फिर छुट्टी मिलनेपर अच्छी-अच्छी बातें करलें,

घरके बच्चोंको सुन्दर उपदेश देने तथा धार्मिक पुस्तकें पढ़नेमें समय बिताना उचित है।

यदि घरमें कोई बीमार पड़ जाय तो सबसे अधिक सावधानीसे उसकी सेवा करनी चाहिये। विधवाओंको सेवा करनेकी प्रतिज्ञा कर लेना हितकर है। काम-क्रोध-लोभ-मोहको विधवा बहनें कभी भी अपने पास न फटकने दें। क्योंकि इनसे बड़ा अनिष्ट होता है। यदि सम्भव हो तो निद्रा बहुत कम कर दें और आलस्य छोड़कर पढ़नेमें समय काटें। सबके साथ प्रेम-पूर्ण बर्ताव करें। परमात्माका भरोसा रखें और अपने मान-मर्यादाकी रक्षाके लिए सदा ध्यान रखें। संकटके समय धीरता पूर्वक कामकरें। नीच पुरुषोंसे सदा बचकर रहें। हँसी-दिल्लगी करनेकी आदत छोड़ दें।

खाना-पाना—विधवाओंको अपने खाने-पीनेमें सादगी रखनी चाहिये। मसालेदार, चटपटी या खट्टी चीजें कभी भी नहीं खानी चाहिये। क्योंकि ऐसी चीजोंसे स्वाभाविक ही शरीरमें उत्तेजना पैदा होती है। आहार भी कम कर देना हितकारक है। अल्पाहारसे शरीर फुर्तीला और तन्दुरुस्त रहता है तथा बुद्धिमें विकार उत्पन्न नहीं होता। मादक या नशीली चीजोंको तो विधवा स्त्रियोंको छूना ही नहीं चाहिये। इनमें भी बहुतसे दुर्गुण भरे हुए हैं। यदि कभी कोई चटपटी चीज खानेकी इच्छा उत्पन्न हो, तो हठपूर्वक उसे रोकना उचित है और ऐसी हालतमें यदि अचानक कोई चटपटी वस्तु सामने आ जाय, तब भी उसे खाना न चाहिये। हां,

यदि इच्छा न रहने पर हठात् कोई ऐसी चीज आ जाय तो उसे लेनेमें कोई हानि नहीं है।

इसका ध्यान रहे कि खाने-पीनेका असर मन पर पड़े बिना नहीं रहता है। मनुष्य जैसी चीज खाता है, वैसी ही उसकी बुद्धि भी हो जाती है। इसलिए विधवा बहनोंको सदा सादा भोजन करना चाहिये।

रहन-सहन—इसमें बहुतसी बातें आ जाती हैं। जैसे वस्त्रआभूषण राग-रंग आदि। पहले हमें यह देखना है कि विधवाओंका वस्त्र कैसा होना चाहिये। हमारे विचारसे सफेद वस्त्र विधवाओंके लिए अधिक उपयोगी है। इसपर कितनी ही बहनें कह सकती हैं कि वस्त्रमें कौनसी छूत घुसी है कि सफेद वस्त्र ही पहनना चाहिये दूसरे रंगका नहीं बात बिल्कुल सही है। रंगीन वस्त्रके लिए निषेध इस वजहसे नहीं किया जा रहा है कि उसमें कोई छूत है बल्कि इसलिए कि वह पुरुषोंके लिए प्रिय है। तड़क-भड़ककी ओर मनुष्योंकी आंखें स्वाभाविक ही झुक पड़ती हैं। इसलिए ऐसी चीजोंसे विधवाओंको सदा दूर रहना चाहिये जो पुरुषोंके दिलको खींचनेवाली हों।

इसी प्रकार आभूषणोंसे दूर रहना उचित है। क्योंकि गहनेसे सुन्दरता बढ़ती है। यह लोगोंकी दृष्टिको और भी अधिक आकृष्ट करता है। विधवाओंको किसीकी आंखमें किसी भी प्रकारसे गड़ना नहीं चाहिये. कारण यह कि इससे कभी न कभी खतरेमें पड़नेकी सम्भावना रहती है। आभूषणके सम्बन्धमें पीछे बहुत कुछ लिखा

जा चुका है .उसे हमारी विधवा बहनें पढ़ सकती हैं। वास्तवमें आभूषण-वस्त्र आदि पतिके लिए हैं। जब वही नहीं तब इन सभीं-का धारण करना व्यर्थ है और अपने ही हाथों अपने पैरमें कुल्हाड़ी मारनेके समान हानिकारक है।

इसके अतिरिक्त आभूषण और वस्त्रादिमें एक दुर्गुण यह भी है कि सजधज के साथ रहनेपर मनमें खुद ही दुर्भावना पैदा होती है क्योंकि व्यसनका यह धर्म ही है कि वह मनुष्यको व्यसनी बनाता है। इसलिए विधवाओंको सब प्रकारके व्यसनोंसे तथा सुन्दरता बढ़ानेवाली चीजोंसे बिलकुल अलग रहना चाहिये। जैसे पान खाना, तेल-फुलेल लगाना आदि। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि सिर-दर्दमें भी सिरपर तेल न डाले। यह कहनेका अभि-प्राय केवल इतना ही है कि चिकनाहट या सुन्दरताके लिए तेल लगाना उचित नहीं। यों तो यदि किसी कारणवश जैसे बीमारीमें दवाके लिए पान खा लिया जाय तो कोई हानि नहीं। यहांपर आभूषणोंके अन्तर्गत चूड़ी न पहननेके लिए भी कहा गया है। क्योंकि यह भी तो एक प्रकारका आभूषण ही है। एक प्रकारका तथा यह तो सुहागकी सूचना देनेवाली है। इससे कलाइयोंकी शोभा बढ़ जाती है इसलिए इसे भी अवश्य त्याग देना चाहिये।

नाच-तमाशेमें विधवाओंको भूलकर भी जाना उचित नहीं। ऐसे स्थानोंपर जानेसे व्यर्थ ही मनमें विकार उत्पन्न होता है। नाच-तमाशेमें गन्दे गाने गाये जाते हैं कामोत्तेपक हाव-भाव दिखलाये जाते हैं तथा बहुतसे लोग जुटे रहते हैं। अतः ऐसी जगहोंमें भूल-

कर भी पैर न रखो। हमेशा नीची निगाह करके चलो। किसी पुरुष के चित्रकी ओर न देखो। ऐसे चित्र भी न देखो जो भद्दे या बुरे भाव पैदा करनेवाले हों।

याद रहे कि भीतर चोर बैठा हुआ है। जरा भी व्यसनकी ओर बढ़ते ही वह छिपा हुआ चोर तुम्हारा सर्वस्व हर लेगा। फिर दे संसारमें तुम मुंह दिखलानेके लायक भी न रह जाओगी। इसलिए अपनी इज्जत बचानेके लिए, अपने धर्मको रक्षा करनेके लिए अपने कुलकी मर्यादाको रखनेके लिए तथा उत्तमगति पानेके लिए विधवाओंको बड़ी ही सावधानीसे तथा बिलकुल सादगी और उदासीनतासे रहनेकी जरूरत है।

जो स्त्री ऐसा नहीं करती, क्षणिक सुखके लोभमें पड़कर अपनेको इन्द्रियोंकी दासी बना देती है उसे नाना प्रकारकी यंत्रणाएं भोगनी पड़ती हैं। जिन लोगोंको देश-देशान्तरोंमें जाने-आनेका काम पड़ता है वे जानते हैं कि गलती करके घरसे निकल जानेके कारण विधवाओंको कैसे-कैसे कष्ट सहने पड़ते हैं। कितनी ही विधवाओंकी तो दुर्दशा देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। एक दुःख तो उन्हें घरवालोंके विछोहका होता है और दूसरा दुःख उन्हें आश्रय न मिलनेका होता है। क्योंकि जो नीच स्वभावके होते हैं वही तो परायी स्त्रीपर बुरी दृष्टि डालते हैं। अच्छे लोग तो ऐसे कामोंसे सदा बचकर रहने की चेष्टा करते हैं। इसलिए हमारी विधवा बहनें नीचोंके ही मोहजालमें फंसती हैं। नतीजा यह निकलता है, कि पहले तो वे चिकनी-चुपड़ी बातें करके अपने चंगुलमें फंसाते

ई. वाद घरसे निकालकर छोड़ देते हैं। वेचारी विधवा धोबीके कुत्तेकी भाँति न घरकी ही रह जाती है और न घाट ही की।

इस प्रकार सारा जीवन दुःखमय हो जाता है और अन्तमें फिर जन्म लेकर नाना प्रकारके दुःख भोगने पड़ते हैं। देखिये महोपदेशक तथा महाकवि गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमान-समें अनुसूया देवीने जगज्जननी जानकीजीसे क्या कहा हैः—

पतिवंचक पर-पति-रति करई। रौरव-नरक कलप सत परई॥
छन सुख लागि जनम सतकोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु स्रम नारि परम गति लहई। पतिव्रत-धरम छाड़ि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जनम जहं जाई। विधवा होइ पाइ तरुनाई॥

—रामचरितमानस।

इसलिए विधवा वहनोंको उचित है कि वे अपने मृत-पतिका सदा अपने मनमें ध्यान किया करें, मानसमें ही पति की पूजा-अर्चना भी कर लिया करें।

पुस्तकावलोचन—शृङ्गार-रसकी पुस्तकें विधवाओंको हाथ से छूना भी न चाहिये। हमेशा ऐसी ही पुस्तकोंको पढ़ना चाहिये, जिनसे अच्छी-अच्छी शिक्षायें मिलें तथा मनमें सुविचार उत्पन्न हों। गन्दे उपन्यास तथा अश्लील किस्से-कहानियां विधवायें न तो कभी पढ़ें और न कानसे सुनें ही। जो स्त्रियां ऐसी पुस्तकें पढ़ती हों, अथवा हंसी-दिल्लगीकी गन्दी बाते करती हों, उनके पास कभी भी बैठना लाभदायक नहीं है। सदा सती-साध्वी देवि-योंकी जीवनियाँ, धार्मिक कथाओं नीतिपूर्ण उपदेशों तथा उच

कर भी पैर न रखो। हमेशा नीची निगाह करके चलो। किसी पुरुष के चित्रकी ओर न देखो। ऐसे चित्र भी न देखो जो भद्दे या बुरे भाव पैदा करनेवाले हों।

याद रहे कि भीतर चोर बैठा हुआ है। जरा भी व्यसनकी ओर बढ़ते ही वह छिपा हुआ चोर तुम्हारा सर्वस्व हर लेगा। फिर तुम संसारमें तुम मुंह दिखलानेके लायक भी न रह जाओगी। इसलिए अपनी इज्जत बचानेके लिए, अपने धर्मको रक्षा करनेके लिए अपने कुलकी मर्यादाको रखनेके लिए तथा उत्तमगति पानेके लिए विधवाओंको बड़ी ही सावधानीसे तथा बिलकुल सादगी और उदासीनतासे रहनेकी जरूरत है।

जो स्त्री ऐसा नहीं करती, क्षणिक सुखके लोभमें पड़कर अपनेको इन्द्रियोंकी दासी बना देती है उसे नाना प्रकारकी यंत्रणायें भोगनी पड़ती हैं। जिन लोगोंको देश-देशान्तरोंमें जाने-आनेका काम पड़ता है वे जानते हैं कि गलती करके घरसे निकल जानेके कारण विधवाओंको कैसे-कैसे कष्ट सहने पड़ते हैं। कितनी ही विधवाओंकी तो दुर्दशा देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। एक दुःख तो उन्हें घरवालोंके बिछोहका होता है और दूसरा दुःख उन्हें आदर न मिलनेका होता है। क्योंकि जो नीच स्वभावके होते हैं वेही तो पराई स्त्रीपर बुरी दृष्टि डालते हैं। अच्छे लोग तो ऐसे कामोंसे सदा बचकर रहने की चेष्टा करते हैं। इसलिए हमारी विधवा बहनें नीचोंके ही मोहजालमें फँसती हैं। नतीजा यह निकलता है कि पहले तो वे चिकनी-चुपड़ी बातें करके अपने चंगुलमें फँसाते

ई बाद घरसे निकालकर छोड़ देते हैं। बेचारी विधवा धोबीके कुत्तेकी भांति न घरकी ही रह जाती है और न घाट ही की।

इस प्रकार सारा जीवन दुःखमय हो जाता है और अन्तमें फेर जन्म लेकर नाना प्रकारके दुःख भोगने पड़ते हैं। देखिये महोपदेशक तथा महाकवि गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानसमें अनुसूया देवीने जगज्जननी जानकीजीसे क्या कहा है:—

पतिवंचक पर-पति-रति करई। रौरव-नरक कलप सत परई॥
छन सुख लागि जनम सतकोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी॥
बिनु स्रम नारि परम गति लहई। पतिव्रत-धरम छांड़ि छल गहई॥
पति प्रतिकूल जनम जहं जाई। विधवा होइ पाइ तरुनाई॥
—रामचरितमानस।

इसलिए विधवा बहनोंको उचित है कि वे अपने मृत-पतिका सदा अपने मनमें ध्यान किया करें, मानसमें ही पति की पूजा-अर्चना भी कर लिया करें।

पुस्तकावलोचन—शृङ्गार-रसकी पुस्तकें विधवाओंको हाथ से छूना भी न चाहिये। हमेशा ऐसी ही पुस्तकोंको पढ़ना चाहिये, जिनसे अच्छी-अच्छी शिक्षायें मिलें तथा मनमें सुविचार उत्पन्न हों। गन्दे उपन्यास तथा अश्लील किस्से-कहानियां विधवायें न तो कभी पढ़ें और न कानसे सुनें ही। जो स्त्रियां ऐसी पुस्तकें पढ़ती हों, अथवा हंसी-दिल्लगीकी गन्दी बातें करती हों, उनके पास कभी भी बैठना लाभदायक नहीं है। सदा सती-साध्वी देवियोंकी जीवनियों, धार्मिक कथाओं नीतिपूर्ण उपदेशों तथा उच्च

कोटिके इतिहासोंका अवलोकन करना चाहिये और अच्छे-अच्छे विचारोंको हृदयमें भरना चाहिये।

लाचारी—यह संसार बड़ा ही विचित्र है। खासकर यौवनावस्थाकी तरंगें तो अत्यन्त ही भयानक हैं। इसलिए जो विधवायें यौवनावस्थाकी उत्कृष्ट तरंगोंसे अपनेको न बचा सकें या न दबा सकें, उन्हें चाहिये कि वे कुछ समयके लिए पहले शान्त हों और फिर खूब अच्छी तरहसे सोच-विचार कर अपने स्वभावके अनुकूल किसी पुरुषको वर लें। पहले शान्त होनेको इसलिए कहा गया है कि ऐसा न करनेसे धोखा हो जाना अथवा अपने अनुकूल पतिका न पाना सम्भव है।

मिटाये वंश मर्य्यादा, न जिनमें मानसिक बल हो।
गिरावें गर्भ जो छिपकर कुकर्मोंका बुरा फल हो॥
नहीं कुछ लाज सामाजिक, भरा हर बात में छल हो।
करें वे व्याह फिर अपना उन्हें इस भांति ही कल हो॥

जो विधवायें पर्देमें रहती हों, जिन्हें अपने योग पति चुननेका मौका मिलना असम्भव हो उनका कर्तव्य है कि वे अपने घरके पुरुषोंसे साफ कह दें अथवा किसीके द्वारा कहलवा दें। इस प्रकार वे किसी योग्य पुरुषके साथ अपना पुनर्विवाह कर सकती हैं। इसमें किसी प्रकारकी हानि नहीं है।

जिस प्रकार उत्तम, मध्यम और अधम तीन तरहकी पतिव्रता स्त्रियां होती हैं, उसी प्रकार विधवाओंके भी तीन भेद किये जा सकते हैं। उत्तम विधवा वह है, जो सादी चालसे रहे, किसी प्र-

कारका कायिक, वाचिक या मानसिक पाप न करे, किसी पुरुषकी ओर न देखे तथा सदा अपने स्वर्गवासी पतिको देवता समझ उसकी पूजा करे। झूठ न बोले, बुरी स्त्रियोंके पास न बैठे, सदा पवित्र रहे ऐसी विधवायें उत्तम कोटिमें कही जा सकती हैं।' मध्यम विधवायें वे हैं जो मनको रोकनेकी पूरी चेष्टा करें, किन्तु न रोक सकने पर अपने अनुकूल पुरुषके साथ विवाह करलें। और अधम विधवायें वे हैं जो लोक-लज्जाके कारण पुनर्विवाह तो नहीं करतीं, पर छिपे-छिपे व्यभिचार कराती हैं, भ्रूण-हत्या करती हैं, बहुतसे पुरुषोंका सहवास करती हैं, सदा झूठ बोलती हैं तथा अपनी बुरी आदतोंको छिपानेके लिए नाना प्रकारके उपाय किया करती हैं।

फंसा लेंगे विधर्मी-जन—जहां इस बातका भय हो।
न जिससे निभ सके यह व्रत तथा सद्धर्म भी क्षय हो॥
हृदय जिस कामिनीका वस, अभी तक कामनामय हो।
चुने वह वर पुनः अपना उसी पर और की जय हो॥

अधम विधवाओंको क्या कहा जाय, समझमें नहीं आता। क्योंकि जब उनमें वैधव्यके कोई भी चिह्न दिखलायी नहीं पड़ते, वे अहवातियोंके भी कान काटती हैं तब उन्हें विधवा कैसे कहा जा सकता है। ऐसी पुंश्चली स्त्रियोंकी बड़ी ही दुर्गति होती है। इन्हें न तो समाजमें उचित स्थान मिलता है और न यथार्थ सांसारिक सुखकी प्राप्ति ही होती है। अन्तमें इनकी क्या गति होती होगी, सो आंखसे परेकी बात है। पर हां यदि वेद और शास्त्र सत्य हैं जो कि तीनों कालमें सत्य हैं भी—यदि संसारमें ईश्वरीय

नियमोंकी कुछ महत्ता है तो यह निश्चय है कि इनकी ऐसी दुर्गति होती होगी जिसकी मनुष्य कल्पना भी नहीं कर सकता।

इसलिए विधवा बहनो! सावधान हो जाओ। विषय-सुखके लोभमें पड़कर अपने जीवनको मिट्टीमें न मिलाओ। अधम बन नेसे दूर रहो। यदि तुम्हारा उधर झुकाव हो ही जाय और तुम किसी प्रकार भी अपनेको रोक न सको, तो ऐसा काम करो जिससे तुम्हारी गणना मध्यमकी विधवाओंमें हो अधममें नहीं।

सुनरी मेरे निर्बल के बल राम।

पिछली साख भरूं सन्तन को आड़े संभारे काम॥
जबलग गजबल अपनो बरत्यो नेक सरो नहिं काम।
निर्बल होय बल राम पुकार्‍यो, आये आधे नाम॥
द्रुपदसुता निर्बल भइ ता दिन गह लाये निज धाम।
दुःशासनकी भुजा थकित भई बसनरूप भये श्याम॥
अपबल तपबल और बाहुबल चौथा है बल दाम।
सूर किशोर कृपा से सब बल हारे को हरनाम॥

ॐ शान्तिः

मुद्रक महादेव प्रसाद—
अर्जुन प्रेस कबीरचौरा बनारस सिटी।

प्रत्येक स्त्री पुरुष के लिये
उपयोगी पुस्तक

लेखक—
श्री केशवकुमार ठाकुर

प्रकाशक—
साहित्य-निकेतन, दारागंज, प्रयाग

प्रकाशिका—
श्रीरामकली देवी
व्यवस्थापिका, साहित्य-निकेतन
दारागंज, प्रयाग।

मूल्य १) एक रुपया

मुद्रक—
श्री पं० प्रतापनारायण चतुर्वेदी,
भारतवासी प्रेस, दारागंज
प्रयाग।

गृहस्थ जीवन

विषय-सूची

गृहस्थ जीवन

समाज की व्यवस्था

जन्म से लेकर मृत्यु तक, मनुष्य-जीवन के अनेक रूप होते हैं, जीवन के भिन्न-भिन्न आकार-प्रकारों में, सफल होने के लिए हमारे पूर्वजों ने प्राचीन काल में अत्यधिक प्रयत्न किया था। जीवन क्या है ? उसका वैज्ञानिक विश्लेषण क्या है ? इस प्रकार की उसके सम्बन्ध में छानबीन की थी, उसीके आधार पर, उन्होंने जीवन के रूप निर्धारित किये थे। जन्म काल से लेकर अन्त तक जीवन चार भागों में विभाजित किया था। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास। जीवन के ये चार मुख्य अंग हैं। ये चार अवस्थाएँ प्राचीन काल से चली आ रही हैं और चली जाँयगी।

जीवन की यह अवस्था न केवल हमारे देश में मानी जाती है, वरन् इसी व्यवस्था का आधार, इसीका रूप-प्रतिरूप, आज विश्व के सभी समुन्नत देशों में पाया जाता है। अंतर केवल इतना है कि अन्य समुन्नत देशों की व्यवस्था उनके जीवन के उत्थित आकार-प्रकार में है और हमारी व्यवस्था, हमारे जीवन के अधः-पतित प्रतिबिम्ब में अपरिमार्जित है। दोनों में कोई विशेष अन्तर

नहीं है। दोनों का मूल प्रकाश एक ही है। एक ओर वह मूल प्रकाश, क्षीण होकर, दीपक के रूप में रह गया है। और दूसरी ओर अपने तेज में आगे बढ़ कर, उसने विद्युत की शक्ति का रूप धारण कर लिया है। इसके सिवा और कोई अन्तर नहीं है।

हम जीवन की इन चार अवस्थाओं की अलग अलग विवेचना नहीं करना चाहते, ऐसा करना हमारा यहाँ, उद्देश्य भी नहीं है, इन चार अवस्थाओं में गार्हस्थ अवस्था की विशद विवेचना करना ही इस पुस्तक का मूल उद्देश्य है, अतएव इसकी आलोचना और मीमांसा के साथ साथ यह कहना अत्यन्त आवश्यक है। कि जीवन का सारा महत्व गार्हस्थ जीवन पर ही निर्भर है। गार्हस्थ्य जीवन की सफलता ही, जीवन की सफलता है, इस जीवन का असफल व्यक्ति, अपने किसी जीवन में सफल हो सकता है, यह हमारा विश्वास नहीं है। बालक अपने जीवन के प्रारम्भ से लेकर विवाह के समय तक ब्रह्मचर्य से रह कर, विद्याध्ययन करता है, शारीरिक शक्ति का संग्रह करता है और उसके बाद, पूर्ण यौवनावस्था में विवाह करके गृहस्थ के रूप में, इस जीवन में प्रवेश करता है। उसके ब्रह्मचर्य-जीवन की सफलता, उसके गार्हस्थ्य जीवन की बहुत अंशों में आधार होती है, किन्तु इसके साथ ही, ब्रह्मचर्य जीवन की साधारण भूलें, गार्हस्थ्य जीवन में क्षम्य हो जाती हैं। परन्तु गार्हस्थ्य जीवन की भूलें, उसके जीवन में फिर क्षमा की पात्र नहीं हो सकतीं। असफल गृहस्थ अपने सम्पूर्ण जीवन में असफलता का ही अनुभव करता है।

सकी यह विकलता, उसको कभी चैन से बैठने नहीं देती। सफल गृहस्थ का व्यक्तिगत जीवन रोग-शोक का जीवन हो ाता है, उसके सार्वजनिक जीवन में नैतिक बल नहीं होता और ागे चल कर जीवन के अन्त में वह ईश्वर के पास भी आश्रय हीं पाता। इस प्रकार जीवन की सफलता और विफलता, सका सुख और दुख, उसके गार्हस्थ जीवन पर निर्भर है।

जीवन की उपरोक्त चार अवस्थाओं में, जीवन का कितना ड़ा अध्यात्म भरा हुआ है, यह बताना कठिन है। संसार में न्म लेकर मनुष्य न जाने कितनी माया-ममता में लिप्त हो जाता है और जितना ही वह अपने जीवन में आगे बढ़ता है उतना ही उसकी माया-ममता बढ़ती जाती है। जीवन की बेकार अवस्थायें, मनुष्य को माया पूर्ण जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध रखती हैं। एक नौकर अपने स्वामी की आज्ञा से बाजार जाता है और स्वामी की आज्ञानुसार, अपने कार्यों का सम्पादन करके, अन्त में फिर अपने स्वामी के पास चला जाता है। मनुष्य स्रष्टा की सृष्टि है, वह उसी की इच्छा से, इस संसार में आता है और संसार के जीवन से निपट कर, अपने स्रष्टा की इच्छानुसार इस जीवन को छोड़ कर चला जाता है, संसार में आना और जीवन धारण करना, उस परम पिता, परमात्मा—स्रष्टा की आज्ञा है। नौकर बाजार जाकर, बाजार के कार्यों में जितनी ही सफलता प्राप्त करता है, अपने स्वामी के निकट उतना ही वह कृपा का पात्र होता है। जीवन के एक एक अंग को निरीह भाव से, सम्पादित

करना, जन्म लेकर संसार में आने वाले मनुष्य के लिए, परमा
की इच्छा है। संसार में आकर मनुष्य माया में पड़ जाता है औ
जब कभी परमात्मा के पास जाने का उसे स्मरण होता है, तो इ
घबराता है। घबराता वह इसलिए है कि यहाँ पर वह अपने
कर्त्तव्यों का पालन नहीं कर पाता जिनके करने के लिए वह, यह
से आता है। जीवन की ये चार अवस्थाएँ, जीवन का एक
प्रस्तुत करती हैं, जिन पर चल कर, जीव अन्त में, अपने गं
स्थल पर पहुँच जाता है। यह मार्ग कितना सरल होता है—
कितना मधुर होता है, यह बताने के लिए शब्द नहीं हैं!

बालक जन्म लेकर व्यक्तिगत स्वार्थों का एक कीड़ा होता है
जीवन की व्यवस्था, उसको उसी रूप में रहने देती है और ज
उसका व्यक्तिगत जीवन पुष्ट और बलवान बन जाता है, तो उसे
गार्हस्थ्य जीवन में प्रविष्ट करती है, इस जीवन का पहला संस्कार
है, विवाह। इस संसार में वह अपने ही अनुरूप एक सुन्द
बालिका पाता है, जिससे वह पत्नी के नाते परिचित होता है, पत्नी
को पाने से उसके जीवन का परिवर्तन होता है, उसका व्यक्तिगत
स्वार्थ और सौख्य, सार्वजनिक स्वार्थ और सौख्य की पहली
सीढ़ी पर पैर रखता है। वह अपने सुख को पत्नी के सुख में
अनुभव करता है और पत्नी की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझता
है। कुछ दिनों के उपरान्त सार्वजनिक जीवन की वह दूसरी
सीढ़ी पर पैर रखता है और अपने जीवन के सुख-सौभाग्य को
अपनी संतान के सुख सौभाग्य में परिणत कर देता है। वह

सका अपना सुख, सुख नहीं रह जाता, उसकी अपनी पीड़ा, पीड़ा नहीं रह जाती। पत्नी और सन्तान का सुख ही उसका हो जाता है और उसकी पीड़ा ही उसकी पीड़ा हो जाती है।

संतान के समर्थ हो जाने पर संतान का गार्हस्थ्य जीवन प्रारम्भ हो जाता है और वह स्वयं घर-गृहस्थी से अपने जीवन की कुछ शक्तियों को हटा कर सार्वजनिक जीवन के तीसरे रूप में परिवर्तित कर देता है। वह धार्मिक सभाओं में योग देता है, सार्वजनिक संस्थाओं में सम्मिलित होता है, इस प्रकार धार्मिक सभाओं और सार्वजनिक संस्थाओं की सफलता और विफलता ही उसके जीवन की सफलता और विफलता हो जाती है। यह जीवन की तीसरी अवस्था, वानप्रस्थ है। इसमें उसके जीवन का व्यक्तिगत स्वार्थ और सुख, सार्वजनिक स्वार्थ सुख के रूप में आ जाता है। यह अवस्था आगे बढ़ती है और वह संन्यास में पदार्पण करता है, इस अवस्था में उसका जीवन पूर्ण रूप में, सार्वजनिक जीवन बन जाता है और जहाँ वह अपनी इस पूर्णता को प्राप्त कर लेता है, वहीं पर उसके जीवन का वह कर्त्तव्य, जिसको लेकर वह जन्म धारण करता है, समाप्त हो जाता है और अन्त में वह स्रष्टा की महाशक्ति में जाकर, सम्मिलित हो जाता है। जीवन की उन चार अवस्थाओं में, यह अध्यात्म भरा हुआ है।

विवाह के पश्चात् स्त्री और पुरुष का गार्हस्थ्य जीवन प्रारम्भ हो जाता है। गृहस्थ, संसार के सुखों का उपभोग करता है, उसकी

करना, जन्म लेकर संसार मे आने वाले मनुष्य के लिए, परमात्मा की इच्छा है। संसार में आकर मनुष्य माया में पड़ जाता है और जब कभी परमात्मा के पास जाने का उसे स्मरण होता है, तो वह घबराता है। घबराता वह इसलिए है कि यहाँ पर वह अपने उन कर्त्तव्यों का पालन नहीं कर पाता जिनके करने के लिए वह, वहाँ से आता है। जीवन की ये चार अवस्थाएँ, जीवन का एक मार्ग प्रस्तुत करती हैं, जिन पर चल कर, जीव अन्त में, अपने लक्ष्य स्थल पर पहुँच जाता है। यह मार्ग कितना सरल होता है—कितना मधुर होता है, यह बताने के लिए शब्द नहीं हैं!

बालक जन्म लेकर व्यक्तिगत स्वार्थों का एक कीड़ा होता है। जीवन की व्यवस्था, उसको उसी रूप में रहने देती है और जब उसका व्यक्तिगत जीवन पुष्ट और बलवान बन जाता है, तो उसको गार्हस्थ्य जीवन में प्रविष्ट करती है, इस जीवन का पहला संस्कार है, विवाह। इस संसार में वह अपने ही अनुरूप एक सुन्दर बालिका पाता है, जिससे वह पत्नी के नाते परिचित होता है, पत्नी को पाने से उसके जीवन का परिवर्तन होता है, उसका व्यक्तिगत स्वार्थ और सौख्य, सार्वजनिक स्वार्थ और सौख्य की पहली सीढ़ी पर पैर रखता है। वह अपने सुख को पत्नी के सुख में अनुभव करता है और पत्नी की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझता है। कुछ दिनों के उपरान्त सार्वजनिक जीवन की वह दूसरी सीढ़ी पर पैर रखता है और अपने जीवन के सुख-सौभाग्य को अपनी संतान के सुख सौभाग्य में परिणत कर देता है। सब

तका अपना सुख, सुख नहीं रह जाता, उसकी अपनी पीड़ा, ड़ा नहीं रह जाती। पत्नी और सन्तान का सुख ही उसका हो ाता है और उसकी पीड़ा ही उसकी पीड़ा हो जाती है।

संतान के समर्थ हो जाने पर संतान का गार्हस्थ्य जीवन ारम्भ हो जाता है और वह स्वयं घर-गृहस्थी से अपने जीवन ी कुछ शक्तियों को हटा कर सार्वजनिक जीवन के तीसरे रूप परिवर्तित कर देता है। वह धार्मिक सभाओं में योग देता , सार्वजनिक संस्थाओं में सम्मिलित होता है, इस प्रकार ार्मिक सभाओं और सार्वजनिक संस्थाओं की सफलता और फलता ही उसके जीवन की सफलता और विफलता हो जाती है। ह जीवन की तीसरी अवस्था, वानप्रस्थ है। इसमें उसके जीवन ा व्यक्तिगत स्वार्थ और सुख, सार्वजनिक स्वार्थ सुख के रूप में ा जाता है। यह अवस्था आगे बढ़ती है और वह संन्यास में दार्पण करता है, इस अवस्था में उसका जीवन पूर्ण रूप में, ार्वजनिक जीवन बन जाता है और जहाँ वह अपनी इस र्णता को प्राप्त कर लेता है, वहीं पर उसके जीवन का वह र्त्तव्य, जिसको लेकर वह जन्म धारण करता है, समाप्त हो ाता है और अन्त में वह स्रष्टा की महाशक्ति में जाकर, सम्मि-लित हो जाता है। जीवन की उन चार अवस्थाओं में, यह अध्यात्म भरा हुआ है।

विवाह के पश्चात् स्त्री और पुरुष का गार्हस्थ्य जीवन प्रारम्भ हो जाता है। गृहस्थ, संसार के सुखों का उपभोग करता है, उसकी

पत्नी उसके जीवन की सहचरी होती है। प्रकृति के नियमों
अनुसार दोनों ही, एक दूसरे के जीवन को सुलभ और सफ
बनाते हैं। दोनों का जीवन, एक दूसरे का अनुमोदक और सम
र्थक होता है। दोनों ही किसी एक यंत्र के दो अलग-अलग टुक
होते हैं, दोनों के मिलने पर, उस यंत्र की पूर्ति होती है औ
उसी अवस्था में, वह यंत्र अपना काम करता है। गार्हस्थ्य जीव
का सुख-स्वाच्छन्द्य, संसार में सर्वथा अनुपमेय है किन्तु इस
साथ ही विरुद्ध परिस्थितियों में, यह जीवन ही नरक है। इ
जीवन के दो रूप हैं, यदि इसका संचालन पटुता पूर्ण हुआ औ
उसके संचालक उसमें सफल हुए, तो गार्हस्थ्य जीवन की सुख
स्वच्छन्दता की संसार में कहीं पर उपमा नहीं है और यदि उस
विरुद्ध परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं और पति तथा पत्नी उसके संचा
लन में समर्थ न हुए तो फिर इस जीवन के समान दुख औ
दारिद्र और कहीं नहीं है। जो लोग इस जीवन में पड़ कर दु
और दरिद्रता का उपभोग करते हैं, वे अपने असंतोष पूर्ण जीव
के लिए गार्हस्थ्य जीवन पर दोषारोपण करते हैं, यह दोषारोप
सर्वथा असंगत और अनुचित है। गार्हस्थ्य जीवन में जीवन
एक कला होती है, जिसको समझने और जानने के लिए स्त्री-पुरु
को प्रयत्न करना पड़ता है। जो इस कला से सुपरिचित होते
वे इस जीवन के सुखों का उपभोग करते हैं और उससे अपरिचि
स्त्री और पुरुष, रो-रोकर अपने जीवन के दिन व्यतीत करते हैं

सर्वसाधारण में एक बड़ी भारी अनभिज्ञता होती है, जिस

कारण वे अपनी सभी बातें अपने भाग्य पर छोड़ दिया करते हैं। उनकी इस अनभिज्ञता पर बड़ा तरस आता है, दो किसान हैं, एक अपने खेतों को जोतकर, बो देता है और भाग्य के भरोसे पर बैठ कर, फल की प्रतीक्षा करता है, दूसरा अपने खेतों को बोने के बाद, उनकी देख भाल करता है, उनके पालन के लिए खाद और पानी का प्रबन्ध करता है और उन खेतों की उपज अपने घर में आ जाने के समय तक उनका संरक्षण करता है। अब देखना यह चाहिये कि दोनों ही किसान अपने अपने खेतों की उपज के समान अधिकारी हैं। गार्हस्थ्य जीवन में सुख और संतोष पाने के लिए, स्त्री-पुरुष को जोवन पर अध्यवसाय करना पड़ता है, ऐसा करने पर वे कभी भी अपने जीवन में सुखी न हो सकेंगे, जो गृहस्थ इन बातों से अनभिज्ञ होते हैं, वे जीवन भर रोग-शोक का सामना करते हैं और अपने भाग्य को कोसते हुए जीवन व्यतीत करते हैं। जो गृहस्थ अपने जीवन में सुखी और सन्तुष्ट नहीं है, उसको समझ कर भी वह अपने आप को सम्हालने की चेष्टा करे तो भी उसका जीवन, सुख का जीवन बन सकता है। गार्हस्थ्य जीवन की सफलता और विफलता अधिकांश रूप में, पुरुष के ऊपर निर्भर होती है। गृहस्थी एक विशाल कार्यालय है, पुरुष उसका एक मात्र अधिकारी होता है और उसकी पत्नी, उसकी सहायक मात्र होती है। एक मात्र अधिकारी पुरुष की त्रुटियों अनभिज्ञताओं से गृहस्थी के फूल, काँटे हो जाते हैं और इन कांटों की पीड़ा के लिए, उस निरपराध

पत्नी को भी आँसू बहाने पड़ते हैं। गार्हस्थ्य जीवन उनके लिए नहीं है जो उसकी कला से परिचित नहीं हैं, जो उस विज्ञान के पण्डित नहीं हैं। यह जीवन उन्हीं के लिए है जो उसके योग्य हैं और उसमें जाकर, उसकी उपयोगिता का उपभोग कर सकते हैं।

गार्हस्थ्य जीवन की साधारणतया सभी मोटी बातों पर यहाँ प्रकाश डालना है और उनकी सूक्ष्म विवेचना द्वारा यह निर्णय करना है कि किन-किन भूलों के कारण, गार्हस्थ्य जीवन अनुपयोगी और असंतोष पूर्ण बन जाता है और किस प्रकार इस जीवन को संचालित करने से गृहस्थ स्त्री और पुरुष, जीवन के वास्तविक सुखों का उपभोग कर सकते हैं।

गार्हस्थ्य जीवन के पूर्व

गार्हस्थ्य जीवन के सम्बन्ध में, पिछले परिच्छेद में कुछ बातें बताई जा चुकी हैं, किन्तु युवक स्त्री-पुरुषों को इस जीवन में आ जाने के पूर्व ही उन समस्त बातों का ज्ञान होना परमावश्यक है, जिनकी भित्ति पर गार्हस्थ्य-प्रासाद का निर्माण होता है।

बालकों और बालिकाओं को अपने यौवन काल में अपने आगे आनेवाले गार्हस्थ्य जीवन के सम्बन्ध में कुछ भी जानकारी नहीं होती, वे छिप-छिपाकर, स्वप्न की भाँति उसके सम्बन्ध में कुछ बातों की कल्पना मात्र किया करते हैं, यह कल्पना ही उनके जीवन की विघातक होती है। जिस जीवन में उनको पूर्ण ब्रह्मचर्य से रह कर अपने शरीर को स्वस्थ और पुष्ट बनाना चाहिए, उसमें वे क्या-क्या उसके विरुद्ध सीखते हैं—अपनी जीवन-शक्ति को नाश करने वाले किन-किन दृश्यों से परिचित होते हैं, यह सोच-कर हृदय काँप उठता है! स्कूल और कालेजों में पढ़ने वाले युवक बालक और बालिकायें दुर्व्यसनों के अभ्यासी होते हैं और अपने आप अपने जीवन का क्षय करते हैं। उनको, उस जीवन में कुछ बताया नहीं जाता, फैशनेबुल वस्त्रों के भीतर उनके शरीर का ढाँचा मात्र होता है एक-एक और डेढ़-डेढ़ बालिस्त लम्बे उनके सिर के बाल उनके रक्त और माँस-हीन मुख तथा गालों की शोभा की रक्षा करते हैं। उनके इस जीवन में उनके माता-पिता

का कोई अंकुश तथा संरक्षण नहीं होता उनको इन दुर्व्यसनों से बचाने के लिए उपयोगी पुस्तकें नहीं लिखी जातीं और जो समाज के दुर्भाग्य अथवा सौभाग्य से लिखी भी जाती हैं, तो उनके पढ़ने में उन युवकों का जी नहीं लगता। यहाँ पर एक छोटी-सी घटना का उल्लेख करना अनुचित न होगा, एक युवक लेखक, जिनकी अवस्था चौबीस वर्ष से लेकर अनुमानतः तीस वर्ष के भीतर थी, 'यौवन और उसका विकास' पुस्तक पर बहुत अप्रसन्न थे, उन्हें वह पुस्तक संयोगवश पढ़ने को मिली और जब उन्होंने उसे पढ़ डाला, तो उन्हें उस पुस्तक पर बहुत क्रोध आया, किन्तु उनके उस क्रोध का, उस निर्जीव पुस्तक पर कोई असर न पड़ा। उन्होंने, उस पुस्तक के लेखक को कोसना प्रारंभ किया और जब कभी कोई उन्हें मिलता तो उस पुस्तक के लेखक की अवश्य निन्दा करते। संयोगवश किसी ने उनसे पूछा कि आप इस पर इतना क्यों अप्रसन्न हैं? आप ने उत्तर दिया कि 'वह भी कोई पुस्तक है जिसमें किसी के प्रति किसी का प्रेम न हो, जिसमें प्रेम की पीड़ा और जिगर की तड़पन न हो।'

कितने आश्चर्य की बात है। युवकों और युवतियों के जीवन की स्वाभाविकता के नष्ट होने का एक प्रधान कारण, इश्क पैदा

'यौवन और उसका विकास' नामक एक पुस्तक है जिसमें युवकों के दुर्व्यसनों से लेकर उन समस्त बातों पर प्रकाश डाला गया है जिनके द्वारा उनका जीवन समुन्नत होता है।

करने वाला साहित्य है। एक अंगरेजी लेखक की बात का स्मरण होता है, उसने इस प्रकार की बातों का उल्लेख करते हुए लिखा था कि "मुझे तो उच्च घरानों और सम्पत्ति शाली युवकों तथा युवतियों से बड़ी घृणा है, ये युवक और युवतियाँ जब दुर्व्यसनों द्वारा अपने शरीर का सौन्दर्य खो देती हैं तो सुगंधित तेलों, सँवारे हुए बालों और तड़क-भड़कदार, फैशनेबुल कपड़ों के द्वारा सुन्दर बनने का प्रयत्न करती हैं। ऐसा करने पर कभी-कभी तो युवक और युवतियाँ अपने अस्थि-पंजरों के साथ अजायबघरों में रखने के योग्य हो जाती है।" ये अवस्था उन युवकों की होती है जो अपना सदाचार खो देते हैं। विवाह के पूर्व, जिन युवकों का सदाचार नष्ट हो जाता है, क्या वे भी गार्हस्थ जीवन के सुखों के अधिकारी हो सकते हैं ?

शहरों का जीवन, सदाचार खोने का बहुत बड़ा कारण हुआ है, समाज का जीवन, आए-दिनों कुछ ऐसा होगया है जिसमे काम-वासना को उत्तेजित करने वाले दृश्यों का ही प्रत्येक क्षण दर्शन होता है। नागरिक जीवन की कुछ बातें तो ऐसी हैं जो कुछ दिनों के बाद या तो परिवर्तित हो जायँगी, अन्यथा वे समाज से पुरुषार्थ ही खो देंगी। हमें यह कहने में कुछ भी सकोच नहीं है कि नागरिक जीवन, रुपये में पन्द्रह आने व्यभिचार का प्रवर्तक हो रहा है। आशिक़ाने गाने, प्रेमोत्पादक कविताएँ और कहानियाँ, उपन्यास और नाटक जो सभ्य समाज का जीवन है, वही सदाचार का शत्रु है। सिनेमा और

थियेटर तो व्यभिचार बढ़ाने के लिए स्कूल और कालेज हैं। इस प्रकार के जीवन में संयम और सदाचार के नाम पर चिल्लाना, संयम और सदाचार का उपहास करना है। संयम और सदाचार-हीन व्यक्ति गार्हस्थ जीवन में पदार्पण करके उसकी पवित्रता को नष्ट करता है। आज यदि राम-राज्य होता—यह युग यदि ऋषियों का युग होता, तो इन संयम-हीन और आचरण भ्रष्ट व्यक्तियों को दंड दिया जाता और व्यभिचार के प्रवर्त्तकों को लोकान्तरित करने का नैतिक विधान बनता। किन्तु आज ऐसा नहीं है, हम आज जिस युग में जीवन बिता रहे हैं, उसमें सदाचार और संयम की कोई मर्यादा नहीं है। आचरण भ्रष्ट किन्तु वाचाल विद्वान कहे जाते हैं और साधु तथा संयम-शील व्यक्तियों के साथ उपेक्षा की जाती है। अश्लील तथा वासना को उत्तेजित करने वाली पुस्तकें तथा पुस्तिकाएँ बात की बात में बिकती हैं किंतु जिनमें गम्भीर साहित्य का विवेचन किया जाता है, वे प्रकाशकों के यहाँ पड़ी-पड़ी, दीमक के काम आया करती हैं। जो युवतियाँ, अनेक बार गुंडों के साथ गिरफ्तार की जाती हैं, उनके इन्लार्ज किये हुए चित्र, प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में छपते हैं किन्तु जो सती और पतिव्रता होती हैं, उनको अपने घरों पर मैले-कुचैले कपड़ों में जीवन के दिन काटने पड़ते हैं।

यह सब होने पर भी जीवन के प्राकृतिक रूप में कोई अंतर नहीं पड़ता। दुराचारी और असंयमी कभी भी जीवन

के सुखों को प्राप्त नहीं करता। वह तो अपने जीवन में सुखों की कल्पना किया करता है और सुगंधित पुष्पों के स्थान पर रंगीन काग़ज़ों के बने हुए फूलों (Artificial Paper-flowers) की व्यवस्था करता है!

वैवाहिक जीवन, परिवारिक जीवन का व्यवस्थापक है, जो व्यक्ति अपने बाल्यकाल और यौवनावस्था में पारिवारिक जीवन के अभ्यासी नहीं होते, उनके लिए गार्हस्थ जीवन कभी भी सुख का जीवन नहीं बन सकता। लड़कपन में, माता-पिता की असावधानी से जिन युवकों का जीवन उद्दंड हो जाता है, वे आगे चलकर, पारिवारिक जीवन के अभ्यासी नहीं हो सकते। यहाँ पर पारिवारिक जीवन का अर्थ, कुछ और स्पष्ट कर देना है। हँसना, खेलना, गाना-बजाना, घूमना-फिरना आना-जाना आदि, जो लोग, अपने परिवार के लोगों के साथ साथ पसन्द करते हैं,उनका यह जीवन पारिवारिक जीवन कहा जाता है, किन्तु जो अपनी स्त्री, अपने बच्चों अपने भाई और अपनी बहनों के साथ, उठने-बैठने, आने-जाने, घूमने-फिरने, देखने सुनने के अभ्यासी नहीं होते, और यदि उनको इस प्रकार के जीवन में कभी पड़ना पड़े तो उनको एक असह्य भार जान पड़ेगा। इस प्रकार के व्यक्ति 'गार्हस्थ शास्त्र' के नियमों के अनुसार उद्दंड स्वभाववाले समझे जाते हैं। यह उद्दंड स्वभाव मनुष्यजीवन के लिए अत्यन्त हानिकारी होता है। इस प्रकार के व्यक्तियों का गार्हस्थ जीवन अधिक से अधिक कटुता पूर्ण होता है।

पारिवारिक जीवन का अभ्यास, बाल्यकाल से ही पड़ना चाहिए और इसके लिए, माँ-बाप को विशेष सावधानी से काम लेना चाहिए। उनकी असावधानी उस समय तो कुछ नहीं जान पड़ती किन्तु जब वह बालक युवक होकर गृहस्थ बनता है तो उसके जीवन की यह उद्दंडता विशाल रूप धारण करती है। उसके उस उद्दंड जीवन का, उसकी पत्नी और संतान पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। फल यह होता है कि उसका पारिवारिक सुख-संतोष मिट जाता है और कभी कभी तो वह बड़ा विशाल रूप धारण करता है। पुरुष, अपनी मनुष्योचित प्रवृत्तियों को चरितार्थ करने के लिए, स्वतंत्र जीवन का अनुयायी होता है और उसके ऐसा करने पर, उसकी पत्नी तथा संतान को दूसरों का आश्रय लेना पड़ता है। गार्हस्थ जीवन की कटुता का यहीं पर बीजारोपण होता है। इसलिए प्रत्येक गृहस्थ को पारिवारिक जीवन का अभ्यासी होना चाहिए और अपने परिवार के सभी छोटे-बड़ों को अपनी मित्र-मण्डली समझनी चाहिए।

गृहस्थ का सुख, उसके स्वास्थ्य पर निर्भर रहता है। और स्वास्थ्य, सदाचार से उत्पन्न होता है। प्रत्येक युवक और युवती को स्वास्थ्य के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त करनी चाहिए, स्वास्थ्य का ज्ञान न होने से वे समय असमय, कभी-कभी ऐसी भूलें करते हैं, जिनका फिर कभी कोई प्रतिकार नहीं हो सकता। इसके लिए सब से उत्तम मार्ग मनु साहित्य का पढ़ना है। युवकों और युवतियों को अपने पूर्वजों के जीवन चरित्र, धार्मिक

ग्रंथ पढ़ना चाहिए, इस प्रकार का अध्ययन ही उनके हृदयों में सदाचार और संयम का बीजारोपण करेगा और उनके जीवन को सदा के लिए स्वस्थ बनायेगा। इसके अतिरिक्त उनको आहार विहार के सम्बन्ध में भी जानकारी होनी चाहिए, खाने वाले पदार्थों का सम्यक् ज्ञान न होने से भी शरीर अस्वस्थ हुआ करता है। यौवनकाल में इस प्रकार की बहुत सी घटनाएँ घटा करती हैं, जिनसे उनके जीवन को बड़ी क्षति पहुँचती है, इस प्रकार की घटनाओं के सम्बन्ध में यदि वे पहले से परिचित रहें अथवा, माता-पिता तथा अन्य अपने शुभचिंतकों के द्वारा परिचित कराये जायँ, तो बड़ा अच्छा हो। इसके सिवा, एक बात और होना चाहिए कि युवकों और युवतियों को अपने जीवन की सभी बातें कहने की खूब आजादी हो, तो बहुत अंशों में उनकी रक्षा होती है। कभी-कभी ऐसा होता है कि युवक और युवतियाँ, अनिच्छा पूर्वक दुष्ट मनुष्यों के द्वारा सताई जाती हैं साहस-हीन होने के कारण अथवा, माता-पिता से अधिक डरने के कारण, वे उन बातों को कभी प्रकट नहीं करतीं। इसका परिणाम बड़ा भयंकर होता है। कभी-कभी तो यह भी देखा जाता है कि इस प्रकार की परिस्थितियों में बालक और बालिकायें जब अपने माता-पिता से कुछ प्रकट करती हैं तो वे ही माता-पिता के द्वारा दण्डित होती हैं। इस मूर्खता के लिए, क्या कहा जाय! माता-पिता का यह परम धर्म होता है कि इस प्रकार की स्थितियों में वे अपने बालकों की प्रशंसा करें और

उनमें इस प्रकार का प्रोत्साहन पैदा करें जिससे इस प्रकार की बातों को प्रकट करने में वे कभी भी डर तथा लज्जा का अनुभव न करें।

हमारी सामाजिक दुरवस्था हमारे गार्हस्थ्य जीवन के असंतोष का कारण है। विवाह की व्यवस्था, ठीक ठीक न होने के कारण, गार्हस्थ्य जीवन का प्रारंभ ही, ऐसे ढंग से होता है जिसके फल स्वरूप, हमें अपने इस जीवन में सुख-स्वाच्छन्द्य का स्वप्न न देखना चाहिए। विवाह के सम्बन्ध में, युवकों के जीवन का कुछ भी विचार नहीं किया जाता, उनके आचार विचारों को बिना जाने समझे उनके साथ, बालिकाओं का विवाह-संस्कार कर दिया जाता है। इस अंधाधुन्धी का फल यह हुआ है कि युवकों के जीवन में संयत भाव नाम के लिए भी मिट गया है और फिर क्यों न जाय, युवकों को संयत जीवन की आवश्यकता क्या है जीवन के सद्गुणों की उन्हें परवाह क्या है? यदि समाज की अवस्था ठीक होती और असंयत युवकों के विवाह के लिए योग्य तथा सुन्दरी युवतियाँ मिलना असम्भव होता तो फिर युवकों के जीवन का इतना अधिक ह्रास न होता। उनके जीवन उद्दंड और अनुपयोगी न होते। किन्तु समाज की अवस्था आज इतनी पतित हो गई है कि युवकों के जीवन में इन सद्गुणों की कोई आवश्यकता ही नहीं रह गई। समाज की यह दुरवस्था हमारे गार्हस्थ्य जीवन को बर्बाद करने में कम अपराध नहीं करती।

योरप की सामाजिक परिस्थिति में और हमारे देश की सामाजिक स्थिति में यही एक प्रधान अन्तर है। वहाँ के युवकों और युवतियों का जीवन हमारे यहाँ के युवकों और युवतियों की भाँति नीरस नहीं रहा। वहाँ सद्गुणों का आदर होता है—योग्यता और उपयोगिता की पूजा होती है। किन्तु वहाँ के जीवन में जो स्वतंत्रता बढ़ गई है, उससे हमारे देश के शुभ चिन्तक घबराते हैं, हमारी धारणा इसके विरुद्ध है।

जिन्होंने पश्चिम संसार के देशों की सामाजिक स्थिति अर्वाचीन और प्राचीन इतिहास का अध्ययन किया है वे जानते हैं कि इसी प्रकार की विवशता उत्पन्न हो जाने पर वहाँ की सामाजिक परिस्थितियाँ इतनी स्वतन्त्र हो गई हैं, जिस प्रकार की आज हमारे समाज में उपस्थित हैं। मानव-जीवन सामाजिक नियमों का बँधुआ है, किन्तु जब उसके जीवन की विवशता बढ़ जाती है तो वही उसके लिए क्रान्ति की प्रवर्त्तक हो जाती है। हमारे सामाजिक जीवन की विवशता जितनी ही बढ़ती जायगी, उतनी ही उसकी दुरवस्था समीप आती जायगी।

गार्हस्थ्य जीवन में जिन-जिन बातों से सफलता मिल सकती है और जिन-जिन जानकारियों की उसमें आवश्यकता पड़ सकती है, उनका जानना और संचित करना, गार्हस्थ्य जीवन में प्रवेश करने के पूर्व अत्यावश्यक होता है। इस आवश्यकता की पूर्ति के बिना उस जीवन से सुखों की अभिलाषा रखना व्यर्थ है।

युवकों और युवतियों को उसके सम्बन्ध में पूर्ण जानका
प्राप्त कर लेनी चाहिए और उसके पश्चात् गार्हस्थ्य जीवन में
प्रवेश करना चाहिए। इसके बाद भी यदि किन्हीं त्रुटियों और
अनभिज्ञताओं के कारण उसके सुख सौभाग्य से वंचित रह
पड़े तो उसको सम्हालने का प्रयत्न करना चाहिए।

विवाह का उद्देश्य

प्रकृति ने स्त्री-पुरुष के मानसिक भावों में एक विशेष प्रकार प्रवृत्ति उत्पन्न की है जिससे प्रत्येक का एक दूसरे के आकर्षण होता है, यह आकर्षण प्रेम कहलाता है। यह प्रेम नहीं है जा अध्यात्म से सम्बन्ध रखता है और न प्रेम है जो किसी का, किसी पर दया-सहानुभूति नाम पर उत्पन्न होता है। न तो यह वह प्रेम है जो दा त्मिक हृदयों में बास करता है और न वह प्रेम है जो जातीय आत्माओं में, एक दूसरे के प्रति अपनापन उत्पन्न रता है। न तो यह वह प्रेम है जो माता-पिता और सन्तान में आ करता है और न वह प्रेम है जो दो विभिन्न हृदयों को त्रता के बंधन में बाँधा करता है। यह वह प्रेम है जो पुरुष । स्त्री के प्रति और स्त्री का पुरुष के प्रति काम-वासना जनित वों की प्रेरणा से उत्पन्न होता है। यह प्रेरणा और आकर्षण केवल मानव जाति में होता है प्रत्युत-सृष्टि के समस्त प्राणियों समान रूप से पाया जाता है जो स्वाभाविक होता है।

सृष्टि के अन्य प्राणियों और मनुष्य-जाति में बड़ा अन्तर है। कृति ने सृष्टि में जितने प्राणियों को उत्पन्न किया है, सबकी पेक्षा मनुष्य समझदार, ज्ञानशील और उत्तरदायी है। इसलिए नुष्य-जाति में स्त्री-पुरुष का प्रेम, सृष्टि के अन्य प्राणियों की

भाँति नहीं है। इस प्रेम को चिरस्थायी और सुख-संतोष-पूर्ण बनाने के लिए उसने उसको विवाह के मार्ग में प्रचलित किया है और विवाह मानव-समाज का एक अत्यन्त उपादेय और उत्तरदायित्व-पूर्ण संस्कार माना गया है। अतएव विवाह का पहला उद्देश्य स्त्री-पुरुष का प्रेम है। विश्व के समस्त देशों में और मानव-समाज की प्रत्येक जाति में विवाह की प्रथा पायी जाती है। इस प्रथा का एक ही उद्देश्य है एक ही विधेय है और एक ही उसका आधार है।

विवाह-संस्कार बालक और बालिका की उस अवस्था में होता है जब वे अपने जीवन में काम-वासना का अनुभव करते हैं। बालक और बालिका की यह अवस्था समान आयु में नहीं होती। बालक की अपेक्षा बालिका अपनी छोटी अवस्था में ही कामोत्तेजना के भावों को अनुभव करती है यह उत्तेजना और भाव यौवन के सूचक होते हैं। जीवन में जब यौवन का प्रारम्भ होता है उस समय शरीर के अंगो-प्रत्यंगों का परिस्फुटन और विकास, अपने आप उसकी सूचना देता है। जब बालक और बालिका के जीवन में यह अवस्था उत्पन्न होजाती है तो उनके माँ-बाप को उनके विवाह की आवश्यकता अनुभव होती है।

बालक और बालिका की विवाह के योग्य अवस्था [illegible] प्रधान देशों में कुछ शीघ्र और शीत प्रधान देशों में कुछ विलम्ब में उत्पन्न होती है। हमारे देश में बालिका का विवाह उसकी सोलह वर्ष की अवस्था में और बालक का उसके पच्चीस वर्ष की आ[illegible]

ं निर्धारित किया गया है। किन्तु योरप के शीत प्रधान देशों में विवाह-काल, हमारे देश की अपेक्षा कुछ विलम्ब में उत्पन्न होता है। इसीलिए वहाँ पर युवती और युवक के विवाह, उनकी कुछ अधिक अवस्था हो जाने पर होते हैं।

विवाह-संस्कार विवाह के योग्य अवस्था होने पर ही होना आवश्यक होता है। पूर्ण अवस्था हो जाने पर विवाह न होने से जिसप्रकार हानि और बुराई उत्पन्न होती है उसीप्रकार समयके पूर्व विवाह हानिकारक होते हैं। इस बात को अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए उस छोटे बालक की अवस्था पर विचार करना चाहिए जो समय से पूर्व पढ़ने के लिए किसी पाठशाला अथवा स्कूल में विठा दिया जाता है। बालकों का जिसप्रकार शरीर कोमल होता है, उसी प्रकार उनका मस्तिष्क भी अत्यंत कोमल और सुकुमार होता है। कुछ दिनों तक तो बालक का मस्तिष्क इतना निर्वल और कोमल होता है कि उसकी इच्छा और शक्ति के विरुद्ध उससे कुछ भी काम नहीं लिया जा सकता। ऐसी अवस्था में जब बालक पढ़ने के लिए विठाए जाते हैं तो उनके जीवन में एकप्रकार की बड़ी हानिकारक भूल होती है।

साधारणतया माँ-बाप को इन बातों का ज्ञान नहीं होता। उनका बालक छोटी अवस्था में ही अधिक पढ़ लिख जाय, इसलिए वे उसको बहुत छोटी अवस्था में ही उसका पढ़ाना प्रारंभ करा देते हैं। फल यह होता है कि इसप्रकार के बालकों के सुकुमार और कोमल मस्तिष्क अनुचित दवाव से कुम्हला जाते हैं और दिन-

पर-दिन विकसित और परिस्फुटित होने के स्थान पर निर्ब होते जाते हैं। यही कारण है कि जो बालक बहुत छोटी अवस्था में पढ़ाये-लिखाए जाते हैं उनके मस्तिष्क सदा के लिए निर्बल और चमत्कार-हीन हो जाते हैं।

समाज में यह भूलें अधिक होने के कारण सरकारी स्कूलों में छः वर्ष की अवस्था से कम के बालक को भर्ती करने का निषेध हो गया है। ठीक यही अवस्था उन बालकों की होती है जिनके विवाह यौवनावस्था समय के पूर्व कर दिए जाते हैं। शरीर-विज्ञान-विशारदों ने यह निर्धारित किया है कि जिन बालकों और बालिकाओं के विवाह समय से पूर्व हो जाते हैं न केवल उनके शारीरिक और मानसिक विकास रुक जाते हैं। बल्कि आध्यात्मिक विकास भी रुक जाते हैं। उनका कहना है कि माँ-बाप के ये कार्य संतान के साथ अत्यंत अधार्मिक होते हैं। वास्तव में यह बात कहाँ तक ठीक है, इसको हम समाज में आँखें खोल कर देख सकते हैं। जिन शक्तियों के द्वारा बालकों का शारीरिक और मानसिक विकास होता है और जिस शक्ति के द्वारा न केवल उनके अंग-प्रत्यंग हृष्ट-पुष्ट होते हैं प्रत्युत वे स्वस्थ और नीरोग बनते हैं, वह शक्ति अपनी अपनी अपरिपक्व अवस्था में, वीर्य के रूप में शरीर से बाहर निकल जाती है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि बालकों और बालिकाओं के विवाह ठीक और उपयुक्त अवस्था में ही किए जायें। इसका विशेष ध्यान न रखने

से बड़ी भारी हानि इस बात की होती है कि असमय विवाहित बालक और बालिकाओं के हृदयों में विवाह और एक दूसरे के प्रति आदर-सम्मान की प्रतिष्ठा नहीं होती, इसलिए कि वे अपनी उस अवस्था में एक दूसरे को प्राप्त करते हैं जब वे एक दूसरे की आवश्यकता का अनुभव नहीं करते। इससे विवाह के उस उद्देश्य को—जो स्त्री-पुरुष में पारस्परिक प्रेम को चिरस्थायी बनाने के लिए होता है—क्षति पहुँचती है।

विवाह का दूसरा उद्देश्य घर-गृहस्थी से है। विवाह स्त्री और पुरुष को जीवन का उत्तर दायित्व प्रदान करता है। विवाह के हो जाने पर ही मनुष्य अपने जीवन की गंभीरता का अनुभव करता है। विवाह के पूर्व जीवन के जिस गुरुतर उत्तरदायित्व से वह अपने आप को दूर समझता है और भय, चिन्ता, क्लेश, यंत्रणा या जैसी जीवन की अवस्थाओं से कभी आतुर और भय-भीत नहीं होता, विवाह के पश्चात् वे सब बातें उसके निकट आ जाती हैं। वह क्षण-क्षण में अपने उत्तरदायित्व का अनुभव करता है। जीवन को अनेक चिन्ताओं, क्लेशों और यंत्रणाओं से भयभीत होता है। वह अपने कर्त्तव्य का स्मरण करता है और कर्मयोगी बनने का सद् प्रयत्न करता है। वह दूसरे की आपदा-विपदा में दयालु होता है और अपनी दुरवस्था में दूसरे की समवेदना की प्रतीक्षा करता है।

विवाह के होने पर ही एक मनुष्य-बालक मनुष्यत्व की ओर पदार्पण करता है और अपने आप को संसार के निकट

विश्वास पूर्ण बनाता है। विवाह से उच्छृङ्खलता का नाश होता है—चञ्चलता, गंभीरता के रूप में परिवर्तित हो जाती है। विवाहित, संसार को अपना और अपने आप को संसार का समझने लगता है। यही घर-गृहस्थी है—यही जीवन की उपयोगिता है और इसी में मानमर्यादा और प्रतिष्ठा है। जब किसी पुरुष की स्त्री की असमय मृत्यु हो जाती है, तो वह रोता है—घबराता है, उसका यह रोना न केवल स्त्री के लिए होता है वरन् उस घर-गृहस्थी के लिए जो उसकी मानमर्यादा पूर्ण प्रतिष्ठा का कारण होती है?

विवाह का तीसरा उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति है। यह उद्देश्य अत्यन्त व्यापक और सर्व प्रिय है। यह व्यापकता न केवल मनुष्य-जीवन में है वरन सृष्टि के समस्त जीवों में समान रूप से इसकी व्यापकता और सर्व-प्रियता का भाव है। जीवन में इस व्यापकता की इतनी अधिक घनिष्ठता क्यों है? यह अत्यंत रहस्य पूर्ण प्रश्न है। जिसको कभी कोई अनुभव नहीं करता, वह स्वाभाविक प्रेरणा से अपने उत्तरदायित्व को समझता है यह उत्तरदायित्व उसकी उदारता और सहानुभूति का प्रेरक नहीं होता, प्रत्युत उसकी आशा-अभिलाषा में सम्मिश्रित होकर उसकी प्रकृति का रूप धारण कर लेता है।

जब कोई कभी किसी से कुछ लेता है तो उसके लौटा देने के समय तक वह ऋणी रहता है। जब हमारी आवश्यकता पर कोई दया और सहानुभूति से प्रेरित होकर हमारी सहायता

करता है, तो उस सहायता के लिए हम ऋणी हो जाते हैं और इस ऋण का बोझा उस समय तक हमारे सिर पर रहता है, जब तक कि हम संसार में किसी के साथ उसकी आवश्यकता पर उपकार नहीं करते। जब एक बालक जन्म लेता है तो वह एकप्रकार से ऋणी हो जाता है और उस समय तक वह ऋणी रहता है जब तक कि वह स्वयं सन्तान उत्पन्न करके संसार के इस उपकार का बदला नहीं दे लेता। जन्म और उत्पत्ति का यह अत्यंत सूक्ष्म तत्व जीवन में काम कर रहा है।

गार्हस्थ्य जीवन में पदार्पण

विवाह हो जाने पर स्त्री-पुरुष का गार्हस्थ जीवन प्रारम्भ होता है। गार्हस्थ जीवन क्या है ? विवाह का उद्देश्य क्या होता है ? दाम्पत्य जीवन किसे कहते हैं ? आदि बातें उस समय जान लेना बहुत आवश्यक होती हैं।

स्कूलों में बालकों में पढ़ने-पढ़ाने का जो अर्थ समझते हैं कि युवा होने पर वह अपने लिये नौकरी पासके और उसके द्वारा वह अपना तथा अपने परिवार का भरण-पोषण कर सके वे बहुत बड़ी भूल करते हैं। इस भूल का फल यह होता है कि जो पढ़ने का यह अर्थ लगाते हैं, वे उससे केवल उतना ही लाभ उठा पाते हैं। शिक्षा का जीवन में क्या उपयोग होता है, यह साधारणतया बता सकना कठिन है। बिना शिक्षा के जीवन का वही मूल्य होता है जो मूल्य, बिना गन्ध के फूल का होता है। जीवन में न जाने कितने वर्ष होते हैं और उन वर्षों में न जाने कितने दिन होते हैं। इन दिनों में, एक एक दिन में शिक्षा के अनेक उपयोग होते हैं, ऐसी अवस्था में उनकी इस भूल के लिए क्या कहा जाय जो केवल नौकरी अथवा पेट के भरण-पोषण के लिये ही शिक्षा की आवश्यकता समझते हैं।

इसीप्रकार वासना-तृप्ति अथवा स्त्री सहवास ही जो विवाह का अर्थ समझते हैं, उनकी शोचनीय दुरवस्था पर, तरस आते हैं

सिवा और क्या कहा जा सकता है। इसप्रकार के विचार-वाले स्त्री-पुरुषों को समाज में कमी नहीं होती। जगह-जगह घर-घर और परिवार-परिवार में इस प्रकार के स्त्री पुरुष मिलते हैं जो विवाह को कुछ दिनों के बाद कोसना आरंभ कर देते हैं। वे रात-दिन, उठते-बैठते इसप्रकार की सफाइयाँ देते हैं कि हम तो विवाह के लिये तैयार ही नहीं थे। बापू जी ने जबरदस्ती हमारा विवाह कर दिया, माँ ने हठ कर के हमारा विवाह किया। इस प्रकार के स्त्री और पुरुष उन्हीं मनुष्यों में से हैं जो विवाह की मर्यादा नहीं समझते और उसके फल स्वरूप दाम्पत्य जीवन में, एक दूसरे से घृणा का अनुभव करते हैं।

जीवन के प्रत्येक अंग में, विवाह के उपरांत स्त्री-पुरुष एक दूसरे के साथी होते हैं। पुरुष के व्यवसाय में स्त्री को सहानुभूति होनी चाहिए, पुरुष के पसन्द करनेवाले स्वभावों और व्यवहारों में स्त्री का सम्पर्क होना चाहिए। पुरुष किसी सभा सोसाइटी में सम्मिलित होता है तो स्त्री उसके साथ जा सकती है, पुरुष किसी मेला अथवा उत्सव में भाग लेता है तो उसकी पत्नी उसका सहयोग करती है। स्त्री और पुरुष के जीवन का यह अर्थ तो बहुत प्राचीनकाल से चला आ रहा है, किन्तु बिना सोचे समझे लोग कह देते हैं कि ये आदर्श तो पश्चिम सभ्यता के हैं। ये बातें कितनी उपहास-जनक होती हैं। पश्चिम प्रदेशों में यदि कोई अच्छी बात हमें दिखाई दे तो क्या उसके विरुद्ध आचरण करना

ही हमारे जीवन का उद्देश्य होना चाहिए? अथवा यह भी कोई निश्चित बात है कि जो व्यवहार पश्चिम में वर्त्ते जायँगे, हम उनके विरुद्ध ही होकर रहेंगे? पश्चिम देशों की अप्सराओं को देखकर हमारे चेहरों पर हवाइयाँ उड़ती हैं, परन्तु वहाँ के समाज ने उनको किस प्रकार का जीवन लेकर, इस रूप में परिवर्तित होने दिया है, उसके नाम पर हमारे शरीर में मानो साँप लोट जाता है।

हमें अपने समाज को सुखी तथा सन्तुष्ट बनाने के लिए सभी प्रकार के साधनों का उपयोग करना पड़ेगा, चाहे वे प्राचीन कालीन हों अथवा अर्वाचीन कालीन। इसका यह अर्थ नहीं है कि इन पंक्तियों के साथ, पश्चिमीय सभ्यता को सौभाग्य-सिन्दूर बनाया जा रहा है, वरन इसका व्यावहारिक अर्थ यह है कि हमें अपने जीवन की त्रुटियों को दूर करके, समाज को समुन्नत बनाना होगा। हमारा वर्तमान सामाजिक जीवन, बहुत संकुचित होगया है, इसके लिए यदि प्राचीन काल के आदर्शों का अनुमान किया जाय, तो हमारा वर्तमान जीवन ही उलट-पलट जायगा। कहने का अभिप्राय यह है कि काम-काज, रोना-गाना, हँसना-खेलना, नाच-संगीत, खेल-तमाशा सिनेमा-थियेटर आदि सभी बातों में, दोनों को समान रूप में भाग लेना चाहिए।

जीवन की अन्यान्य बातों के साथ-साथ स्त्री-पुरुष का सहवास भी एक अंग है, इसके सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से यह समझ लेना चाहिए कि विषयोपभोग केवल संतानोत्पत्ति के लिए होना

है। प्रकृति ने काम की उत्पत्ति का एक मात्र यही अभिप्राय रखा है, यदि उसका प्रकृति रूप में उपयोग किया जाय तो इससे अधिक मात्रा में उसकी आवश्यकता हो ही नहीं सकती। प्राचीन काल में जब समाज के जीवन में वर्तमान उद्दंडता नहीं थी उस समय लोगों में विषयाशक्ति इतनी अधिकता में न थी, जितनी आज है। विषयोपभोग में जिस वीर्य का प्रयोग होता है, उस के जीवन में दो प्रधान उपयोग होते हैं, उसके प्रथम उपयोग से शरीर को स्वास्थ्य, शक्ति और सौन्दर्य मिलता है और उसका दूसरा उपयोग सन्तान-उत्पत्ति के लिए किया जाता है। जिनके जीवन में सदाचार और संयम होता है और विवाह हो जाने के उपरांत विषयोपभोग अत्यंत उचित मात्रा में होता है, उनका वीर्य, उनके शरीर के स्वास्थ्य और सौन्दर्य के काम आता है।

सर्व-साधारण में इसप्रकार की बहुत अधूरी जानकारी होती है, समाज के अधिकांश लोग यह समझने में भूल कर देते हैं कि यदि खाने-पीने के लिए उपयोगी पदार्थ मिलें तो विषय की अधिकता कुछ हानि नहीं पहुँचाती। उनका यह विश्वास उतना ही भ्रम पूर्ण होता है जितना पानी में आटा घोलकर, दूध बनाना। इसके लिए संक्षेप में, यहाँ पर इतना ही बता देना आवश्यक है कि संसार का कोई भी बलिष्ट से बलिष्ट पदार्थ, वीर्य की कमी को पूरा नहीं कर सकता। कुछ पदार्थ स्त्री-पुरुष की बढ़ती हुई दुर्बलता में भले ही कुछ साथ दे सकें किन्तु वे उनके प्रकृत स्वास्थ्य, और सौन्दर्य की रक्षा नहीं कर सकते। विषयाशक्ति की अधि-

कता स्त्री पुरुष के जीवन को नष्ट कर डालनेवाली होती है। इसीलिए उनको गार्हस्थ जीवन में प्रवेश करने के साथ ही, इन बातों को भली भाँति समझ लेना चाहिए और उसी के अनुसार अपना जीवन संचालित करना चाहिए।

एक-दो नहीं, दस-बीस नहीं, समाज में शत प्रति शत विवाहित स्त्री-पुरुषों के जीवन का यह अनुभव है कि विवाह के कुछ ही दिनों के बाद वे अपना स्वास्थ्य खो देते हैं और अन्त में अपने स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य के लिए रोते हैं, यदि विवाह के साथ ही साथ, जिन दिनों में कामान्ध होकर मनुष्य अपनेजीवन का सर्वस्व, बिना किसी सोच विचार के नष्ट करते हैं, उनको भविष्य में आने वाली इस व्यवस्था का ज्ञान हो जाय तो बहुत अंशों में उनकी रक्षा हो सकती है। अत्यन्त लज्जा एवम् घृणा के साथ किन्तु शान्त और विनय शब्दों में यहाँ पर इस बात का उल्लेख करने की आवश्यकता है कि विवाह के बाद कुछ दिनों तक जिस प्रकार वे कामान्ध होकर अपना जीवन बिताते हैं और उसकी व्यावहारिकता की जिसप्रकार विवाहित युवक डींग मारते हैं उसका स्वरूप वे कदाचित् उस समय भूल जाते हैं जब उसके फल स्वरूप वे अश्रुपात करते हैं। यह शत प्रतिशत समाज के युवकों की अवस्था है। समाज पर भीषण अवस्था क्यों होती है, इसका कारण है, और कारण है समाज में इस प्रकार के ज्ञान की कमी। इसका कारण है इन बातों से परिचित कराने वाले सत् साहित्य का सर्वथा अभाव।

जिन ग्रंथों में इस विषय की विवेचना की गई है, उनमें कहीं-कहीं पर, विषय की मात्रा पर भी विचार किया गया है। किन्तु हम पूर्णरूप से उन बातों के पक्षपाती नहीं हैं। हम तो सीधी बात यह जानते हैं कि यदि हमारा जीवन, विषाक्त और विदूषित बातों से दूर रह सके और हम उसकी प्रकृति व्यावहारिकता का अर्थ समझ लें तो फिर अन्य किसी बात के जानने की आवश्यकता नहीं रह जाती। विषयोपभोग की मात्रा की उस समय और उस स्त्री-पुरुष के लिए आवश्यकता होती है जब और जो स्त्री-पुरुष उसके प्रकृत ज्ञान को समझने में असमर्थ हो तो इस प्रकार की विवश अवस्थायें कर उसकी मात्राओं और संस्थाओं के साथ-साथ अपने जीवन के बन्धन के लिए परिमित बना सकता है।

विषयोपभोग के सम्बन्ध में, थोड़ा सा स्पष्ट कर देना यहाँ पर आवश्यक जान पड़ता है। ऊपर की पंक्तियों में प्राकृत ज्ञान की बात बार-बार कही गई है, उसका अर्थ यह है कि स्त्री और पुरुष में, कामोत्तेजना का होना स्वाभाविक होता है और जितना अंश उसका स्वाभाविक होता है उतना ही वह प्राकृतिक समझना चाहिए। यह कामोत्तेजना, न केवल स्त्री-पुरुषों में वरन जड़ स्वभाव पशु-जाति में भी समान रूप से पायी जाती है। मानव समाज में कामोत्तेजना को अस्वभाविक रूप से बढ़ाने वाले साधन बहुत अधिक मात्रा में बढ़ गये हैं, इसका फल यह हुआ है कि मानव समाज में विष-

योपभोग, आवश्यकता से अधिक बढ़ गया है। पशु-जातियों में अस्वाभाविक उत्तेजना के बढ़ाने वाले साधनों के न होने से उनकी प्रगति अस्वाभाविक, अनावश्यक नहीं हो सकी। रजोदर्शन के उपरांत स्त्री में कामोत्तेजना का होना स्वाभाविक माना गया है और उस अवस्था में, उसकी वृत्ति में सहयोग देना पुरुष का कर्त्तव्य होता है। प्रकृति के नियमों के अनुसार स्त्री कामोत्तेजना का अनुभव करती है और पुरुष के द्वारा प्रकृति उसकी पूर्ति करती है। यही उसका स्वाभाविक और प्रकृत व्यवहार है।

मानव जाति की अनर्गल और अश्लील सभ्यता ने मनुष्य जाति की इस प्राकृतिकता को नष्ट कर दिया है। मनुष्य-जाति के सिवा शेष प्राणीमात्र में इसका प्रकृति उपयोग पाया जाता है। जो लोग प्रकृति जीवन बिताना चाहें और अपने जीवन के वास्तविक सुखों का उपयोग करना चाहें, वे अपने जीवन को सदाचार और संयम के इस रूप का अनुयायी बना सकते हैं। किन्तु जो ऐसा कर सकने में असमर्थ हैं उनको चाहिए कि वे अपने लिए अधिक से अधिक सप्ताह का एक दिन अथवा एक मास में दो दिन निश्चित कर लें और इसके लिए सन्तानोत्पत्ति का अर्थ ही वे अपने जीवन में प्रयुक्त करें, जहाँ इसके इस उद्देश्य का विस्तरण हो जाता है, वहाँ पर इसका दुरुपयोग होना स्वाभाविक है।

संयम से आचरण शुद्ध होता है और शुद्ध आचरणों के द्वारा ही मनुष्य ब्रह्मचर्य का पालन करता है। सदाचार और ब्रह्म-

चर्य पालन के लिए संयम की बड़ी आवश्यकता होती है। यह संयम केवल स्त्री-पुरुष द्वारा ही नष्ट नहीं होता, वरन संयम नष्ट होने के आठ कारण बताये गये हैं। वे आठ कारण इस प्रकार हैं—

(१) मन को दूषित करने वाली और वासना को उत्तेजित करने वाली बातों का स्मरण करना, इसके द्वारा भी संयम भंग होता है, इस कारण को स्मरण कहते हैं। किसी स्त्री अथवा प्रेमिका की बातों का सोचना और मन को उभारने वाली उसकी बातों का स्मरण करना प्रवृत्तियों को दूषित करता है।

(२) किसी स्त्री या प्रेमिका के रूप-गुण और मन को लुभाने वाली बातों का कीर्त्तन करना। यह कारण कीर्त्तन कहलाता है। इसके द्वारा मन के शुद्ध भाव विचलित होते हैं।

(३) किसी युवती अथवा सुन्दरी स्त्री के साथ, अनेक प्रकार की बातें करते हुए, इठलाना, इसको केलि कहते हैं। आचरण को भ्रष्ट करने का यह एक मार्ग है।

(४) किसी सुन्दरी को देखना और उस पर मोहित होना। इसको दर्शन कहते हैं। यह मानसिक भावों को अस्थिर और चंचल बनाता है।

(५) किसी स्त्री के साथ एकान्त में मिलना और छिपकर बातें करना। इसको गुह्य भाषण कहते हैं। यह आचरणों की बहुत पतित अवस्था है।

(६) किसी सुन्दरी स्त्री को पाने अथवा उसके सम्बन्ध की किन्हीं बातों के लिए संकल्प करना। यह संकल्प करना कहलाता है।

(७) प्रेमिका के पाने और उसके मिलने के लिए बार बार सोचना और प्रयत्न करना। यह चेष्टा अवस्था कहलाती है।

(८) क्रिया अर्थात् स्त्री-प्रसंग।

उपरोक्त आठ कारणों से संयम नष्ट होता है। इनमें अंतिम कारण सहवास के द्वारा तो स्वाभाविक रीति से वीर्यपात होता है किन्तु शेष सातों कारणों के द्वारा चित्त चञ्चल और मानसिक प्रवृत्तियाँ दूषित होती रहती हैं। इनका फल बड़ा भयानक होता है। जिसके आचरणों में ये बातें पाई जाती हैं, उसका वीर्य निर्बल हो जाता है और उसे स्वप्न-दोष का रोग हो जाता है। अतएव इन सब बातों से पृथक रहकर ही पूर्ण रूप से संयम की रक्षा करनी चाहिए।

हमारे समाज में कुप्रथाओं ने जो अपना अड्डा बना रखा है उसने हमारे जीवन को बहुत अंशों में निरुपयोगी बना डाला है। विवाह के पश्चात् युवक और युवती अपने परिवार में परस्पर एक दूसरे से मिलने से वंचित रखे जाते हैं, समाज में इस पारिवारिक नियम का क्या अर्थ होता है, यह समझ में नहीं आता। इस प्रकार के नियमों की व्यवस्था किन धार्मिक ग्रन्थों और शास्त्रों के द्वारा हुई है, इसका भी कुछ पता नहीं चलता। केवल इतना मालूम होता है कि पारिवारिक लोकरीति है। इस लोकरीति का परिणाम क्या होता है, यह लोग नहीं जानते। इसको दूर करने के लिए जबतक वास्तविक ग्रन्थों का प्रणयन नहीं होगा तबतक ये बातें हमारे जीवन को सत्यानाश

करती रहेंगी। पारिवारिक इस रीति ने स्त्री-पुरुष को परस्पर मिलने, बातचीत करने और उनको साधारण व्यवहारों से वंचित करके, केवल सहवास मात्र के लिए ही अवसर दे रखा है, यही एक बड़ा भारी कारण इस बात का हुआ है कि सर्वसाधारण में विवाह का अर्थ और दाम्पत्य जीवन का अभिप्राय सहवास मात्र रह गया है। इस भ्रम ने इस सोने के जीवन को कितना गंदा बना दिया है, यह कहनेमें भी लज्जा का अनुभव होता है। जबतक इस प्रकार की कुप्रथाओं का नाश नहीं होगा तबतक जीवन के सच्चे सुखों से हमको वंचित रहना पड़ेगा।

युवती और युवक को बिना किसी भाव के आपस में मिलने, बातें करने और साधारण जीवन बिताने का अधिकार होना चाहिए, और ऐसा करने पर ही उनके जीवन में शुद्धता और संयम में स्फूर्ति उत्पन्न हो सकती है। इसके लिए परिवार के वयोवृद्ध तथा माता-पिता को विशेष ध्यान देना चाहिए। जिस परिवार में, भाई-बहन, पुत्र-बहू, चचा-भतीजे, छोटे-बड़े प्रेम के साथ, बिना किसी संकोच और विकार-दुर्बलता के जीवन बिताते हों, उस परिवार की कहाँ तक प्रशंसा की जा सकती है? उस परिवार के सुख-सौभाग्य के लिए देवताओं का आशीर्वाद होता है।

विवाहित युवकों और युवतियों को जब बिना किसी भेद-भाव के परिवार में जीवन बिताने का समान भाव से अवसर मिलता है तो फिर उनकी परस्पर एक दूसरे से, एकान्त में मिलने

की उत्सुकता नहीं रहा करती। और इस के द्वारा उनकी उन अव-
स्थाओं का हनन होता है जिनमें वे परस्पर मिलना और मिल
का उद्देश्य सहवास मात्र समझते हैं। उनको एक बात का औ
भी ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। उनके शयन-गृह बहु
सात्विक भावों से सजे हुए होना चाहिए, नग्न चित्र और अनु
योगी पुस्तकें कभी भी लाभकर नहीं होतीं। उनके परस्
सम्भाषण, विषयाशक्ति उत्पन्न करने वाले न होने चाहिए
देखा यह जाता है कि उनके इसप्रकार के सम्भाषण उनक
चित्त-वृत्तियों को चञ्चल करते हैं। और जहाँ स्त्री-पुरुष इस प्रका
के सम्भाषणों को छोड़कर अन्य किन्हीं उपयोगी बातों प
परस्पर सम्भाषण कर ही नहीं सकते, वहाँ तो और भी दुर्भाग
होता है। दुर्भाग्य से, जहाँ पर ऐसी परस्थिति हो, वहाँ पर ईश्व
के नाम पर इस अवस्था का पलट देना तो बहुत ही आवश्य
होता है।

अपने जीवन को संयमित बनाने के लिए स्त्री-पुरुष के बिस्त
और चारपाइयाँ अलग-अलग होनी चाहिये। एक साथ सो
से उनमें बराबर कामोत्तेजना जागृत होगी और उसके द्वार
उनका संयम नष्ट-भ्रष्ट होगा। अनावश्यक कामोत्तेजना उत्प
न हो, इसके लिए दोनों का अलग-अलग सोना तो अनिवार्य
रूप से आवश्यक होता है। और जिनकी प्रवृत्तियाँ इतन
कलुषित हो गई हैं कि वे अलग-अलग बिस्तरे और चारपा
होने पर भी अपने मनोभावों को संयम नहीं रख सकते, उनक

चाहिए कि वे एक कमरे में कभी न सोवें। युवक पति अपनी स्त्री के कमरे से अलग, अपने परिवार के गुरुजनों के समीप सोने का प्रबन्ध करें और उसकी पत्नी, पति के सोने के कमरे से दूर, घर की बड़ी बूढ़ी स्त्रियों के निकट सोना आरम्भ कर दें। यह मार्ग ही उनकी उत्तेजित प्रवृत्तियों को शान्त करने का एक मात्र साधन है। इसके सम्बन्ध में एक शरीर विज्ञान के विद्वान का कहना है कि स्त्री पुरुष के परस्पर शरीरों का स्पर्श होने से विद्युत उत्पन्न होती है, यह विद्युत उनमें कामोत्तेजना उत्पन्न करती है। जो युवक पति और पत्नी सदा एक साथ सोते हैं उनमें इस विद्युत का पैदा होना नष्ट हो जाता है। उसके नष्ट होने से स्त्री और पुरुष का आकर्षण मारा जाता है, इसका फल यह होता है कि उसके बाद पुरुष के स्पर्श से न तो स्त्री के शरीर में विद्युत का आकर्षण उत्पन्न होता है और न स्त्री के शरीर का स्पर्श होने से पुरुष के शरीर में। इस आकर्षण के मारे जाने से दोनों का दाम्पत्य जीवन ही नष्ट हो जाता है, इसलिए नवविवाहित स्त्री-पुरुषों को इस बात का बहुत ध्यान रखना चाहिये। किसी स्त्री का, किसी अन्य पुरुष के साथ और किसी पुरुष का किसी अन्य स्त्री के साथ जो स्पर्श होना अधार्मिक माना गया है, उसका यह वैज्ञानिक अभिप्राय है। यह वैज्ञानिक अनुभव, धर्म के रूप में स्त्रियों और पुरुषों के जीवन में शासन करता है।

गार्हस्थ्य-जीवन में आकर प्रत्येक स्त्री और पुरुष को अपने

जीवन में संयम का बहुत ध्यान रखना चाहिए। जितना ही वे अपने जीवन में संयम से काम ले सकेंगे, उतना ही वे अपने जीवन में, नवीन प्रेम, नवीन उत्साह और नवीन आकर्षण का अनुभव करेंगे। विवाह के उपरान्त युवक पति और पत्नी में जब विषयासक्ति अधिक बढ़ जाती है, तो उसका भीषण परिणाम यह होता है कि थोड़े ही दिनों में उनका परस्पर प्रेम और दाम्पत्य जीवन नष्ट हो जाता है, इस प्रकार का प्रभाव पति के जीवन में सहज ही उत्पन्न हो जाता है, और इसके फलस्वरूप, निन्न्यानवे प्रतिशत पतित पति समाज में देखे जाते हैं। इसलिए जिनको अपना दाम्पत्य जीवन सर्वदा, हरा-भरा रखना हो, और जो अपने जीवन में अन्तकाल तक के लिए सुख-संतोष को अनुभव करने की अभिलाषा रखते हैं, उनके लिए सब से अधिक यह आवश्यक है कि वे अपने दाम्पत्य जीवन में संयम की खूब रक्षा करें।

गृहस्थ के कर्त्तव्य

स्त्री, प्रकृति की अत्यंत सुकुमार और प्यारी-दुलारी कृति है, उसमें प्रकृति की रचना-शैली का अपूर्व सौन्दर्य है, इसीलिए सभी का उसके प्रति आकर्षण होता है।

पति को पत्नी की इन बातों के लिए, पूर्ण रूप से जानकार होना चाहिए। किन्तु जहाँ जिस समाज और परिवार में इस जानकारी का अभाव होता है, वहाँ स्त्री के इन सद्गुणों का नाश हो जाता है और उसके द्वारा उस परिवार को आनन्द तथा संतोष का जो माधुर्य मिलना चाहिए था, नहीं मिलता। मूर्ख परिवारों में स्त्रियों के साथ बड़ा कटु व्यवहार होता है, छोटी-छोटी बातों से लेकर असाधारण अपराधों तक वे समान रूप से मार खाती हैं यह व्यवहार बहुत अनुचित है, प्रत्येक गृहस्थ को बड़ी सावधानी के साथ इस पर विचार कर लेना चाहिए। जिन अवस्थाओं में स्त्रियों पर उद्दंड व्यवहार किया जाता है, वे अवस्थाएँ उपेक्षणीय नहीं हैं। वे अपराध करती हैं और कहीं-कहीं तो उनके अपराध बहुत ही असाधारण और अप्राकृतिक हो जाते हैं, किन्तु बहुत कम। साधारण भूलें होना तो स्वाभाविक है और विशेषकर उन अवस्थाओं में जब तक विवाहिता युवती कोई, अपने पति के घर आती है। जिस घर को यह विवाह के पीछे छोड़ती है, अपने जीवनकाल में, वह उसी घर के अनुकूल

जानकारी प्राप्त करती है, किन्तु विवाह हो जाने पर, एकाएक जिस घर में उसे आना पड़ता है। उसके रँग-ढँग, रीति-रिवाज, चाल-व्यवहार से वह बिलकुल ही अनभिज्ञ होती है। पति का घर और परिवार उसको अपने यहाँ के जीवन में उसे चतुर, अनुभवी देखना चाहता है। सम्भव है, किसी आफिस का एक चतुर कार्यकर्ता, जब किसी दूसरे आफिस में जाता है तो बहुत समय तक अयोग्य रहता है, किसी महकमे का कोई अधिकारी, अफ़सर जब तबदील होकर दूसरी जगह जाता है, तो वहाँ के छोटे-छोटे आदमी, नौकर उसको बनाया करते हैं। ऐसा होना तो स्वाभाविक ही है किन्तु एक अबोध युवती बालिका, जब पति के घर आती है, तो जिस कठोरता के साथ, उसकी परीक्षा ली जाती है, वह सर्वथा अनुचित है। ऐसी अवस्था में स्नेह और सहानुभूति के साथ, जितना हो उसके साथ व्यवहार किया जाय उतना ही उसका फल अच्छा होता है।

जिन परिस्थितियों में स्त्री-पुरुष का जीवन ही, एक परिवार का जीवन बन जाता है, वहाँ की अवस्था अधिक दुर्दर्शनीय हो जाती है। जब स्त्री का समस्त जीवन, पुरुष के ही शासन अथवा प्यार में आ जाता है तो वह बहुत अंशों में अहितकर हो जाता है। भूलें तो सभी से होती हैं, स्त्री से भी मनुष्योचित भूलें होना ही चाहिए, किन्तु जब स्त्री की भूलों पर पुरुष का शासन आरम्भ हो जाता है, तो उनका परस्पर, प्रेमाकर्षण फीका पड़ जाता है और जब यह अधिक आगे बढ़ जाता है, तब तो मधुरता के

स्थान पर कडुवाहट उत्पन्न हो जाती हैं और दोनों ही अपने-अपने सुखों को एक दूसरे से भिन्न कर लेते हैं। यह अवस्था पति और पत्नी के बीच में उत्पन्न हो, इसके लिए सब से सरल और आवश्यक उपाय यह है कि पत्नी का समस्त जीवन, पति के ही हाथों पर निर्भर होकर न रहे। घर की बड़ी बूढ़ी स्त्रियों के हाथों में युवा पत्नी का जीवन होना चाहिए, क्योंकि वृद्धा स्त्रियाँ ही नवयुवतियों और बहुओं के जीवन के संरक्षण की योग्यता रखती हैं और उन संरक्षिका घर की सयानी स्त्रियों का यह कर्त्तव्य होता है कि अपने घर की सयानी लड़कियों, नवयुवतियों और बहुओं का कोई भी अपराध अपने घर के किसी पुरुष से न कहें। वे स्वयं, उनको डाटें, समझावें और आवश्यकतानुसार किन्तु सरल भाव से उन पर शासन करें, स्त्रियों पर स्त्रियों का ही शासन उचित होता है, यदि शासिका स्त्रियाँ, समझदार, दयावान स्त्रियोचित गुणों से परिपूर्ण हों। जिस परिवार में वृद्धा, सयानी स्त्रियाँ नहीं होतीं, उस परिवार के सुख, संतोष और सावधानी में प्रायः भय रहा करता है। जो अनुभव हीन युवक पति, अपने माता पिता के परिवार से पृथक हो जाने में ही अपना बड़ा भारी सुख समझते हैं, उनमें पच्चानवे प्रति-शत नव-दम्पतियों का जीवन, इसीप्रकार की भयंकर परिस्थितियों में पड़ जाता है। नवयुवक दम्पति, जिन बातों का कभी स्वप्न में भी अनुमान नहीं लगाते वे बातें आ-आकर जीवन को निस्सार और सुख-सन्तोष हीन बना डालती हैं।

समाज में कभी-कभी इस प्रकार की भी परिस्थितियाँ पायी जाती हैं, जिनमें माँ-बाप का बहुत अनुचित शासन, घर की बहू पर पड़ता है किन्तु युवक पति माता-पिता का भक्त होने के कारण अथवा लोक-लज्जा के भय से कभी कुछ कह नहीं सकता, इस प्रकार के जीवन भी समाज में कभी-कभी इतने उग्र और भयानक देखे जाते हैं कि पास-पड़ोस के रहनेवालों से ये अत्याचार नहीं देखे जाते। इस प्रकार की परिस्थितियों में युवक पति का, उस अत्याचार का विरोध न करना उसकी नैतिक निर्बलता है और वह इस अपराध के लिए ईश्वर के घर के लिए उत्तरदायी होता है। इसलिए कि पति, अपनी स्त्री के जीवन के सुख-दुख और संरक्षण के लिये, प्रकृति की ओर से उत्तरदायी है।

इसके पहले के परिच्छेदों में बताया जा चुका है कि विवाह का उद्देश्य, केवल कामना-तृप्ति ही नहीं है, अतएव विवाह के बाद, सन्तानोत्पत्ति के सम्बन्ध में उत्सुकता और उतावले केवल अनभिज्ञता और मूर्खता की परिचायक होती है। हमारे देश में शिक्षा और आदर्शों का नाश हो जाने से जीवन की जो दुरवस्था हो गई हैं, उसके लिए सिवा रोने के और उपाय ही क्या रह गया है! यदि अपने प्राचीनकाल के आदर्शों का उल्लेख किया जाय तो लोगों को उनबातों की कुछ ज्ञानकारी नहीं है और यदि पाश्चात्य देशों की सभ्यता और वहाँ के आदर्शों का नाम लिया जाय, तो कदाचित उनके नाम पर लोगों को, सन्निपात, आजायगा, विवाह के उपरांत घर के सयाने

र स्त्री-पुरुष, परिवार के लोग, टोला-मोहल्ला के परिचित व्यक्ति,
। सन्तान पैदा होने का ही समाचार सुनने का रास्ता देखते हैं।
लोगों की समझ में विवाह का सबसे पहला उद्देश्य और सबसे
प्रधान उद्देश और कदाचित् एकमात्र उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति ही है।

समाज का जीवन कितनी पतित अवस्था में है। जिन
अवस्थाओं में, अन्य समुन्नत देशों की युवतियाँ विवाह के
योग्य समझी जाती हैं, उन अवस्थाओं में हमारे यहाँ युवती
पत्नियाँ वृद्धा और यौवनहीना समझी जाती हैं। सम्भव है लोग,
विना अधिक सोचे-समझे इसके उत्तर में कह बैठें कि यह तो
यहाँ और वहाँ के जल-वायु का प्रभाव है। परन्तु ऐसी बात
नहीं है और यदि इस बात को विवाद ग्रस्त समझ कर छोड़ दिया
जाय तो हमारे ही देश में पाश्चात्य स्त्री-समाज के जीवन का
अनुसरण करने से, ऐसी कुछ स्त्रियाँ मिलेंगी, जिनको देखकर,
आश्चर्य चकित हो जाना पड़ेगा। हम देखते हैं कि अभी दो-तीन
वर्ष जिन युवा बालिकाओं के विवाह हुए हैं, आज उनके शरीर
वार्द्धक्य के सभी लक्षण पाये जाते हैं। उनका जीवन, विवाह के
पश्चात्, एक यन्त्र की भाँति सन्तानोत्पत्ति के काम में लाया जाता
है। खाने-पीने के उपयोगी और बल-वर्द्धक पदार्थों का तो कहीं
पता ही नहीं है। हमारे समाज की यह अवस्था, स्त्री-समाज
के लिए विष के समान हो गई है। जो युवक पति और
गृहस्थ, इन दुरवस्थाओं से अपने जीवन की रक्षा करना चाहें,
वे इन बातों को समझ कर अपने जीवन की व्यवस्था करें, विवाह

के पश्चात् जब वे संयम से काम लेंगे और स्त्री को उपयोगिता, केवल सहवास के लिए ही न समझेंगे तो बहुत अंशों में उनकी इन बातों से रक्षा होगी और उनके प्रकृत सहयोग और सहवास से जब एक सन्तान हो जाय तो जब तक वह चार-पाँच वर्ष की न हो जाय, तब तक दूसरी सन्तान न होना चाहिए। पहली सन्तान के होने पर स्त्री के खाने-पीने और उसके स्वस्थ हो जाने के लिए, तुरंत-से-तुरंत इतना अच्छा प्रबंध करना चाहिए कि बहुत थोड़े समय में, स्त्री का स्वास्थ्य, शरीर फिर ज्यों का त्यों दिखाई दे। और दूसरे संतान के उत्पत्ति के बहुत पूर्व उसके शरीर और स्वास्थ्य में किसी प्रकार की त्रुटि न रह जाय। इस प्रकार की सभी बातों पर, इस पुस्तक में गृहस्थों को सावधानमात्र किया जाता है किन्तु उसकी व्यवस्था के लिए उन्हीं पर छोड़ दिया जाता है, जब वे इस प्रकार की व्यवस्था करना चाहेंगे तो बड़ी आसानी से, किसी सयाने चतुर आदमी अथवा वैद्य की सम्मति और सहायता से, इन बातों की वे व्यवस्था कर सकेंगे। प्रत्येक गृहस्थ को, अपने गार्हस्थ्य जीवन में क्या-क्या जानना चाहिए और किन-किन परिस्थितियों में क्या-क्या प्रबन्ध करना चाहिए, यह सब बताना इस पुस्तक का काम है, किन्तु करना न करना उनका काम है। इन दुरवस्थाओं से परिचित और जानकार होने पर जब उनको कुछ प्रबन्ध करना होगा तो किसी भी जानकार आदमी की सहायता से सब कुछ कर सकेंगे।

मास में एकबार स्त्री ऋतुमती अथवा रजस्वला होती है,

और यह अवस्था स्त्री को, लगातार तीन या चार दिन तक रहती है किन्तु कुछ परिस्थितियों में, नवयुवतियों को इसका सिलसिला एक-एक सप्ताह तक रहा करता है। रजस्वला के दिनों में स्त्री को एकान्त में, चुपचाप लेटकर अपना समय काटना चाहिए, उसको, अपनी उस अवस्था में न तो घर का कोई काम करना चाहिए और न किसी छोटे बड़े को स्पर्श ही करना चाहिए। इन दिनों में स्त्री को शास्त्रकारों ने अशुद्ध माना है और जब तक वह अपनी इस अवस्था से बिल्कुल बाहर न हो जाय, तब तक उसको घर की किसी वस्तु को छूने के लिए भी वर्जित किया है, इस अवस्था में पति को, उसके समीप कभी न जाना चाहिए और न कभी स्त्री-सहवास की इच्छा करनी चाहिए। जो लोग, शास्त्रों की इन सीधीसादी आज्ञाओं को नहीं मानते, वे पीछे बड़ा धोखा खाते हैं, और भिन्न-भिन्न प्रकार के रोगों में फँस जाते हैं। रजस्वला अवस्था समाप्त होने पर सोलह दिनों तक स्त्री में गर्भ धारण की शक्ति रहती है, इन दिनों में किया गया सहवास, गर्भाधान की अवस्था को प्राप्त होता है और इन सोलह दिनों के उपरान्त सहवास करने से गर्भाधान नहीं होता, इस प्रकार शास्त्रों में उल्लेख पाया जाता है।

घर के जीवन में स्त्री का अधिकार होता है और बाहरी जीवन में पति का, किन्तु इसके साथ, दोनों ही, एक दूसरे के कामों में सहयोग और सम्पर्क रख सकते हैं और ऐसा करने पर ही, वे एक दूसरे के पूर्ण रूप से सहयोगी हो सकते हैं। समय-

असमय, प्रत्येक को, एक दूसरे से सत्कार और सहायता ले
चाहिए और दोनों को ही, एक दूसरे की सम्मति पर काम कर
चाहिए। किसी भी कार्य में जब दो भिन्न परस्पर सोच-विचार ले
हैं तो उसमें साधारणतया भूल होने की सम्भावना नहीं रहती
इसी प्रकार जब पति अपने किसी कार्य में पत्नी की, और प
अपने किसी कार्य में पति की सम्मति ले लेती है, तो उस का
के सम्पादन में, दोनों को ही बड़ी सहायता और सावधानी मिल
है। इसके पश्चात् भी जब उसमें कोई त्रुटि या भूल हो जाती
तो दोनों ही मिलकर, उसे सम्हाल लेते हैं।

परन्तु इसके लिए पति और पत्नी को कुछ बातों का सम
लेना बहुत आवश्यक होता है।

किसी भी कार्य में, सम्मति देनेवाले को अच्छी तर
उस पर सोच-विचार लेना चाहिए, उसके आगे पीछे, उसके
हानि-लाभ, उसका यश-अपयश आदि सभी बातों पर गम्भीरता
के साथ विचार करके अपनी सम्मति देनी चाहिए। प्रायः स्त्रियाँ
डर तथा अपना कर्त्तव्य समझकर पति की हाँ में हाँ मिला देना
ही अपना कर्त्तव्य समझती हैं, पत्नी की यह अवस्था बहुत
भयानक होती है और पति को इससे कभी-कभी बहुत बुरा धोखा
खाना पड़ता है. पति को चाहिए कि अपनी स्त्री में वह इतना
साहस पैदा करे और उसके सच्चे कर्त्तव्य से उसको परिचित
कराये जिससे वह अपने स्वामी को समय-असमय, उचित सम्मति
दे सके और यहाँ तक कि यदि उसका पति कोई भूल करता हो

ो वह निर्भयता-पूर्वक उसको रोक दे। वह पति को उसके लिए मानने को आग्रह करे और उस समय तक आग्रह करे, जब तक कि उसका पति उस बात को स्वीकार न करले। जो स्त्रियाँ यह समझती हैं कि हमारे ऐसा करने से पति देवता अप्रसन्न होंगे, वे भूल करती हैं, उनको अपने हृदय से इसप्रकार के डर को निकाल देना चाहिए, जो स्त्रियाँ इसप्रकार के डर को अपने हृदय से निकाल नहीं देतीं, वे बिना किसी सन्देह के,अपने पति से जीवन में विश्वासघात करती हैं,क्योंकि पति के भूल करने पर उनको सन्मार्ग पर लाना, पत्नी का कर्त्तव्य है। यदि दुर्भाग्य से पति इस मनोवृत्ति का हुआ कि वह अपनी स्त्री से केवल हाँ में हाँ चाहता है, तो उस पति को अपनी मानसिक वृत्ति को तुरन्त दूर कर देना चाहिए। ऐसा कर सकने पर ही दोनों का कल्याण हो सकता है और दोनों ही गार्हस्थ्य जीवन में सुखी हो सकते हैं।

दाम्पत्य जीवन को एक और अवस्था बड़ी भीषण होती है, संतान न होने पर पति-पत्नी का जीवन अत्यन्त शुष्क और आशा-हीन हो जाता है इसमें कोई सन्देह नहीं कि दाम्पत्य जीवन में जब सन्तान नहीं होती, तो फिर उससे अधिक दुर्भाग्य और क्या हो सकता है। संतान का होना, यह दूसरी अवस्था है, यद्यपि इन दोनों अवस्थाओं का परिणाम एक सा होता है किन्तु दूसरी अवस्था का प्रभाव, दाम्पत्य जीवन में बहुत बुरा पड़ता है। इसके कारण क्या हैं, इस बात का सर्वसाधारण को तो ज्ञान

नहीं होता, अतएव वे इसका सारा अपराध और उत्तरदायित्व स्त्री के ऊपर रख देते हैं। यदि दुर्भाग्य से किसी स्त्री की यह अवस्था हुई, तो समझ लेना चाहिए कि उसके परिवार में उसके दुर्भाग्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। पति उसको अभागिनी समझता है, परिवार उसे वन्ध्या समझता है, ऐसी अवस्था उत्पन्न होने पर, एकाएक पत्नी को वन्ध्या समझ लेना अथवा स्त्री के ही किन्हीं अपराधों का कारण निश्चय कर लेना बहुत अनुचित होता है। स्त्री वन्ध्या हो सकती है और ऐसी स्त्रियाँ समाज में पाई भी जाती हैं जिनके गर्भ ही नहीं रहता। किन्तु संतान न होने का एक मात्र स्त्री ही कारण नहीं होती। समाज में पुरुषों का जीवन जितना दुर्दमनीय और उद्दंड हो गया है, उसके फल स्वरूप पुरुष में सहज ही ऐसी खराबियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिन से स्त्री के गर्भ नहीं रह सकता। पुरुष के वीर्य की निर्बलता और अयोग्यता के ही कारण, अधिकांश अवस्थाओं में संतान होना तुरन्त बन्द हो जाता है। अथवा कुछ ही दिनों में होकर मर जाती है किन्तु यह अपराध स्त्री के भाग्य का ही समझा जाता है। स्त्री के गर्भ न रहने अथवा रहने के उपरान्त गिर जाने का कारण बहुत अंशों में पुरुष के वीर्य की अनुपयोगिता होती है। इसके अतिरिक्त जिस प्रकार स्त्रियाँ वन्ध्या होती हैं, ठीक उसी भाँति पुरुष भी होते हैं और वे स्त्री-सहवास के सर्वथा अयोग्य पाये जाते हैं। संतान का न होना अथवा गर्भ ही न रहने का, साधारणतया

कारण पति होता है, किन्तु इसके लिए किसी चतुर वैद्य अथवा डाक्टर के द्वारा मालूम किया जा सकता है और पुरुष के नपुंसक तथा स्त्री के वन्ध्या होने पर तो सन्तान का होना दुस्साध्य होता है किन्तु जब पुरुष की कुछ विशेष अवस्थाओं के कारण यह परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है तो उसकी चिकित्सा हो सकती है और यदि पुरुष सदाचार तथा संयम से काम लेकर अपनी उचित चिकित्सा करे तो वह अवस्था बदली जा सकती है।

समाज की इन परिस्थितियों पर बड़ा खेद होता है, किसी भी प्रतिकूल परिस्थिति के उत्पन्न हो जाने पर उसकी अवस्था पर विचार नहीं होता, किसी जानकार चतुर वैद्य तथा डाक्टर की सम्मति नहीं ली जाती, स्त्री की इस अवस्था के लिए, अस्पताल की लेडी डाक्टरों को दिखाया नहीं जाता और न ऐसा करके उनमें किसी प्रकार की व्यवस्था ही कराई जाती है, किया केवल यह जाता हैं कि स्त्री के माथे पर सारी बातें मढ़ दी जाती हैं और सदा के लिए रोने-रुलाने का एक कारण पैदा कर दिया जाता है। गार्हस्थ्य-जीवन में इन बातों का जानना और यथेष्ट रूप में समझ लेना बहुत आवश्यक होता है। यदि इन बातों को पूर्णरूप से जानकारी हो तो उनके जीवन किसी प्रकार दुरवस्था को नहीं प्राप्त हो सकते हैं। इसका प्रधान कारण यह है कि न तो स्वयं हमको इन बातों की जानकारी होती है और न हम लज्जा के कारण किसी से इन बातों की वस्तु स्थिति पर सम्मति ही लेते हैं। हाँ, होता यह है कि संतान न होने पर गृहस्थ पति-पत्नी तथा

उनके घरों की बूढ़ी स्त्रियाँ साधु, संन्यासियों और महन्तों
शरण लेती हैं। समाज जब तक अबोध रहा, तब तक इन
का कोई उलटा अर्थ न लिया गया किन्तु इन दुरवस्थाओं
इन शरणापन्न अवस्थाओं के तो अब इतने भंडाफोड़ हो चुके
कि कोई भी समझदार व्यक्ति इन बातों पर विश्वास नहीं कर
और जो उन बातों पर विश्वास करते हैं, उनके रहस्य अब
समाज में खूब खुल चुके हैं। उनके सम्बन्ध में अधिक
लिखकर हम पुस्तक के पत्रों को अश्लील नहीं बनाना चाह
केवल इतना कहना चाहते हैं कि इस प्रकार की परिस्थिति में
हुए व्यक्तियों को आँखें खोलकर काम लेना चाहिए और
जीवन में धोखा न खाकर, उसके लिए जो वास्तव में मार्ग
उनके द्वारा, विना किसी लज्जा-भाव के उसकी चिकित्सा करा
चाहिए।

हम क्या हैं ?

समाज की ओर जब हम आँखें खोलकर देखते हैं तो में बड़ा अंतर दिखायी देता है। एक ही माँ-बाप से उत्पन्न बालक, आगे चलकर एक से नहीं रहते। एक सदाचारी होता दूसरा आचरण हीन। एक स्वस्थ और शक्तिशाली होता दूसरा स्वास्थ्यहीन और निर्बल। एक परम सुशील और र्मिक बनता है, दूसरा पतित और अत्यंत अशिष्ट। एक सुखी ोर सन्तुष्ट होता है, दूसरा दीन-हीन और संतोषहीन। यह तर किसी एक घर में नहीं है—किसी एक परिवार में नहीं है, इ अंतर अत्यन्त विस्तृत होकर विश्व के पूरे मानव समाज में ला हुआ है अब प्रश्न यह है कि इस अंतर का कारण या है ?

साधारण समाज के लोग इस अंतर को भाग्य पर छोड़ देते । रोगी और निर्बल समझते हैं, हमें ईश्वर ने ही इस प्रकार ना दिया है। पति और आचरण भ्रष्ट व्यक्ति जब अपने ापाचारों का फल भोगते हैं तो अपने भाग्य को ही दोषी हराकर, नेत्रों के आँसू पोंछते हैं। और जब दीन-दरिद्र अपनी वस्था पर अश्रुपात करते हैं तो वे अपने भाग्य को ही कोस-ोस कर आहें भरते हैं। क्या यह बात ठीक है ? क्या भाग्य ोई इस प्रकार का पदार्थ है जिसके आकार-प्रकार, उसकी

अच्छाई बुराई का प्रभाव हमारे जीवन में पड़ता है? यदि यह बात ठीक नहीं है तो फिर वास्तव में बात क्या है।

यह हमारे जीवन की अत्यंत निर्बलता और अनभिज्ञ है कि जिस प्रकार के जीवन में आ पड़ते हैं, हम अपने आप उसी में रहने के योग्य समझ लेते हैं। सौभाग्य और दुर्भा यद्यपि कर्मों के द्वारा बनता है, किन्तु हमारे जीवन में कुछ और ही अर्थ हुआ करता है। साधारण समाज के लो समझते हैं कि हमने अपने पूर्व जन्मों में जो कर्म किए उन्हीं के अनुसार हमें वर्तमान जीवन की सुविधाएँ और असु विधाएँ प्राप्त हुई हैं। यह बहुत बड़ा भ्रम है जिसके अंधकार पड़कर हम कभी कुछ नहीं कर पाते। समाज को यह समझ की बहुत बड़ी आवश्यकता है कि हमारे कर्मों के अनुकूल हमारा वर्तमान जीवन बनता और बिगड़ता चला जाता है।

हम यदि अपने जीवन के सूक्ष्म रूप को देखने का प्रयत्न क तो हम देखेंगे कि हमारे जीवन के सुख और दुख, सुवि और असुविधाएँ हमारे वर्तमान जीवन की कर्मण्यता अकर्मण्यता का फल स्वरूप हैं। हम अपने जीवन को स्व बना सकते हैं और स्वयं ही उसको पतित से पतित अवस्था तक पहुँचा सकते हैं। जब हम अपने सुख-संतोष के लिए प्रयत्न करते हैं तो हम अपने आपको सुखी और संतुष्ट बना पाते और जब हम अपने जीवन में किसी प्रकार के प्रयत्न नहीं करते तो उन समस्त अवस्थाओं से वंचित रहते हैं, जिनके लि

। समझते हैं कि ईश्वर ने ही हमको उन सुखों से वंचित कर ा है।

एक अँगरेज़ लेखक के शब्दों में we are what we think स प्रकार हम सोचते हैं उसी प्रकार हम बन जाते हैं। ुष्य अपने विचारों के अनुसार प्रारंभ से लेकर अंत तक ता रहता है। एक व्यायाम शाल बालक सदा अपने हृदय व्यायाम और शक्ति-सम्पन्न करने की बातें सोचता है, फल रूप वह शक्तिशाली होता है, और जो बालक दुराचरणों में ंकर, गंदी और अश्लील बातें सोचा करता है वह उसी के ानुसार बनता जाता है। समाज की विभिन्नता और उसके तर की विवेचना करते हुए निम्नलिखित अँगरेज़ी की पंक्ति ी अभिप्राय को प्रमाणित करती है—

As a man thinketh in his heart so is he.

"मनुष्य वही होता है जिस प्रकार वह अपने अन्तःकरण में ्चार रखता है।" हम क्या हैं? इसका उत्तर यही है जिस कार हमारे विचार हैं। सम्पूर्ण मानव समाज इस उक्ति को ार्थक करता है। नैपोलियन बोनापार्ट अपने यौवन काल में क दिन नदी में डूब कर आत्म-हत्या करने गया था इसलिए क अपनी दरिद्रता के कारण उसको कई दिन लंघन करने पड़े । और वह अपने तथा अपनी माँ के भोजनों का प्रबन्ध नहीं र सका था। किन्तु उसके जीवन में पुरुषार्थ और स्वाभिमान ा अंश था, जिसके द्वारा वह अपने उसी जीवन में फ्रांस

का सम्राट हुआ और अंत में विश्व-विजयी नैपोलियन के नाम से पुकारा गया। शिवाजी के पिता, उसके बाल्यकाल में, एक यवन बादशाह के यहाँ नौकरी करते थे। शिवाजी को वह दासता स्वीकार न थी। वह भारत का स्वतंत्र शासन चाहता था फल यह हुआ कि उसने यवन बादशाहों के विरुद्ध युद्ध प्रारंभ किया और अंत तक विजयी हुआ। जो बाल्मीकि, मार्ग में निकलने वालों के कपड़े आदि सामान को लूट कर अपने परिवार का पालन पोषण करते थे, कौन जानता था कि वे बाल्मीकि संसार में अनन्तकाल तक बाल्मीकि मुनि के नाम से पुकारे जायँगे। इसप्रकार के उदाहरणों से समाज का प्रत्येक युग भरा हुआ है।

समाज में स्त्री-पुरुष का जीवन मानव चरित्र का अत्यन्त मर्यादा पूर्ण जीवन है जो दाम्पत्य जीवन के नाम से पुकारा जाता है। इसजीवन में सुख है, संतोष है, पवित्रता है धार्मिकता है किन्तु अनेक कारण हैं जिनसे इस जीवन की पवित्रता और धार्मिकता का अपहरण हो जाता है। अनेक त्रुटियाँ आ-आकर इसकी श्रेष्ठता और उपयोगिता को मिटा कर उसमें कटुता उत्पन्न कर देती हैं। स्त्री और पुरुष का जीवन सुख-संतोष के स्थान पर असंतोष का जीवन बन जाता है। कभी पति के अपराधों से और कभी पत्नी के कटुता पूर्ण व्यवहार से इस जीवन का माधुर्य छिन्न-भिन्न हो जाता है। मानव जीवन जितना ही मधुर है उतना ही कटु और अरुचि पूर्ण। जितना ही सरल है उतना ही कठोर और निर्दय।

ज्ञानशक्ति सम्पन्न और दूरदर्शी अपने जीवन को, कटुता और िर्दयता से पृथक रखकर, सुख और संतोष पूर्ण बनाते हैं। जो ीवन से अनभिज्ञ और अदूर दर्शी होते हैं, वे जीवन को ख-दारिद्र, क्लेश-यंत्रणा में रो-रो कर दिन काटते हैं।

यह जीवन इतना सरल नहीं है जितना लोग समझ लेते हैं। ोटी-छोटी भूलों और असावधानियों के कारण यह जीवन असु- िधाओं में इसप्रकार परिपूर्ण हो जाता है कि फिर उसका सम्हलना ठिन हो जाता है। इसलिए जो अपने जीवन को सुख पूर्ण बनाना ाहते हैं, उनको इसके लिए प्रयत्न करना पड़ता है। वे चाहें तो अपनी किसी भी स्थिति में जीवन का सच्चा सुख प्राप्त कर सकते हैं और यदि अकर्तव्यता से काम लें तो थोड़े ही समय में यह सुवर्ण मय जीवन मिट्टी में मिला सकते हैं। जो अपने जीवन के सुख-सौभाग्य को खो देते हैं, वे अधिक अपराधी नहीं होते, किन्तु अधिक अपराधी तो वे उस अवस्था में होते हैं जब वे अपने उन अपराधों को स्वीकार नहीं करते; जिनके कारण, उनके जीवन का सुख सौभाग्य नष्ट हुआ है। महात्मा मेजिनी ने इन अपराधियों के अपराधों का निर्णयकरते हुए अपनी अमर लेखनी से लिखा है—

"You are not guilty because you are ignorant but you are guilty when you resign yourself to ignorance."

"तुम अपराधी नहीं हो, इसलिए कि तुम अनजान हो किन्तु

अपराधी उस अवस्था में हो जब अपनी अनभिज्ञता को स्वीकार करते हो"।

हमें अपने जीवन को सावधानी के साथ देखना चाहिए और फिर सोचना चाहिए कि हम जो चाहते हैं, उसमें और हमारे जीवन में क्या अंतर है। हमारी कौन-कौन सी त्रुटियाँ और भूलें हमारे जीवन को प्रतिकूल दिशा की ओर ले जा रही हैं। बड़ी सावधानी के साथ उन त्रुटियों को देखने और उनको दूरकरने की आवश्यकता होती है। जब हम अपनी किसी दुरवस्था को दूर करने का प्रयत्न करेंगे तो यह निश्चय है कि वह दूर हो जायगी। केवल यह जानने की आवश्यकता है कि उनका दूर करना और न करना हमारा काम है। हमही अपने आप को सम्हाल सकते हैं और हमही बिगाड़ सकते हैं। जो अपने जीवन की असुविधाओं को देखकर घबरा जाते हैं, वे उनका सामना नहीं कर सकते। फल यह होता है कि वे पथ से विपथ हो जाते हैं। इस प्रकार के मनुष्य कभी भी अपने जीवन में सुखी नहीं हो सकते, सुखी तो वेही हो सकते हैं जो अपने आप को बना सकते हैं। जो अपने आप को बना नहीं सकते, वे अपनी दुरवस्था पर अश्रुपात करते हैं और दूसरे की अवस्था देखकर अपनी अवस्था का प्रायश्चित्त करते हैं।

जीवन की प्रारम्भिक अवस्था बिगड़ने और बनने की अवस्था होती है। इसलिए उसी समय से बहुत सोच समझकर हमें अपना जीवन-यापन करने की आवश्यकता होती है। उस अवस्था में

विशेष रूप से यह जानना आवश्यक होता है कि हमारा जीवन किसप्रकार बन और बिगड़ सकता है। इस जीवन में हमें किसप्रकार सावधान रहने की आवश्यकता है और किस प्रकार के आचरण और व्यवहार से अपने जीवन का भविष्य, सुख-सौभाग्य पूर्ण बना सकते हैं। इस प्रकार की अनेक जानकारी के साथ हमें अपने सौभाग्य की रचना करनी चाहिए।

जीवन में स्वास्थ्य का स्थान

संसार में कौन ऐसा मनुष्य होगा जिसको स्वास्थ्य पसंद न हो ? कौन ऐसा मनुष्य होगा जो स्वास्थ्य को पाकर गर्व न करता हो ? सभी को स्वास्थ्य प्रिय लगता है और स्वस्थ जीवन ही जीवन का नाज बन जाता है, किन्तु स्वास्थ्य क्या है इस बात को लोग नहीं जानते हैं, जो जानते भी हैं, वे उस समय, जब वे स्वास्थ्य को अपने जीवन से खो बैठते हैं।

संसार में इस प्रकार के लोगों की संख्या अधिक है जो स्वास्थ्यहीन हैं और अपने स्वास्थ्य के लिए तरह-तरह के साधन सोचते हैं, अपने खोये हुए स्वास्थ्य को फिर लाने के लिये सैकड़ों रुपये औषधियों में खर्च करते हैं। वे अपने जीवन में अनेक प्रकार के नियमों का अनुष्ठान करते हैं और फिर भी विफल होते हैं किन्तु इसप्रकार के आदमी भी संसार में पाये जाते हैं या नहीं, जो अपने स्वास्थ्य को खोने के पहले से ही, स्वास्थ्य को बनाये रखने का प्रयत्न करते हैं, यह नहीं कहा जा सकता। यदि स्वास्थ्य खोने के पहले से ही स्वास्थ्य-रक्षा का उपाय किया जाय तो फिर स्वास्थ्य नष्ट ही कैसे हो सकता है ? होता यह है कि जितनी सावधानी और सतर्कता के साथ लोग अपने अस्वस्थ जीवन को सँभालने की चेष्टा करते हैं, उससे भी कहीं लापरवाही

के साथ अपने बाल्यकाल तथा यौवनावस्था में लोग स्वास्थ्य करने वाले आचरणों का प्रयोग करते हैं।

हमें सब से पहले इन बातों का विचार करना है जो हमारे जीवन में स्वास्थ्य की शत्रु होती हैं। और असमय तथा अकारण हमारे स्वास्थ्य का नाश करके सदा के लिए हमको रोग शोक पूर्ण बना देती हैं। प्रकृति ने हमें जिस प्रकार के जीवन में उत्पन्न किया है और हमारे लिए जिस प्रकार के साधनों की व्यवस्था की है, यदि उनके अनुसार ही जीवन बिताया जाय तो फिर स्वास्थ्य और अस्वास्थ्य का प्रश्न ही हमारे सामने नहीं आता। किन्तु हमारे जीवन में स्वाभाविकता का रूप मिट जाता है और उसके स्थान पर इसप्रकार की उद्दण्ड परिस्थितियाँ पैदा हो जाती हैं जिनके फल स्वरूप हमें अनेक प्रकार की व्याधियों और अस्वस्थ जीवन के संकटों का सामना करना पड़ता है और जीवन का एक-एक दिन वैद्यों तथा डाक्टरों के पीछे फिरने में व्यतीत होता है।

हमारे जीवन में पहली त्रुटि परिश्रम की कमी है, शरीर एक यंत्र है और यंत्र की ही भाँति उसकी अधिकांश व्यवस्थाएँ होनी चाहिए। किसी भी यंत्र तथा मेशीन के सम्बन्ध में यह एक साधारण बात है कि वह अधिक दिनों तक बेकार पड़ी रहने से निकम्मी हो जाती है। हमारे शरीर की भी यही अवस्था है। बेकार रहना अथवा परिश्रम न करना जो लोग अपने जीवन का बड़प्पन तथा अमीरी समझते हैं, उनको शरीर के

स्वास्थ्य से हाथ धो लेना चाहिए। हमारे देश में जब से अंगरेजी शिक्षा का प्रचार हुआ है तब से हमारे जीवन में इन निकम्मी बातों ने बहुत प्रवेश किया है। इस शिक्षा ने समाज को आन्तरिक जीवन इतना दूषित कर दिया है कि जिसका ठिकाना नहीं। स्कूलों में पढ़नेवाले बालकों और बालिकाओं के लिए परिश्रम करना एक लज्जा की बात हो जाती है। वे काम करने में जिसमें परिश्रम पड़े, अपमान की बात समझने लगते हैं, यह उनके जीवन की एक एक छोटी-सी धारणा आगे चलकर बड़ी भयानक हो जाती है। देहात में रहने वालों निर्धन परिवारों को छोड़कर शेष समाज का जीवन परिश्रम की कमी के कारण निर्बलता की सीमा को पहुँच गया है, धनिक परिवारों, शिक्षित लोगों और शहरों में रहने वालों के जीवन का तो स्वास्थ्य से सम्पर्क ही छूट गया है।

गार्हस्थ्य जीवन में स्वास्थ्य की बड़ी आवश्यकता है, यदि उसमें स्वास्थ्य की कमी हुई तो गृहस्थ के संकटों की कोई सीमा नहीं है। इसलिए प्रत्येक गृहस्थ को स्वस्थ रहने की भलीप्रकार चेष्टा करनी चाहिए और इसके लिए उसे सब से पहले परिश्रम की बात याद रखनी चाहिए। परिश्रमी आदमी न तो रोगी हो सकता है और न उसके शरीर में किसी प्रकार की कोई दूसरी खराबी उत्पन्न हो सकती है। परिश्रम न करने से बालकों का शारीरिक विकास यथेष्ट रूप में नहीं होता। यौवन प्राप्त होने पर उनके शरीरों की हड्डियाँ निर्णय और शक्तिहीन हो जाती हैं।

इसलिए गृहस्थों को चाहिए कि वे परिश्रम को अपने जीवन में पहला महत्व दें। और अपने परिवार में छोटे से लेकर बड़ों तक सब को परिश्रम करने का अभ्यासी बनायें।

इसके उपरान्त जीवन के स्वास्थ्य के लिए शुद्ध भोजन, शुद्ध जल और शुद्ध वायु की आवश्यकता है। इस आवश्यकता में शुद्ध जल और वायु को बहुत कमी रहा करती है। शहरों में रहने वालों के जीवन में इस कमी का विशेष रूप से अभाव होता है। स्वास्थ्य के नियमानुसार बहुत अधिक संख्या में मनुष्यों का किसी एक ही स्थान में रहना बहुत हानिकर होता है। हमारे देश में इस अंगरेजी शासन के पहले वर्तमान बड़े-बड़े शहरों का अस्तित्व न था। उस समय में देहातों का जीवन कितना शुद्ध परिष्कृत और उपयोगी था, यह सब यहाँ पर लिखना अप्रासंगिक होगा। इसलिए यहाँ पर इतनी ही विवेचना आवश्यक है कि उस समय समाज के स्वास्थ्य की यह अवस्था न थी। उसके बाद जितनी ही शहरों की व्यवस्था होती गई उतना ही समाज के स्वास्थ्य में कमी आती गई। शहरों के जीवन में स्वास्थ्य को नष्ट करने वाली बहुत सी बातें हैं, उनमें वायु की अशुद्धता प्रधान है। शहरों में रहने वाले थोड़ी-सी संख्या में बड़े आदमियों, सम्पत्तिशालियों, वकीलों अधिकारियों को छोड़ कर शेष समाज जिस गंदी वायु में अपना जीवन बिताता है, उसको स्मरण करके हृदय काँप उठता है।

जो लोग शहरों के नाज से पले हुए जीवन पर पागल

रहा करते हैं वे कदाचित अस्वस्थ जीवन की दुरवस्था पर कभी विचार भी नहीं करते। शहरों की स्वास्थ्य हीनता के दो महान कारण हैं, अशुद्ध वायु और हलका जल। बड़े-बड़े शहरों में नलों का जल, देहातों के कुओं की अपेक्षा हलका और निर्बल होता है। शहरों के निवासी जो खाना खाते हैं, वह जल के हलका होने के कारण शरीर में शक्ति नहीं पहुँचाता। शहरों के जीवन में इन दोनों वस्तुओं की कमी हमारे जीवन को दिन पर दिन निर्बल बना रही है।

समाज में जितनी ही शिक्षा और सभ्यता का प्रचार होता जाता है, हमारे जीवन से नागरिकता का जितना ही सम्बन्ध घनिष्ट होता जाता है, उतना ही हम अपने जीवन में निर्बल और भीरु होते जाते हैं। शहरों के जीवन का सम्बन्ध होने के कारण, साधारण से साधारण परिवार की स्त्रियाँ भी अत्यंत [illegible] हो जाती हैं, उनका विश्वास होता है कि जिनको कुछ काम करना पड़ता है वे ग़रीब घरानों की होती हैं, केवल अपने आपको बड़ा प्रमाणित करने लिए शहरों में स्त्रियों ने चक्की चलाने और आटा पीस कर तैयार करने का कार्य तो छोड़ ही दिया है, घर का चौका वर्त्तन करना भी उनके जीवन की छोटाई का द्योतक है, इसलिए जिस परिवार में साधारण भोजन भी पेट-भर खाने का सौभाग्य होता है, उस परिवार में चौका-वर्त्तन के लिए महरी या टहलुई अवश्य होती है। अब शहरों के जीवन में स्त्री के लिए रोटी को छोड़कर और कोई काम ही न रह गया।

यह रोटी भी उनके लिए बेकार ही होती है। कहने का सारांश यह कि उनका जीवन सबप्रकार नाजुक, निर्बल और सुकुमार हो जाता है, इसका फल यह होता है कि आज शहरों में रहने वाली नब्बे प्रतिशत स्त्रियाँ, अस्वस्थ और किसी न किसी रोग से पीड़ित हैं। स्वास्थ्य की यह दुरवस्था देहातों में नहीं है, और रूखा-सूखा भोजन करने वाले देहात के लोग भी शहर के स्त्री-पुरुषों की अपेक्षा स्वस्थ और नीरोगी होते हैं।

हम अपने जीवन में जो शिक्षा पाते हैं उसमें स्वास्थ्य रक्षा तथा उस प्रकार के जीवन की समझाने वाली बातों से कोई सम्बन्ध नहीं होता। स्वास्थ्य रक्षा-करने वाले स्वाभाविक जीवन को हम भूल ही जाते हैं, इसके फल स्वरूप स्वास्थ्य का नाश होना अनिवार्य हो जाता है। इस अवस्था में स्वास्थ्य को सम्भालने के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकें हुआ करती हैं, उन पुस्तकों तक समाज की पहुँच नहीं है, इसका कारण यह है कि लोग इसप्रकार की बातों को जानकारी के लिए बहुत उत्सुक नहीं होते, इसलिए एक तो समाज में पढ़े-लिखे लोगों की संख्या ही इनी-गिनी है, उसमें भी उपन्यास, कहानियों के पढ़ने तक ही उनका अध्ययन क्षेत्र परिमित हो जाता है। इसलिए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने अथवा उसको कुछ थोड़ा-बहुत सम्भालने का एक मार्ग होता है, सर्व साधारण उससे भी वंचित हो जाते हैं। इसलिए गृहस्थों को तथा स्वास्थ्य चाहने वाले व्यक्तियों को इन बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए और सभी प्रकार के

आचार-व्यवहार के द्वारा अपने स्वास्थ्य की रक्षा करना चाहिए, उनको समझना चाहिए कि स्वास्थ्य ही हमारे शरीर का सुख है, स्वास्थ्य ही हमारे जीवन की शक्ति है और स्वास्थ्य ही हमारे जीवन का अमरत्व है। इसके बिना सभी कुछ व्यर्थ है। यदि हमारे जीवन में स्वास्थ्य नहीं है—यदि हमारा शरीर नीरोग्य नहीं है तो समझ लेना चाहिए कि संसार में हमारे लिए कोई सुख नहीं है।

स्त्रियों के जीवन में बुढ़ापे की अवस्था तक यौवन की मर्यादा रखने वाला परिश्रम से अधिक उपयोगी और कोई मार्ग नहीं है। अमीरों और बड़े घरों में पालन-पोषण पानेवाली, युवतियों, बहुओं को गरीब घरों की स्त्रियों और मजदूर पेशा औरतों की ओर देखना चाहिए, जिस समय और जिस अवस्था में वे अपने जीवन को बिलकुल निर्बल और यौवन हीन समझ लेती हैं, उस अवस्था में भी उन परिश्रम शील स्त्रियों का शरीर हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ होता है। इसलिए प्रत्येक को चाहिए कि वह परिश्रम से सदा प्रेम करे। और अपनी संतान को भी परिश्रम करना सिखावे। जब माता-पिता अपने बालकों और बालिकाओं को, बाल्यकाल में परिश्रम करना नहीं सिखाते तो फिर जीवन भर परिश्रम करना उनके लिए कठिन ही नहीं असम्भव है। इसलिए जीवन के आरंभ से ही परिश्रम से प्रेम करना चाहिए। परिश्रम का अभ्यास करने से, उस का लाभ मालूम होता है। परिश्रम स्वास्थ्य की रक्षा करता है, स्वास्थ्य

सौन्दर्य की वृद्धि करता है इसलिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष को नवयुवकों और नवयुवतियों को परिश्रम से कभी न डरना चाहिए।

स्वास्थ्य के लिए सदाचार और संयम की विशेष आवश्यकता है, शहरों के जीवन में संयम के नाश होने के अनेक कारण पाये जाते हैं, इसके सम्बन्ध में अन्यत्र बहुत-सी बातें लिखी जा चुकी हैं, यहाँ पर उनको दुहराने की आवश्यकता नहीं है, फिर भी यह लिखना जरूरी है कि स्वास्थ्य के प्रेमियों को संयम को नष्ट करने वाली बातों से सदा दूर रहना चाहिए। कुछ लोगों का यह विचार होता है कि हम उनका प्रयोग न करेंगे देखने-सुनने के लिए तो आँखें बनाई ही गई हैं, इन बातों में उपहास के सिवा, कुछ तत्व नहीं है, जो इसप्रकार के विचार रखते हैं अथवा जो अपनी स्थिति को दूसरों के सामने सुरक्षित रखने का यह ढोंग रचते हैं, वे वास्तव में प्रवञ्चक होते हैं, जिनको सचमुच अपने जीवन की रक्षा करना है, उनको चाहिए कि संयम और सदाचार पर धक्का पहुँचाने वाली बातों को सुनने, अश्लील पुस्तकों का अध्ययन करने आदि को विष समझकर उनसे घृणा करें, ऐसा करने पर ही वे उनसे अपनी रक्षा कर सकेंगे।

स्वास्थ्य की ये मोटी-मोटी बातें हैं जिनपर विचार करना और अपने स्वास्थ्य की रक्षा करना प्रत्येक समझदार स्त्री-पुरुष का आवश्यक कर्त्तव्य है। स्वास्थ्य के नष्ट हो जाने पर लोगों

आद
ची बहुत बुरी तरह पछताना पड़ता है, और लाख प्रयत्न क
च पर भी कभी उसके स्वप्न में भी दर्शन नहीं होते।

स्वस्थ स्त्री-पुरुष को सदा व्यायाम करना चाहिए, व्याय
से शरीर पुष्ट होता है, सुगठित होता है और व्यायाम के द्व
अंग सौष्ठव प्राप्त होता है। व्यायाम करने वाले और न क
वाले दो व्यक्तियों के जीवन का मिलान किया जाय, और मि
किया जाय किसी भी अवस्था में, बाल्य काल में, यौवनावस्था
या बुढ़ापे में, कभी भी देखा जाय, तो ज़मीन आसमान
अंतर मिलेगा। व्यायाम से जो स्फूर्ति प्राप्त होती है, जिसप्र
की शक्ति का संचय होता है और वार्द्धक्य अवस्था के श
आने में रुकावट डालने के लिए किसप्रकार यह चिकित्सा
काम करता है, वह सब कहने की बात नहीं है, उसरा
जीवन में सर्वदा उपयोग होना चाहिए और उसके ल
से जीवन-शक्ति का सुख देखना चाहिए।

नाज से पली हुई हमारे घरों की स्त्रियों की अवस्था कित
शोचनीय हो गई है, इसका अनुमान लगाना कठिन है, इंगलि
स्त्रियों और युवतियों का देखकर इसका कुछ पता लगता
हमारे गार्हस्थ्य जीवन की यह दुरवस्था है और इस दुरवस्था
एकमात्र कारण स्त्रियों को पर्दे की मूर्ति बनाकर उनको परि
और व्यायाम से वंचित कर देना है। स्वतन्त्र देश की स्त्रि
का सुख-स्वास्थ्य देखकर आश्चर्य अनुभव करते हैं, किन्तु अ
देश और समाज में जिन गुणों और व्यवहारों से इस अवस

ा प्रवेश हो सकता है, उसके नाम से भी भय खाते हैं। कितनी ालटी बात है। हम धनिक बनना चाहते हैं किन्तु उसके लिए ारिश्रम और प्रयत्न नहीं करना चाहते।

यदि हम मन में गार्हस्थ्य जीवन को सुखी और स्वस्थ ानाना चाहते हैं और जीवन में सुख-स्वातन्त्र्य का पूर्ण रूप से ानुभव करना चाहते हैं तो हमारे लिए यह अनिवार्य आवश्यक ै कि अपने परिवार से परतन्त्र जीवन का नाम मिटा दें, ाब को स्वतन्त्र जीवन का सुख अनुभव करने दें, विकासवाद े अनुसार शासन जीवन के लिए शत्रु होता है। उसको यथेष्ट ्प से विकसित नहीं होने देता। बालकों और बालिकाओं को ्न बातों के जानने और समझने के लिए समस्त रूप से उत्साहित ्रना चाहिए। अल्पकाल में जिन विचारों का बीजारोपण ्या जाता है, वही आगे चलकर फलता-फूलता है। अपने ारिवार में, स्त्री-बच्चों के साथ बैठकर इसप्रकार की बातों पर ादविवाद करना चाहिए और वे जिन बातों को न जानते हों, ्न बातों के जानने के लिए उन्हें उत्साहित करना चाहिए, स्त्रियों ो पैदल चलने, परिश्रम करने, व्यायाम करने की शौक डालना ाहिए। रोगिणी और दुर्बल-शरीर स्त्रियों को व्यायाम और ारिश्रम के लिए विशेष रूप से तैयार होना चाहिए। पता लगाने े, एक नहीं सैकड़ों ऐसे उदाहरण मिलेंगे जिनसे मालूम ोगा कि व्यायाम करने, स्वतन्त्र वायु में खूब घूमने और चलने ्फिरने के कारण कितनी ही अस्वस्थ स्त्रियों ने आरोग्यता प्राप्त

की है। हमारे जीवन के लिए जिन बातों की आवश्यकता है उन बातों से, सामाजिक संकोच और विवशता के कारण हमको वंचित रहना पड़ता है। यदि हम अपने जीवन से संकोच और विवशता सदा के लिए निकाल दें तो हम भी सुखी और स्वस्थ हो सकते हैं।

संयम से न केवल शारीरिक स्वास्थ्य मिलता है, परन्तु उसके द्वारा मस्तिष्क भी शक्ति प्राप्त करता है। बिना संयम के मनुष्य की विचार-शक्ति, मननशक्ति और विवेचना-शक्ति की वृद्धि होना असम्भव है। इसके साथ-साथ मनुष्य को अपने भोजन की व्यवस्था पर भी जानकार होना चाहिए। अपनी असावधानी से भोजन के साथ, जब कुछ विकृत पदार्थ अथवा भोजन का कुछ अस्वास्थ्यकर अंश हम खा जाते हैं तो हमारे पेट में पहुँच कर अनेक अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न कर देता है। पदार्थों में किस वस्तु की क्या तासीर है इस बात को जानकर और अपनी पाचन-शक्ति के अनुसार ही उसको खाना चाहिए। कुछ ऐसी वस्तुएँ होती हैं जिनके खा लेने से तुरन्त ही हमारे ऊपर उनका आक्रमण होता है और हम अस्वस्थ हो जाते हैं किन्तु अच्छे हो जाने पर उससे सावधान रहना हम भूल जाते हैं और फिर उसको खाकर बीमार होते हैं। यह अवस्था अच्छी नहीं होती। खाद्य पदार्थों के सम्बन्ध में यह नहीं बताया जा सकता है कि अमुक-अमुक पदार्थ अस्वास्थ्य कर हैं और अमुक स्वास्थ्यकर। वे तो सभी खाने की वस्तुएँ हैं। उनमें से ही

कोई भी अपनी शारीरिक शक्ति के अनुसार और पाचन-शक्ति के अनुकूल तथा प्रतिकूल हानिकर और लाभकर हो सकती है। इसीलिए खानेवाले को अपनी अवस्था पर विचार करना चाहिए।

भोजनों के सम्बन्ध में, इस बात का जानना बहुत आवश्यक है कि कौन-कौन से भोजन शुद्ध रूप और स्वास्थ्य को उत्पन्न करते हैं। समाज मे बहुत थोड़े से ऐसे आदमी होते हैं जिनको इस बात का ज्ञान होता है कि शुद्ध रक्त ही स्वास्थ्य का प्रवर्त्तक होता है और स्वास्थ्य की अवस्था में ही मस्तिष्क अपना ठीक-ठीक कार्य कर सकता है, अतएव उस शुद्ध रक्त के उत्पन्न करने के लिए किस प्रकार के भोजन करने चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि स्वास्थ्य ही स्वर्ग है और अस्वस्थ जीवन ही नरक है। जो अपने जीवन में सदा अस्वस्थ रहा करते हैं वे जानते हैं कि नरक किसे कहते हैं। स्वस्थ रहने के लिए अपने आचार विचार और मानसिक भावों को पूर्ण रूप से शुद्ध रखना चाहिए। जिसका मन शुद्ध नहीं है, उसके आचरण कभी पवित्र नहीं हो सकते। इसलिए सच्चा-स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए हमको स्वास्थ्य की सभी बातों को स्मरण रखना चाहिए।

स्वास्थ्य की कुछ उपयोगी बातें

पिछले परिच्छेद में स्वास्थ्य की कुछ बातें लिखी गई हैं, उनको पढ़कर पाठक और पाठिकाएँ स्वास्थ्य की ओर आकर्षित होंगी, वे स्वास्थ्य की उपयोगिता और महत्ता समझेंगी और उसके प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होंगी। किन्तु स्वास्थ्य को बढ़ाने और उसको संरक्षित रखने के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक और महत्व पूर्ण नियमों और साधनों का जानना भी जरूरी है, जिनको नित्यप्रति व्यवहार में लाकर युवती और युवक स्त्री और पुरुष स्वास्थ्य विषयक बहुत बड़ा लाभ उठा सकते हैं, उन नियमों और साधनों को संक्षेप में यहाँ पर बताया जायगा।

सब से पहले हमको देखना चाहिए कि हमारा निवास-स्थान अर्थात् घर कहाँ पर और कैसा होना चाहिए। जहाँ पर हमारा घर हो, वहाँ किसीप्रकार की दुर्गन्धि न हो और प्रत्येक समय शुद्ध वायु मिलती हो। शुद्ध वायु के सम्बन्ध में पिछले परिच्छेद में कुछ बताया जा चुका है। उसके सम्बन्ध में ही थोड़ी-सी बातों को यहाँ लिखकर पाठक और पाठिकाओं का ध्यान उस ओर आकर्षित कर देना है। हमारे घर का पास-पड़ोस सदा भले आदमियों रईसों और कुलीनों का होना चाहिए। अपने आसपास नीच, चरित्रहीनों और आचरण भ्रष्ट

लोगों का होना सदा हानिकारक है। यह कभी न सोचना चाहिए कि 'अपना मन चंगा कठौती में गङ्गा'। अपना मन शुद्ध है तो फिर कोई क्या कर सकता है। शुद्ध से शुद्ध प्रकृति में प्रभाव पड़ा करता है। मनुष्य जैसी बातों को नित्य देखता है, जिस-प्रकार की बातों को नित्य कानों से सुनता है, उन्हीं के अनुसार वह अपने आचरण और विचार बनाने लगता है। चरित्रहीन और भ्रष्ट लोगों का पास-पड़ोस होने से अपने घर के छोटे-छोटे लड़के, दुर्व्यसन सीखते हैं, उनके जीवन में उच्छृङ्खलता और उद्दंडता पैदा हो जाती है यही अवस्था हमारे घरों की बालिकाओं और युवतियों की होती है। नीच प्रकृति वालों का संसर्ग और सहवास न तो स्त्री के लिए अच्छा होता है और न पुरुष के लिए। बालकों और बालिकाओं, युवकों तथा युवतियों के लिए तो वह विषैला जीवन ही होता है। शहरों में रहने वालों के लिए यह अवस्था साधारण ही उत्पन्न हो जाती है, यहाँ पर एक उदाहरण देकर इस बात को और भी साफ कर देना आवश्यक है। कानपुर शहर की बात है, एक साधारण गृहस्थ ब्राह्मण, एक किराये के मकान में रहा करता था। कुछ दिनों के उपरांत, एक जमींदार ने उसके पड़ोस का मकान किराये पर लिया और रहने लगा। उस ब्राह्मण गृहस्थ की एक लगभग चौदह वर्ष की लड़की थी। पड़ोसी होने के कारण जमींदार तथा उनके अन्यान्य नौकरों से उस ब्राह्मण से मेल-जोल हो गया। उठना-बैठना आना-जाना सभी बातें होने लगीं। ब्राह्मण की लड़की, जमींदार के मकान में,

आवश्यकता पड़ने पर आने-जाने लगी। कभी वह अपने पिता के साथ जाती, कभी माता के साथ जाती और परिचय बढ़ जाने पर जमींदार साहब के कुछ चीज मँगाने पर अकेली भी जाती। वहाँ जाने पर वह कभी-कभी कुछ काम में लग जाती। जमींदार साहब विलासी जीव थे। उनके मकान में, कहीं पास की रहने वाली एक रंडी भी आने-जाने लगी। रंडी के आने पर उसके लिए पान आते, मिठाईयाँ आतीं और भी कितने ही आदर-सत्कार होते, कितनी ही बार उस ब्राह्मण की लड़की को, जमींदार के मकान में यह सब देखने को मिला। वह रंडी अपनी मिठाई में से कुछ हिस्सा, उसे दे देती और उसको वहीं पर खा लेने को कहती। बालिका, भोली-भाली थी खा लेने लगी। बालोचित स्वभाव से उसने एक दिन अपनी माँ से यह बात कही थी, परन्तु उसके कहने में, केवल यही बात प्रदर्शित हुई कि जमींदार के घर में कभी-कभी वह मिठाई पा जाती है, उसकी माँ, हिन्दू-स्त्री, सीधी-सादी, बड़ी प्रसन्न हुई कि जमींदार हम लोगों को बहुत चाहते हैं। लड़की जब जमींदार के घर जाती तो उसको उस रंडी का स्मरण आता बालक और बालिकाएँ तो केवल प्रेम, सहानुभूति चाहते हैं, उनको पाप और पुण्य का ज्ञान नहीं होता। जो बातें वे बुरी सुना करते हैं, उनके प्रति भी, उनके हृदयों में कोई बुरी भावना नहीं होती। इसके साथ ही, जब उस ओर से, वे प्रेम पाते हैं, सद्व्यवहार और रिझानेवाली बातें सुनते हैं तो उनका उस ओर आकर्षित हो जाना तो स्वाभाविक होता ही है,

वह रंडी भी पास ही रहती थी। लड़की छिप-छिपाकर वहाँ जाने लगी, यह बात उसके माँ-बाप को न मालूम हुई और एक सप्ताह के भीतर ही वह लड़की गायब हो गई। पुलिस ने बड़ी छान-बीन की तब दो महीने के अन्त में कहीं कुछ पता चला कि पास रहनेवाली रंडी ने उसको एक दिन सायंकाल एक मोटर में बिठाकर रातोरात लखनऊ भेज दिया था। भेजने के पहले उसको मिठाई के साथ नशा दिया गया था और वह मोटर पर जनानी मोटर बनाकर तथा तीन-चार रंडियों को साथ बिठाकर लखनऊ भेजी गई। लड़की सुन्दरी थी। लखनऊ ले जाकर वहाँ रंडियों के एक अड्डे पर एक हजार रुपयों में बेची गई। पुलिस ने बहुत पता लगाया, किन्तु इन बातों के सिवा, फिर कुछ पता न चला, लखनऊ में उसके कई स्थान बदले गये और दूसरे महीने में उसको कलकत्ते भेज दिया गया, इसप्रकार की कुछ बातें सुनी गईं परन्तु लड़की का कहीं पता न लगा।

इस प्रकार की घटनाएँ शहरों में बहुत होती हैं, देहातों के साधारण स्त्री-पुरुष, गृहस्थ अपनी नौकरी के कारण शहरों में आकर रहने लगते हैं, उनकी गरीबी उनको सभीप्रकार की अवस्थाओं में, उचित और अनुचित स्थानों और परिस्थितियों में रहने के लिए विवश करती है। वे अपने सरल स्वभावों के कारण सभी के साथ विश्वास करते हैं और अन्त में इसप्रकार की दुर्घटनाओं में फँस जाते हैं। शहरों का जीवन तो दुराचार के नाम पर, बहुत कलुषित हो गया है, शहरों के जीवन ने ही पास

पड़ोसियों का नहीं अपने आत्मीयों, सम्बन्धियों और अपनों के साथ विश्वास करने में भी दुर्घटनाओं का परिचय दिया है। शहरों के इस जीवन ने बढ़कर, संसार के वर्तमान जीवन का रूप धारण कर लिया है। इसी लिए गृहस्थों को अपने जीवन में सीधे और सच्चे तो होना ही चाहिए, परन्तु उनकी सिधाई का यह अर्थ न निकले कि संसार के लुच्चे आचरण-भ्रष्ट लोग, उनके साथ इस प्रकार की दुर्घटनाएँ कर सकें। इसलिए उनको इन बातों से सदा सतर्क रहना चाहिए और इसके लिए अपने घर की अवस्था पर सदा ध्यान रखना चाहिए।

घर किसी गन्दे स्थान पर न हो और उसमें कुछ वायु के आने का रास्ता हो। घर इसप्रकार का बना हो, जिसमें टट्टी या पाखाने का स्थान, रहने के स्थान से बिल्कुल पृथक् हो। टट्टी की दुर्गन्धि रहने के स्थान पर प्रवेश न करती हो, घर के कमरे और कोठरियों में अँधेरा न हो, प्रकाश और शुद्ध हवा आने के लिए खिड़कियाँ तथा रोशनदान हों। पाकशाला, बैठने-उठने के कमरे से इतना पृथक् हो कि उसका धुआँ कभी कष्ट न देता हो। जिन घरों में, रसोई-घरों के धुएँ जाते हैं, उनसे कपड़े तो काले होते ही हैं, यह स्वास्थ्य के लिए भी हानिकर होता है। घर का कुछ अंश खुला हुआ होना चाहिए, जहाँ आसानी के साथ, धूप जा सके, धूप स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी है। प्रत्येक ऋतु में, प्रायः प्रति दिन बच्चों से लेकर, बूढ़ों तक, सब को सूर्य की साधारण उत्ताप का प्रातःकाल और सायंकाल

सेवन करना चाहिए। जो लोग उससे परहेज करते हैं वे भूल करते हैं और जिनको अपने घरों में धूप नहीं मिलती, वे कभी भी स्वस्थ नहीं रह सकते। शहरों में जिन छोटे-छोटे घरों में और कई-कई मंजिल के मकानों के नीचे के भागों में कभी धूप नहीं जाती, वे सब रहने के योग्य नहीं होते, उनके निवासी रोगों के शिकार बनते हैं। शहरों में बहुत बड़ी आबादी इसी प्रकार की होती है, इसका फल यह है होता है कि इन घरों में रहनेवाले लोग, अपनी निर्धनता के कारण विवश होते हैं, इसलिए कि शहरों में जो मकान, इन त्रुटियों से खाली होते हैं, वे बहुत महँगे होते हैं, इसलिए उनमें वही परिवार रहा करते हैं जो रुपये-पैसे में निर्धन हैं, वे इन मकानों में रहने के पहले अपना स्वास्थ्य पूर्ण परिवार रखते हैं, उनके शरीरों में रक्त होता है, बीमारियाँ उनका पीछा नहीं किये रहतीं, बच्चे नीरोग होते हैं और उनकी स्त्री भी हट्टी-कट्टी होती है किन्तु इन गंदे घरों में पड़कर उन निर्धन परिवारों का जीवन नष्ट होता है, वह कहने की बात नहीं है। जो स्त्री-पुरुष शहरों में रहने के लिए लालायित रहा करते हैं, उनको अपनी इस भविष्य में आनेवाली दुरावस्था का स्मरण रखना चाहिए और अपने स्वास्थ्य को नष्ट करनेवाले इस जीवन से बहुत दूर रहना चाहिए।

स्वास्थ्य के लिए प्रातःकालीन शुद्ध वायु का सेवन करना बहुत आवश्यक होता है। घनी बस्ती के बाहर और यदि सम्भव हो तो निर्जन स्थानों में जहाँ पर वृक्ष-लता हों, किसी बड़ी नदी

पड़ोसियों का नहीं अपने आत्मीयों, सम्बन्धियों और अपनों के साथ विश्वास करने में भी दुर्घटनाओं का परिचय दिया है। शहरों के इस जीवन ने बढ़कर, संसार के वर्तमान जीवन का रूप धारण कर लिया है। इसी लिए गृहस्थों को अपने जीवन में सीधे और सच्चे तो होना ही चाहिए, परन्तु उनकी सिधाई का यह अर्थ न निकले कि संसार के लुच्चे आचरण भ्रष्ट लोग, उनके साथ इस प्रकार की दुर्घटनाएँ कर सकें। इसलिए उनको इन बातों मे सदा सतर्क रहना चाहिए और इसके लिए अपने घर की अवस्था पर सदा ध्यान रखना चाहिए।

घर किसी गन्दे स्थान पर न हो और उसमें कुछ वायु के आने का रास्ता हो। घर इसप्रकार का बना हो, जिसमें टट्टी या पाखाने का स्थान, रहने के स्थान से बिल्कुल पृथक् हो। टट्टी की दुर्गन्धि रहने के स्थान पर प्रवेश न करती हो, घर के कमरे और कोठरियों में अँधेरा न हो, प्रकाश और शुद्ध हवा आने के लिए खिड़कियाँ तथा रोशनदान हों। पाकशाला, बैठने-उठने के कमरे से इतना पृथक् हो कि उसका धुआँ कभी कष्ट न देता हो। जिन घरों में, रसोई-घरों के धुएँ जाते हैं, उनसे कपड़े तो काले होते ही हैं, यह स्वास्थ्य के लिए भी हानिकर होता है। घर का कुछ अंश खुला हुआ होना चाहिए, जहाँ आसानी के साथ, धूप जा सके, धूप स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी है। प्रत्येक ऋतु में, प्रायः प्रति दिन बच्चों से लेकर, बूढ़ों तक, सब को सूर्य की साधारण उत्ताप का प्रातःकाल और सायंकाल

सेवन करना चाहिए। जो लोग उससे परहेज करते हैं वे भूल करते हैं और जिनको अपने घरों में धूप नहीं मिलती, वे कभी भी स्वस्थ नहीं रह सकते। शहरों में जिन छोटे-छोटे घरों में और कई-कई मंजिल के मकानों के नीचे के भागों में कभी धूप नहीं जाती, वे सब रहने के योग्य नहीं होते, उनके निवासी रोगों के शिकार बनते हैं। शहरों में बहुत बड़ी आबादी इसी प्रकार की होती है, इसका फल यह है होता है कि इन घरों में रहनेवाले लोग, अपनी निर्धनता के कारण विवश होते हैं, इसलिए कि शहरों में जो मकान, इन त्रुटियों से खाली होते हैं, वे बहुत महँगे होते हैं, इसलिए उनमें वही परिवार रहा करते हैं जो रुपये-पैसे में निर्धन हैं, वे इन मकानों में रहने के पहले अपना स्वास्थ्य पूर्ण परिवार रखते हैं, उनके शरीरों में रक्त होता है, बीमारियाँ उनका पीछा नहीं किये रहतीं, बच्चे नीरोग होते हैं और उनकी स्त्री भी हट्टी-कट्टी होती है किन्तु इन गंदे घरों में पड़कर उन निर्धन परिवारों का जीवन नष्ट होता है, वह कहने की बात नहीं है। जो स्त्री-पुरुष शहरों में रहने के लिए लालायित रहा करते हैं, उनको अपनी इस भविष्य में आनेवाली दुरावस्था का स्मरण रखना चाहिए और अपने स्वास्थ्य को नष्ट करनेवाले इस जीवन से बहुत दूर रहना चाहिए।

स्वास्थ्य के लिए प्रातःकालीन शुद्ध वायु का सेवन करना बहुत आवश्यक होता है। घनी बस्ती के बाहर और यदि सम्भव हो तो निर्जन स्थानों में जहाँ पर वृक्ष खूब हों, किसी बड़ी नदी

का तट हो, बड़े-बड़े पार्क अथवा बगीचे हों तो उनकी वायु बड़ी शुद्ध और सेवन करने के योग्य होती है। वायु-सेवन के लिए प्रातःकाल और सायंकाल का समय होता है।

यदि किसी बड़ी नदी का किनारा निकट हो और वहाँ पर सूर्य निकलने के पूर्व, उसके किनारे-किनारे कुछ अधिक समय तक ठंढी-ठंढी वायु सेवन करने को मिले तो बहुत अच्छा है, है, इस प्रकार की वायु-सेवन से लाभ उसी अवस्था में मालूम होता है जब नियम पूर्वक उसका सेवन करे। नदी या जलाशय का स्थान न होने पर बस्ती से बाहर बड़े-बड़े पार्कों और बगीचों में जाना चाहिए। शहरों में इसके लिए कुछ पार्क तथा बाग होते हैं, ये स्थान शहर से जितनी दूर होते हैं, उतने ही अच्छे होते हैं। इन स्थानों में गरीबों, अमीरों, स्त्री-पुरुषों, बालक-बालिकाओं को—सभी को जाना चाहिए और पैदल जाकर वहाँ स्वाधीनता-पूर्वक, शुद्ध वायु का सेवन करना चाहिए। जो लोग शहरों में रहते हैं उनके लिए ये बातें बहुत ही आवश्यक हैं। इस प्रकार के सुन्दर स्थानों में जाने-आने तथा कहीं कुछ दूरी पर बार-बार चक्कर मारने एवम् दौड़ने में सदा इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि मुख को बन्द रखा जाय और साँस लेने का काम नाक के द्वारा हो। ऐसा करने में जितना ही परिश्रम किया जायगा, उतना ही अच्छा होगा स्त्री-समाज में पर्दा ने स्त्रियों को बहुत बड़ी हानि पहुँचाई है, साठ प्रतिशत गृहस्थों के घरों की [illegible]यों, जवान लड़कियों और बहुओं का जीवन [illegible]

काल-कोठरी की भाँति होता है, उनके घरों को यदि जेल के जोवन की उपमा दी जाय, तो भी ठीक नहीं है, इसलिए कि जेलों में शुद्ध हवा और धूप की कमी नहीं होती। इसलिए मनुष्य होकर, जो स्त्रियाँ घर की काली और अँधेरी कोठरियों के बाहर कभी न हो सकती हों, जो शुद्ध वायु और धूप के लिए कभी कहीं उपयोगी स्थान पर आ-जा सकती हों उनके जीवन को काल-कोठरी के सिवा और क्या कहा जा सकता है ?

वायु-सेवन के समय अपना हृदय जितना शुद्ध और पवित्र रखा जा सके, रखना चाहिए। उस समय जिसप्रकार की बातों का मनन होगा, उसी प्रकार का जीवन, अंतर-तर में प्रवेश करेगा। यह समय स्वास्थ्य की वृद्धि के लिए होता है, इसलिए सुन्दर-सुन्दर पुष्पों, मनोहर वृक्षों से उत्पन्न होनेवाली सुगंधित वायु की ओर मन को बार-बार आकर्षित करना चाहिए। यदि उस समय हम किसी नदी के तट पर चक्कर लगाते हों, तो हमको उस नदी की सुन्दर तेजी के साथ लहराती हुई प्रवाहित होने वाली जल-धारा को ध्यान पूर्वक देखना चाहिए। यदि हम किसी काम से टहलते हों, तो वहाँ पर केलि करने वाले भाँति भाँति के पक्षियों और जंगल में फिरनेवाले जानवरों को देख-देख कर प्रसन्न होना चाहिए। हमको चाहिए कि उस समय प्राकृतिक दृश्य देखकर जितने भी प्रसन्न हो सकें हों और उसके लिए परमात्मा की अनन्त शक्तियों की बार-बार सराहना करें। ऐसे समय पर यदि मित्रों,

परिवार के स्त्री, बच्चों का सहयोग प्राप्त हो, तो और भी अच्छा होता है। बातें करते हुए, हँसते-खेलते प्रकृति से हमको स्वास्थ्य लाभ करना चाहिए। इस प्रकार के रमणीक स्थानों पर अपने परिवार के स्त्री-बच्चों के साथ घूमना, विनोद करना खूब हँसने हँसाने वाली बातें करना, भिन्न-भिन्न प्रकार के खेल खेलना दौड़ना और मुग्ध होना जिसके सौभाग्य में परमात्मा ने लिखा हो, उसको यह सौभाग्य लूटना चाहिए।

स्वास्थ्य के लिए शरीर की शुद्धता पर भी खूब ध्यान देने की आवश्यकता है। शरीर की शुद्धता के लिए ही हमारे देश में स्नान की व्यवस्था है। और स्नान हमारे जीवन में एक धार्मिक कृति मानी गई है। जो लोग नित्य प्रति स्नान नहीं करते, समाज में उनको नीच तथा विधर्मी कहा जाता है। यह स्नान क्या है और उसकी उपयोगिता क्या है, इस बात को यहाँ पर समझ लेना चाहिए।

हमारा देश ग्रीष्म प्रधान है, शीतकाल को छोड़कर यहाँ पर प्रत्येक ऋतु में गर्मी के मारे पसीना बहा करता है, शीतकाल में परिश्रम करने पर पसीना आता है, यह पसीना शरीर के भीतरी मल को बाहर निकालता है, इस प्रकार वह मल पसीने के द्वारा बाहर आकर शरीर के ऊपर जहाँ तहाँ जम जाता है, यह स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारी होता है, इसको दूर करने के लिए हमको नित्य शुद्ध जल में खूब मल-मल कर स्नान करना चाहिए। स्नान का केवल इतना ही अर्थ है। मनुष्य आलस्य

के कारण सहज ही अपने इस कर्त्तव्य-पालन में त्रुटि कर सकता है। इसीलिए हिन्दू-समाज ने स्नान की क्रिया को हमारे धार्मिक कृत्यों के साथ बाँध दिया है। इस दूरदर्शिता से समाज का लाभ तो बहुत अधिक हुआ परन्तु अब उसका रूप उलटा हो रहा है। धार्मिक रूप मिल जाने क कारण स्नान प्रत्येक हिन्दू का नित्य का काम हो गया है जब तक वह स्नान न कर ले तब तक उसका भोजन करना उसके जीवन की बहुत पतित मर्यादा है।

मनुष्य के लिए भोजन करना परमावश्यक है, अतएव भोजन करने के लिए नहाना अनिवार्य है किन्तु इस बन्धन से जो स्नान का लाभ होना चाहिए, वह लाभ आज नहीं होता। लोग, दो लोटा अपने ऊपर जल फेंककर चट धोती बदल लेते हैं, उन दो लोटों का पानी शरीर में कहीं पड़ जाता है कहीं नहीं पड़ता। पानी की बूँदें पड़ जाने से लोग पवित्र हो जाते हैं और पहने हुए धौत वस्त्रों को उतार कर दूसरी धुली हुई धोती पहन लेते हैं और उस धार्मिक कृति से छुट्टी पा जाते हैं।

स्नान का यह अर्थ नहीं होता। उसका तो अभिप्राय यह है कि किसी गहरी नदी में या गम्भीर जलाशय में जिसका जल बराबर प्रवाहित होता हो, उसके शुद्ध जल में प्रविष्ट होकर कुछ देर तक शरीर को खूब मल-मलकर स्नान करना चाहिए, जिससे शरीर पर पसीने के द्वारा आया हुआ मल धुलकर शरीर शुद्ध हो जाय। इस मल के न धुलने से शरीर के चर्म पर रोगटों में

जो बहुत बारीक छिद्र होते हैं, उन छिद्रों का द्वार अवरुद्ध हो जाता है और फिर भीतर का मल पसीने के रूप में बाहर नहीं हो सकता; उसके बाहर न होने से भिन्न भिन्न प्रकार के रोग शरीर में पैदा होते हैं।

स्वास्थ्य के लिए शुद्ध पानी में भली प्रकार स्नान करना जिससे शरीर शुद्ध और परिष्कृत हो सके। इसके लिए यदि कोई बहती हुई नदी नहर अथवा बम्बा न हो तो कुओं के शीतल जल में अथवा शहर के पंपों के पानी से भी अच्छी तरह स्नान किया जा सकता है। यह स्मरण रहे कि बँधे हुए पानी से स्नान करना कभी भी उपयोगी नहीं होता। स्नान के समय अच्छे साबुन का प्रयोग करके अथवा उबटन लगाकर स्नान करना भी शरीर की शुद्धि के लिए उपयोगी है। घर में स्नान करने की अवस्था में बन्द स्थान में स्नान करना अच्छा है इसलिए कि खुली जगह में स्नान करने में शरीर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग को परिष्कृत करने में और साबुन के साथ अच्छी तरह धोने में संकोच होता है, इसका फल यह होता है कि स्नान उचित रूप से नहीं हो पाता। इसलिए घर में स्नान के लिए स्नानागार होना चाहिए जिससे स्वतंत्रता पूर्वक स्नान किया जा सके और सम्पूर्ण शरीर को अच्छी तरह मलकर धोया जा सके। नहाने में जल की कंजूसी कभी न करना चाहिए। स्नान करने में एक बात का और स्मरण रखना चाहिए। जो मनुष्य आरोग्य और स्वस्थ हों, उनको सदा शीतल जल से स्नान करना चाहिए किन्तु

जो बीमार हों अथवा जिनके शरीर निर्बल और अस्वस्थ हों, उनको गर्म जल से स्नान करना चाहिए।

जो बातें ऊपर दिखाई गई हैं, उनके अतिरिक्त स्वास्थ्य के लिए एक बात की और बड़ी आवश्यकता है, वह बात है, व्यायाम। व्यायाम के बिना स्वास्थ्य अपनी चरम सीमा को कभी नहीं पहुँच सकता। जो लोग देहातों में रहते हैं और सदा परिश्रम कार्य करते हैं, उनको भी व्यायाम करना चाहिए और जो शहरों में रहते हैं एवम् परिश्रम के कार्यों से बहुत दूर रहा करते हैं उनके लिए भी व्यायाम की आवश्यकता है। जिसमें व्यायाम नहीं होता, जो अपने जीवन में व्यायाम करने का अभ्यासी नहीं है, वह कभी भी अपने शरीर के पुरुषत्व का सपना न देखे। प्रत्येक शरीर में व्यायाम ही उसके बल-पुरुषार्थ की रक्षा करता है और व्यायाम ही प्रत्येक शरीर को उसके बाल्यकाल से लेकर बुढ़ापे तक सुगठित बनाता है बाल्यकाल से लेकर जीवन के अन्त तक व्यायाम का अभ्यास करना चाहिए। शरीर की रक्षा करने के लिए व्यायाम से बढ़कर उपयोगी और कोई भी बात संसार में नहीं हो सकती।

यह व्यायाम बालक-बालिकाओं में, स्त्री-पुरुषों में समान रूप से होना चाहिए। कुछ लोगों का कहना है कि जो लोग देहातों में रहते हैं और परिश्रम करते हैं उनके लिए व्यायाम करना उतना जरूरी नहीं है, जितना शहर वालों के लिए। यह बात ठीक नहीं है। परिश्रम से शरीर को लाभ पहुँचता है

और व्यायाम से लाभ होते हैं, परिश्रम कुछ अंशों में उनकी पूर्ति करता है, किन्तु व्यायाम की अनेक बातों की पूर्ति परिश्रम से नहीं हो सकती।

व्यायाम की क्रियाओं से शरीर पुष्ट होता है, शरीर की पतली से पतली नसों से लेकर बड़ी से बड़ी हड्डी तक में स्फूर्ति उत्पन्न होती है। शरीर सुगठित और सुडौल बन जाता है। जो अङ्ग जहाँ मोटा होना चाहिए वह मोटा हो जाता है और जो पतला होना चाहिए, वह पतला हो जाता है, यही शरीर का वास्तव में सौन्दर्य है। शरीर की इस कमी की पूर्ति-व्यायाम को छोड़कर और किसी से नहीं हो सकती। इसके सिवा व्यायाम और भी बहुत से काम करता है, वह बुढ़ापे से रक्षा करता है, शरीर की शिथिलता को रोकता है। हाथ, पैर, आँख, नाक और कान तथा मनुष्यों की इन्द्रिय-शक्तियों का बल बहुत दिनों तक सुरक्षित रखता है। व्यायाम से बढ़कर शरीर का दूसरा कोई मित्र नहीं हो सकता। इसलिए प्रत्येक गृहस्थ को अपने परिवार में व्यायाम-शाला की व्यवस्था करना चाहिए और परिवार के सभी लोगों को, व्यायाम करने का अभ्यासी बनाना चाहिए।

विनोद ही जीवन है

जीवन में अनेक प्रकार की दुश्चिन्ता, घबराहट और अनु-शोचना रहा करती है। कभी खाने-पीने की चिन्ता है, कभी वस्त्रों की फिक्र है। कभी हमें स्वयं कोई शारीरिक कष्ट है, कभी बाल-बच्चों की शारीरिक यातना है, आज अपने रोग-शोक में पीड़ित हैं, कल, मित्रों, परिचितों की विपदाओं से उदास हैं और परसों सम्बन्धियों-रिश्तेदारों के दुःखों से दुखी हैं, इस प्रकार जीवन का अधिकांश भाग दुश्चिन्तना और अनुशोचना में चला जाता है, यह दुश्चिन्तना और अनुशोचना ही मृत्यु होती है, फिर भी यदि हम जीवित रहते हैं, उसका कारण है हमारे जीवन का विनोद।

मनुष्य रात-दिन अपने व्यापार-व्यवसाय की बातें सोचता है, प्रत्येक घड़ी वह रुपये की चिन्ता करता है, किन्तु इसके साथ ही वह विनोद पाने और प्रसन्न रहने की इच्छा रखता है और कभी-कभी तो ऐसा होता है कि मनुष्य जब बहुत चिन्तित और दुखी हो जाता है तब वह किसी न किसी प्रकार ऐसे साधन जुटाता है जिससे वह प्रसन्न हो सके, उसके जीवन को कुछ विनोद मिल सके और विनोद मिल सकने पर ही वह अपने शरीर में फिर जीवन को अनुभव करता है। जीवन क्या है, इस बात को जो भली-भाँति नहीं समझते, वे अपने जीवन में, कष्टों,

यंत्रणाओं और भिन्न-भिन्न प्रकार की चिन्ताओं के सिवा और कुछ नहीं देखते। इस प्रकार का जीवन, वास्तव में जीवन नहीं होता। जीवन तो वही है जिसकी किसी भी परिस्थिति में हमें उलझन न मालूम हो। उसके कष्ट हमें कष्ट कर न प्रतीत हों और उसकी चिन्तनाएँ, हमारे सामने चिन्तनाओं के रूप में न मालूम हों, यदि हमारा जीवन इस प्रकार का जीवन हो, तो समझना चाहिए कि जीवन को ठीक-ठीक समझने में हम समर्थ हुए। हम कोई भी व्यापार करते हैं, उसकी सफलता और असफलता का हमारे ऊपर कोई अनुचित प्रभाव न पड़े, किसी से वाद-विवाद होता है, उसमें किसी के असंगत प्रलाप से हमारे जीवन को किसी प्रकार की ग्लानि न मालूम हो, हमारी कोई समालोचना करता है, उसकी कटुता हमारे लिए महीने के उदास और चिन्तित रहने का कारण न हो जाय, तब समझना चाहिए कि हम जीवन बिताना जानते हैं। जीवन के इस रूप को समझने में जो हम असमर्थ होते हैं, उसका यह कारण है कि हमको आत्म-ज्ञान नहीं है।

आत्मा का और जीवन का वैसा ही सम्बन्ध है जैसा सम्बन्ध मनुष्य का उसके भोजन के साथ है। मनुष्य के लिए भोजन आवश्यक है, आत्मा के लिए जीवन की आवश्यकता है। मनुष्य के भोजन में कड़ुवा, मीठा, नमकीन, और खट्टा आदि कई प्रकार के स्वादु होते हैं, भोजन में सभी की समान रूप से आवश्यकता होती है, इसी प्रकार

सफलता, विफलता, सुख, दुःख, कष्ट, यंत्रणा मान- अपमान, प्रशंसा-निन्दा आदि बातें जीवन का रूप हैं, यदि ये सब बातें जीवन में न हों तो वह जीवन ही न कहलाएगा। जो व्यक्ति जीवन के इस वास्तविक अर्थ से परिचित होते हैं, उनको उन बातों से कभी कष्ट नहीं होता, तूफान आया और चला गया, आँधी उठी और गुम होगई। जीवन में एक-एक रूप का सामने आना स्वाभाविक है, वे सामने आते हैं और अपना समय बिताकर चले जाते हैं, उनका मन पर किसी प्रकार का विकार न होना चाहिए।

सुख-दुःख, क्लेश-यंत्रणा, उचित अनुचित, जीवन-मरण आदि अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों के आधार पर सृष्टि की रचना हुई है। ऐसी अवस्था में जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों से और जीवन के विकारों से घबराना और उनसे अपने आपको पृथक रख सकने का प्रयत्न करना, केवल भ्रम है, इसलिए कि वे तो हमारे जीवन के साथ हैं। जहाँ तक जीवन का सम्बन्ध है, वहाँ तक इन कठिनाइयों के साथ हमारा सम्पर्क है। जब मनुष्य को जीवन के इस रूप का वास्तविक ज्ञान हो जाता है तो फिर उसको किसी प्रकार की प्रतिकूल परिस्थितियों में न तो दुःख और ग्लानि ही होती है और न अनुकूल परिस्थितियों में किसी प्रकार का गर्व और अहंकार ही होता है। दोनों ही परिस्थितियों में जो बिना किसी प्रकार के अनुभव के अपना जीवन बिता सकता है, वही वास्तव में सुखी है।

जो किसी कार्य के लिए प्रयत्न करता है और विफल होने पर भी हँसता है, जीवन-क्षेत्र में जो अपने विचार और विश्वास के अनुसार, कार्य करता है और हास और उपहास सुनकर मुसकुरा देता है वह मनुष्य होकर भी देवता है। जो अपने जीवन में केवल रोना, चिढ़ना, कुढ़ना और जलना जानता है, संसार उसके लिए नरक है। और जो जीवन की प्रत्येक बात में हँसना जानता है, उसके लिए संसार वैकुंठ है। हमने देखा है कि धन-धान्य, रुपये-पैसे से परिपूर्ण, घरों, महलों और प्रासादों में रहने वाले स्त्री-पुरुष भी दुखी हैं और गरीब, अकुलीन, तथा टूटे-फूटे, मकानों, फूस और पत्तों के झोपड़ों में रहने वाले स्त्री-पुरुष सुखी और प्रसन्न हैं।

इसका कारण क्या है? जीवन की इस परिस्थिति का अर्थ क्या होता है? कारण इसका एक ही है, वे जलना, कुढ़ना और कलपना जानते हैं, ये हँसना और प्रसन्न रहना जानते हैं। इसके सिवा और कोई कारण नहीं है। जिसको परमात्मा सुख देता है, उसको, प्रसन्न रहने की यह प्रकृति देकर, दीन-हीन घरों में भी और सूखी-रूखी रोटियों में भी सुखी रखता है, और जिसको वह दुख देता है उसको वह जलने कुढ़ने का स्वभाव देकर, महलों और प्रासादों में भी दुखी रखता है।

सुख और दुख, रुपये और पैसे पर महलों और प्रासादों पर निर्भर नहीं है, वह तो केवल अपने स्वभाव और चरित्र

के आधीन है, प्रकृति की इस विभूति में, धनिकों और गरीबों, सबलों और निर्बलों सुन्दरों और बदसूरतों एवं जवानों और वृद्धों का कोई भेद भाव नहीं है, प्रकृति के राज्य में, यदि यह बात न होती तो सुख का सारा ख़ज़ाना, शक्तिशालियों तथा रुपये वालों के ही हाथ में चला जाता और गरीब, निर्धन तथा निर्बल, अपने जीवन में सुख का कभी सपना भी न देख सकते। किन्तु उसको उस रूप में न रख कर, प्रकृति ने तो उसके प्राप्त कर सकने का रास्ता ही पलट दिया है।

इस प्रकार के जीवन का चरित्र चित्रण करते हुए, एक ग्रंथकार ने अपने एक कथानक में लिखा है, उसके संक्षिप्त रूप का, यहाँ पर उदाहरण देना आवश्यक है—

पड़ोस में रहने वाली एक युवती के साथ, मुरली मोहन का प्रेम होगया था। दोनों का साधारण जीवन चलता रहा और समय पाकर, दोनों का प्रेमोपचार बढ़ गया। कुछ समय के पश्चात् यह रहस्य किसी वृद्धा स्त्री को मालूम हुआ। उसने वह बात उस युवती के घर में युवती के सामने कही। यह बात मुरली मोहन को मालूम होगई, वह चिन्ता के मारे उस मोहाल में आने से भी घबराने लगा। कई दिनों तक उसकी अवस्था बड़ी भयानक रही। एक दिन संयोग वश वह युवती उसको अपने मकान के सामने दिखाई पड़ी। मुरली मोहन ने उस बात को उससे पूछा, युवती ने पूरी बात उसको बता दी। युवती के

मुख से उन बातों को सुनकर, मुरली मोहन का अन्तरतर और भी निर्बल हो गया। उसका चेहरा शुष्क हो गया।

उसने अपनी अवस्था में युवती से पूछा—"फिर, अब ?" युवती ने मुरली की ओर देखा और मुसकुराती हुई अपने घर के भीतर चली गई, यह देखकर, मुरली की अवस्था और भी भयानक हो गई, उसकी समझ में यह और भी अस्वाभाविक था। मुरली वहीं पर बैठकर चिन्ता की मूर्ति हो गया। कुछ देर में वह युवती मकान से फिर बाहर निकली और मुरली की यह अवस्था देखकर, खड़ी होगई और सामने देखने लगी। मुरली ने अपना सिर ऊपर उठाया तो युवती को सामने देखा, मुरली ने फिर पूछा, 'तुमने कुछ उत्तर नहीं दिया ?' युवती ने कहा—'क्या ?' मुरली ने पूछा—'क्या होगा' ? युवती ने उपेक्षा के साथ कहा—'ऊँह, होगा।' इसके बाद युवती फिर चली गई।

ग्रन्थकार ने उस युवती के जीवन को बहुत सुखी स्वस्थ और नीरोग दिखाया है, मुरली भावुकता पूर्ण व्यक्ति था और युवती चिन्ता तथा अनुशोचना से परे, मनुष्य-मूर्ति। इस प्रकार के मनुष्य बहुत सुखी और स्वस्थ हुआ करते हैं। युवती के समान स्वभाव सम्पन्न जो मनुष्य संसार में होते हैं, जीवन की कटुता उनको कभी दुखित और चिन्तित नहीं होने देती। युवती के स्वभाव में चरित्र की शुद्धता नहीं है फिर भी उसके उदाहरण का यह अर्थ है कि यदि कोई मनुष्य सुख रहने की कल्पना में सुखी

और स्वास्थ्य के नाम से वंचित हो सकता है, तो उस शुद्धता से सुख और स्वास्थ्य अधिक मूल्यवान है। इसलिए कि सुख और स्वास्थ्य शुद्धता पर ही निर्भर है। यदि कोई शुद्धता सुख और स्वास्थ्य को विरोधिनी है तो शुद्रता के नाम पर वह कल्पना और भ्रम है।

मनुष्य, जीवन को अनेक बातों में पड़ा हुआ जब बहुत थक जाता है और उसकी शक्ति तथा उसका पुरुषार्थ मारा जाता है, तो उसको विनोद और मनोरंजन की आवश्यकता होती है और विनोद तथा मनोरंजन के द्वारा ही वह नवीन जीवन-शक्ति प्राप्त करता है, यदि मनुष्य के जीवन से विनोद और मनोरंजन का अंश पृथक कर दिया जाय, तो मनुष्य में और एक ग्रंथ में कोई अन्तर न रह जायगा, और उस समय का उसका जीवन अँगरेजी लेखक की निम्नलिखित पंक्तियों को सार्थक करेगा—

To such a man there is no enjoyment of life, to such a man human existence presents to no sweetness but a round of passionate and enervating work.

इस प्रकार का आदमी जिसके जीवन में मनोरंजन और विनोद न होगा, वह किसी प्रकार न तो सुखी हो सकता है और न उसके मनुष्य जीवन की कोई उपयोगिता हो सकती है, वह तो काम और इच्छाओं से घिरा हुआ मनुष्य-रूपधारी मात्र होता है।

विनोद से मनुष्य की मानसिक प्रवृत्तियाँ विकसित होती हैं और उसके जीवन के इस आन्तरिक विकास से ही उसका स्वास्थ्य बनता है। जो मनुष्य जितना ही विनोदी और मनोरंजन प्रिय होता है, उतना ही वह स्वस्थ और सुन्दर होता है। विनोद तो स्त्री जीवन का सौन्दर्य है। युवकों और युवतियों को विनोद की बड़ी आवश्यकता होती है। विनोद, चिन्ताओं का नाश करता है, मनहूसियत से शत्रुता रखता है। कहना यह चाहिए कि विनोद ही मनुष्यता है और विनोद ही मनुष्य का जीवन है। विनोद से आयु की वृद्धि होती है और उसका जीवन परिपुष्ट होता है।

विनोद, क्या होता है, इस बात को भली भाँति समझ लेना चाहिए। जो स्त्री-पुरुष सदा प्रसन्न रहा करते हैं, जिनको खूब बातें करनी आती हैं, जिनकी बातों से लोगों का हँसते-हँसते पेट फूलता है, वे विनोदी कहलाते हैं, उनके जीवन के ये गुण उनके जीवन का विनोद कहलाता है। जो इन गुणों से हीन होते हैं उनको लोग मनहूस अथवा मनुष्यता से हीन कहा करते हैं। मनोरंजन प्रियता, मनुष्य जीवन का प्रधान गुण है, इस गुण के द्वारा मनुष्य लोक-प्रिय बनता है, इसी के द्वारा वह सब का प्यारा-दुलारा हो जाता है। मनहूस आदमी के पास कोई बैठना नहीं चाहता, किसी के साथ उसकी दोस्ती नहीं होती।

किसी रोगी के सम्बन्ध में, एक डाक्टर ने अंगरेजी पत्र में एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी, उस रोगी को वर्षों का रोग हो गया

था. उस रोगी को उसे बहुत दिनों तक चिकित्सा करनी पड़ी, किन्तु किसी भी औषधि से संतोषजनक लाभ न होता था, बहुत दिनों तक चिकित्सा करने के कारण, डाक्टर रोगी के परिवार से खूब हिलमिल गया, और हिलमिल जाने पर ही उसे मालूम हुआ कि रोगी मनहूस तबियत का आदमी है। डाक्टर ने इसी आधार पर अपना मन स्थिर किया और औषधि की चिकित्सा बंद करके उसके जीवन में मनोरंजन और विनोद का सामान जुटाने का प्रयत्न किया। रोगी पैसा वाला आदमी था, इसका फल यह हुआ कि उसकी अवस्था सुधरने लगी और थोड़े ही दिनों में वह बिल्कुल अच्छा हो गया।

मिस्टर अब्दुल समद कानपुर के एक डाक्टर हैं उन्होंने एक जमींदार की ग्यारह वर्ष से अधिक एक ही बीमारी की दवा की। जमींदार को दिल की बीमारी थी। ग्यारह वर्षों तक दवा करने में, एक दिन के लिए भी, दवा खाने का क्रम भंग न हुआ इस पर भी रोगी की अवस्था कभी-कभी बड़ी भयानक हो जाया करती थी। अंत में विवश होकर, उन्होंने जमींदार से कह दिया कि आप जिस प्रकार अपनी तबीयत को चौबीस घंटे प्रसन्न रख सकें, रखने की चेष्टा करें। कुछ ही दिनों में, थोड़ी सी कठिनाइयों से जमींदार को विनोद के साधन प्राप्त हो गये। फल यह हुआ कि एक वर्ष के भीतर उन्होंने अपने स्वास्थ्य में आश्चर्य जनक उन्नति की। सारांश यह कि विनोद और मनोरंजन से बढ़ कर मनुष्य को सुखी, स्वस्थ और नीरोग रखने वाला और कोई मार्ग नहीं।

वे स्वतन्त्रता पूर्वक बातें करने, खूब बोलने और हँसने के अधिकार रख सकें। कुछ लोग बच्चों और स्त्रियों को इतने शासन में रखते हैं कि उनका जीवन ही मिट्टी में मिल जाता है।

हमें अपने समाज की संकुचित सीमा के लिये प्रत्येक बात पर आँसू बहाने पड़ते हैं। कुछ प्राचीन अनुचित रूढ़ियों के आधार पर बच्चों, नवयुवकों, नवयुतियों और स्त्रियों पर इतना कटु शासन किया जाता है कि वे कभी जोर से न बोल सकें न जोर से हँस सकें सब से बातें न कर सकें। इस प्रकार शासन कितना विपाक होता है, यह कहना कठिन है। परिवार के मालिकों और उन स्त्री-बच्चों के अभिभावकों को चाहिये कि वे जितनी जल्दी हो सके, अपने यहाँ से इस बुरे शासन को निकाल देने की प्रतिज्ञा करें और घर में छोटे-छोटे बच्चों से लेकर स्त्री-पुरुषों तक सबको इन बातों के लिये मनमानी स्वतंत्रता दें। जिस परिवार में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं होती, वह बच्चों और स्त्रियों के लिये परिवार घर नहीं कारागार होता है।

हमारे जीवन से शिक्षा का लोप हो गया है, इसका फल यह हुआ है कि जीवन के सारे गुणों को हम भूल बैठे हैं और जब वे गुण हमको विदेशियों में दिखाई पड़ते हैं तो हम बिना सोचे समझे पाप और अपराध के नाम पर पुकारने लगते हैं। इसका कारण हमारी अशिक्षा के सिवा और कुछ नहीं है। समाज के शिक्षित लोगों, पढ़े लिखे व्यक्तियों को चाहिए कि वे अपने जीवन से इन दुरवस्थाओं को शीघ्र दूर करें।

भोजन, उसके गुण और उपयोग

जिनके द्वारा शरीर को जीवन-शक्ति मिलती है, उनमें भोजन का विशेष महत्व है । भोजन ही हमारे शरीर में शक्ति पैदा करता है, भोजन ही के द्वारा हमारे ज्ञान-तन्तुओं का निर्णय होता है । भोजन को ही पाकर हम जीवित रह सकते हैं, हमारे जीवन में भोजन का विशेष स्थान है ।

सृष्टि के प्रत्येक जीव के लिए भोजन की आवश्यकता है परन्तु सभी जीवों के भोजन में समानता नहीं है, जितने जीव हैं, उतने ही प्रकार के उनके भोजन हैं । सृष्टि के सभी जीवों में मनुष्य प्रकृति की सब से प्यारी जीव-रचना है । इसीलिए मनुष्य के भोजन की व्यवस्था में भी अनेक प्रकार की भिन्नता और उपयोगिता है । भोजन का यद्यपि प्राकृत अभिप्राय केवल इतना ही है कि मनुष्य उसके द्वारा जीवित रह सके, वही उसका आहार है किन्तु उन्नतिशील मानव समाज उस अभिप्राय से बहुत आगे बढ़ गया है । मनुष्य जितना ही सुसभ्य और शिक्षित होता है उसकी भोजन सम्बन्धी आवश्कताएँ भी उसी रूप में बढ़ती जाती है ।

मनुष्य के खाद्य पदार्थों में बहुत-सी वस्तुएँ हैं, उनके भिन्न-भिन्न गुण और स्वाद हैं । सभी वस्तुओं की समाज को आवश्य

कता है, शक्ति के अनुसार और आवश्यकता के नाम पर भी, किसी को कोई चीज प्रिय है किसी को कोई, उन वस्तुओं के गुणों में भी बड़ी विभिन्नता होती है, प्रत्येक मनुष्य अपने गुण-प्रकृति के अनुसार उनसे लाभ उठाता है और जीवन-शक्ति प्राप्त करता है।

मनुष्य जब से सभ्यता के हाथों बिका है तब से उसकी प्राकृतिक शक्ति क्षीण हो गई है। वह पहले की भाँति अब प्रत्येक खाद्य पदार्थ को खाकर पचा नहीं सकता। उसकी पाचन-शक्ति बहुत निर्बल हो गई है। देहातों में रहनेवालों की अपेक्षा शहर के निवासियों की अवस्था और भी क्षीण और दुर्बल होती है उनको तो खाने के सम्बन्ध में बहुत सोच-विचार कर उपयोगी से उपयोगी वस्तुओं को भी खाना पड़ता है। घी और दूध से बने हुए पदार्थ भी उनके लिए अपाचक होते हैं, जब समाज की यह अवस्था है तो फिर अन्य पदार्थों के सम्बन्ध में क्या कहा जाय।

वर्तमान समाज की जैसी अवस्था हो गई है, उसी के अनुसार भोजन के सम्बन्ध में यहाँ पर कुछ बातों पर प्रकाश डाला जायगा। भोजन के सम्बन्ध में प्रत्येक स्त्री और पुरुष को क्या क्या जानकारी होना चाहिए? और किस प्रकार की जानकारी न होने से वे प्रायः रोगों के शिकार होते रहते हैं, इन्हीं बातों के संक्षेप में यहाँ पर विचार किया जायगा।

जिसप्रकार मनुष्य के लिए शुद्ध वायु और शुद्ध जल के

आवश्यकता होती है उसी प्रकार और उससे भी अधिक आवश्यकता शुद्ध भोजन की होती है। भोजन की जरा भी गड़बड़ी मनुष्य को तुरन्त रोगी बनाती है, इसीलिए इसके सम्बन्ध में प्रत्येक गृहस्थ को वहुत सावधान रहना चाहिए। और उसके साथ ही इस वात का स्मरण रखना चाहिए कि जिस प्रकार का भोजन किया जायगा उसी प्रकार की उससे शक्ति और वुद्धि का जन्म होगा। खाने वाले पदार्थों में वात, पित्त और कफ, तीन प्रकार के गुण पाये जाते हैं और इन्हीं तीन गुणों के विभिन्न अंशों के द्वारा मनुष्य की प्रकृति का निर्माण हुआ है। प्रत्येक मनुष्य में वात, पित्त और कफ ये तीनों गुण समान नहीं होते। किसी में कोई गुण अधिक होता है और किसी में कोई। किसी की प्रकृति में पित्त अधिक है तो शेप दोनों गुण कम हैं, और कभी-कभी किसी-किसी में दो-दो एक साथ अधिक होते हैं। इसलिये प्रकृति के अनुसार किसी को कोई चीज लाभ करती है और किसी को कोई। किसी को कोई चीज हानि करती है और किसी को कोई।

प्रकृति के इन तीन गुणों में जव कोई भी एक अधिक प्रवल हो जाता है, तभी मनुष्य वीमार हो जाता है। इनका सामान्य अवस्था में रहना ही मनुष्य की नीरोग अवस्था है। और एक का भी असामान हो जाना रोग को उत्पन्न करना है। ऐसी अवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को इस वात का ज्ञान होना चाहिए कि कौन पदार्थ क्या गुण रखता है।

यह जानता हुआ उसको अपनी प्रकृति के अनुसार अपने भोजन की व्यवस्था करनी चाहिए। खाद्य पदार्थों में कुछ तो मांस वर्द्धक होते हैं और कुछ अग्नि वर्द्धक। हमें ऐसे पदार्थों का भोजन करना चाहिए जिसमें दोनों गुणों का समावेश हो। मांस, मछली, अंडा, गेहूँ, दूध, दही और सभी प्रकार की दालों में मांस तथा रक्त बढ़ाने की शक्ति अधिक होती है। इसी प्रकार घी, तेल, चरबी, चावल, चीनी आरारोट आदि पदार्थों में अग्नि बढ़ाने की शक्ति अधिक होती है। फलों में दोनों ही प्रकार के गुण पाये जाते हैं। बादाम, पिश्ता, अखरोट, गिरी, छुहारा, काजू, किशमिश, चिलगोजा, मूँगफली आदि सूखी मेवों में शक्ति बढ़ाने और पुष्टि करने की दोनों शक्तियाँ होती हैं। हमारे देश में लोग इनका उपयोग शीतकाल में लड्डू जैसी पुष्टिकारक चीजें बनवाने में करते हैं, अंगरेज लोग ये मेवा अकेली भी खूब खाते हैं।

शरीर का पालन करने और बल-वीर्य बढ़ाने में दूध से अधिक लाभदायक चीज़ और कोई नहीं होती। यह रक्तवर्द्धक और अग्निवर्द्धक दोनों है। इन दोनों गुणों को देने वाले और भी कितने ही पदार्थ होते हैं परन्तु दूध सब से उत्तम है। संसार में सर्वत्र इसका महत्व माना जाता है। बच्चों से लेकर बूढ़ों तक और रोगियों से लेकर नीरोगों तक—सभी इसका प्रयोग कर सकते हैं। दूध तो हमारे देश का अमूल्य पदार्थ रहा है और प्राचीन काल में हमारे देश में दूध घी बहुत अधिक परिमाण में हुआ

करता था । किन्तु आज उसी दूध और घी के लिए देश तरस रहा है और हमारे यहाँ इसकी इतनी कमी हो गई है कि हम उसके गुणों को भी भूल गए हैं किन्तु जब किसी अँगरेज़ का दूध की उपयोगिता पर कोई लेख पढ़ते हैं तो उसके प्रति हमारी आँखें खुलती हैं।

हमारा शरीर बिल्कुल रेलगाड़ी के इंजन की तरह है और जिस प्रकार उसके लिए कोयला पानी की आवश्यकता होती है उसी प्रकार हमारे शरीर के लिए भी जल और खाने के पदार्थ आवश्यक हैं । इस छोटी सी समता के बाद दोनों में बहुत अंतर है। रेलगाड़ी मनुष्य की रचना है, और हमारे शरीर को रचना कौशल है। हमारे भीतर जब खाद्य पदार्थों की समाप्ति हो जाती है तो हमको स्वयं उसकी आवश्यकता मालूम होती है। हमको खाने की इच्छा होती है पानी की आवश्यकता पर प्यास लगती है और यदि उस आवश्यकता की पूर्ति नहीं की जाती तो हमारी आवश्यकता बढ़ती जाती है और यहाँ तक कि हम व्याकुल होने लगते हैं इसके बाद भी जब भोजन हमको नहीं मिलता तो हमारी शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं । जो लोग परिश्रम करते हैं वे जानते हैं कि जब वे भूखे होते हैं तो फिर उनसे काम नहीं होता। यदि थोड़ा-बहुत काम किया भी जाता है तो बेबसी की अवस्था में। खाना मिल जाने के पश्चात् हमारे शरीर में फिर जीवन शक्ति आ जाती है और काम करने के लिये फिर हमारे शरीर में बल, उत्साह और स्फूर्ति पैदा हो जाती है। खाना न

मिलने के पहले जो मुर्दनी पैदा हो गई थी उसका नाश हो जाता है, यही जीवन-शक्ति है।

धनिकों और शहर में रहने वालों के लिए पाचन की बड़ी शिकायत रहा करती है। वे महीने में एकदिन भी अपनी आवश्यकता पर भोजन नहीं करते। उन्हें भूख नहीं लगती, किन्तु समय पर भोजन बन जाने पर बेबस उनको भोजन करना पड़ता है। बिना भूख भोजन करने से, भोजन में बनी हुई चीज़ें अच्छी नहीं लगतीं। अच्छी से अच्छी साग-सब्जी उनके लिए अरुचिकर प्रतीत होती है। सुन्दर-से-सुन्दर बने हुए पदार्थ उनके लिए असुन्दर हो जाते हैं। इसका कारण यह होता है कि उनको भूख नहीं लगती और बिना भूख खाना, खाना पड़ता है। भूख न लगने का कारण यह होता है कि उनको खाना पचाने वाला परिश्रम नहीं करना पड़ता। उनको जो काम करना पड़ता है उससे उनके खाये हुए भोजन के पचने में किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलती। स्वास्थ्य के लिए यह अवस्था बड़ी हानिकर होती है। शहरों में रहने वाले लोगों की कुछ थोड़ी-बहुत संख्या छोड़कर सभी की यह अवस्था होती है। इनके शरीर की यह अपाचन क्रिया उनको सदा रोगी बनाने का कारण होती है।

साधारण गृहस्थों की स्त्रियाँ शहरों में रहकर जीवन भर के लिए रोगिणी बन जाती हैं। पहले जब वे शहरों में जाती हैं और जाने का सौभाग्य प्राप्त करती हैं तो वे अपने सौभाग्य का

भूरि-भूरि सराहना करती हैं। परन्तु कुछ ही दिनों के बाद उनके शरीरों की जो अवस्था होती है उसके सम्बन्ध में इस इस छोटे से प्रबन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। शहरों की जो स्त्रियाँ अपने घरों से नित्य बाहर निकलने घूमने और इधर उधर जा सकती हैं और इस प्रकार वे थोड़ा-बहुत परिश्रम कर लेती हैं उनके लिए तो संतोष की बात है, शेष समाज का स्त्री-जीवन किस प्रकार के गंदे जीवन में पड़कर अपने शरीर को रोग-पूर्ण बना डालता है, यह बताना कठिन है। शहरों में रहने वाली पन्चानवे प्रतिशत स्त्रियाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के रोगों में अपना जीवन बिताती हैं। उनके शरीरसे स्वास्थ्य उसी प्रकार सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है जिस प्रकार पाप परायण स्त्रियों से सतीत्व।

समाज के इन छोटे-मोटे स्त्री-पुरुषों से लेकर धनिकों, पैसे वालों और कुलीनों के परिवारों तक का जीवन इसी प्रकार सड़ सड़कर मिट्टी में मिल जाता है। इसका कारण एक मात्र परिश्रम की कमी है। ये लोग जो काम करते हैं, उससे उनके भोजन के पाचन में कोई लाभ नहीं होता। समाज का यह जीवन केवल डाक्टरों की दवाओं और वैद्यों की पुड़ियों के बल पर जिंदा रहता है। यहाँ पर उनकी अवस्थाओं का अधिक विवेचन न किया जायगा, कहने का अभिप्राय यह है कि इस प्रकार के लोग भोजन की उपयोगिता को अनुभव नहीं कर सकते। अच्छा से अच्छा बना हुआ भोजन भी उनके लिए अप्रीतिकर होता है। भोजन के इस

प्रकरण में इतना लिखना अत्यंत आवश्यक है कि भोजन से उचित लाभ उठाने के लिये प्रत्येक स्त्री और पुरुष को परिश्रम के कामों के करने की नित्य प्रति व्यवस्था करनी चाहिये। जिन कामों के करने से शरीर का प्रत्येक अंग हिलता डोलता है और पेट का भाग दबा न रह कर स्वतंत्र रहता है। उस प्रकार के काम करता हुआ जब मनुष्य थक जाता है और पसीने पसीने हो जाता है तो उसका यह काम उसको पाचन क्रिया में सहायक होता है और भूख न लगने की उसको कभी शिकायत नहीं करनी पड़ती।

जिस प्रकार मनुष्य अच्छे से अच्छे भोजन खाने के लिये शौकीन होता है, उसी प्रकार उसको भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजन बनाने में भी चतुर होना चाहिए। कुछ लोग इस के विरुद्ध हैं और वे समझते हैं कि भोजन बनाना तो स्त्रियों का काम है। यह बात कहाँ तक ठीक है, इसका उत्तर तो कदाचित् वही दे सकेंगे। पर हमारी समझ में यह धारणा बिल्कुल उलटी है। जीवन की कोई भी विवेचना इस बात की पुष्टि नहीं कर सकती। इस प्रकार का कोई सिद्धान्त नहीं हो सकता। कोई नहीं सीखना चाहता न सीखे, कोई नहीं जानना चाहता न जाने, पर किसी पुरुष को भोजन बनाने की क्रिया जानना आवश्यक नहीं है, यह कहना भूल है। विज्ञान का तो यह एक साधारण नियम है कि जो जिस बात का ज्ञान नहीं रखता, वह उसका भोग कैसे कर सकता है। किसी भी चीज का भोग उसकी जानकारी पर निर्भर है।

गार्हस्थ्य शास्त्र के नियमों के अनुसार प्रत्येक स्त्री और पुरुष को पाकशास्त्र का पण्डित होना चाहिये और उसकी एक एक बात की जानकारी के लिये जिस प्रकार बालिकाओं को शिक्षा दी जानी चाहिये, बालकों को भी उसी तरह उन बातों को जानना चाहिये। वर्तमान युग ने स्त्री और पुरुष के जीवन को अलग अलग नहीं रहने दिया। इसने दोनों को, एक दूसरे के साथ सहानुभूति और प्रेम को शृङ्खला में बाँध दिया है। पुरुषों का जीवन, स्त्री जीवन की मर्यादा से अपरचित नहीं रह गया और स्त्रियाँ, पुरुषों के अव्यवसाय तथा गुणों के अयोग्य नहीं समझी जातीं। स्त्री और पुरुष का इतना निकटवर्ती सम्बन्ध है कि उनका, एक दूसरे के साथ इस सहानुभूति के बिना काम नहीं चल सकता। मान लिया जाय कि एक परिवार में स्त्री पुरुष ही दोनों हैं, यदि स्त्री बीमार है, तो पुरुष क्या लंघन करेगा? और यदि उस स्त्री का पति परदेश गया है और उसने पत्र भेजा है तो क्या उस पत्र को पढ़ाने के लिये वह स्त्री, किसी पुरुष की शरण में जायगी? कितनी भ्रमपूर्ण ये बातें हैं।

पुरुष के प्रत्येक गुणों से स्त्री को जानकार होना, स्त्री के लिए सुख और सौभाग्य की बात है और स्त्री की गार्हस्थ सम्बन्धी सभी बातों का जानना, पुरुष के लिए आवश्यक कर्त्तव्य है। पुरुष को उचित और आवश्यक कर्त्तव्य में हाथ बटाना और उसकी सहायता करना स्त्री के जीवन की परम साधुता पवित्रता और उपयोगिता है, इसी प्रकार स्त्री के कार्यों में, उसको सहायता करना और उसको प्रोत्साहित करना पुरुष की उदारता

है। वह घर देवताओं का घर है जहाँ स्त्री और पुरुष का जीवन, एक दूसरे की इस प्रकार की सहानुभूति के साथ व्यतीत होता है। और उसी परिवार में गार्हस्थ्य शास्त्र की उपयोगिता का महत्व होता है।

शहरों में मिठाइयाँ खाने की लोगों में बहुत आदत पड़ गई है। और लोगों की इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही न जाने कितनी और कितनी तरह की दूकानें होती हैं। इन मिठाई की दूकानों में जो दूकानें बहुत छोटी होती हैं, उनके यहाँ की बनी हुई चीजें तो अस्वास्थ्यकर होती ही हैं, बड़ी बड़ी और प्रसिद्ध से प्रसिद्ध दूकानों के सम्बन्ध में भी एक प्रसिद्ध अंगरेज़ी डाक्टर ने लिखा था—

शहरों में रहने वाले लोगों के अस्वस्थ और प्रायः बीमार रहने के जितने भी कारण हैं, उनमें से एक बड़ा कारण मिठाई की ये दूकानें भी हैं। इन दूकानों का सामान बनाने में जितनी लापरवाही से काम लिया जाता है, वह तो हानिकारक है ही, सबसे बड़ी बात यह है कि एक दिन का बनाया हुआ मिठाई का सामान न जाने कब तक रखा रहता है और दूकानदार उसी को बेचा करते हैं, ये सड़ी-गली चीजें तो लोगों को बीमार करने में तीर की तरह काम करती हैं। जो चतुर खरीदार होते हैं और इन बातों से बचना चाहते हैं, वे बासी बना हुआ सामान कभी नहीं खरीदते। लोगों को चाहिए कि अपनी ज़रूरतों को इन दूकानों पर बहुत निर्भर करके न रखें और यथासम्भव घर की बनी हुई

आवश्यकताओं के समय भी बहुत देख-सुन कर इन दूकानों का बना हुआ सामान खरीदें। किसी की खातिर में ये मिठाइयाँ तथा सामान खिलाकर उसको बीमार करने का अपेक्षा, उसकी खातिर न करना ही अच्छा है।

हमारे समाज में खान-पान के छुआछूत के विचार ने समाज को यह अवस्था बना डाली है कि अपने पास किसी भले आदमी के आ जाने पर सिवा इसके कि बाजार की बनी मिठाई मँगाकर खिलाई जायँ, और कोई साधन ही नहीं है, घर में ताजी चीज या भोजन बनाकर खिलाने का सम्बन्ध तो बहुत थोड़े लोगों में परिमित है। ऐसी अवस्था में, इस हानि को हटाने के लिए समाज बहुत विवश हो गया है। किन्तु इस समय कुछ ऐसे संस्कार दिखाई देते हैं जिससे यह आशा करनी चाहिए कि निकट भविष्य में ही हमारे समाज की इस दुरवस्था में परिवर्तन हो जायगा। यह संतोप की बात है कि शहरों के रहने वालों में खाने-पीने के विचार बहुत अंशों में उड़ गए हैं, फिर भी समाज का एक बड़ा अंश इसमें अभी जकड़ा हुआ है। देहातों के निवासी और शहरों के रहने वाले बूढ़े लोग या और स्त्रियाँ अभी तक अपनी प्राचीन रूढ़ियाँ छोड़ने के लिए तैयार नहीं है और उनके तैयार न होने का कारण उनके जीवन की अनभिज्ञता है। जैसे जीवन में उन्होंने पालन-पोषण पाया है, वह जीवन का बहुत दूषित रूप था।

इसके सम्बन्ध में अधिक न लिखकर यहाँ इतना लिख

देना आवश्यक जान पड़ता है कि खान-पान के विषय में इन अनुचित रूढ़ियों के कारण ही हिन्दू-समाज, न केवल अपनी सहयोगिनी दूसरी जातियों का शत्रु है, वरन एक हिन्दू ही दूसरे हिन्दू का शत्रु हो रहा है। यहाँ पर जो लोग शत्रु शब्द से घबरायें, उनको घबराने की बात नहीं है। जीवन में जो व्यवहार, बर्त्ताव परस्पर प्रेम और सहानुभूति उत्पन्न करते हैं, एक दूसरे के सुख-दुख का साथी बनाते हैं, उन्हीं का हमारे जीवन में अभाव है। खाने-पीने के सम्बन्ध में हमारे समाज की जो वर्तमान अवस्था है, वह प्राचीन नहीं है। खाने-पीने के सम्बन्ध में हमारे यहाँ केवल एक ही सिद्धान्त माना जाता था, और वह सिद्धान्त था पवित्रता का। हमें भोजन सदा शुद्ध और पवित्र ग्रहण करना चाहिए। जो नीच लोग सदा अशुद्ध रहा करते थे उनके द्वारा बना हुआ अशुद्ध भोजन खाना विचारणीय था। और जहाँ तक सम्भव हो, वह त्याज्य भी था।

परंतु आज तो उसका रूप ही कुछ और है। जो हमारी अपेक्षा बहुत शुद्ध और पवित्र हैं, जिसके विचार अत्यंत धार्मिक हैं, जिसके रहन-सहन में अत्यन्त सफाई और स्वच्छता है, जिसकी प्रकृति उदार और प्रेम पूर्ण है जो शिक्षित और सम्पत्तिशाली है और बात-बात में हम से बहुत ऊँचा है, उसका बना हुआ अथवा उसके परिवार के किसी व्यक्ति का बनाया हुआ भोजन करना दूर रहा, हम उसके छू जाने पर भी उस भोजन-सामग्री को फिर ग्रहण नहीं कर सकते।

संसार हमारी इस दशा को देखकर, किस प्रकार उपहास करता है, इस पर हमें कुछ तो लज्जा आनी चाहिए। खाने पीने की इन बातों पर अधिक विवेचना करना व्यर्थ है, हमको समझ लेना चाहिए, संसार में हमसे अधिक अपवित्र दूसरा कोई नहीं है जिसके साथ हम किसी प्रकार का विचार कर सकें। सभी हमसे पवित्र हैं, सभी शुद्ध हैं। जिनके भोजनों में शुद्धता और उत्तमता की पराकाष्ठा है और जो साधारणतया सब को नसीब नहीं हो सकते, उनके प्रति हम अस्पर्श्य का स्वप्न देखें, तो कितनी बड़ी यह उपहास की बात होगी। यदि हम इन उपहासों से बचना चाहते हैं तो हमें तुरंत से तुरंत अपने समाज से ये समस्त आडम्बर दूर कर देने चाहिए।

ऊपर यह बात बताई जा चुकी है कि परिश्रम के बिना भोजन में रुचि न उत्पन्न होती है और न भूख लगती है। ऐसी अवस्था में जो भोजन किया जाता है, उसका यथोचित लाभ नहीं होता। इसलिए परिश्रम करना तो बहुत जरूरी है। इस के अतिरिक्त भोजन की रुचि के लिए एक बात का और भी स्मरण रखना चाहिए कि सदा एक ही चीज खाने से भी रुचि मारी जाती है। इसलिए भोजन की वस्तुएँ बदल-बदल कर खानी चाहिए। भोजन की चीजें सैकड़ों तरह की और भिन्न-भिन्न स्वादु की बन सकती हैं और प्रत्येक गृहस्थ के घर में गृहणियाँ इन बातों को जानती हैं, इसके अतिरिक्त पाक शास्त्र के सम्बन्ध में अँगरेजी में तो बहुत कुछ लिखा जा चुका है यह लिखा हुआ हमारे लिए

उपयोगी नहीं हो सकता । हिन्दी-भाषा में भी कितनी ही पुस्तकें निकल चुकी हैं, इन पुस्तकों से भोजन की व्यवस्था के सम्बन्ध में बहुत सी बातों की जानकारी हो सकती है। इस प्रकार की पुस्तकों से लाभ उठाना गृहस्थ के लिए आवश्यक है। जब तक पाकशास्त्र का विस्तृत ज्ञान हमको नहीं है, तब तक हम उसके यथोचित सुखोपभोग से वंचित ही हैं।

प्रत्येक गृहस्थ को पाकशास्त्र की बातों को जानना चाहिए और अपनी गृहिणी को उसके सम्बन्ध में सदा प्रोत्साहित करना चाहिए। उनको इस बात का सदा स्मरण रखना चाहिए कि खाने की चीजें वे ही होती हैं जिनको गरीब और अमीर सभी खाते हैं, केवल उनका शक्ति पूर्ण बनाना हमारा काम है। उनमें किसी प्रकार के विशेष खर्च की आवश्यकता नहीं होती। हम अपने परिश्रम से नित्य नए-नए प्रकार के भोजन खा सकते हैं। जब तक भोजन में रुचि और माधुर्य नहीं होता तब तक वह हमारे शरीर के लिए न लाभ पहुँचा सकता है और न वह उपयोगी हो सकता है। इसलिए भोजन शक्ति-वर्द्धक, बल-वर्द्धक और बुद्धि वर्द्धक तभी हो सकता है जब वह उत्साह पूर्वक विधि से बनाया गया हो और उसके खाने में रुचि तथा माधुर्य हो।

हमारे जीवन की शक्तियाँ और उनका विकास

प्रकृति ने सृष्टि-रचना के साथ-साथ, सृष्टि के जीवों की आवश्यकताएँ पूरी करके उसने किसी को किसी के आधीन नहीं रखा है। प्रत्येक अपने परिश्रम और अध्यवसाय से अपनी आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है।

मानव समाज प्रकृति के इस जीवन से बहुत आगे बढ़ गया है। वर्तमान शिक्षा और सभ्यता ने मानव जाति को प्रकृति के जीवन में नहीं रहने दिया। उसकी आवश्यकताएँ विशाल हो गई हैं—उसकी शक्तियों ने दूसरा ही रूप धारण किया है। मनुष्य-जीवन के अर्वाचीन और प्राचीन रूप में बड़ा अन्तर हो गया है। पहले मनुष्य जितना शक्तिशाली होता था, आजकल उतना उसमें बल-पुरुषार्थ नहीं होता। पहले उसके जीवन में जो सत्य विश्वास और परस्पर सहानुभूति थी, उसका नाम उड़ गया है। इस कमी के स्थान पर मनुष्य का सामाजिक बल और पुरुषार्थ बढ़ गया है सत्य विश्वास और सहानुभूति के स्थान पर उसमें स्वार्थ परायणता और छलछिद्रों ने अपना घर बनाया है।

इस परिवर्त्तन से मानव समाज की हानि हुई है अथवा

उसका कुछ लाभ हुआ है, यह निर्णय करना कठिन है किन्तु यह बात अवश्य है कि समाज के थोड़े से मनुष्यों को छोड़कर शेष बहुत बड़ी संख्या अपनी आवश्यकताओं के संकट में दबी हुई है।

एक गृहस्थ किसी देहात में रहता है, उसका लड़का पढ़ लिख कर शहर में नौकरी करता है और बीस रुपये महीने में पैदा करता है। इन बीस रुपयों से वह शहर में अपनी स्त्री, अपने बाल-बच्चों की सेवा करता है और बचे-बचाए रुपये दो रुपये बूढ़े माँ-बाप को देहात भेजता है। देहात में जिस परिवार के पोषण करने के लिए पन्द्रह रुपये चाहिये शहर में उसी के लिए चालीस, पचास रुपये की आवश्यकता है। देहात में लकड़ी के लिए पैसों की जरूरत नहीं है, मकान के किराये की जरूरत नहीं है, रोज साबुन के लिए पैसों की आवश्यकता नहीं है। दही दूध और मट्ठे के लिए पैसों की चाह नहीं है, इस प्रकार कपड़ों को छोड़कर वहाँ किसी वस्तु के लिए रुपये-पैसे की जरूरत नहीं है; लेकिन शहरों में तो मिट्टी के लिए भी पैसे की जरूरत है, दतून के लिए भी पैसे की जरूरत है। उन बीस रुपयों में बाबूजी का गुजर नहीं होता। वे कलकत्ते चले जाते हैं, यहाँ पर वे साठ रुपये महीने की नौकरी करते हैं, देहात में माँ-बाप जब साठ रुपये का नाम सुनते हैं तो फूले नहीं समाते। बाबू साहब साठ रुपयों के लिए कलकत्ते की किसी गंदी गली में एक अँधेरे मकान में रहते हैं, रोज सिर में दर्द रहता है, महीने में चार-पाँच बार जुकाम होता है। चौथे-पाँचवे दिन बुखार आता है। जिस दिन

दफ्तर नहीं जाते, दो रुपये वेतन के कट जाते हैं, बड़ी कठिनाई है। डाक्टर साहब की चिकित्सा करते हैं, रोज एक शीशी दवा की आती है, खाँसी पीछा नहीं छोड़ती। महीने में पन्द्रह रुपये का डाक्टर साहब का बिल आ जाता है। मकान भाड़ा भी सोलह रुपये से कम नहीं देना पड़ता। जो दूध देहात में लोग बिना पैसे के खाते हैं, वह तो शहरों में, प्रस्ताव के रूप में माना जाता है किन्तु आधा पानी मिला हुआ आठ आने सेर के हिसाब से, आध सेर बाबूजी नित्य दूध लाते हैं, समय असमय ट्राम, रेल और टाँगा भाड़ा खर्च करना ही पड़ता है, मित्र लोग जब नहीं मानते तो सिनेमा देखने जाना पड़ता ही है। इस तरह खर्च करते-करते वेतन पूरा उड़ जाता है, मकान-भाड़ा बाकी ही बना रहता है। घर से पत्र पर पत्र आते हैं, बूढ़े माँ-बाप सोचा करते हैं कि अब तो साठ रुपयें महीने में पाते हैं। और बाबू जी की दशा यह है कि वे दस पन्द्रह रुपये इधर उधर से लेकर महीने में अपना काम चलाते हैं। घर वाले जब नहीं मानते तो उन्होंने दूध बन्द कर दिया, चार रुपये के घी के स्थान पर दो ही रुपये का घी खाने लगे। लगातार की बीमारियों ने और जोर पकड़ा महीने में बीस रुपये का बिल आने लगा।

बहुत दिनों के बाद जब बाबूजी अपने देहात गये। सभी लोग उनको देखने आए। कम्पनी के धुले हुए उनके बदन पर कपड़े थे, एक हाथ की कलाई पर रिस्टवाच थी, आँखों में सुनहला चमकता हुआ चश्मा था। लोगों ने देखा, उनकी कमर बहुत

कमजोर हो गई थीं। चेहरे पर आँखों के नीचे केवल हड्डियाँ दिखाई देती थीं, हाथ में एक बहुत पतली और खूबसूरत छड़ी थी। कपड़ा उतारने पर साधारण से साधारण बच्चा भी उनके पेट और पीठ की एक एक हड्डी को अलग अलग गिन सकता था। बाप ने यह सब देखकर पूछा, भैय्या, यह सब क्या हुआ। टोला-पड़ोस का कोई आदमी खड़ा था, उसने कहा पहले के भैय्या अब बाबूजी हैं। बाप को देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। वह अब भी अपने कंधे पर एक लम्बा-सा लट्ठ लेकर ऐंठता हुआ चला करता था और जब कभी अपने मोटे तथा स्वस्थ शरीर का स्मरण हो आता तो कंधे पर रखी हुई लाठी को और भी टेढ़ी कर देता था।

यह शहरों का जीवन है। इसी जीवन में समाज की नवीन सभ्यता का प्राण है। समाज ने अपनी इस सभ्यता के प्रकाश में मनुष्य जीवन की वैयक्तिक शक्ति का नाश किया है।

एक बाबू साहब को दफ्तर में काम करना पड़ता था, किसी समय उनके बवासीर को बीमारी हुई। इधर-उधर की दवा की, कोई लाभ न हुआ। कहीं जाते हुए एक परिचित वैद्य जो थे, उनसे बातें होने लगीं। वैद्यजी से आपने कहा कि बवासीर की अच्छी दवा कोई हो तो दीजिए। वैद्यजी ने उनको कुछ गोलियाँ खाने को दीं और कई जड़ों का काढ़ा बनाकर पीने को बताया। आप उसे लेकर घर आए। घर में देवी जी ने पूछा, 'ये सब क्या है ?' आपने उपेक्षा के साथ कहा—'ये भी दवा है, इन दवाओं से क्या

होता है।' सायंकाल आप डाक्टर साहब की दूकान पर गए, डाक्टर साहब ने एक शीशी में रंग बिरंगी एक दवा दी, और एक रुपया बारह आने उसके दाम बताये, बाबू साहब ने सोचा इससे कुछ लाभ होगा।

समाज के जीवन से सादगी का नाश हो गया है। हर घड़ी पैसा, बात की बात में पैसा, पैसा हो जीवन हो गया है, पैसा ही सर्वस्व हो गया है। समाज का यह जीवन बहुत विपाक्त हो गया है, और दिन-पर-दिन विपाक्त होता जा रहा है।

एक आदमी अपनी स्त्री की चिकित्सा करते-करते थक गया, वह शहर में रहता था और डाक्टरों की दवा करता था। उसकी स्त्री की अवस्था दिन पर दिन खराब होती गई। कई वर्ष उसने औषधि की। विवश होकर उसने दवा बन्द कर दी। उन्हीं दिनों में उसने एक पुस्तक में स्वास्थ्य के सम्बन्ध में कुछ नियम पढ़े। वह अपनी स्त्री को लेकर अपने गाँव चला गया। उसका गाँव यमुना नदी के किनारे पर था। वह अपनी स्त्री को लेकर यमुना के किनारे एक दिन गया और अपनी पत्नी से कहा कि हमको एक योगी ने तुम्हारे स्वास्थ्य का कुछ उपाय बताया है और उस उपाय के साथ-साथ उसने एक बड़ी अपूर्व दवा दी है। स्त्री योगी के नाम पर प्रसन्न हो गई, योगी का उपचार प्रारम्भ हो गया। नित्य प्रातःकाल वह अपनी स्त्री को लेकर यमुना के किनारे-किनारे चक्कर मारता और जब वह थक जाता तो घर पर लौटकर गाय का ताजा दूध लेकर और उसमें तीन माशे एक श्वेतरंग की दवा

मिला देता। पन्द्रह दिनों के बाद, उसकी दशा बदल गई। उसकी भूख बढ़ गई। खाया हुआ भोजन पचने लगा। उसके पति ने योगी के उपचार में वृद्धि कर दी। अभी तक वह एक घंटा घूमती, उसका उसने डेढ़ घंटा किया और अन्त में ढाई घंटे कर दिया, पहले वह उसको धीरे-धीरे चलाता था, उसके बाद, कुछ स्वास्थ्य पाने पर, तेज चलाने लगा। और अन्त में कुछ शक्ति आजाने पर उसको कुछ दूर तक दौड़ाने भी लगा। पहले उसको आधा सेर दूध देना आरम्भ किया था और पीछे उसने उसको नित्य ताजा दो सेर तक दूध पिलाया। तीन महीने के बाद वह इतनी स्वस्थ हो गई कि उस स्त्री को ही अपने ऊपर आश्चर्य होने लगा।

एक दिन उस स्त्री ने अपने पति से कहा कि यदि वह योगी न मिल जाता तो अब तक मैं मर गई होती।' पुरुष ने कहा—'इसमें क्या सन्देह।' पति ने अन्त में हँसकर बताया कि मुझे कोई योगी नहीं मिला था, पहले मैंने डाक्टरों की दवा की अस्पतालों में समय खोया था, उसके बाद मैंने अपनी दवा की। उस आदमी ने स्वास्थ्य के सम्बन्ध में जो एक पुस्तक पढ़ी थी, वही पुस्तक उसने अपनी स्त्री को दे दी, स्त्री ने सम्पूर्ण पुस्तक पढ़ डाली परन्तु उसमें किसी औपधि का नाम न लिखा था, उसके पूछने पर पति ने बताया कि दवा कोई नहीं थी, दवा के नाम पर मैं थोड़ी सी शकर उसमें छोड़ देता था। विश्वास होने पर सफलता शीघ्र मिलती है, तुम्हारा विश्वास दवा के ऊपर बहुत था

स्त्री को इन बातों से अपूर्व आनन्द हुआ। उसके पूछने पर कि तुमने यही शहर में क्यों नहीं किया था, क्यों दवाओं में इतना रुपया खोया ? पति ने कहा कि पहले हम स्वयं डाक्टरों की शीशियों पर ही विश्वास करते थे। इन बातों के लिए कोई कहता भी तो विश्वास न करता और न किसी के कहने पर यह सब करता ही। परन्तु जब और कोई उपाय न रहा तो विवश होकर इस पर विश्वास करना पड़ा और सोचा कि लाओ इसको भी करके देख लेवें इसीलिए शहर से लेकर यहाँ देहात चले आए। यहाँ दूध घर में होता है, घर में माता के होने के कारण, हम तुमसे अलग भी रह सके, शहर में तो संयम से रहना ही कठिन था। स्त्री को अपना खोया हुआ स्वास्थ्य फिर मिलने से इतनी प्रसन्नता हुई, जितनी इसके जीवन में पहले कभी न हुई थी।

डाक्टरी औषधियों की उपयोगिता वहीं तक थी। जहाँ तक शराब की हो सकती है। शराब, कुछ विशेष अवस्थाओं में बहुत परिमित परिमाण में प्रयोग करने में उपयोगी है, उसके सिवा वह पूर्ण रूप से हानिकारी है। यही अवस्था डाक्टरी औषधियों की है। समाज में इन औषधियों का प्रयोग इतना अधिक बढ़ गया है कि उनसे बजाय लाभ के, हानि ही हानि होने लगी है। शहरों में रहने वाले लोगों के जीवन की यह अवस्था है कि जिस प्रकार उनको अपने घर की साग-सब्जी लेने के लिए नित्य सब्जी की दूकान पर जाना पड़ता है, उसी प्रकार डाक्टर साहब के दवा-खाने शीशी लेकर नित्य सुबह उपस्थित होना अनिवार्य आवश्यक

है। आज मियाँ साहब बीमार हैं; कल बीबी साहब को जुकाम था और परसों किसी बच्चे को खाँसी आती थी। इस प्रकार महीने में एक दिन भी, सौगंद खाने के लिए ऐसा न निकलेगा जिस दिन डाक्टर साहब की डेढ़ घंटे, दो घंटे सेवा न करनी पड़े।

जीवन की इस दुरवस्था को अपने हाथों हमने आमन्त्रित किया है और उसका फल भी हमीं को भोगना पड़ता है। बात की बात में दवाओं के प्रयोग की आदतों ने, हमारे शरीरों की किस प्रकार हत्या की है, यह बताना कठिन है। शहरों में फ्री दवाखानों, सरकारी अस्पतालों और धर्मार्थ औषधालयों ने समाज की इस दुरवस्था को और भी आगे बढ़ा दिया है। फ्री दवाखानों और धर्मार्थ औषधालयों में जो रुपये खर्च किये जाते हैं, उससे सर्व साधारण के साथ बहुत बड़ी उदारता करने का अनुमान किया जाता है किन्तु उसका परिणाम, समाज के लिए बहुत भयावह हो रहा है। इन औषधालयों से अत्यन्त गरीबों और असहायों का उपकार कम होता है किन्तु अनावश्यक औषधियों के प्रयोग से, उनके द्वारा, समाज के समर्थ लोगों का जीवन अत्यन्त दुरवस्था पूर्ण होता जाता है।

समाज की इस भयानक अवस्था को बहुत शीघ्र दूर करने की आवश्यकता है। शहरों का जीवन जन-समाज के स्वास्थ्य के लिए विष हो गया है। प्रत्येक मनुष्य को सुख, स्वतन्त्रता पूर्वक रहने के लिए, शुद्ध वायु की बड़ी आवश्यकता है,

शहरों के रहनेवाले साधारण समाज के लोग बहुत गंदी वायु में अपना जीवन सत्यानाश करते हैं। और आश्चर्य की बात तो यह है कि उनको अपनी इस दुःख पूर्ण अवस्था के कारण का कोई विचार नहीं है। मनुष्य-जीवन बहुत पतित हो गया है, और आगे इससे भी पतित जीवन की आशंका है।

हमारे जीवन में अनेक शक्तियाँ हैं, शारीरिक-शक्ति, विचार-शक्ति, आत्म-शक्ति, स्मरण-शक्ति आदि भिन्न-भिन्न शक्तियों के द्वारा हमारा जीवन बना हुआ है। ये सभी शक्तियाँ, स्वाभाविक जीवन चाहती हैं, प्राकृतिक जीवन में ही इनका विकास होता है और उसी में, इनकी शक्ति की वृद्धि होती है। जीवन की इन समस्त शक्तियों के विकास और वृद्धि के लिए हमें किसी प्रकार के वैभव की आवश्यकता नही है। वे स्वतन्त्र जीवन चाहती हैं। शुद्ध भोजन तथा जल चाहती हैं और विशुद्ध वायु का सेवन चाहती हैं।

ये सभी वस्तुएँ, प्रकृति ने सृष्टि के लिए अनन्त परिमाण में प्रदान की हैं। प्रत्येक मनुष्य अपनी इच्छा और अपने परिश्रम के द्वारा सभी वस्तुओं को प्राप्त कर सकता है। जीवन की इन शक्तियों की वृद्धि के लिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष, समान-रूप से स्वतन्त्र है। इनका विकास और इनकी वृद्धि धन ऐश्वर्य, और वैभव से सम्पर्क नहीं रखती। इन शक्तियों का विकास और इनकी वृद्धि ही जीवन का सुख है, बड़प्पन है और बड़ी से बड़ी मर्यादा है।

शारीरिक शक्ति, परिश्रम और व्यायाम के द्वारा विकसित होती है। बिना व्यायाम के वह शुष्क हो जाती है। और दिन पर दिन अनुपयोगी होकर बेकार-सी हो जाती है। पुरुष समाज में, स्त्रियाँ कदाचित् पुरुषार्थ प्रदर्शन के लिये नहीं समझी जातीं, किन्तु पुरुष, जो अपने पुरुषार्थ के लिए प्रसिद्ध होता है, वह परिश्रम और व्यायाम करने से, पुरुषार्थ हीन होकर स्त्रियों की श्रेणी में आजाता है। शिक्षित बालक और पुरुषों का जीवन, यहाँ पर विचारणीय है। उनको अपने जीवन में परिश्रम नहीं करना पड़ता, व्यायाम तो कदाचित् उनके सामर्थ्य से बाहर हो जाता है, इसका फल यह होता है कि उनके जीवन की सुकुमारता निर्बलता और कोमलता, स्त्रियों के जीवन को भी मात करती है। विपरीत इसके जो पुरुष परिश्रमी होते हैं और व्यायाम के अभ्यासी होते हैं, उनका शरीर हृष्ट-पुष्ट और सबल होता है। उनमें शारीरिक शक्ति होती है।

जो अवस्था शारीरिक शक्ति की है, वही अवस्था अन्य शक्तियों की भी है। ये शक्तियाँ एक प्रकार की मेशीनरी हैं, जिस प्रकार प्रत्येक मेशीनरी अर्थात् यंत्र के लिए यह आवश्यक है कि उसका उपयोग किया जाय और उपयोग के साथ-साथ उसके लिए तेल आदि देना आवश्यक है, उसी प्रकार शारीरिक यंत्रों के लिए भी उपयोग की आवश्यकता है। यह उपयोग उसका परिश्रम और व्यायाम है। जो लोग अपनी विचार-शक्ति से सदा काम लेते हैं और नित्य नई-नई बातों के सोचने का

अभ्यास किया करते हैं, उनकी विचार-शक्ति बढ़ जाती है। जिस प्रकार व्यायाम करने से मनुष्य पहलवान बनता है, उसी प्रकार नित्य विचार-व्यायाम करने से, मनुष्य अत्यंत विचारवान और बुद्धिमान हो जाता है। अपने विचार-शक्ति को बढ़ाने के लिए नित्य विचार-व्यायाम करने की आवश्यकता है।

आत्म-शक्ति के लिये अध्यात्मज्ञान की आवश्यकता है। उसके द्वारा आत्म-बोध होता है। इस अवस्था में मनुष्य जब कोई अनुचित कार्य करने के लिए प्रस्तुत होता है, तो उसकी आत्मा, तुरन्त उसको सचेत करती है। मनुष्य को आत्मा के इस संकेत पर तुरन्त सावधान हो जाना चाहिए। मनुष्य जब-जब किसी अकार्य के लिए तैयार होता है, तब-तब आत्मा उसको सावधान करती है, जो लोग आत्मा के इस संकेत पर सावधान हो जाते हैं और उस असत्कार्य से अपना हाथ खींच लेते हैं अथवा जिस अपवित्र कार्य को करना चाहता है उसके कार्य के करने का विचार छोड़ देता है। ऐसा करने से उसकी आत्म-शक्ति की वृद्धि होती है। यही आत्म-शक्ति के बढ़ाने का व्यायाम है। जो लोग सत् और असत् के विवेचन में आत्मा के संकेत का उल्लङ्घन करते हैं, उनकी आत्म-शक्ति निर्बल हो जाती है और लगातार इस प्रकार भूलें करने से उनको आत्म-शक्ति का बिल्कुल नाश हो जाता है, इसका फल यह होता है कि उसके बाद उनको सत् और असत् कार्य का बोध नहीं होता।

स्मरण-शक्ति का भी यही अवस्था होती है। जिनको अपनी

स्मरण-शक्ति बढ़ानी होती है, उनको चाहिए कि वे नित्य प्रति अपनी बातों को स्मरण करने का अभ्यास करें। इस अभ्यास को जितना ही वे बढ़ावेंगे, उतना ही उनकी स्मरण शक्ति की वृद्धि होगी।

आँखों की शक्ति जिनकी निर्बल हो जाती है, वे या तो उसकी कुछ चिकित्सा ही नहीं करते और जो करते हैं वे किसी डाक्टर की शीशी पीना आरंभ करते हैं अथवा चश्मा लगाने लगते हैं। आँखों की दृष्टि दुर्बल हो जाने पर अथवा आँखों में कोई साधारण अव्यवस्था उत्पन्न हो जाने पर चश्मा लगाने, डाक्टरों की शीशियाँ पीने की अपेक्षा, आँखों का व्यायाम है। जिस प्रकार शारीरिक व्यायाम होता है, उसी प्रकार आँखों का भी व्यायाम होता है। आँखों के व्यायाम के लिए प्रातःकाल अथवा सायंकाल का ठंढा समय निश्चित कर लेना चाहिए, और शान्त भाव से बैठकर बिना सिर और आँख को घुमाए, केवल आँखों की पुतलियों को जोर के साथ, नीचे-ऊपर, दाएँ-बाएँ दौड़ाना चाहिए। इसके बाद, नीचे-ऊपर और दाहिने-बाएँ के प्रत्येक कोणों की ओर पुतलियों को दौड़ाना चाहिए। ऐसा करने में आँखों में बड़ा जोर पड़ेगा। इसलिए आँखों की पुतलियों को इस व्यायाम के लिए, धीरे-धीरे अभ्यास करना चाहिए। इस व्यायाम से नेत्रों की शक्ति बढ़ती है जो लोग इसका सदा अभ्यास करते रहते हैं, उनके नेत्रों में निर्बलता नहीं आती।

जीवन के इस प्राकृतिक रूप को समझकर, उसको उपयोगी तथा शक्तिशाली बनाने के लिए सदा प्रयत्न करना चाहिए।

सुन्दर बनने का उपाय

रूप, सौन्दर्य शरीर में अलभ्य गुण है। प्रकृति की विभूतियों में यह अद्वितीय है, अपूर्व है। जीवन में सभी ऐश्वर्य इसके आगे पराजित होते हैं। यह जीवन में किसी-किसी को प्राप्त होता है, और वह भी बड़े सौभाग्य से, पूर्व सत्कर्मों के प्रताप से।

रूप-सौन्दर्य मोटी-मोटी तीन बातों पर निर्भर है। (१) पैतृक (२) शारीरिक स्वास्थ्य (३) सुन्दर बनाने के विभिन्न साधन और प्रयत्न। सुन्दरता के यही तीन रूप हैं। यही उसके तीन सोपान हैं। सुन्दर माँ-बाप की संतान भी सुन्दर होती है। माता-पिता के स्वास्थ्य शारीरिक सुगठन रंग-रूप के आधार पर ही संतान के शरीर का निर्माण होता है, यही उसकी पहली सीढ़ी है। दूसरी सीढ़ी उसके स्वास्थ्य की है, बाल्यकाल से लेकर बुढ़ापे तक स्वास्थ्य का सौन्दर्य पर प्रभाव पड़ता है। इसको दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य ही सौन्दर्य होता है। यह सौन्दर्य का दूसरा सोपान है। सौन्दर्य की जो तीसरी अवस्था है वह पहले की दोनों अवस्थाओं से सम्पर्क रखती है। जो स्वयं सुन्दर हैं वे सौन्दर्य बढ़ाने वाले साधनों और प्रयत्नों के द्वारा और भी अधिक सुन्दर सलोने बन सकते हैं और जिनके शरीर में सौन्दर्य की कमी है अथवा जो सुन्दर नहीं हैं, वे भी

सुन्दरता प्राप्त कर सकते हैं। सुन्दरता को इन्हीं तीनों बातों का यहाँ पर बिस्तार के साथ वर्णन किया जायगा।

माता-पिता के शारीरिक सौन्दर्य सुगठन से संतान का सौन्दर्य और सुगठन तैय्यार होता है, यह बात ऊपर बताई जा चुकी है। इसमें दो बातों का सम्मिश्रण है। बालिका पर माता के रंग-रूप और सौन्दर्य का प्रभाव होता है और बालक पर पिता का। परन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि माता-पिता के रंग-रूप से भिन्न संतान का रङ्ग-रूप होता है, यद्यपि यह बात बहुत कम पायी जाती है, किन्तु किसी न किसी परिमाण में उसके पाये जाने का कारण है। स्त्री जब ऋतुमती होती है और उसके अन्त में जब वह स्नान करती है और अपने कपड़े पहनती हैं, उस समय अकस्मात स्त्री जिसका दर्शन करती है, उसी के रंग-रूप का गर्भ में आने वाली संतान पर प्रभाव पड़ेगा। इसलिए सती स्त्री को ऋतुकाल से स्नान करने पर शुद्ध होते ही अपने पति का दर्शन करना चाहिए।

दूसरा कारण और भी होता है। प्रायः देखा जाता है कि प्रायः माता-पिता से भिन्न संतान के जीवन में गुण और व्यवहार पाये जाते हैं, इसका कारण शास्त्रों में बताया गया है और उस कारण को पाश्चात्य संसार के वैज्ञानिकों ने भी एक स्वर में स्वीकार किया है कि गर्भ स्थित बालक और बालिका के गुण और कर्मों पर माता के मानसिक भावों का असर पड़ता है। गर्भावस्था में स्त्री के मनोभावों पर

जिस स्त्री या पति के व्यवहारों, गुणों का प्रभाव होगा और जिन बातों के प्रति उसकी मनोवृत्ति चञ्चल रहेगी, उन्हीं का प्रभाव गर्भ स्थित बालक-बालिका के जीवन पर पड़ेगा। इसीलिए सती साध्वी स्त्री के लिए बताया गया है कि वह अपनी गर्भावस्था में अपने पति के सद्गुणों और सद्व्यवहारों का अथवा किसी के भी आदर्श गुणों और कर्मों को अपने मनोभावों पर अंकित रखने की चेष्टा करे। स्त्री को इन बातों की कितनी बड़ी जानकारी की आवश्यकता है, यह बात उन मनुष्य देवताओं को कैसे बतायी जाय, जो सर्वस्व ईश्वर के ऊपर—अपने कपाल के भरोसे पर छोड़ देते हैं। सुन्दरता की यह पहली अवस्था है जिसमें संतान का कुछ हाथ नहीं होता।

सौन्दर्य की दूसरी सीढ़ी, शरीर का स्वास्थ्य है, यह बताया जा चुका है और यह भी बताया जा चुका है कि स्वास्थ्य को ही दूसरे शब्दों में सौन्दर्य कहा जाता है। इसका कारण यह है कि पैतृक सौन्दर्य होते हुए भी स्वास्थ्य नष्ट हो जाने पर सुन्दरता नहीं मानी जाती। सुन्दरता के लिए स्वास्थ्य की अनिवार्य आवश्यकता है। जो सौन्दर्य चाहते हैं जिनको सुन्दरता से प्रेम है, उनको सब कुछ छोड़कर अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना चाहिए। स्वास्थ्य के सम्बन्ध में इस पुस्तक में अनेक स्थलों में कुछ बातें बताई गई हैं। यहाँ पर उन्हीं का और उनसे भिन्न बातों की भी कुछ बातों की विवेचना की जायगी। स्वास्थ्य के लिए तीन बातों का स्मरण रखना आवश्यक है, उचित आहार

संसार के सभी देशों में पाये जाते हैं किन्तु वर्तमान समय में योरप के प्रदेशों ने तो उसके लिए जो प्रयत्न किये हैं, उनका पूर्ण रूप से यहाँ पर परिचय देना भी कठिन है। सौन्दर्य-कलापर संसार में सदा से प्रयत्न होते आए हैं और आज भी उसके लिए प्रयत्न किये जाते हैं, किन्तु कहीं पर कम और कहीं पर अधिक। योरप की गोरी जातियों की स्त्रियाँ तो उसके नाम पर पगली ही हो गई हैं। उनके उस पागलपन का हमारे देश में भी प्रभाव पड़ा है इस प्रभाव के पड़ने का कारण भी है योरप का एक प्रसिद्ध राष्ट्र ग्रेट ब्रिटेन हमारे देश का सम्राट है, ऐसी अवस्था में हमारे यहाँ के सुशिक्षित स्त्री-पुरुषों को वहाँ की बातों का अनुकरण करना ही चाहिए।

जहाँ उन्होंने और-और बातों का अनुकरण किया है, वहाँ इन बातों का भी अनुकरण करने में भी वे बहुत पीछे नहीं रह सके। हम उनके इस अनुकरण के विरोधी नहीं हैं यदि उन्होंने अनुकरण करने में भी समझदारी से काम लिया है अथवा लें। क्योंकि जब कोई समझदार किसी का अनुकरण करता है, तो उसमें भी सौन्दर्य होता है किन्तु जब कोई मूर्ख किसी की नकल करता है तो हँसी के सिवा उसमें और कुछ नहीं होता। हमारे कहने का अभिप्राय यह है कि योरप की गोरी स्त्री जाति में जो सौन्दर्य-पिपासा, आवश्यकता से अधिक बढ़ गई है, वह न केवल अप्राकृतिक साधनों और प्रयत्नों के लिए बल्कि वे प्राकृतिक स्वास्थ्य प्राप्त करने और

उसकी रक्षा के लिए भी प्रयत्न शील हैं। उनकी उस प्रयत्नशीलता में आदर्श कहाँ तक है, यह विचारणीय और विवादग्रस्त बात है। बात यह है कि जब तक प्राकृतिक स्वास्थ्य और सौन्दर्य नहीं प्राप्त किया जाता, तब तक अप्राकृतिक साधनों का कोई अधिक फल नहीं होता, प्राकृतिक सौन्दर्य वही है जो सौन्दर्य की दूसरी अवस्था में इस प्रकरण में बताया गया है। उस प्रकार स्वास्थ्य प्राप्त करने पर यदि अन्य साधनों के द्वारा भी सुन्दरता बढ़ाने का उद्योग किया जाता है तो वह बहुत ही उपयोगी होता है। सौन्दर्य बढ़ाने वाले साधनों का उल्लेख करने के पूर्व योरप की स्त्रियों के इसके सम्बन्ध में कुछ बातों का लिख देना आवश्यक होगा।

योरप के जीवन में सौन्दर्य का बहुत मान है, सुन्दरता की प्राप्ति और उसके संरक्षण के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के वहाँ साधनों का आविष्कार किया जाता है और उनके सम्बन्ध में नित्य नये लेख प्रकाशित होते रहते हैं। डाक्टर लोग सुन्दरता की वृद्धि करने वाली औषधियों के द्वारा बहुत धन पैदा करते हैं।

वहाँ की स्त्रियों में सुन्दर बनने की इच्छा और अभिलाषा इतनी बढ़ गई है कि अविवाहिता नवयुवतियाँ, विवाह करने से अपना मुँह छिपाती हैं। उनका यह विश्वास दिन पर दिन वृद्धि करता जाता है कि विवाह हो जाने और संतानोत्पत्ति के पश्चात यौवन नष्ट हो जाता है और उसके फल स्वरूप उस जीवन में सौन्दर्य का रहना असम्भव हो जाता है। उनके जीवन

में यह अवस्था उनकी सौन्दर्य-पिपासा का बहुत बड़ा प्रमाण देती है। उनके प्रयत्नों की इतिश्री नहीं हो जाती। वे रात दिन सौन्दर्य के सम्बन्ध में अध्ययन करती हैं और फिर यह निर्णय करती हैं कि और कौन से साधनों से सौन्दर्य की वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार वे जान सकी हैं कि स्वस्थ्य और प्रसन्न रहना ही सौन्दर्य है। इसके द्वारा ही अमित सौन्दर्य की वृद्धि की जा सकती है। इसलिए वे व्यायाम करती हैं और अपने शरीर के सुगठन के लिए नित्य नये प्रकार के व्यायाम का आविष्कार करती हैं। वे गेंद, फुटबाल खेलती हैं। घोड़ों की सवारी करती हैं। खुले मैदानों में खूब दौड़ती हैं। शरीर को निकम्मा बनाने वाली सवारियों को छोड़कर वे उन सवारियों का प्रयोग करती हैं जिनसे शरीर को खूब परिश्रम पड़ता है। वे पैदल चलने का शक्ति-भर अभ्यास करती हैं, और शक्ति तथा सामर्थ्य में पुरुषों का सामना करती हैं। वे, जीवन के सभी कार्यों में अपने आपको उपयोगी समझती हैं और अपने प्रतिद्वन्दी पुरुषों से वे किसी बात में कम नहीं रहना चाहतीं।

वे अपने जीवन में अनन्त प्रकार के विनोद करतीं हैं और प्रसन्न रहने की चेष्टा करती हैं। वे सार्वजनिक सभाओं में भाग लेती हैं और क्लबों में जाकर अपने आमोद-प्रमोद का जीवन लाभ करती हैं। वे जीवन में स्वास्थ्य और सौन्दर्य, सुख और सौभाग्य को अपने हाथों का खिलौना बनाना चाहती हैं। और अपने इस जीवन को नष्ट करने वाली बातों से वे घृणा करती

हैं। उनके जीवन की इस चेष्टा का ही यह फल है कि वहाँ के गार्हस्थ जीवन में वहाँ पर क्रान्ति हो रही है। दाम्पत्य-जीवन में इतना उलट-पलट हो गया है जिसके सम्बन्ध में आज किसी प्रकार का अनुमान लगाना व्यर्थ है। उनकी चेष्टा का वहीं पर अन्त है जहाँ, पर उनको अपने जीवन के स्वास्थ्य-सौन्दर्य पर, सुख-सौभाग्य पर संतोष है।

वहाँ के इस जीवन पर किसी प्रकार की टीका-टिप्पणी नहीं की जा सकती। वहाँ के समाज ने अपने जीवन में इतनी बड़ी उन्नति की है, जिसको देखकर हमको अपनी कायरता पर लज्जा आनी चाहिए। वहाँ के स्त्री और पुरुष अपने जीवन के ऊँचे-से-ऊँचे नियमों पर क्रान्ति कर सकते हैं और अपने सजीव होने का प्रमाण देते हैं किन्तु हम अपनी जाति गत अनुचित-से-अनुचित रूढ़ियों को तोड़ने के लिए भी निर्लज्ज दाँत निकाल कर हँसने लगते हैं और कह देते हैं—क्या करें, भाई स्त्रियाँ नहीं मानतीं, अब उनको कौन मनावे! वे तो बड़ी हठी होती हैं! जिनके जीवन में इतनी बड़ी कायरता है—जो निर्लज्जता की इतनी व्यङ्ग-मूर्ति है, वह उन वीरों की समालोचना करने का कोई अधिकार नहीं रखता।

अपने समाज की सौन्दर्य-साधना के लिए किसी भी प्रयत्न को अनुचित नहीं कहा जा सकता, जो हमारे प्राकृतिक जीवन को छिन्न-भिन्न न करता हो। विवाह और दाम्पत्य जीवन के प्रति, योरप के स्त्री-पुरुषों की क्रान्ति अनुचित नहीं है। यह

जीवन जितना पवित्र होना चाहिए, नहीं रह गया। जो इसका विरोध करते हैं वे समाज की वर्तमान दुरवस्था को भूल जाते हैं। यहाँ पर इन बातों को मीमांसा करना उद्देश्य नहीं है। वह जो कुछ हो रहा है, वह स्वास्थ्य-सौन्दर्य के लिए! सुख-सौभाग्य के लिए! इस प्रकरण का उद्देश्य तो सौन्दर्य के सम्बन्ध में ही कुछ समुचित साधनों पर प्रकाश डालना है। ऊपर कुछ बातें ऐसी आगई हैं जो सम्भव है किसी समालोचक को अप्रासंगिक जचें और वह इसके लिए लेखक की अयोग्यता को अपने दोनों दुबले-पतले लम्बे-लम्बे हाथों को फैला-फैलाकर कोसना आरम्भ कर दे।

पैतृक और प्राकृतिक सौन्दर्य के दो रूप ऊपर बताए जा चुके हैं। उनके बाद कुछ साधन भी सौन्दर्य को वृद्धि में, काम में लाए जाते हैं। वे साधन बहुत हैं और भिन्न-भिन्न देशों में, भिन्न-भिन्न प्रकार से बर्ते जाते हैं। उन सब का यहाँ उल्लेख करना न तो उपयोगी है और न सम्भव है। सम्भव इसलिए नहीं है कि इस छोटे-से प्रकरण में उसकी बहुत थोड़ी और आवश्यक बातें ही बताई जा सकती हैं और उपयोगी वे सब इसलिए नहीं है कि सर्व साधारण को उनका जुटाना और उपयोग करना, कठिन नहीं, असम्भव है। इसलिए यहाँ पर अंत में कुछ बहुत आवश्यक साधनों और उपायों को लिखने का उद्योग किया जा रहा है जिससे सौन्दर्य प्रेमी स्त्री और पुरुष बिना किसी विशेष कठिनाई और कष्ट साध्य व्यवस्था के लाभ उठा सकें।

मुख की शोभा बढ़ाने के लिए

दूध में चना भिगोकर खाने से और अंगूरों का सेवन करने से चेहरे का सौन्दर्य बढ़ता है। नवीन रक्त उत्पन्न होता है उससे वर्ण लाल हो जाता है। इसके सिवा, मन प्रसन्न रखना, व्यायाम करना, गाने सुनना व गाना, हँसी ठट्ठा करना, विनोद प्रेमी होना आदि बातों से भी मुख तथा चेहरे की शोभा बढ़ती है। मुख पर विशेष तौर पर लालिमा लाने के लिए तैय्यार कैलेमन एक औंस, हैजलीन एक औंस, गुलाब का अर्क दो औंस लेकर और सब को एक मे मिलाकर मुख पर मलना चाहिए। इससे मुख का वर्ण लाल हो जाता है।

केसर, मजीठ, कुन्दर और मस्तगी, सबको बराबर लेकर प्याज के रस में मिला लेना चाहिए। उसके बाद, उसमें से थोड़ा-लेकर, गरम पानी के साथ मुख पर मलना चाहिए और तीन घंटे के पश्चात् धो डालना चाहिए।

सफेद मोम एक भाग, सोहागा एक भाग, चाक शुद्ध दो भाग जौ का चूर्ण दो भाग सब को मिलाकर और उबटन बनाकर मलना चाहिए।

गिलीसिरीन आठ भाग, निशास्ता एक भाग, सोडा कार-बोनेट दो भाग, ओटमील वाटर (जौ चूर्ण का पानी) तीन भाग, सबको मिलाकर मुख पर मलकर, थोड़ी देर में पानी से धो डालना चाहिए।

जिनके मुख पर बहुत रूखापन रहा करता है और उस रूखाई को दूर करने के लिए उनको कई बार तेल लगाना पड़ता है। उनको चाहिए कि मुख की रूखाई दूर करने के लिए मुख पर बादामगिरी अथवा मलाई मला करें, और चिकनई पैदा करनेवाले पदार्थों का अधिक सेवन करें तो उनको अधिक लाभ होगा। जैतून का तेल मलना बहुत हितकर है।

मुख की सुन्दरता बढ़ाने के लिए कोल्डक्रीम Coldcrem का व्यवहार बहुत बढ़ गया है। यह प्रत्येक शहर में बड़े-बड़े बिसातखानों की दूकानों पर मिला करती है। अँगरेजों में तो इसकी प्रथा बहुत ही है। मुख का रूखापन मिटाने, उसकी आभा-प्रभा को बढ़ाने और मुख पर की त्वचा को कोमल रखने में कोल्डक्रीम बहुत प्रसिद्ध है। जो लोग इसका उपयोग न कर सकें उनको वैसलीन का प्रयोग करना चाहिए। इसमें और कोल्डक्रीम के गुणों में बहुत अधिक अन्तर नहीं है। कोल्डक्रीम के बजाय मलाई भी मली जा सकती है, मुख की शोभा बढ़ाने और त्वचा को कोमल रखने में मलाई भी बड़ी उपयोगी चीज है। मुख की रंगत बढ़ाने के लिए ठंढी मलाई मलना बहुत लाभदायक है, गर्मी के दिनों में तो अवश्य ही उसका उपयोग करना चाहिए।

यदि धूप के कारण चेहरे का रंग काला पड़ गया हो तो साबुन न मलकर यदि मलाई मली जाय और कुछ देर तक बराबर मली जाय तो कालेपन को दूर कर देती है। बहुत से

फलों और तरकारियों के खाने से तो लाभ होता ही है, उनमें से कितने ही ऐसी हैं जिनके मुख पर मलने में मुख का सौन्दर्य बढ़ता है। खीरे को काटकर और आधसेर पानी में पकाकर पानी को छान लेना चाहिए और उसमें एक चम्मच सोहागा अथवा बुरेसिक ऐसिड को मिलाकर मालिश करने से मुख की सुन्दरता बढ़ती है और मुख की झाँई दूर हो जाती है। प्रातःकाल मुख को धोकर नीबू के रस में गिलीसिरीन मिलाकर मलने से भी सुन्दरता बढ़ती है और त्वचा मुलायम रहती है।

पका हुआ टोमैटो (विलायती बैंगन) मुख की रंगत को साफ़ करने में बहुत प्रसिद्ध है। सूर्य की धूप से जब चेहरा खराब हो जाता है तो पहले कुछ जल से मुख को धोना चाहिए और फिर टोमैटो मलना चाहिए। इसके कुछ देर बाद, गर्म पानी से धो डालना चाहिये। इससे तुरन्त पहली की सी रंगत आ जायगी।

साँवरी रंगत को गोरा बनाने के लिए पकी सतावरी को काटकर मुख पर मलना बड़ा लाभदायक होता है। कुछ लोग उसका रस निकालकर, उसमें थोड़ा-सा पानी और जौ का चूर्ण मिलाकर प्रयोग करते हैं। इस प्रकार उपयोग करना और भी अच्छा है। संतरा और उसका छिलका मुख पर मलने से भी लाभ होता है, इसका प्रयोग पंजाब में बहुत किया जाता है।

पके हुए अंगूरों को मुख पर मलकर और थोड़ी देर में गर्म

पानी से धो डालने से भी बड़ा लाभ होता है। अंगूर लगातार खाने से शरीर और मुख लाल हो जाता है।

शरीर पर तेल की मालिश करना, अथवा जौ का चूर्ण, वाकला-चूर्ण, गोधूम-चूर्ण और निशास्ता को मिलाकर और उबटन की भाँति मुख पर मलने से मुख की झाँई को मिटाने और रंगत को साफ़ करने में बड़ा लाभ करता है।

जौ का चूर्ण त्वचा को साफ़ करने और उसको कोमल बनाने में बड़ा उपयोगी है। बेसन भी इसके लिए बहुत फ़ायदेमन्द है। उबले हुए पानी में बेसन डालकर उसको ठंडा होने देना चाहिए और उसके बाद मुख पर मलने से बड़ा फ़ायदे का होता है। ताज़े गर्म दूध से मुख तथा शरीर के किसी अंग को धोने से सुन्दरता आती है। और लगातार उसका प्रयोग करने से बहुत फायदा होता है। ताज़े दूध से लगातार मुँह को धोने से कुरूप स्त्रियाँ भी सुन्दर बन गई हैं। मलाई निकाले हुए दूध अथवा खीरा की मलाई को रात में मलकर सो जाना चाहिए और सवेरे उठकर साबुन के साथ उसको धो देने से मुख का सौन्दर्य बढ़ाने में बड़ा लाभ होता है। सफ़ेद और साफ़ सिरका मलने से भी चेहरे पर रौनक़ आती है।

जिस स्त्री को अपना मुख गुलाब के समान चमकीला बनाना हो, उसको चाहिए कि वह जाड़े के दिनों में प्रातःकाल उठकर बाहर जावे और खेतों तथा मैदानों में से ओस लेकर धीरे-धीरे

अपने मुख पर मले और कुछ देर के बाद घर लौटकर गर्म कमरे में बैठकर नरम तौलिए से मुख को धीरे-धीरे मले, लगातार कई दिनों तक इस प्रकार करने से उसके गालों और आँखों में चमक पैदा हो जायगी और कुछ दिनों में वह बड़ी सुन्दर बन जायगी।

मनुष्य की पहचान

हमारी सब से बड़ी आवश्यकता उन बातों के जानने की है जिनके जानकार होने से हम अपने जीवन में कभी धोखा न खायें। मनुष्य जीवन को उपयोगी बनाने के लिए अनेक बातों की जानकारी, भिन्न-भिन्न मार्गों से हुआ करती है। जिस समाज में मनुष्य रहता है, उसमें भिन्न-भिन्न स्वभाव के स्त्री-पुरुष पाये जाते हैं, हमे अपने अनुभव हीन जीवन में संसार के मनुष्यों का— उनके आचरणों और व्यवहारों का कुछ ज्ञान न होने से तरह-तरह के कष्ट उठाने पड़ते हैं। कौन आदमी दग़ाबाज़ है, कौन विश्वासी और एतबार के लायक है? कौन आदमी अपनी बात का धनी है और कौन महज़ बातें बनाकर पीछे ग़ायब हो जाने वाला है?

इस प्रकार के संसार में बहुत तरह के मनुष्य पाये जाते हैं जिनके सम्बन्ध में यथोचित ज्ञान न होने से प्राय: जीवन में बड़ी-बड़ी भूलें हो जाती हैं किन्तु समाज के इन मुख्तलिफ स्वभाव के मनुष्यों के आचरणों और व्यवहारों का कोई ज्ञान नहीं कराया जाता। इसके फल स्वरूप छोटी-मोटी ग़लतियाँ तो रोज़ ही हुआ करती हैं जिनके लिए रोना-कलपना और पछताना पड़ता है किन्तु जीवन में कभी-कभी तो ऐसी ज़बरदस्त भूलें हो जाती हैं जिनका कभी कुछ प्रायश्चित हो ही नहीं सकता। यदि स्त्री और

पुरुषों को अपने जीवन में इस प्रकार के मनुष्यों का ज्ञान हो तो वे फिर क्यों इस प्रकार की भूलों में पड़ें।

आकृति-विज्ञान के विद्वानों ने अनेक प्रकार की बातों का निर्णय किया है जिनके द्वारा मनुष्य को केवल देखकर उनके स्वभाव, आचरण और व्यवहारों का पता लगाया जा सकता है।

साधारण समाज को इसकी बड़ी जरूरत है। जब किसी एक आदमी से कोई धोखा खा जाता है तो सब प्रकार वह पछताता है और उसके बाद वह दूसरे आदमी के सम्पर्क में जाता है। उससे किसी दूसरे प्रकार की वह क्षति उठाता है। इससे दुखी होकर वह तीसरे मनुष्य की चाह करता है। इस प्रकार की परिस्थितियों मे कभी-कभी तो वह समझ लेता है कि मनुष्य समाज ही इस प्रकार की प्रकृति वाला है। ऐसी दशा में भी कभी-कभी वह छला और दुखाया जा सकता है। समाज में सभी मनुष्य एक ही प्रकृति के नहीं होते। न तो सब मनुष्य आचरण भ्रष्ट ही होते हैं और न सब सदाचारी ही। न सब मनुष्य अविश्वासी ही होते हैं और न सब विश्वासी। सारांश यह कि सभी स्वभाव और व्यवहार के स्त्री और पुरुष संसार में पाए जाते हैं। दुष्ट स्वभाव के स्त्री-पुरुषों से अपनी रक्षा करने और भले आदमियों से लाभ उठाने के लिए बहुत आवश्यकता है कि समाज के सर्वसाधारण को मनुष्य की पहचान का ज्ञान हो।

नाक

जिस मनुष्य की नाक लम्बी होती है वह बुद्धिमान और

हो वह मनुष्य सुशील और बुद्धिमान होता है। जिस मनुष्य के नीचे के होठ के मध्य भाग में एक गढ़ा सा होता है वह मनुष्य अत्यधिक भ्रमी होता है और प्रत्येक बात पर सन्देह किया करता है किसी की बात पर विश्वास नहीं करता।

जिस मनुष्य का मुख बन्द करते समय नुकीला न होकर धनुपाकार हो जाता है। वह मनुष्य साहसी और धैर्यवाला होता है।

जिन मनुष्यों के दाँत लम्बे होते हैं, वे मनुष्य निर्बल और साहसहीन होते हैं। स्वच्छ और सुन्दर दाँतवाले मनुष्य और जिनके दाँत हँसने के समय थोड़े दिखायी पड़ते हों और देखने में वे सीधे और सुसङ्गठित जान पड़ते हों वे मनुष्य बुद्धिमान, विश्वासी और स्वच्छ हृदय के होते हैं। उनके सभी कार्य ईमानदारी के साथ होते हैं।

जिन मनुष्यों की ठोढ़ी नीचे की ओर बिलकुल नोकीली सी होती है वे छली और स्वार्थी होते हैं। जिन लोगों की भरी हुई, कोमल, मोटी ठोढ़ी होती है वे लोग उत्तम और शुद्ध भोजन करनेवाले होते हैं। जिस मनुष्य की ठोढ़ी में दोनों ओर नुकीलापन पाया जाता है, वह मनुष्य बुद्धिमान, ईमानदार और अच्छे स्वभाव का होता है। जिसकी ठोढ़ी चौड़ी और चपटी होती है। वह मनुष्य बहुत रूखे स्वभाव का होता है। छोटी ठोढ़ीवाला मनुष्य डरपोक कायर और साहसहीन होता है। जिसकी ठोढ़ी बिल्कुल गोल और नीचे की ओर बीच में छोटा-सा [गड्ढा-सा होता है, वह मनुष्य दयालु और उदार होता है।

जिनके होठ पतले और लाल होते हैं वे मनुष्य मध्यम स्वभाव के और नेकी को पसन्द करने वाले होते हैं। जिस मनुष्य का एक होठ छोटा और एक बड़ा हो वह आलसी, सुख का इच्छुक, कम बुद्धि वाला मूर्ख और भाग्यहीन होता है। निर्बल और छोटे दाँतों वाला मनुष्य विश्वासी और सुशील होता है किन्तु शरीर से अस्वस्थ होता है। जिसके पतले लम्बे और तेज दाँत होते हैं, वह मनुष्य वीर, ईर्षालु और अविश्वासी होता है और बहुत खाने वाला भी होता है। आपस में मिले हुए दृढ़ दातों वाला मनुष्य, सौन्दर्य प्रेमी, कहानी सुनने का इच्छुक और लम्बी आयु का होता है। जिनके दाँत लम्बे और छोटे होते हैं, वे मनुष्य बुद्धिमान, बलवान, किन्तु ईर्षालु और अभिमानी होते हैं।

टेढ़ी और कम माँस वाली ठोढ़ी का मनुष्य, चोर, निर्लज्ज, छली, क्रोधी और अत्याचार करने वाला होता है।

नेत्र और भौहें

जिन मनुष्यों के नेत्र भूरे होते हैं उन मनुष्यों में साहस और आत्मबल होता है। और पुरुषार्थ भी होता है। जिन मनुष्यों के नेत्र नीले होते हैं। वे स्वभाव में अत्यन्त निर्बल, भीरु और पुरुषार्थ हीन होते हैं। जिनके नेत्र श्वेत होते हैं परन्तु उनमें कुछ श्यामता होती है, वे मनुष्य फुर्तीले, विश्वसनीय, दयालु और उदार होते हैं। जिनके नेत्रों में श्यामता होती है वे मनुष्य स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट साहसी होते हैं। वे प्रकृति में घमण्डी किन्तु सच बोलने वाले होते हैं। जिनके नेत्र भीतर को धसे हुए और छोटे होते हैं

वे मनुष्य समय पर अड़ने वाले और हिम्मती होते हैं। बड़े नेत्र वाले मनुष्य लोभी होते हैं। जिन मनुष्यों के नेत्र बात-चीत करते समय बराबर इधर-उधर चला करते हैं, वे मनुष्य डरपोक और चिन्तित रहने वाले होते हैं।

जिन मनुष्यों के नेत्रों की आकृति चमकीली होती है, वे मनुष्य वीर, बलवान, निडर और साहसी होते हैं, उनका मुख सदा प्रसन्न रहा करता है। हृदय के पवित्र और शुद्ध होते हैं, शत्रु उनसे डरते हैं। जिन मनुष्यों के नेत्र मोटे होते हैं वे मनुष्य प्रत्येक बात को छिपाने वाले मन्द बुद्धि और अपने आप को बहुत बुद्धिमान समझते हैं। जिसके नेत्र मोटे और गोल होते हैं वह मनुष्य लज्जा करने वाला, निर्बल, दयावान और शीघ्र ही विश्वास करने वाला होता है। जो मनुष्य तिरछी दृष्टि से देखता है वह मनुष्य बहाने बाज, क्रूर, झूठा, और भाग्य-हीन होता है। जिस मनुष्य की शीघ्र शीघ्र पलकें बन्द होती हैं और शीघ्र शीघ्र नेत्र चलते हैं वह मनुष्य दुराचारी, अत्याचारी और विषयी होता है। जिन मनुष्यों के नेत्रों की पुतलियाँ चारों ओर घूमा करती हैं, वे मनुष्य बहुत ईर्षा करने वाले, झूठे आलसी और अपनी प्रशंसा करने वाले होते हैं। जिनके नेत्र बैलों के नेत्रों के समान होते हैं वे मनुष्य हृष्ट-पुष्ट होते हैं किन्तु उनकी स्मरण शक्ति बहुत कम और बात-चीत में असभ्यता होती है।

जिन मनुष्यों की भौंहें बिल्कुल सीधी होती हैं वे मनुष्य बड़े क्रोधी होते हैं। जिनकी भौंहें नीचे को झुकी हुई होती हैं उनके

चेहरे से शोक प्रकट होता है। जिनकी भौहें अधिक बालों की होती हैं वे मनुष्य आनन्द प्रिय और प्रसन्न रहने वाले होते हैं। जिनको भौहें नेत्रों से अधिक ऊँची होती हैं वे मनुष्य मूर्ख, चञ्चल और दुष्ट स्वभाव के होते हैं। जिनकी भौहें पतली होती हैं वे हृदय के निर्बल होते हैं। भौहें आँखों से जितनी ही दूर होती हैं, उतनी ही उनमें जीवन की अस्थिरता-चञ्चलता और साहस हीनता पायी जाती है। जिन मनुष्यों की भौहें टेढ़ी होती हैं और बात-बात पर चलती हैं वे मनुष्य अभिमानी, भाग्यशाली बुद्धिमान और बलवान होते हैं। जिनकी भौहें चौड़ी किन्तु कम बालों वाली होती हैं, वे मनुष्य सरल स्वभाव, सच्चे, अच्छे व्यवहार करने वाले और स्वास्थ्य-प्रिय होते हैं। जिस मनुष्य की भौहें घनी और नीचे की ओर झुकी हुई मालूम होती हैं वह मनुष्य विश्वासघाती और मूर्ख होता है। जिस मनुष्य की भौहों के बाल काले और महीन होते हैं वह वीर, ईमानदार, और प्रत्येक बात को सोच विचार कर करने वाला होता है। जिन मनुष्यों की दोनों भौहों के बीच में बहुत कम स्थान होता है, वे मनुष्य विचारशील, वीर और वीरता के कार्य को बड़ी प्रसन्नता से करनेवाले होते हैं।

सिर और माथा

जिन मनुष्यों का माथा बिलकुल चपटा होता है वह मनुष्य निर्बुद्धि होता है। जिसका माथा अधिक लम्बा होता है वह मनुष्य कम बुद्धि वाला और सुस्त रहने वाला होता है। जिसका

माथा भीतर को दबा हुआ होता है वह मनुष्य कम प्रसन्न रहने वाला होता है। जिसका माथा बाहर को निकला हुआ होता है वह मनुष्य मूर्ख, निर्बल, साहसहीन और पुरुषार्थहीन होता है। जिनका माथा पीछे को घूमा हुआ होता है वे मनुष्य बुद्धिमान, गुणवान, शक्तिशाली और उत्तम कार्य करने वाले होते हैं। जिस मनुष्य का माथा गोलाई लिए होता है वह मनुष्य प्रत्येक कार्य को नियम से करने वाला, दयावान, और बुद्धिमान होता है। जिस मनुष्य का माथा छोटा और गहरा होता है वह मनुष्य चतुर, वीर, हिम्मती, सच्चा प्रेम करने वाला और लज्जाशील होता है।

जिस मनुष्य का सिर गोल होता है वह मनुष्य प्रत्येक काम करने में दृढ़ प्रतिज्ञ होता है। जिसका सिर लम्बा और बड़ा होता है वह मनुष्य मूर्ख आलसी, निर्बल, शीघ्र विश्वास करने वाला, और ईर्षालु होता है। जिसका सिर न बहुत बड़ा और न बहुत छोटा हो और यदि चेहरा चौड़ा हो तो वह मनुष्य वीर, स्त्रियों से प्रेम करनेवाला भ्रमी और निर्लज्ज होता है। जिस मनुष्य का सिर अधिक बड़ा हो और गर्दन छोटी हो तो वह मनुष्य बहुत बुद्धिमान, चतुर, विश्वसनीय, न्याय पसन्द और मिलनसार होता है। जिसका सिर छोटा और गर्दन लम्बी और पतली होती है, वह मनुष्य निर्बल, भाग्यहीन, और विद्या से बहुत प्रेम करनेवाला होता है।

बाल और उनके रङ्ग

जिन मनुष्यों के बाल सफेद, कोमल और खूब चमकीले

होते हैं, वे मनुष्य निर्बल, सुकुमार, क्रोधी और शीघ्र हो परास्त होनेवाले होते हैं। जिन मनुष्यों के छोटे कड़े काले बाल होते हैं, वे मनुष्य गंभीर और सहनशील होते हैं। जिन मनुष्यों के बाल लम्बे होते हैं, वे मनुष्य पुरुषत्वहीन होते हैं। जिन मनुष्यों के बाल दृढ़ होते हैं वे मनुष्य साहसी, वीर और बलवान होते हैं। किसी दुबले-पतले और सुन्दर पुरुष के सिर में यदि सीधे और लम्बे बाल हों तो वह मनुष्य दयालु निर्बल और सुखी रहनेवाला होता है। जिनके बाल छोटे, मोटे और ख़ूब घने हों वे मनुष्य प्रायः वीर, साहसी, बलवान, प्रत्येक बात पर दृढ़ रहने वाले और सौन्दर्य प्रिय होते हैं। परन्तु बुद्धि कम होती है।

जिनकी कनपटी पर घने बाल होते हैं वे मनुष्य निर्बुद्धि, शीघ्र ही विश्वास करनेवाले, बातूनी, भोगविलासी, दूसरों को दोष लगाने वाले और आलसी होते हैं। जिनके सिर में ख़ूब घने बाल होते हैं वे मनुष्य दुनिया पर आक्षेप करनेवाले, दूसरों की बातों पर शीघ्र विश्वास करनेवाले होते हैं और उनमें स्मरण-शक्ति बहुत कम होती है। -

जिन मनुष्यों के बालों का रंग लाल होता है वे मनुष्य घमण्डी, बहानेबाज, ईर्ष्या-द्वेष करने वाले होते हैं। जिनके बाल भूरे, छोटे और घूँघर वाले होते हैं, वह मनुष्य मिलनसार, सफ़ाई से रहनेवाला सुशील और गुणवान होता है।

कान

जिस मनुष्य के कान बहुत मोटे और लम्बे होते हैं वह

मनुष्य मूर्ख, मोटी समझवाला होता है। जिसके पतले और छोटे कान होते हैं, वह मनुष्य शान्त स्वभाव, मितव्ययी और अपने मित्रों की सेवा करनेवाला होता है। जिनके कान साधारण लम्बे होते हैं, वे शूर किन्तु आचरणहीन, निर्वुद्धि, आलसी और अज्ञान होते हैं।

आवाज़

जिन लोगों का स्वर ऊँचा हो और भारी हो वे मनुष्य विश्वास के योग्य, अभिमानी, प्रसन्न होते हैं। जिसकी आवाज धीमी होती है वह दुर्वल बुद्धिमान और प्रत्येक बात पर विचार करनेवाला होता है। कठोर और भारी स्वर वाला मनुष्य निर्वुद्धि, मूर्ख और सुस्त होता है। जिनका स्वर ऊँचा, मधुर बारीक होता है वे वीर, बलवान होते हैं।

चेहरा

जिन मनुष्यों के चेहरे पर थोड़ा-सा भी परिश्रम करने से पसीना आजाता है, उनके शरीर में गर्मी अधिक होती है, वे विषयी और दुर्वचन बोलनेवाले होते हैं। जिनका चेहरा खूब माँस से भरा हुआ होता है वह मनुष्य दयालु, बुद्धिमान और शीघ्र विश्वास करने वाला होता है। जिनका चेहरा दुबला होता है वे समझदार परन्तु उनकी बातों और व्यवहारों से घृणा का भाव बहुत होता है। जिनका चेहरा गोल होता है वे मनुष्य सीधे स्वभाववाले, किन्तु ना समझ होते हैं। जिनके

चेहरे पर झुर्रियाँ होती हैं, वे मदिरा सेवन करने वाले होते हैं। जिनका चेहरा लम्बा और पतला होता है वे वीर, साहसी परन्तु कपटी होते हैं। गोल और बराबर चेहरे वाला मनुष्य आलसी होता है। जिसका चेहरा थोड़ा-सा भीतर को धँसा हुआ होता है और माँस कम एवम् तिरछी झुर्रियाँ-सी पड़ी हों, वह मनुष्य परिश्रमी, ईर्षालु, कपटी, लड़ाका, झूठा और निर्बुद्धि होता है। लम्बे, टेढ़े और पतले चेहरे वाले मनुष्य में हर प्रकार के दोष होते हैं। जिसके चेहरे का ऊपरी भाग चौड़ा और निचला भाग पतला और नुकीला-सा हो वह मनुष्य ईर्षा करनेवाला, दुर्भागी, लड़ाका और गृह कार्यों के अयोग्य होता है।

गर्दन और कन्धे

जिन मनुष्यों की गर्दन अधिक लम्बी होती है वे कपटी, छली, बिना विचारे काम करने वाले होते हैं। पतले कन्धे वाला मनुष्य दुर्बल-शरीर, डरपोक और मिलनसार होता है। मोटी और बड़ी हड्डी के कन्धों वाला मनुष्य बलवान और विश्वास के योग्य होता है।

भुजा और पेट

जिसकी भुजाएँ लम्बी होती हैं वह शेखीबाज, घमण्डी और विश्वासघाती होता है, जिसकी भुजाएँ शरीर की अपेक्षा छोटी हों वह समझदार, यत्नवान, ईमानदार और सदाचारी होता है। जिसकी छाती पर अधिक बाल होते हैं वह विषय लम्पट

किन्तु सब की सेवा करनेवाला होता है। कोमल गोरा और मोटे शरीर का आदमी कायर महाछली, ईर्ष्यालु, झूठा, शेखीबाज होता है और किसी की कही हुई बात पर विश्वास नहीं करता।

टाँगें

माँस से भरी और घने बालों वाली पिंडली का मनुष्य शूर-वीर, बलवान, सतान को प्यारा, भाग्यशाली किन्तु निर्बुद्धि होता है। जिनकी टाँगें छोटी, किन्तु उनपर तथा शरीर में बाल कम हों वह मनुष्य तीक्ष्ण बुद्धि और मध्यम गुण वाला होता है। जिनके पैर लम्बे और माँस से भरे होते हैं, उनका शरीर मजबूत, अधिक भोजन करने वाला और बुद्धि हीन होता है। जिसके पैर पतले और कोमल होते हैं वह शरीर में निर्बल किन्तु समझदार और बुद्धिमान होता है। जो लोग छाती तथा पेट निकाल कर चलते हैं वे लोग मिलनसार, तथा प्रसन्न चित्त होते हैं और सहज ही किसी बात को स्वीकार कर लेते हैं।

लक्षण और स्वभाव

जिन स्त्री पुरुषों की चाल धीमी होती है वे सुस्त स्वभाव के होते हैं वे मन्द बुद्धि [illegible] कम सोचने वाले होते हैं। वे दूसरों की बातों में जल[illegible]श्वास करते हैं। जिनकी चाल तेज होती है और उनके कदम बहु[illegible]लम्बे और बेहूदे नहीं उठते, वे धैर्यवान होते हैं और अपने कार्यों में सफलता प्राप्त करते हैं। उनको हुकूमत पसंद होती है। जिनके कदम लम्बे और एक से नहीं पड़ते तथा

मार्ग में चलते हुए एक किनारे से चलने की कोशिश करते हैं वे बहुत लोभी और कंजूस होते हैं। दूसरों के साथ वे ईर्ष्या द्वेष रखने वाले होते हैं।

जिनका हृदय कठोर होता है। जो लोग बातें करते हुए अनायास अपना सिर हिलाते हैं, वे बहुत बातूनी और व्यर्थ ही बातें करनेवाले होते हैं। उनका स्वभाव चञ्चल चाल-चलन खराब और बेएतबारी होता है। जो बात-चीत के समय शान्त स्थिर और सावधान होते हैं, वे समझदार-विश्वासी होते हैं।

जिसका शरीर सीधा और दुर्बल होता है वह वीर होता है किन्तु निर्दयी और घमंडी भी होता है। वह छोटी-छोटी बातों को बहुत बढ़ाकर कहता है और व्यर्थ ही शोरगुल मचाता है। इस प्रकार का आदमी क्रोधी, छली और कंजूस भी होता है। लम्बे और मोटे मनुष्य बलवान होते हैं किन्तु कृतघ्न और बुद्धि-हीन होते हैं। बहुत लम्बे और दुबले मनुष्य लम्बी-चौड़ी बातें करनेवाले और हठी होते हैं। जो मनुष्य छोटा और मोटा होता है वह दूसरे के साथ ईर्ष्या करनेवाला, वहमी और बकवादी होता है और सहज ही अप्रसन्न होनेवाला किन्तु विश्वासी होता है और अपनी हानि पहुँचाने वाले को कभी भूलता नहीं। छोटे दुर्बल और सीधे शरीर के लोग चतुर, वीर और अहसानमन्द होते हैं, परन्तु कभी-कभी छल में भी काम लेते हैं। झुककर चलनेवाले मनुष्य, मेहनती, जरूरी बातों को गुप्त रखनेवाले होते हैं और हरएक बात को सहज में ही स्वीकार नहीं कर लेते।

अन्ध विश्वास

गृहस्थों का जीवन ही समाज का जीवन होता है और गृहस्थों का प्राण ही समाज का प्राण होता है। किसी भी देश के मानव समाज का अच्छा-बुरा होना, शक्तिशाली और निश्चयी होना, वहाँ के गार्हस्थ्य जीवन पर निर्भर है।

इस जीवन में बड़े उत्तरदायित्व के साथ लोगों को चलना पड़ता है। पग-पग में उनको कठिनाइयों और विपदाओं का सामना करना पड़ता है। गृहस्थों में धार्मिक प्रेम अधिक होता है, इसीलिए उनमें धार्मिक भीरुता भी होती है। इस भीरुता के कारण उनको सदा अपने चारों ओर भय का सन्देह बना रहता है। उन्हें प्रायः नित्य ही तरह-तरह की आवश्यकताओं का सामना करना पड़ता है। इसीलिए उनको प्रायः उचित और अनुचित सभी बातों पर विश्वास कर लेना पड़ता है और ऐसा करने के लिए वे अभ्यासी भी हो जाते हैं।

इस प्रकार गृहस्थ जो प्रायः धोखा खाते हैं, उसका कारण है अन्ध विश्वास। यह अन्ध विश्वास गार्हस्थ्य जीवन में बहुत पाया जाता है। वे छोटी-छोटी और अत्यंत निस्सार बातों में भी सदा विश्वास करते रहते हैं, यही उनका अन्धविश्वास है और अपने इस अन्ध विश्वास के

कारण वे समाज में बहुत ओछी दृष्टि से भी देखे जाते हैं। यह अन्धविश्वास क्या है और इसके द्वारा वे किस प्रकार को हानियाँ उठाते हैं एवम् संसार के षड्यंत्रकारी लोग किस प्रकार उनसे अनुचित लाभ उठाते हैं, इन्हीं बातों का इस प्रकरण में गम्भीरता के साथ विचार करना है और इसके बाद उन बातों का उल्लेख करना है जिनका जानना और समझना गृहस्थों के लिए अतीव आवश्यक है एवम् जिसके द्वारा वे अपने जीवन को अत्यंत सुरक्षित बना सकते हैं।

गृहस्थों का बहुत साधारण जीवन होता है, उनके इस साधारण जीवन में, जीवन की साधारण अवस्था का ही सम्मिश्रण होता है। शिक्षा के नाम पर वे बहुत ऊँचे पण्डित नहीं होते और न वे जीवन की किन्हीं बातों में वैज्ञानिक आलोचक ही होते हैं।

गार्हस्थ्य जीवन बहुत व्यापक जीवन होता है। इसकी व्यापकता में बड़े से बड़े पण्डित विलीन हो जाते हैं और बड़े से बड़े आलोचक तथा विचारवान भी अपने अस्तित्व को खो बैठते हैं। इसको दूसरे शब्दों में यह कहा जायगा कि गार्हस्थ्य जीवन में एक साधारण स्त्री-पुरुष की जो अवस्था होती है वही अवस्था अधिक से अधिक शिक्षित गृहस्थ स्त्री-पुरुष की भी होती है। अशिक्षित और भोले-भाले गृहस्थ स्त्री पुरुष जिन कठिनाइयों और विपदाओं में फँसे रहा करते हैं शिक्षित, विद्वान और समझदार स्त्री-पुरुष भी अपने गार्हस्थ्य संसार में उसी प्रकार का जीवन व्यतीत करते हैं। इस जीवन में जो अन्ध विश्वास एक साधारण कोटि के

स्त्री-पुरुष को हानि पहुंचाता है, और छली तथा षड्यंत्रकारी लोगों के हाथों से छला देता है, वही अन्ध विश्वास समझदार विद्वान् गृहस्थ स्त्री-पुरुष के छले जाने का कारण होता है। गार्हस्थ्य जीवन की यह अवस्था इतनी अधिक आगे बढ़ गई है कि उसपर विचार करना और उसका संचालन तथा परिचालन परिवर्तित कर देना बहुत आवश्यक हो गया है।

गृहस्थों में धार्मिक वृत्ति बहुत होती है, इसीलिए धर्म के रूप में जितने भी काम समाज में दिखाई पड़ते हैं, गृहस्थ उनपर अपार श्रद्धा रखते हैं, जितने भी त्योहार होते हैं वे सब धार्मिक ही होते हैं, जो धार्मिक मेले तथा स्नान होते हैं, वे भी धर्म के ही नाम पर होते हैं, तीर्थाटन और पूजा-भक्ति भी गृहस्थों के लिए ही आवश्यक मानी जाती है। धर्म के नाम पर गृहस्थों की इतनी बड़ी भक्ति होती है कि वे अपने जीवन में धार्मिकता और अधार्मिकता की विवेचना भी भूल जाते हैं। किसी साधु के आने की बात सुनी, प्रत्येक गृह के स्त्री और पुरुष उसके दर्शनों के लिए लालायित हो उठेंगे वे न केवल दर्शन करेंगे वरन अपनी आवश्यकताओं के गट्ठे सिर पर लादकर ले जायेंगे। और फिर आए हुए महंत से मिलकर, दर्शन करके और अपनी आवश्यकताएँ बताकर अपना जीवन सफल करेंगे। अपनी धार्मिकवृत्ति के कारण गृहस्थों को कभी-कभी नहीं, वरन् नित्य ही हानियाँ उठानी पड़ती हैं, परन्तु उनका जीवन कुछ अजीब बन जाता है कि उसका वे स्वयं नहीं अनुभव करते। तीर्थों का दर्शन, साधु-मह-

न्तों पर विश्वास, ज्योतिषियों पर अन्धभक्ति, झाड़-फूँक तथा जादू-मंत्र करने वालों का अनुचित प्रभाव आदि बातों को लेकर गार्हस्थ्य जीवन समाज के नेत्रों में बहुत पतित हो गया है।

सब से पहले हम तीर्थों के सम्बन्ध में ही कहना चाहते हैं हमारी धार्मिक बातों में तीर्थ दर्शन को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है। तीर्थ दर्शन बहुत अंशों में, देशाटन का ही समर्थन करता है। हमारे पुराने समय में तीर्थों की स्थापना करके बहुत दूरदर्शिता से काम लिया गया था, उनकी स्थापना दूर-दूर देशों में—ऐसे स्थानों मे की गई थी, जो प्राकृतिक दृश्य के कारण बहुत रमणीक और मनोहर थे। वहाँ जाकर और वहाँ के प्राकृतिक जीवन को देख-सुनकर लाभ उठाना, मानव जीवन के लिए बड़ा उपयोगी समझा गया था। अतएव उन स्थानों पर हिन्दू-देवताओं की किसी न किसी रूप में स्थापना करके उसको तीर्थ-स्थान घोषित किया गया।

इस प्रकार के सुरम्य सुन्दर और रमणीक स्थान अपने देश में जहाँ जो पाये गए थे सभी का किसी न किसी रूप में उपयोग किया गया था। ये सभी स्थान, स्वभावतः उपयोगी स्थान थे। देशाटन जीवन के लिए बहुत उपयोगी होता है, यह बात संसार के सभी देश और समाज मानते चले आए हैं। तीर्थ स्थानों में जाना और वहाँ के प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन करना तो लाभकर था ही, अपने देवताओं की स्थापता होने से वह स्थान और भी उपयोगी हो गया, मानव जीवन में जितने

भी कार्य हैं, उनमें सब की अपेक्षा धार्मिक कार्यों का स्थान ऊँचा है। उन धार्मिक कार्यों में तीर्थ-यात्रा भी हिन्दुओं का एक महत्व-पूर्ण कार्य रहा है। इसका स्वाभाविक भाव तो ऊपर बताया ही जा चुका है, देशाटन के द्वारा ही मनुष्य ज्ञानवान समझदार और दूरदर्शी बनता है। तीर्थ-यात्रा से भी यही लाभ होते हैं। इस लाभ को उपयोग करने के लिए हमारे धार्मिक ग्रन्थों में तिल का ताड़ बनाकर लिख गया है और उनके द्वारा यह प्रयत्न किया गया कि लोग तीर्थ-यात्रा को ही अपने जीवन का बड़ा से बड़ा उद्देश्य समझ लें। यही हुआ भी।

इसका फल यह हुआ कि आजकल इन स्थानों पर समय-समय पर लाखों स्त्री-पुरुष उनके जीवन को धार्मिक प्रेरणा से एकत्रित होते हैं। यहाँ पर इन तीर्थ-यात्राओं के दृश्यों की ओर संक्षेप में कुछ संकेत सा किया जाता है और बताया जाता है कि जो उद्देश्य था उसकी पूर्ति कहाँ तक होती है।

कोई भी समझदार व्यक्ति इस बात से इनकार न करेगा कि इन तीर्थ स्थानों में उनके उत्सव और माहात्म्य के समय कितने पंडे, कितने पाखंडी, कितने लम्पट और चोर-बदमाश इकट्ठे होते हैं। उन स्थानों में जाने से हमारे हृदयों में धार्मिक वृत्ति का एकबार उदय अवश्य होता है, किन्तु उन स्थानों का प्राकृतिक सौन्दर्य जो जीवन के लिए उपयोगी था, क्या उससे भी लाभ उठाना लोग जानते हैं? यह तो हुई लाभ की बात। अब यहाँ की त्रुटियाँ और हानियाँ यदि देखी जायें, तो क्या कोई सम

और समझदार मनुष्य, यह स्वीकार करेगा कि वहाँ का जीवन किसी सती और भलेमानस स्त्री के जाने के योग्य होता है ? वहाँ के जीवन में किस प्रकार स्त्रियों की छीछालेदर होती है, वह सब क्या पुस्तक के पन्नों में बताने के योग्य बातें हैं ? सभी लोग वहाँ जाकर उन बातों को आँखों से देखते हैं, किन्तु ये तो उस समय धर्म के मतवाले होते हैं, उन्हें उस समय किसी बात का अनुभव नहीं होता।

हिन्दू-समाज अपनी इस बात में संसार की अन्य जातियों के सामने बहुत कलंकित हो रहा है। यदि हम दूसरी जातियों के इस प्रकार के जीवन को अपनी आँखों से देखने का कष्ट उठावें, तो हमें संसार के जीवन का और अपनी दुरवस्था का ज्ञान हो सकता है। ये पंक्तियाँ तीर्थ-यात्रा का विरोध नहीं करतीं और न उसपर किसी प्रकार की अश्रद्धा प्रकट करती हैं, किन्तु वहाँ के जीवन को बहुत अश्लील और पतित अवश्य समझती हैं। जो कोई अपनी धार्मिक उतावली के कारण इन पंक्तियों पर अपनी लाली-पीली आँखें निकालना चाहें उनको चाहिए कि ऐसा करने के पूर्व वे हिन्दू समाज की अवस्था को एकबार आँखें खोल कर देख लें। हिन्दू-समाज के कितने लोगों का सम्बन्ध इन तीर्थों से रह गया है और जिस कोटि के लोगों का उनके साथ सम्पर्क रह गया है उनकी समाज में स्थिति क्या है ? इससे अधिक कहना व्यर्थ है। अपने तीर्थों की मर्यादा को ऊँचे उठाना अपना काम है। जबतक उनके जीवन को

अपवित्रता का अस्तित्व ही न उड़ जाय और उसके स्थान पर शुचिता पवित्रता और धार्मिकता को स्थान न मिले तब तक उनके प्रति क्रान्ति करके उनका जीवन ही पलट देने की आवश्यकता है। उनका यह रूपान्तर कैसे हो सकता है, और उनके इस सुधार के लिए क्या क्या किया जा सकता है, इत्यादि प्रश्न उसी समय हल हो जाँयगे जब हिन्दू-समाज उनका पुनरुद्धार करने के लिये तैयार हो जायगा। यदि ऐसा न किया जायगा तो उनके पाप पूर्ण ये वीभत्स कार्य, उनका अस्तित्व ही उड़ा देंगे।

साधु-महन्तों के प्रति श्रद्धा रखने का परिणाम आजकल जो भयानक हो गया है वह समाज के लिये कम चिन्तना पूर्ण बात नहीं है। भोले भाले गृहस्थों के साथ साधुओं के किस प्रकार के व्यवहार सुने जाते हैं और साधु-सेवा तथा साधु-विश्वास के फल कैसे कैसे समाज में देखे जाते हैं, उनका बयान करना यहाँ पर आवश्यक नहीं प्रतीत होता। समय असमय गार्हस्थ्य परिवारों में इस सेवा और श्रद्धा की कैसी कैसी दुर्घटनाएँ देखी जाती हैं, यह बातें अब तो सर्व साधारण को मालूम ही होनी चाहिए। पत्र पत्रिकाओं के पढ़ने वालों को संसार की इन बातों की जानकारी होना स्वाभाविक है। धर्म से श्रद्धा रखने वाले तो इतने अन्धे हो जाते हैं कि उनको पाप और पुण्य का ज्ञान ही नहीं रहता। मंदिरों और धर्म-स्थानों में इसके कैसे कैसे कृत्य देखे जा चुके हैं और किस प्रकार उनमें भंडा फोड़ हुए हैं, वे सब हिन्दू

समाज के वीभत्स रूप हैं! ये सब उसी समय दूर होंगे जब उनके प्रति श्रद्धा का रूप ही पलट जायगा। हमारे महर्षियों ने हमारे समाज को कितना पवित्र बनाने की चेष्टा की है, यह संसार में किसे अप्रकट नहीं है। किन्तु अनेक युगों के पश्चात् उनकी जो अवस्था हो गई है, उसमें पवित्रता के रूप में, अपवित्रता ही अधिक रह गई है। साधु और महन्तों की सेवा के सम्बन्ध में इतना और लिख देना यहाँ आवश्यक है कि समाज में होने वाले इन पापों के लिये साधु और महन्त उतने अपराधी नहीं हैं जितने कि गृहस्थ लोग। ये बातें इतनी व्यापक हो चुकी हैं कि उनके लिए इस प्रकार के उदाहरणों को देना यहाँ पर आवश्यक नहीं है, इन पृष्ठों की पंक्तियाँ तो चतुर और समझदार पाठकों का ध्यान उस ओर आकर्षित करना चाहती हैं, जिस ओर हमारा पवित्र समाज अन्य जातियों के नेत्रों में उपहास का पात्र बना रहा है। इस प्रकार की बातों के लिए सफाई देने और अपनी विवाद शक्ति के द्वारा उन बातों को उड़ा देने की अपेक्षा यह बहुत आवश्यक और उत्तम है कि अपनी अवस्था पर विचार किया जाय एवम् उसकी त्रुटियों को दूर किया जाय।

यही अवस्था ज्योतिषियों की भी हो गई है। हिन्दू स्त्रियाँ इस प्रकार के लोगों पर अपने परिवार के लोगों से भी अधिक श्रद्धा करती हैं। स्त्रियों के इस प्रकार के अपराधों में घर के आदमी आँखें मूद लेते हैं। यही तक आश्चर्य की बात नहीं है, जो लोग किसी ज्योतिषी के कुकृत्यों पर कितनी ही बार हास-उपहास कर

चुकते हैं । वे भी अपने घर की स्त्रियों का किसी ज्योतिषी के साथ व्यवहार देखकर उचित और अनुचित का विचार नहीं करते हिन्दू स्त्रियों में भोले पन पर तो जबान ही बन्द हो जाती है। उनके लिये भला क्या कहा जाय। वे स्त्रियाँ इन ज्योतिषियों से एकान्त बातें करके अपनी मनोंकामनाएँ पूर्ण कराने की चेष्टा करती हैं, वे मनोंकामनायें क्या हैं ? यह कहने से तो नेत्रों के सामने अँधेरा ही आ जाता है ! उनकी कामनाओं में या तो किसी के संतान नहीं होती, या किसी का पति उनके बस में नहीं है यह निश्चित होता है कि स्त्रियों की कोई भी कामना पूरी करने से ज्योतिषी जी असमर्थ नहीं हैं। भाग्य एक ओर है परमात्मा एक ओर हैं और उनके कर्म एक ओर हैं परन्तु ज्योतिषी जी दूसरी ओर हैं। स्त्रियों की एकान्त भक्ति और सेवा ही उनकी आकाँक्षा की पूर्ति कर सकता है ! छिः अधिक लिखना अश्लीलता है हिन्दू समाज के युवकों और युवतियों का ध्यान इस ओर आकर्षित करके अपने आप को इस कलंकमय जीवन से बचाने के लिए, उनसे अनुरोध किया जाता है।

यह हम जानते हैं कि इस प्रकार के पाखण्डियों के हाथों में भोले भाले और अनभिज्ञ स्त्री-पुरुष ही फँसते हैं। और इसका मूल कारण यह है कि हमारे यहाँ शिक्षा की बहुत कमी है। जिनकी गणना पढ़े लिखों में की जाती है, वे केवल जैसे तैसे किसी न किसी भाषा में हस्ताक्षर कर लेना ही जानते हैं । इसका अर्थ पढ़ने लिखने का नहीं हुआ करता। जब तक वास्तविक शिक्षा

का विस्तार नहीं होता तब तक समाज की यह दुरवस्था रात दिन बढ़ती ही दिखाई देती है।

अंध विश्वासों के कारण गृहस्थों का जिस प्रकार सत्यानाश होता है किन्तु फिर भी उनका उस ओर ध्यान नहीं होता। नंगों, छलियों, प्रपंचियों और व्यभिचारियों के द्वारा वे न जाने किस किस रूप में छले जाते हैं। इस प्रकरण में उन बातों की ओर समाज के लोगों का केवल ध्यान ही आकर्पित करना था समाज के जो लोग इन बातों से अनभिज्ञ हों और अपनी इस दुरवस्था से परिचित न हों उनकी जानकारी के लिए यहाँ पर इन बातों का चरित्र चित्रण करना बहुत कठिन है। उनकी जान कारी के लिए हिन्दी में एक दो नहीं, अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं। जिनसे समाज की इस दुरवस्था का भली भाँति ज्ञान होता है और पता लगता है कि समाज के भीतर धर्म के नाम पर, कहाँ कितना पाप और व्यभिचार हो रहा है। समाज की इस दुरवस्था पर हिन्दी के उपन्यास और कहानी संग्रह बहुत कुछ प्रकाश डालते हैं। समाज के अधिकाँश लोग उपन्यासों को समझने में बड़ी भूल करते हैं, वे अपने भ्रमवश उनको न जाने क्या समझा करते हैं। उपन्यास और कहानियों के क्षेत्र समाज की अवस्था को व्यक्त करने में दर्पण का काम करते हैं। किसी भी समाज के स्त्री-पुरुषों के भीतरी और बाहरी जीवन को जानने के लिए, हमको उस समाज के साहित्यिक उपन्यासों का अध्ययन करना चाहिये। हमारी सामाजिक त्रुटियाँ क्या हैं,

बुराइयाँ क्या हैं ? हमारे जीवन में कहाँ पाप हो रहा है और कहाँ पुण्य हो रहा है ? इस प्रकार की एक एक बात की छानबीन के लिए उपन्यास देखने की आवश्यकता है। इधर पिछले कुछ ही दिनों में, हमारी आंखें खुली हैं और उसके बाद जब देखा गया तो समाज अनेक प्रकार के रोग, शोक, पाप और व्यभिचार के कीचड़ में फँसा हुआ मिला।

गार्हस्थ्य जीवन से हमें इस अंधविश्वास को बहुत शीघ्र दूरकर देने की आवश्यकता है। संतोष की बात है कि इधर समाज में शिक्षा का भी विस्तार हो रहा है और उस शिक्षा के द्वारा गार्हस्थ्य जीवन में नए प्रवेश करनेवाले युवकों और युवतियों से यह आशा करनी चाहिए कि वे इस जीवन से अपने आप को पृथक रख कर हिन्दू-समाज का भविष्य ऊँचा बनाने का प्रयत्न करेंगी ! जब किसी गृहस्थ को अपनी पत्नी और परिवार की अशिक्षा इस कलंक से नाश करने में विरुद्ध सहायता करे तो उस गृहस्थ को अपने परिवार की अशिक्षा के सामने सिर झुकाना बड़ी भारी कायरता है। ऐसी अवस्था में उसको शक्तिभर इन बातों के मिटाने का प्रयत्न करना चाहिए। अपने जीवन में सुख और संतोष के दिनों में अपने परिवार से इस प्रकार के अंध विश्वास के प्रति घृणा पैदा करने के लिये प्रत्येक गृहस्थ को चेष्टा करनी चाहिए और उसके द्वारा होने वाली दुर्घटनाओं को विस्तार रूप में बता कर, उनके प्रति अपने परिवार की जानकारी पैदा करनी चाहिए।

बालक, बालिकाओं, स्त्री-पुरुषों को समान रूप से ये सब बातें सुननी और जाननी चाहिए। उनको मालूम होना चाहिए कि परदे की आड़ में कहाँ क्या हो रहा है। ऐसा जान सकने पर ही उनसे वे अपनी रक्षा कर सकेंगे और उनके ऊपर अश्रद्धा होगी।

छली और पाखण्डियों के हाथों में अधिकतर स्त्रियाँ फँसती हैं। इस लिए सब से उत्तम मार्ग यह है कि उनके जीवन में ऐसी स्थिति ही न उत्पन्न हो जिससे वे उनकी शिकार हो सकें इसके लिए एक ही बात को याद रखने की आवश्यकता हैं और वह यह कि अपने जीवन में दुःख, कष्ट और असंतोष पाने पर ही स्त्रियाँ इस प्रकार के पाखण्डियों के हाथों में फँसती हैं। यदि अपने जीवन में किसी प्रकार का असंतोष न हो और पुरुष उनकी आत्मा को बिल्कुल अपनी आत्मा समझ कर संतोषजनक व्यवहार करें तो स्त्रियों को स्वभावतः इस प्रकार के लोगों से घृणा होती है परन्तु जब वे अपने जीवन में विवश होती हैं तो उनका अपना ज्ञान नष्ट हो जाता है। इसलिये यदि गार्हस्थ्य जीवन के अधिनायक-पुरुष अपने आप को सम्भालकर, सावधानी के साथ अपना जीवन बितायें तो उनका घर, लोहे की दीवारों से भी अधिक सुरक्षित रह सकता है।

संतान-सुख

संसार में कौन सा ऐसा मनुष्य हो सकता है जिसको संतान-सुख की इच्छा न हो ? सभी को इसकी इच्छा होती है और पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के अधिक होती है। उनकी यह इच्छा उस अवस्था में ही पैदा हो जाती है जब उनका विवाह भी नहीं होता। अविवाहित अवस्था में ही संतान के प्रति उनकी भिन्न-भिन्न मनोवाञ्छा उत्पन्न हो जाती हैं परंतु उस समय उनके जीवन में इन बातों का कोई आकार नहीं होता।

संतान के प्रति प्रेम होना प्राकृतिक नियम है। मनुष्यों में ही नहीं, पशुओं, पक्षियों और सृष्टि के भिन्न भिन्न सभी जीवों में संतान के प्रति प्रेमाकर्षण पाया जाता है। सृष्टि के जो अज्ञान जीव हैं जब उनकी यह अवस्था है तब मनुष्य तो समझदार है, उसको संतान के प्रति प्रेम कैसे नहीं हो सकता।

प्रकृति ने विश्व में अनन्त जीवों की रचना की है, और सभी को संतान-उत्पन्न करने की शक्ति दे कर, मानों संसार को अनन्त युगों के लिये अजर अमर बना दिया है। प्रकृति हमको उत्पन्न करके हमसे संतान उत्पत्ति की इच्छा रखती है और इस इच्छा के द्वारा ही उसकी सृष्टि रचना का कार्य होता है। सृष्टि-रचना और उसके रचने वाली प्रकृति का गम्भीर अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट रूप से मालूम होगी

है कि प्रकृति का जहाँ तक अस्तित्व है, उसमें उत्पत्ति का विशेष स्थान है। प्रकृति ने प्रत्येक जीव को जीवन दान दिया है, उसके बदले में वह कुछ चाहती है और जो कुछ वह चाहती है उसमें संतान उत्पति का अधिक महत्व है उसकी अधिक उपयोगिता है। इसी लिए उसके प्रति प्रकृति ने प्रत्येक जीव का इतना अधिक आकर्षण कर दिया है। संतान के साथ प्रत्येक जीव की आत्मा का इतना घनिष्ट सम्पर्क रखा है, जिससे वह उसके प्रति समय से पूर्व ही आकर्षित हो जाता है और अपने जीवन-काल में अन्त तक आकर्षित रहता है। प्रकृति हमसे और भी कितनी ही बातों की आशा करती है, किन्तु उसकी उन आशाओं में इस आशा का महत्व है। इसी लिए उसने उसके साथ हमारे जीवन का अस्तित्व ही ही इतना जकड़ कर बाँध दिया है जिससे हम कभी पृथक नहीं हो सकते।

किसी युग में यदि मनुष्य-समाज का कोई मत अथवा सम्प्रदाय, इस जीवन से विरोधी रहा है और आज भी है तो भ्रमात्मक है और प्रकृति के निकट अपराधी है। सृष्टि प्रकृति की रचना है और उसपर एक मात्र प्रकृति का ही अधिकार है। उसने अनन्त अनन्त जीवों की रचना की है और प्रत्येक जीव में उसने स्त्री और पुरुष (Male and Female) की सृष्टि की है। इन दोनो में उसने काम-सम्बन्धी आवश्यकताएँ उत्पन्न की हैं, और उन दोनों को ही, एक दूसरे की पूर्ति के

लिये; उपयोगिता प्रदान की है । दोनों में कामातुरता का होना स्वाभाविक है, प्राकृतिक है । यह कामोत्पत्ति ही एक दूसरे को, एक दूसरे के प्रति आकर्षित कर रही है। दोनों का सम्मिलित और सहयोग सन्तान उत्पत्ति का एक विश्व व्यापक साधन है जिसका अस्तित्व भिन्न-भिन्न रूपों में, समस्त संसार में पाया जाता है । मनुष्य में भी इस अस्तित्व का प्रभाव है। संसार के समस्त जीवों की अपेक्षा, मनुष्य बुद्धिमान है; इसी लिए, सृष्टि के समस्त मनुष्य, समाज के संघटित रूप में हैं। और उनका काम-सम्बन्धी अस्तित्व भी अन्य जीवों की अपेक्षा बहुत कुछ परिवर्तित और परिमित होकर जीवन का एक अंश बन गया है। जीवन का यह अंश कितना महत्व पूर्ण है, इसका ठीक ठीक उत्तर जीव शास्त्रकार ही दे सकते हैं। किन्तु जब संसार के उत्तरदायी लोग इस जीवन की उपेक्षा करते हैं और उसके प्रति उदासीनता प्रकट करते हैं तो बड़ा आश्चर्य मालूम होता है ।

कुछ लोग तो उसके प्रति उदासीन रहना ही उसके संरक्षण का एक उपयोगी मार्ग समझते हैं, किन्तु उनकी उदासीनता का यदि यह सदुपयोग हो सकता है तो भी अनुचित नहीं है । परंतु जिनकी उदासीनता प्रकृति के इस नियम की अवज्ञा कर सकता है, वह सर्वथा भ्रम पूर्ण है। संसार की कोई भी शक्ति उसको व्यर्थ नहीं प्रमाणित कर सकती। सन्तान-उत्पत्ति कार्य जीवन का उपादेय कार्य है । उसके लिये

उपयोगी बनने के लिए जीवन भर ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करना पड़ता है, और समाज के जीवन में अपने दाम्पत्य सम्बन्ध के सिवा अन्यत्र कहीं, उस शक्ति के दुरुपयोग के लिए अधिकारी नहीं हैं जो कोई इसका उल्लंघन कर सकता है, वह हमारे समाज के निकट और उसके पश्चात् प्रकृति के निकट उसी प्रकार अपराधी होता है जिस प्रकार एक चोर, व्यभिचारी राजा के निकट अपराधी होता है और दण्ड पाता है। प्रकृति के इस प्रकार के दण्ड संसार में सर्वत्र आंखें खोल कर देखे जा सकते हैं। यदि हम पता लगावें, तो मालूम होगा कि कितनी स्त्रियाँ और पुरुष अपने दाम्पत्य जीवन में, दाम्पत्य सुखोपभोग से वंचित हैं, उनके जीवन में भिन्न भिन्न प्रकार की त्रुटियाँ हैं जिनके कारण वे उस सुख से बहुत दूर हैं जिसका वे अपने जीवन में भोग कर सकते थे। वे प्रकृति के अपराधी हैं। समाज में आँखें खोलकर देखा जा सकता है कि अतुल सम्पत्ति और ऐश्वर्य है कि उस सम्पत्ति और ऐश्वर्य का कोई भोगने वाला नहीं है, स्त्री-पुरुष संतान के नाम पर एक कन्या के लिए भी तरसते हैं परन्तु भाग्य में नहीं लिखा, वे अनेक प्रयत्न करते हैं परन्तु निष्फल होता है, वे अपने इस दुर्भाग्य के लिए रोते हैं और ईश्वर को कभी-कभी कोसते हैं, ये सब कौन हैं? प्रकृति वैज्ञानिकों का कहना है कि ये सब प्रकृति के अपराधी हैं, और उन अपराधियों में से हैं जिन्होंने इस जन्म में अथवा पूर्वजन्म में अपनी काम-शक्ति का दुरुपयोग किया है,

जो वीर्य संतान-उत्पत्ति के अर्थ होता है, वह व्यभिचार वृत्ति में व्यय किया है, इसलिए सब कुछ होते हुए भी अपने दाम्पत्य जीवन में उसी अमूल्य पदार्थ के लिए दुखी हैं जिसको उसने नष्ट किया है। राज-नियमों का उल्लंघन करने वाला, राजा के न्यायालय में दण्ड पाता है और अपने जीवनकाल में उस दण्ड का भोग करता है, राजा एक देश अथवा एक छोटे से अंश का मालिक होता है। प्रकृति इस समस्त विश्व की एक मात्र सम्राज्ञी है। उसका अपराधी बिना दण्ड भोगे बच नहीं सकता। जो लोग उसके अस्तित्व में सन्देह करते हैं और उसके नियमों का उल्लंघन करते हैं, वे अन्त में जीवन भर के लिए रोते और पछताते हैं। उनके अपराधों की जीवन में फिर कोई चिकित्सा नहीं हो सकती, इसलिए हमको अपने जीवन का एक-एक क्षण बहुत समझदारी के साथ बिताना चाहिए। जब हम अंधे होकर अपने जीवन में कोई असत् कार्य करना चाहें तो हमको एकबार स्मरण कर लेना चाहिए कि हमारे इन पापों का फल हमें भोगना पड़ेगा और उस समय उससे कोई हकीम, वैद्य और डाक्टर हमारी सहायता न करेगा।

हमारे जीवन में गार्हस्थ्य जीवन का बहुत ऊँचा स्थान है, इस जीवन में दाम्पत्य सुख अपनी उपयोगिता में अपूर्व और अद्वितीय है। दाम्पत्य सुख और संतोष की न तो किसी सुख तथा संतोष की तुलना की जा सकती है और न शब्दों में उसकी किसी प्रकार विवेचना की जा सकती है। यह प्रकृति-रचना का

अमरत्व है। यदि मनुष्य अपनी भूलों और भ्रमों के कारण उसको व्यर्थ बनाने की चेष्टा करे और अपनी अधार्मिक वृत्तियों के कारण उसकी शक्ति और उपयोगिता का सत्यानाश करे तो उसके समान और कौन अपराधी हो सकता है।

गार्हस्थ्य जीवन की प्रथम सीढ़ी दाम्पत्य जीवन है। इस जीवन के द्वारा ही मनुष्य अपने जीवन की उपयोगिता और महत्ता को जीवन-भर भोग करता है। प्रकृति ने इस जीवन में संतान देकर इस जीवन को और भी ऊँचा उठा दिया है। जब पति और पत्नी अपनी गोद में संतान का सुखोपभोग करती है, तो वह अपने सुख को कितना बड़ा सुख समझती है, यह बताने की बात नहीं है। जिन्हें ईश्वर यह सुख देता है, वही इसका अनुभव करता है। जो अपने जीवन में संतान के लिए दुखी हैं, उनके जीवन का सुख और संतोप अत्यन्त नीरस होता है उनका जीवन सब कुछ होते हुए भी शुष्क होता है। दाम्पत्य-सुख और संतान-सुख गार्हस्थ्य जीवन के दो अमर प्रसाद हैं।

गृहस्थ अपने जीवन में जितना ही पवित्र रहता है, उतना ही वह सुखी हो सकता है। गृहस्थ जीवन की अपवित्रता और अकर्मण्यता गार्हस्थ्य जीवन के सुखों का नाश कर देती है। इस अकर्मण्यता और अपवित्रता के कारण ही समाज का गार्हस्थ्य जीवन जितना सुखी और सन्तुष्ट होना चाहिए, नहीं है। यहाँ पर यह जान लेना भी अत्यन्त आवश्यक है कि गार्हस्थ्य जीवन के समान सुख भी नहीं है और उसके समान दुख भी किसी

जीवन में नहीं है । यदि इस जीवन को पति और पत्नी सुख और संतोष का जीवन नहीं बना सकते और यदि कुछ परिस्थितियों ने उनके जीवन को अव्यवस्थित बना पाया तो यह अमर जीवन नरक के रूप में परिणत हो जाता है।

जीवन की इस अवस्था में किसी को आश्चर्य न करना चाहिए जो विषाक्त पदार्थ मनुष्य को मार सकते हैं वही उनको जीवनदान भी देते हैं, अंतर केवल उनके उपयोग में होता है। यही अवस्था गार्हस्थ्य जीवन की है। जब गृहस्थ अपने अव्यवस्थित जीवन से अपने गार्हस्थ्य जीवन को मिट्टी में मिलाता है, तो उसके दुखों का ठिकाना नहीं रहता और यदि अपनी पवित्रता सद्व्यवहारिकता और योग्यता से उसको सम्भालने का भर सक प्रयत्न करता है, तो वह उसके अमर सुखों का उपयोग भी कर सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि इस जीवन का सुख और दुख इस जीवन के उत्तरदायी स्त्री और पति के ऊपर निर्भर है। जो लोग इससे दुखी और असन्तुष्ट हों, उनको अपनी स्थिति के सम्भालने की चेष्टा करनी चाहिए यदि पत्नी और पति मिलकर अपने जीवन को सुखी बनाने की चेष्टा करें तो बिना किसी सन्देह के वे सुखी हो सकते हैं । और जो लोग अपने असन्तुष्ट जीवन को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं, उनको उसके सुखों से हाथ धो लेना चाहिए।

इसका उत्तरदायित्व पुरुष के ऊपर है और पुरुष के ऊपर

उत्तरदायित्व होने के दो प्रधान कारण हैं। पहला कारण तो यह कि रुपये में पन्द्रह आने पुरुष के अनुत्तरदायित्व पूर्ण जीवन के कारण दाम्पत्य जीवन का सुख-सौभाग्य मिट्टी में मिलता है। दूसरा कारण यह है कि यदि स्त्री अपने किसी अपराध के कारण उस जीवन के सुखों को नष्ट करने की अपराधिनी है तो पुरुष अपने इस दाम्पत्य जीवन की दुरवस्था को सम्भालने के स्थान पर उदासीन हो जाता है और अपने गार्हस्थ्य जीवन के बाहर कहीं अन्यत्र अपने मनोरंजन और विनोद का अवलम्ब खोज लेता है, बजाय इसके कि वह अपने जीवन की उस दुरवस्था को परिवर्तित करने का प्रयत्न करे। थोड़ी सी असुविधा और अवस्था उत्पन्न होने पर सहज ही उसको सम्भाला जा सकता है और यह सारा दायित्व समाज की ओर से नहीं, प्रकृति की ओर से पुरुष के ऊपर है, यदि वह ऐसा नहीं करता अथवा नहीं कर सकता, तो इसका यह स्पष्ट अर्थ है कि वह पति होने के अयोग्य है।

यदि विशेष अवस्थाओं में पति अपनी पत्नी के कारण जो हमारे देश में बहुत कम सम्भव है, अपना गार्हस्थ्य जीवन सुख और संतोष पूर्ण बनाने में विफल होता है और अपने सारे प्रयत्न कर चुकता है तो अपने गार्हस्थ्य जीवन को नष्ट-भ्रष्ट करने के स्थान पर सुख-संतोष पूर्ण बनाने का अधिकारी है। और इन विरुद्ध परिस्थितियों में स्त्री-पुरुष समान रूप से एक दूसरे से असहयोग करने के लिए अधिकारी हैं। किन्तु

ईश्वर न करे किसी को अपने दाम्पत्य जीवन में इन परिस्थितियों का सामना करना पड़े।

सन्तान के प्रति माता-पिता में जितना स्नेह होता है, उससे भी अधिक और उत्तरदायित्वपूर्ण उसका कर्त्तव्य होता है। सन्तान उत्पत्ति के पश्चात ही यह कर्तव्य आरम्भ हो जाते हैं और माता-पिता के कर्त्तव्य तब तक बराबर चलते रहते हैं तब तक कि वे पूर्णरूप से समर्थ नहीं हो जाते। समाज में प्रायः देखा जाता है कि माता-पिता संतान उत्पन्न करके और कुछ दिन खिला-पिलाकर के ही अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं। यदि उनका कर्त्तव्य यहीं तक हो सकता है तो फिर मनुष्य में और अन्य जीवों तथा पशुओं में अन्तर ही क्या रह जाता है। इसलिए कि सन्तान का पैदा करना और पाल-पोषकर उनको सयाना करना तो पशुओं से लेकर सृष्टि के सभी जीवों में पाया जाता है। मनुष्य अन्य जीवों की अपेक्षा जितना ही श्रेष्ठ है, उतनी ही श्रेष्ठता उसके कर्त्तव्यों में भी होनी चाहिए।

माता-पिता सन्तान का पालन-पोषण करते हैं, जैसे-जैसे वह बड़ी अवस्था को पहुँचती है, माता-पिता के कर्त्तव्य बढ़ते जाते हैं। जब तक सन्तान अबोध रहती है, उनके लिए खाने-पीने और वस्त्रों की ही चिन्ता रहती है, ज्ञान-तन्तुओं के पैदा होने पर, उसको पढ़ाना-लिखाना माता-पिता का कर्त्तव्य हो जाता है। और इस अवस्था में प्रत्येक बुराई से उसको बचाकर सुपथ पर लगाना, योग्य बनाने की चेष्टा करना भी माता-पिता का कर्त्तव्य

होता है। इस प्रकार सन्तान जितनी अवस्था प्राप्त करती जाती है, उतने माता-पिता के कर्त्तव्य उनके प्रति बढ़ते जाते हैं और सभी बातों में जब वे पूर्ण समर्थ हो जाते हैं, उस समय माता-पिता अपनी उस सन्तान के प्रति कर्त्तव्यों से मुक्त हो जाते हैं।

माता-पिता की यह अवस्था उसकी एक सन्तान के प्रति होती है। इस प्रकार स्त्री और पुरुष उतनी ही सन्तान उत्पन्न कर सकने के अधिकारी हैं जितने का वे यथेष्टरूप से पालन-पोषण कर सकें और उनके प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकें, जो ऐसा नहीं कर सकते और सन्तान उत्पन्न करते जाते हैं, वे भी अपने कर्त्तव्य को पूरा न करने के लिए उत्तरदायी होते हैं। माता-पिता के अपने कर्त्तव्य न पालन करने के कारण सन्तान जितनी ही अनुत्तरदायी होती है, कष्ट न केवल सन्तान को भोगना पड़ता है वरन् माता-पिता को भी। इसके उदाहरण समाज में प्रत्यक्ष दिखाई पड़ते हैं। लोग सन्तान पैदा करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं और जैसे हो सकता है अपनी स्थिति के अनुसार उसका कुछ दिन पालन-पोषण भी कर देते हैं। यह अवस्था यहाँ तक बढ़ गई है कि एक-एक गृहस्थ के चार-चार, छः छः सन्तानें होती हैं परन्तु उनमें किसी का पालन-पोषण अन्त तक समुचित रूप से नहीं होता, न तो उनकी शिक्षा ही पूर्णरूप से होती है और न उनके आचार-विचार ही समुन्नत होते हैं, फल यह होता है कि वे सब को सब अपने जीवन में अनुत्तरदायित्व से माता-पिता को बुढ़ापे में रो-रो कर अपना जीवन बिताना पड़ता

है। सन्तान के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन न करने के कारण दण्ड के रूप में यह प्रायश्चित है! प्रकृति के दण्ड इसी प्रकार के होते हैं जिनका कभी कोई अनुमान भी नहीं करता और अपने यौवन की मदिरा में उँह करके ही टाल दिया जाता है!

सन्तान पैदा करके उसको योग्य बनाना माता-पिता का कार्य है। जो माता-पिता अपनी सन्तात को पाल-पोष कर शिक्षित बनाने के साथ-साथ धार्मिक, चरित्रवान नहीं बनाते उनको अपनी इस प्रकार की सन्तान से अपने बुढ़ापे में कभी उपकार की आशा न करनी चाहिए। बुढ़ापे की अवस्था में माँ-बाप को इस प्रकार की सन्तान खाने-पीने को दें तो बड़ी सुन्दर बात है और यदि न दें तथा, उनकी कुछ सेवा-सुश्रूषा न करें तो कभी आश्चर्य न मानना चाहिए।

किसी साप्ताहिक पत्र में एक घटना प्रकाशित हुई थी, एक स्त्री के आठ सन्तानें हुई थीं, पाँच बालक पैदा हुए थे और और तीन बालिकाएँ। आठों संतानें बढ़कर सयानी हुईं, उनका बाप एक जमींदार था; किन्तु वह जुआरी था, अपने यौवनकाल में जमींदारी का कुछ हिस्सा तो उसने बेच डाला। कुछ हिस्सा रह गया। पाँचों बालक युवा हुए, लड़कियाँ विवाह के बाद, अपनी-अपनी ससुराल गईं। पिता तो पहले ही मर गए थे। माता जीवित थी। हिस्सा भाइयों ने आपस में बाँट लिया और अलग-अलग रहने लगे वे कोई पढ़े-लिखे न थे और सबके सब आलसी थे। उस माता की यह दशा हुई कि बुढ़ापे में उसको रोटियों के

लिए तरसना पड़ा और केवल खाने-पीने को उसने इतनी यातना झेली जितनी कोई अनाथ स्त्री भी कदाचित न झेलती ।

इसका कारण यह था कि उसकी सब सन्तानें अयोग्य और निकम्मी थी, यदि इन आठ के स्थान पर, एक भी होती और वह समझदार, योग्य, सुशिक्षित और परिश्रमी होती तो यह दुरवस्था होना असम्भव था ।

इस प्रकार की एक-दो नहीं, समाज में बहुत सी बातें सुनी जाती हैं, जिनमें माता-पिता को अपनी संतान के सयाने हो जाने पर असंतोष होता है । सैकड़ों उदाहरण ऐसे मिलेंगे जिनमें अपनी ही संतान के कारण, बूढ़े माता-पिता को रोना पड़ता है और संतान से उनको कोई भी आशा पूरी नहीं होती, इसका कारण एकमात्र यही है कि संतान योग्य और शिक्षित नहीं बनाई जाती । एक अयोग्य अशिक्षित अधार्मिक तथा चरित्रहीन संतान से जो वास्तव में आशा करना चाहिए वही होता है।

दाम्पत्य जीवन में संतान के लिए जो लालसा होती है, वह लालसा उसके प्रति कर्त्तव्य पालन में नहीं होती । यदि कर्त्तव्य परायणता के साथ संतान का पालन-पोषण हो तो किसी भी दम्पति के अधिक संतान हो ही नहीं सकती, जो होगी, वह वीर साहसी चरित्रवान और सुशिक्षित होगी । साधारण से साधारण माता-पिता सात-सात आठ-आठ संतान जब उत्पन्न करते हैं परन्तु उनकी स्थिति दो बालकों के पालन करने के योग्य भी नहीं होती तो सिवा

इसके कि वे संतानें निर्बल अशिक्षित और चरित्रहीन हों, और हो ही क्या सकता है। माता और पिता के इस अनुत्तरदायित्व का एक मात्र कारण यह है कि उनको स्वयं इस प्रकार की शिक्षा नहीं मिली। उनको स्वयं अपने कर्त्तव्यों का ज्ञान नहीं है। न किसी से वे इस प्रकार की बातों की शिक्षा पाते हैं और जिन पुस्तकों के अध्ययन से उनको इन बातों की जानकारी हो सकती है उनसे वे बहुत दूर रहा करते हैं।

हमारा समाज आज यदि अशिक्षित न होता और उसमें यदि साहित्यालोकन का अभ्यास होता तो उसकी आज यह अवस्था न होती! लोग गृहस्थ बन जाते हैं किन्तु गार्हस्थ्य धर्म क्या है, इस बात का उनको ज्ञान नहीं होता। ऐसी अवस्था में इसके सिवा और हो ही क्या सकता है?

गार्हस्थ्य धर्म में पैर रखने के साथ ही उसके सम्बन्ध की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। माता-पिता अपनी जानकारी और अपने अनुभव उनको आवश्यकता के रूप में बतावें और ऐसे ढँग से बतावें जैसे बालकों को कथाएँ सुनाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त इस प्रकार की अधिक से अधिक पुस्तकों का नवीन दम्पत्तियों को अध्ययन करने की बड़ी आवश्यकता होती है, बिना अध्ययन के अपने जीवन के कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य का उनको ज्ञान नहीं हो सकता।

दाम्पत्य जीवन में पदार्पण करने के बाद, प्रत्येक युवती और युवक को जानना चाहिए कि उनका संतान उत्पन्न करना उसी

अवस्था में सार्थक है जिस अवस्था में वे अपनी संतान को अर्जुन के समान वीर और भीम के समान पराक्रमी बना सकें, अन्यथा निर्बल, भीरु, कायर और अयोग्य संतान पैदा करके व्यर्थ ही माता अपने जीवन और शरीर का सत्यानाश करेगी। विवाह करने के साथ ही युवकों और युवतियों को इस बात की प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए। और जीवन-भर उनको अपने इस आदर्श को निभाना चाहिए। ऐसा कर सकने पर ही माता-पिता को संतान का सच्चा सुख मिल सकेगा।

गृहस्थी में जाननेयोग्य बातें

(१)

स्त्रियों को स्वभावतः रंग-विरंगी वस्तुओं से बड़ा स्नेह होता है, उसी स्वभाव की प्रेरणा से वे अपने पहनने के कपड़ों को भिन्न-भिन्न रंगों से रंगकर पहनती हैं। स्त्रियों की यह चाल न केवल हमारे देश में है, वरन विदेशों में भी यह चाल पायी जाती है। दूसरे देशों की इस चाल में और हमारे यहाँ की इस चाल में इतना ही अंतर है कि वे जिस बात का शौक रखती हैं, उसको वे स्वयं बनाना भी जानती हैं, विदेशी स्त्रियों को तरह तरह के सिलाई के कपड़े पहनने का शौक है किन्तु दूसरे की सिलाई पर निर्भर होकर के ही नहीं। वे स्वयं भी उस कला को जानती हैं और अपने मन की चीज को अपने हाथों से तैयार करती हैं। यही बात रंग के सम्बन्ध में भी है। गृहस्थों को इन बातों की स्वयं जानकारी न होने के कारण न केवल पैसे की बड़ी हानि होती है, समय भी बहुत खराब करना पड़ता है। और रंगनेवालों को व्यर्थ में पराधीनता उठाकर अपनी इस शौक को दूसरों पर निर्भर रखना पड़ता है। इसलिए अपने जीवन की सभी आवश्यकताओं और शौकों को पूरा कर लेना प्रत्येक गृहस्थ का काम है। ऐसा कर सकने पर ही वह अपना रुपया-पैसा बचा सकेगा और अच्छी तरह शौक भी कर सकेगा। तरह-तरह के रंग बनाने की विधियों को नीचे

दिया जाता है। जिससे जानकार होकर स्त्रियों को लाभ उठाना चाहिए।

(१) पीला या बसन्ती रंग (कच्चा)—साफ़ हलदी एक छटाँक .खूब महीन पीसकर पानी में छान लेना चाहिए। इसी छाने हुए पानी में फ़िटकरी का पानी मिलाकर और .खूब अच्छी तरह कपड़े को भिगोकर निचोड़ डालना चाहिए फिर छाया में सुखाना चाहिए।

(२) हरा रंग (पक्का)—जिस कपड़े को रंगना हो उसे पहले पक्के नीले रंग में रंग लेना चाहिए। दूसरे दिन हल्दी के औटाए हुए पानी में रंगना चाहिए और छाया में सुखाना चाहिए। सूख जाने के बाद फिर फिटकरी के पानी में धोकर सुखाना चाहिए। ऐसा करने से पक्का हरा रंग तैयार हो जाता है।

(३) बैंगनी रंग (पक्का)—आधा पाव पतंग का चूर्ण, फिटकरी चौथाई छँटाक, पाँच सेर पानी में पन्द्रह मिनटतक उबालकर छान लेना चाहिए फिर इस पानी में कपड़े को भिगोकर निचोड़ लेना चाहिए और उसके बाद चौथाई छँटाक सोडा, पाँच सेर पानी में घोलकर, दस मिनिट रई रकपड़े को भिगो देना चाहिए और फिर कपड़े को निकाल कर [illegible]ा में सुखा लेना चाहिए।

(४) बादामी रंग (पक्का)—पाँच सेर गरम पानी में आधी छँटाक हीराकस को [illegible] लेना चाहिए और फिर कपड़े को पन्द्रह मिनट तक भिगो देना चाहिए। इसके बाद निचोड़ लेना चाहिए। छटाँक भर चूने को फरके[illegible]र पानी में घोलकर दूध की तरह बना

गृहस्थी में जाननेयोग्य बातें

(१)

स्त्रियों को स्वभावतः रंग-बिरंगी वस्तुओं से बड़ा स्नेह होता है, उसी स्वभाव की प्रेरणा से वे अपने पहनने के कपड़ों को भिन्न-भिन्न रंगों से रंगकर पहनती हैं। स्त्रियों की यह चाल न केवल हमारे देश में है, वरन विदेशों में भी यह चाल पायी जाती है। दूसरे देशों की इस चाल में और हमारे यहाँ की इस चाल में इतना ही अंतर है कि वे जिस बात का शौक रखती हैं, उसको वे स्वयं बनाना भी जानती हैं, विदेशी स्त्रियों को तरह तरह के सिलाई के कपड़े पहनने का शौक है किन्तु दूसरे की सिलाई पर निर्भर होकर के ही नहीं। वे स्वयं भी उस कला को जानती हैं और अपने मन की चीज को अपने हाथों से तैयार करती हैं। यही बात रंग के सम्बन्ध में भी है। गृहस्थों को इन बातों को स्वयं जानकारी न होने के कारण न केवल पैसे की बड़ी हानि होती है, समय भी बहुत खराब करना पड़ता है। और रंगनेवालों को व्यर्थ में पराधी- नता उठाकर अपनी इस शौक को दूसरों पर निर्भर रखना प- है। इसलिए अपने जीवन की सभी आवश्यकताओं और को पूरा कर लेना प्रत्येक गृहस्थ का काम है। ऐसा क पर ही वह अपना रुपया-पैसा बचा सकेगा और अच्छी तरह भी कर सकेगा। तरह-तरह के रंग बनाने की विधियों को नीचे

दिया जाता है। जिससे जानकार होकर स्त्रियों को लाभ उठाना चाहिए।

(१) पीला या वसन्ती रंग (कच्चा)—साफ़ हलदी एक छटाँक ख़ूब महीन पीसकर पानी में छान लेना चाहिए। इसी छाने हुए पानी में फिटकरी का पानी मिलाकर और ख़ूब अच्छी तरह कपड़े को भिगोकर निचोड़ डालना चाहिए फिर छाया में सुखाना चाहिए।

(२) हरा रंग (पक्का)—जिस कपड़े को रंगना हो उसे पहले पक्के नीले रंग में रंग लेना चाहिए। दूसरे दिन हल्दी के औटाए हुए पानी में रंगना चाहिए और छाया में सुखाना चाहिए। सूख जाने के बाद फिर फिटकरी के पानी में धोकर सुखाना चाहिए। ऐसा करने से पक्का हरा रंग तैयार हो जाता है।

(३) बैंगनी रंग (पक्का)—आधा पाव पतंग का चूर्ण, फिटकरी चौथाई छँटाक, पाँच सेर पानी में पन्द्रह मिनटतक उबालकर छान लेना चाहिए फिर इसी पानी में कपड़े को भिगोकर निचोड़ लेना चाहिए और उसके चौथाई छँटाक सोडा, पाँच सेर पानी में घोलकर, दस मिनिट कपड़े को भिगो देना चाहिए और फिर कपड़े को निकाल छाया में सुखा लेना चाहिए।

(४) बादामी (पक्का)—पाँच सेर गरम पानी में आधी छँटाक हीराकसी घोल लेना चाहिए और फिर कपड़े को पन्द्रह मिनट तक भिगोना चाहिए। इसके बाद निचोड़ लेना चाहिए। छटाँक भर चूने को सेर पानी में घोलकर दूध की तरह बना

गृहस्थी में जाननेयोग्य बातें

(१)

स्त्रियों को स्वभावतः रंग-बिरंगी वस्तुओं से बड़ा स्नेह होता है, उसी स्वभाव की प्रेरणा से वे अपने पहनने के कपड़ों को भिन्न-भिन्न रंगों से रंगकर पहनती हैं। स्त्रियों की यह चाल न केवल हमारे देश में है, वरन विदेशों में भी यह चाल पायी जाती है। दूसरे देशों की इस चाल में और हमारे यहाँ की इस चाल में इतना ही अंतर है कि वे जिस बात का शौक रखती हैं, उसको वे स्वयं बनाना भी जानती हैं, विदेशी स्त्रियों को तरह तरह के सिलाई के कपड़े पहनने का शौक है किन्तु दूसरे की सिलाई पर निर्भर होकर के ही नहीं। वे स्वयं भी उस कला को जानती हैं और अपने मन की चीज को अपने हाथों से तैयार करती हैं। यही बात रंग के सम्बन्ध में भी है। गृहस्थों को इन बातों को स्वयं जानकारी न होने के कारण न केवल पैसे की बड़ी हानि होती है, समय भी बहुत खराब करना पड़ता है। और रंगनेवालों को व्यर्थ में पराधीनता उठाकर अपनी इस शौक को दूसरों पर निर्भर रखना पड़ता है। इसलिए अपने जीवन की सभी आवश्यकताओं और शौकों को पूरा कर लेना प्रत्येक गृहस्थ का काम है। ऐसा कर सकने पर ही वह अपना रुपया-पैसा बचा सकेगा और अच्छी तरह शौक भी कर सकेगा। तरह-तरह के रंग बनाने की विधियों को नीचे

. एक लकड़ी से एक घन्टे तक चलाते रहना चाहिए, .फर और कपड़े को निचोड़कर एक छटाँक सोडे पानी में उबालकर और कपड़े को आधा घन्टा सोडे । उबालकर सुखा लेना चाहिए।

.) कत्थई रंग, (पक्का)—पाँच सेर पानी में आधा पाव . का चूर्ण उबाल कर सत निकालना चाहिए फिर कपड़े को .स सत में आधा घन्टे तक भिगोकर निचोड़ लेने के बाद, आधी छटाँक लाल कसीस पाँच सेर गरम पानी में मिलाकर आधे घन्टे के लिए भिगो देना चाहिए और फिर साफ़ पानी में धोकर सुखा लेना चाहिए। पक्का रंग तैयार हो जायगा।

(९) कासनी रंग— ढाई सेर पानी में आधी छटाँक नील को घोलकर, कपड़े को रंग कर सुखा लेना चाहिए, फिर कुसुम के फूलों के रंग में कपड़े को रंगना चाहिए, तब खटाई या फिटकरी के पानी में धोकर उसे सुखा लेना चाहिए।

(१०) नारङ्गी रंग—हरसिंगार के फूलों की डन्डी को पानी में खूब पकाकर कपड़े को रंग लेना चाहिए और फिर कुसुम के पानी में रंगकर खटाई या फिटकरी के पानी में धोकर सुखा लेना चाहिए।

(११) काला रंग (पक्का)—गुड़ का शीरा एक सेर, पानी दस सेर, लोहे के टूटे-फूटे वर्तन या कील, काँटे (मोर्चा लगे हुए लोहे के टुकड़े इस काम के योग्य नहीं होते, यदि मोर्चा लगा हुआ हो तो उन्हें गरम करके कूट लेना चाहिए जिससे मोर्चा छूट

लेना चाहिए फिर उस निचोड़े हुए कपड़े को चूने के पानी में अच्छी तरह भिगोलेना चाहिए और निचोड़कर सुखा देना चाहिए। कपड़े के अच्छी तरह सूखजाने पर उसपर बादामी रंग चमकने लगे तब उसे सादे पानी में धोकर सुखा लेना चाहिए।

(५) सुआपंखी रंग—कपड़े को नीले हलके रंग में रंगकर फिर टेसू के फूलों का रंग निकाल कर उसमें रंग लेना चाहिए और सुखा लेना चाहिए। कपड़ा जब सूख जाय तब फिटकरी के पानी में धोकर सुखा लेना चाहिए।

(६) धानी रंग (पक्का)—पाव भर अनार की छाल को पाँच सेर पानी में आध घन्टे तक उबाल कर उसका सत निकालना चाहिए, फिर कपड़े को इस [illegible] आधा घन्टा तक भिगोकर निचोड़ लेना चाहिए। इसके बाद एक छटाँक फिटकरी को पाँच सेर पानी में घोल कर पन्द्रह मिनट के लिए कपड़े को भिगोकर [illegible]ड़ लेना चाहिए, फिर एक छटाँक [illegible] सोडे को पाँच सेर पानी [illegible] घोलकर कपड़े को पन्द्रह मिनट त[illegible] भिगोकर और निचोड़ कर उसको साफ पानी में धोकर सुखा [illegible] चाहिए।

(७) गुलाबी रंग (पक्का)—पहले [illegible] छटाँक साबुन के [छो]टे-छोटे टुकड़े काटकर डेढ़ सेर [illegible] र निभमें घोल लेना चाहिए, [उ]समें पन्द्रह मिनट कपड़े को भीग [illegible] (प[illegible] श्यकतसे निचोड़कर सुखा [ले]ना चाहिए, फिर एक बर्तन में पाँच्योल [illegible] है। [illegible] डालकर उसमें आधी [illegible] फिटकरी और पाव भर मजी चा[illegible] और [illegible] डालकर चूल्हे पर [illegible] देना चाहिए फिर कपड़े को आँच [illegible] की [illegible] में डालकर धीमी

फिर फूलों को निचोड़ कर निकाल लेना चाहिए और जब तक पीला पानी निकले तब तक धोते रहना चाहिए। बाद में चौथाई छटाँक सोडे को ढाई सेर पानी में घोलकर उसी में उन फूलों को भिगो लेना चाहिए, दस मिनट के बाद फूलों को निचोड़कर लाल रंग निकाल कर दूसरे बर्तन में रखना चाहिए, फिर कपड़े को इसी रंग में दस मिनट तक भिगोकर निचोड़ डालना चाहिए। इसके बाद पाव भर खट्टे नीबू का रस ढाई सेर पानी में मिलाकर, रंगे हुए कपड़े को कुछ देर तक भिगोए रखना चाहिए। नीबू के बदले में ४. या ५ इमली या कच्चे आम पीसकर पानी में घोलकर छान लेने पर खट्टा पानी बन जायगा और कपड़े पर लगाने से गुलाबी रंग होजायगा।

(१३) खाखी रंग, (पक्का)—पाँच सेर पानी में आधा पाव हर्रे के चूर्ण को आधा घण्टा खौला कर सत निकाल लेना चाहिए फिर कपड़े को उस सत में आध घण्टा तक भिगो देना चाहिए फिर पांच सेर पानी में एक छटाँक लाल कसीस को घोल कर कपड़े को उसमें आधा घण्टा भिगोकर और साफ़ पानी में धो कर सुखा लेना चाहिए।

(१४) गेरुआ रंग, (पक्का)—आधा सेर गरान की छाल को पाँच सेर पानी में आध घन्टे उबाल कर उसका सत निकाल लेना चाहिए फिर सत में कपड़ा आधा घण्टा भिगो कर निचोड़ डालना चाहिए फिर आधा पाव फिटकरी पाँच सेर पानी में

जाय) एक या दो सेर शोरे के पानी में घोलकर एक मिट्टी के बर्तन में रख लेना चाहिए। लोहे के टुकड़ों को एक कपड़े में बाँधकर इस शोरे के पानी में भिगो देना चाहिए। घड़े को पतले कपड़े से ढक देना चाहिए। पाँच-छः दिन में शोरा सड़कर सिरके की तरह बन जाता है, बीच-बीच में एक लकड़ी से इस शोरे को जरूर हिला देना चाहिए। और पाव भर हर्रे के चूर्ण को पाँच सेर पानी में उबालकर सत निकालना चाहिए फिर कपड़े को इस सत में आध घन्टा भिगोकर निचोड़ लेना चाहिए, फिर कपड़े को सुखाकर उन लोहों के टुकड़ों के पानी में भिगोकर सुखाना चाहिए। फिर उसी तरह हर्रे के सत और लोहे के पानी में कपड़े को रंगकर सुखा लेना चाहिए। तीसरी बार इसी तरह कपड़े को रंगने से अच्छा पक्का काला रंग चढ़ जायगा। लोहे के पानी को एक ही बार तीन बार के रंगने के लिए बना लेना चाहिए। तीन बार लिखी हुई रीति से रंग चढ़ा लेने के बाद, धूप में एक या दो दिन सुखाने के बाद साफ पानी में धो लेना चाहिए। धोने से जो काला रंग छूटेगा उससे यह न समझना चाहिए कि रंग कच्चा होगा। एक बार छूटेगा परन्तु रंग पक्का होगा।

(१२) गुलाबी रंग (कच्चा)—कुसुम के फूलों से गुलाबी रंग निकलता है परन्तु इस फल में पीला रंग भी होता है इसलिए पीला रंग निकाल देने के लिए पाँच छटाँक कुसुम के फूलों को एक मिट्टी के बर्तन में थोड़ी देर तक भिगो देना चाहिए

फिर फूलों को निचोड़ कर निकाल लेना चाहिए और जब तक पीला पानी निकले तब तक धोते रहना चाहिए। बाद में चौथाई छटाँक सोडे को ढाई सेर पानी में घोलकर उसी में उन फूलों को भिगो लेना चाहिए, दस मिनट के बाद फूलों को निचोड़कर लाल रंग निकाल कर दूसरे बर्तन में रखना चाहिए, फिर कपड़े को इसी रंग में दस मिनट तक भिगोकर निचोड़ डालना चाहिए। इसके बाद पाव भर खट्टे नीबू का रस ढाई सेर पानी में मिलाकर, रंगे हुए कपड़े को कुछ देर तक भिगोए रखना चाहिए। नीबू के बदले में ४ या ५ इमली या कच्चे आम पीसकर पानी में घोलकर छान लेने पर खट्टा पानी बन जायगा और कपड़े पर लगाने से गुलाबी रंग होजायगा।

(१३) खाकी रंग, (पक्का)—पाँच सेर पानी में आधा पाव हर्रे के चूर्ण को आधा घण्टा खौला कर सत निकाल लेना चाहिए फिर कपड़े को उस सत में आध घण्टा तक भिगो देना चाहिए फिर पांच सेर पानी में एक छटाँक लाल कसीस को घोल कर कपड़े को उसमें आधा घण्टा भिगोकर और साफ़ पानी में धो कर सुखा लेना चाहिए।

(१४) गेरुआ रंग, (पक्का)—आधा सेर गरान की छाल को पाँच सेर पानी में आध घन्टे उबाल कर उसका सत निकाल लेना चाहिए फिर सत में कपड़ा आधा घण्टा भिगो कर निचोड़ डालना चाहिए फिर आधा पाव फिटकरी पाँच सेर पानी में

घोलकर और उसमें कपड़े को आधा घन्टा भिगो कर और निचोड़ कर, साफ पानी में धो कर सुखा लेना चाहिए।

(१५) लाल रंग, (पक्का)—मजीठ से लाल रंग बनता है। मजीठ से रंग बनाने के पहले कपड़े को फिटकरी, सोडा और साबुन के पानी में भिगोना पड़ता है। तीनों प्रकार के पानी अलग अलग होना चाहिये।

फिटकिरी का पानी—एक मिट्टी के घड़े में पाँच सेर पानी में पाँच छँटाक फिटकिरी को बारीक पीसकर घोल कर रख देना चाहिए।

सोडे का पानी—एक दूसरे मिट्टी के घड़े में आधा सेर सोडे को पाँच सेर पानी में घोलकर रख लेना चाहिए। यदि सोडे का पानी गन्दा हो तो छान लेना चाहिए।

साबुन का पानी—डेढ़ पाव अच्छा कपड़ा धोने का साबुन पाँच सेर पानी में छोटे-छोटे टुकड़े काट कर घोल डालना चाहिए। गरम करने से जल्दी घुल जायगा।

अब फिटकिरी के पानी को चौड़े मुंह के बरतन में रखकर उसमें डेढ़ पाव सोडे का पानी धीरे-धीरे छोड़ते रहना चाहिए। जिस समय सोडे का पानी फिटकिरी के पानी में छोड़ा जायगा उस समय पानी सफेद हो जायगा और दही की तरह बर्तन में नीचे बैठ जायगा। फिटकिरी के पानी को एक लकड़ी से खूब हिलाते रहना चाहिये। सोडे का पानी और अधिक एक एक बूँद करके छोड़ने पर फिटकिरी का पानी न साफ हो

तो और सोडे का पानी न छोड़ना चाहिए। इस प्रकार से बनाये हुये पानी में कपड़े को आधा घन्टा भिगोकर सुखा लेना चाहिए। और हवा में बारह घन्टे के लिए फैला देना चाहिए।

इसके बाद फिर इसी तरह फिटकरी के पानी में कपड़े को भिगोकर निचोड़, सुखाकर, बारह घन्टे तक हवा में फैलाना चाहिए।

इस तरीके के करने के बाद फिर साबुन के पानी में कपड़े को डाल कर आध घन्टे हवा में फैला देना चाहिए इसके बाद फिर फिटकिरी और सोडे के पानी में आधा घन्टे कपड़े को भिगो कर सुखा लेना चाहिये फिर हवा में बारह घन्टे तक फैला देना चाहिये। इन तरीकों के करने के बाद कपड़े पर मजीठ रंग बहुत बढ़िया चढ़ेगा।

खूब बारीक पाव भर मजीठ का चूर्ण, पाँच सेर पानी में घोल कर कपड़ा डालना चाहिए और लकड़ी से बराबर चलाते रहना चाहिये, और कपड़े के बर्तन को धीमी-धीमी आँच पर गरम करना चाहिए और तीन घन्टे बराबर आँच पर पकने के बाद उतार कर, निचोड़ कर और खूब झाड़ कर सुखा लेना चाहिये। फिर एक छटाँक सोडे को पाँच सेर पानी में डालकर आधा घन्टा तक पानी में उबालते रहना चाहिए। यदि रंग गाढ़ा करना हो तो एक बार फिर ऊपर के तरीकों को करना चाहिये।

(१६) काही रंग—पाव भर अनार के छिलके सवा सेर पानी में रात को भिगो देना चाहिए। सुबह कपड़े को हलके नीले रंग में रंगकर और सुखाकर, और फिटकरी के पानी से धोकर सुखा लेना चाहिए।

(१७) सब्ज काही रंग—हल्दी के पानी में कपड़े को रंगकर फिर औटाए हुए हल्दी के पानी में रंगना चाहिए। कपड़े को सुखाकर फिटकरी के पानी में धो लेना चाहिए।

(१८) काकरेजी रंग — सवा पाव पतंग, आधा पाव महावर हिरमिजी और माजूफल, दोनों चीजें तौल में तीन छँटाक होना चाहिए। सब चीजों को दो सेर पानी में औटाकर छान लेना चाहिए। फिर कपड़े को रंगकर सुखा लेना चाहिए

(१९) केसरिया रंग—पहले मजीठ को पानी में उबालकर रंग निकाल लेना चाहिए। फिर अनार के छिलके और हरसिंगार की डंडी को पानी में भिगोकर उनका रंग निकाल कर और दोनों रंगों को मिलाकर फिर कपड़े को रंग लेना चाहिए।

गृहस्थी में जानने योग्य बातें

२

मस्सा

मस्सा—यह छोटे-छोटे कंटक युक्त काले रंग के दाने होते हैं। यह दाने गर्दन, हाथ मुख या योनि पर प्रायः हुआ करते हैं इनकी ऊंचाई $\frac{१}{१६}$ इञ्च से लेकर $\frac{१}{२}$ इञ्च तक की होती है। इनके होने से स्वाध्य नहीं खराब होता परन्तु चेहरे पर बदसूरती सी मालूम होती है। अगर यह दाने वात के कोप से होते हैं। तो काले रंग के होते हैं। यदि कफ के कोप से होते हैं तो खाल के रंग के होते हैं। यह दाने घोड़े की पूंछ के बाल से काटे जाते हैं। डाक्टर खाल को सुन्न करके नश्तर से बराबर कर देते हैं, तेजाब लगाकर भी जला देते हैं तथा तेज ऐसेटिक एसिड और टिंचर स्टील बराबर मिलाकर लगाते हैं और विद्युत द्वारा भी दूर कर देते हैं।

अमृत धारा एक महीने तक लगाने से मस्सा गायब हो जाता है। यदि नया ही मस्सा होगा तो दो ही चार दिन में गिर जायगा। कुछ देशी दवाइयाँ नीचे लिखी जाती हैं जिनसे मस्सा सहजही अच्छा हो जाता है—

एक पैसे का मीठा तेल, अधेले-अधेले के भिलावाँ व मैंनशिल

(१६) काही रंग—पाव भर अनार के छिलके सवा सेर पानी में रात को भिगो देना चाहिए। सुबह कपड़े को हलके नीले रंग में रंगकर और सुखाकर, और फिटकरी के पानी से धोकर सुखा लेना चाहिए।

(१७) सब्ज काही रंग—हल्दी के पानी में कपड़े को रंगकर फिर औटाए हुए हल्दी के पानी में रंगना चाहिए। कपड़े को सुखाकर फिटकरी के पानी में धो लेना चाहिए।

(१८) काकरेजी रंग — सवा पाव पतंग, आधा पाव महावर हिरमिंजी और माजूफल, दोनों चीजें तौल में तीन छँटाक होना चाहिए। सब चीजों को दो सेर पानी में औटाकर छान लेना चाहिए। फिर कपड़े को रंगकर सुखा लेना चाहिए

(१९) केसरिया रंग—पहले मजीठ को पानी में उबालकर रंग निकल लेना चाहिए। फिर अनार के छिलके और हरसिंगार की डंडी को पानी में भिगोकर उनका रंग निकाल कर और दोनों रंगों को मिलाकर फिर कपड़े को रंग लेना चाहिए।

गृहस्थी में जानने योग्य बातें

२

मस्सा

मस्सा—यह छोटे-छोटे कंटक युक्त काले रंग के दाने होते हैं। यह दाने गर्दन, हाथ मुख या योनि पर प्रायः हुआ करते हैं इनकी ऊंचाई १/१६ इञ्च से लेकर १/८ इञ्च तक की होती है। इनके होने से स्वास्थ्य नहीं खराब होता परन्तु चेहरे पर बदसूरती सी मालूम होती है। अगर यह दाने वात के कोप से होते हैं। तो काले रंग के होते हैं। यदि कफ के कोप से होते हैं तो खाल के रंग के होते हैं। यह दाने घोड़े की पूंछ के बाल से काटे जाते हैं। डाक्टर खाल को सुन्न करके नश्तर से बराबर कर देते हैं, तेजाब लगाकर भी जला देते हैं तथा तेज ऐसेटिक एसिड और टिंचर स्टील बराबर मिलाकर लगाते हैं और विद्युत द्वारा भी दूर कर देते हैं।

अमृत धारा एक महीने तक लगाने से मस्सा गायब हो जाता है। यदि नया ही मस्सा होगा तो दो ही चार दिन में गिर जायगा। कुछ देशी दवाइयाँ नीचे लिखी जाती हैं जिनसे मस्सा सहजही अच्छा हो जाता है—

- एक पैसे का मीठा तेल, अधेले-अधेले के भिलावाँ व मैंन्शिल

मंगाकर, तैल को अग्नि पर रक्खो, जब तैल पकने लगे तब भिलावाँ डाल दो जब भिलावां जल जाय तब बाहर निकालो और उसके ठंडा हो जाने पर मैंशिल पीसकर उसमें डालकर फेंटो, फिर उसे तीन सेर पानी में डालो, मैन्शिल ऊपर आ जायगा, इसको उतारकर पीतल के बर्तन में रक्खो। इसको लगाने से एक सप्ताह में मस्सा जाता रहेगा।

यूनानी के अनुसार—जो मस्सा लाल रङ्ग का न हो तो उसे बाल से काटकर ऊपर से हरतालवर्की व नौसादर सम भाग छिड़क दो पर यदि पीड़ा हो तो शीतोष्ण गाय का घी लगाना चाहिए।

आलू को चीरकर दो-चार बार दिन में रगड़ना चाहिए फिर दूसरे तीसरे दिन नाइट्रेट आफ सिलवर को लगाना चाहिए। चाक को नीबू के रस में घिसकर लगाना चाहिए।

मुहासा

मुहासे तीन प्रकार के होते हैं। (१) साधारण जो प्रायः युवा स्त्री-पुरुषों को निकल आते हैं। इनके निकलने के मुख्य स्थान कपोल माथा, नाक हैं। इनमें कभी स्याही भी होती है।

(२) गहरे कोषों के दोष, रक्त कोप, मन्दाग्नि, कोष्ठबद्धता, माँस मदिरा का अधिक सेवन करने से, अर्श में रक्त के एकदम बन्द होने से, गरम चीजों के खाने से गहरे मुहासे पैदा हो जाते हैं। इनका इलाज करने के पहले कोष्ठबद्धता, अजीर्ण, रक्त

क्षीणता और रक्त दोष को ओषधियों से दूर कर देना चाहिए और मद्य, माँस, लाल मिर्च का सेवन करने से बचे रहना चाहिए।

मुहासों को दूर करने की ओषधियाँ—

(१) ईथर रेक्टी फाइड (Ether rectified) १ औंस, लिन सेपोनिस (Lin Saponis) १ औंस, दोनों को मिलाकर लगाना चाहिए। (२) लाइकवार हाइडरेजिन पैरौकसाइड (Liqyor-Hydrogen Peroried) १ औंस, वैसेलीन (Vaseline) १ औंस, ऐनहाइड्रसलेनोलिन (Anhydrous Linoline) २ औंस, एसेटिक एसिड (Acetic acid 1 dram) १ ड्राम, इन सबको मिलाकर लगाना चाहिए।

(३) रेज़ोरसिन (Resorein) २ से ५ भाग, ग्लिसरीन (Glycerine) १ भाग, नारङ्गी पुष्पार्क (Orange flower water) २० भाग, अलकाहाल (Alcohol) ८० भाग, मिलाकर रखले और दिन में लगाना चाहिए।

(४) रात में लगाने की मलाई—बेन्ज़जिङ्क आयन्टमैन्ट (Benzzinc-ointment) २ भाग, सलफर पेसीपीरेट (Sulphur Precepitate) १ भाग, सिलीशस अर्थ (Siliceous earth) ४ औंस, सब मिलाकर लगाना चाहिए।

(५) मुहासों के मुखपर पीप पड़ गई हो तो निम्नलिखित दवा बनाकर लगाना चाहिए—चूर्ण सलफर हाइडोक्लोराइड (Pd Sulph-Hydochloride) १ ड्राम, बेन्जुएटिडलार्ड (Benzoated Lard) १ औंस मिलाकर रखलेना और लगाना चाहिए।

खाने की औषधियाँ—ऐसिड आरसिनक ½ ग्रेन, फैराई सलफाइस ऐक्सीकेटस १२ ग्रेन, केलसियाई सल्फाइड ४ ग्रेन, ऐक्टसट्राक्ट जन्शन २४ ग्रेन, सब को मिलाकर १२ गोलियाँ बनावे और सुबह भोजन करने के बाद खाना चाहिए।

सरफ़र प्रस्पीटेट २ ड्राम, कैम्पर १० ग्रेन, पल्वअकेशिया २० ग्रेन, लाइकरलेक्स २ औंस, अर्क गुलाब दो औंस, सब मिलाकर रक्खे और मुख पर मलना चाहिए।

श्वेत गुंजा तिल के तैल में पीसकर लगाना चाहिए। पीली कौड़ी तेज सिरके में मिट्टी के बर्तन में तीन दिन तक भिगोकर, छाया में सुखाकर, पीसकर लगाना चाहिए नीम की निमौली छाछ के पानी में घिसकर लगाना चाहिए। हल्दी या समुद्रफेन पानी में घिसकर लगाना चाहिए।

नरकचूर, आम्बा हल्दी, काँचिया नमक पीसकर लगाना चाहिए।

भुने चने का चूर्ण छः माशे, मुर्दहसंग ३ माशा, सफेद काशगरी ४ माशा, बकरी के दूध में पीसकर रात को मुहासों पर लगाना चाहिए और सुबह नीम के पानी से धो देना चाहिए।

मूली के बीज खरबूजे के बीज १-१ तोला चाकले का चूर्ण २ तोले सिरके में भिगोकर, सुखाकर फिर चिरौंजी, बादामगिरी, कड़वी कूट मीठा, अकछील, कतीरा ६, ६ माशा मिलाकर पीसकर टिकिया बनाकर रख दे। रात को एक टिकिया भेड़ी के दूध में घिसकर मुँह पर मले और सुबह धो देना चाहिए।

अलसी, बीज, गेरू, कलौंजी सिरका में पीसकर लगाना चाहिए।

कुटली काली दो भाग, मूल सौसम १ भाग सिरके में मिला कर लगाना चाहिए।

नीबू का रस लगाना चाहिए, स्टावरी के रस से मुँह धोना चाहिए।

शीतला के दाग़

जिस समय शीतला निकले उस समय निम्नलिखित चीजें लगाने से दाग न पड़ेंगे—

(१) बूरा अरगनी, हाथी दाँत का चूर्ण, अच्छे साबुन में मिलाकर पानी में घोलकर दागों पर लगाना चाहिए और सुबह धो देना चाहिए।

(२) गुलाब के फूल दो माशा, गुलबनफ़शा, गुलनीलोफर, लाल चन्दन, काहू बीज, कासनी बीज एक एक तोला, सब कूट करके २१ पाव पानी में औटाकर सेर भर कर ले। जब सेर पानी रहे तब उसे छानकर गर्म स्नान के बाद दागों पर लगाना चाहिए।

(३) मुर्दहसंग, पुराने नरसिल की जड़, चना चूर्ण, पुरानी हड्डी, खरबूजे की मींगी, बकायन बीज, कूट सम भाग पीसकर मेथी व अलसी के लुआब से रात को मलना चाहिए और सुबह भूसी व गर्म पानी से धो देना चाहिये।

(४) जड़ वनफ़सा, मुरदाशंख, कूट, बारहसिंहा भस्म, अरमनी चूर, इनको पीसकर छिड्डी के साथ मलना चाहिये।

झुर्रियाँ

झुर्रियाँ मिटाने के लिये कुछ उपाय यहाँ दिये जाते हैं पर यह ध्यान रहे कि जो स्त्री-पुरुष बहुमैथुन करते हैं उनकी झुर्रियाँ नहीं जा सकती हैं। साधारण झुर्रियाँ मालूम हों तो यह योग लाभदायक है—रोज़वाटर ६ औंस २१५ ग्रेन, सलफेटआफ़ ऐलूमीनम ३१ ग्रेन, टिङ्क्चर आफ़ किनक्विना ७७ ग्रेन। सोते समय इससे मुँह धोना चाहिये और पोंछकर बादाम रोग़न थोपना चाहिये।

मधु १० तोला में थोड़ा नीबू का रस मिलाकर फिर मुँह पर लेप करके, १५ मिनट बाद धोना चाहिए। १५ दिन तक ऐसा करना चाहिए।

जब झुर्रियाँ गर्म कमरों में बैठने, शोक, चिन्ता करने और अंगीठी के पास बैठने से समय के पहले होजाँय तब पहले गरम पानी से मुहँ धोकर और नर्म तौलिए से पोंछकर उसी समय ठंडी मलाई यहाँ तक मलनी चाहिए कि सब सूख जाय। १५ मिनट तक रगड़ने से सूख जायगी।

नेत्र रोग

नेत्रों से पानी जाना—बोरिकएसिड १५ रत्ती, ५ छटाँक पानी में मिलाकर, बार बार नेत्र धोना चाहिए और रुई से पोंछ देना

चाहिए। यदि आखें चिपक जॉय तो सोते समय पैटरोलियमजैली (Petroleum jelly) थोड़ा लगा देना चाहिए। यदि इससे आराम न हो तो जिङ्कसलफेट २० ग्रेन पानी में डिस्टिल्ड १० औन्स मिलाकर आँखों में डालना चाहिए।

भीमसेनी कपूर नेत्रों मे लगाना चाहिए।

पलकों का गिरना—चाकसू, खपरिया, कृष्ण सुरमा, बराबर का पीसकर कॉसी के बर्त्तन में गाय के घी में मिलाकर पलकों पर लगाना चाहिए।

रतौंधी होने पर—अमृत धारा पलक पर लगाना चाहिए।

नेत्र पीड़ा व लाली-नीला थोथा ३ माशा, ३ कागजी नीबू का रस, रसौत ५ तोला पानी में रात का भिगोदे, सवेरे निथारकर फिटकरी व नीला थोथा डालकर लोहे के करछे में आग पर रखे, जब पानी सूख जाय तब नीबू का रस डालकर औटावे तब तीन माशे की बटी बनावे, फिर पानी में थोड़ा घिसकर नेत्रों पर लेप करके लेट जाना चाहिए।

दन्त मञ्जन

सेंधानमक, कपूर, श्वेत सुरमा, भस्म फिटकरी खील, समभाग मिलाकर पीस कर दाँतों में मलने से दाँत बहुत साफ होते हैं।

जिह्वा स्वर

ब्रह्मा अरिष्ट खाने से स्वर कोयल के समान हो जाता है।

सिन्दूर खा लेने पर यदि खराब हो जाय तब सरसों के तैल के दीपक का गुल पान में प्रति दिन खाना चाहिए।

होठ लाल करने के लिए

कास्टिक सिरका या मदिरा लगाने से होठ लाल हो जाते हैं। एक अंग्रेजी औषधि—पैरफिन (Parrafin) ६ ड्राम, कोको बटर (Cocoa butter) ६ ड्राम, सफेद वैसेलीन (White Vaseline) १ औंस, ईओजीन (Eosin) १ ग्रेन, ओट्टो आफ रोज (Otto of Rose) ५ बिन्दु। सबको मिलाकर होठों पर लगाना चाहिए।

साँप के काटने पर

(१) साँप के काटने पर तुरन्त ही जिसको काटा हो उसे आधा सेर, तीन पाव घी पिला देने से कै के द्वारा सब विष निकाल देना चाहिए। (२) पीने की तम्बाकू एक छटाँक पानी में घोलकर पिलाने से कै होकर विष का असर जाता रहेगा। (३) तीन माशे नौसादर पानी में घोलकर पिलाना चाहिए, पाँच मिनट के बाद चूना और नौसादर छै छै माशे पीसकर थोड़ी-थोड़ी देर में सुँघाना चाहिए। इसी दवा को नाक के दोनों नथनों में भरकर नाक बन्द कर देना चाहिए। जब तक नाक बन्द रखें तब तक रोगी के हाथ-पैर पकड़े रहना चाहिए। (४) मोर के अण्डों में छोटे-छोटे छेद कर के काली मिर्च भरकर छेदों को मोम से बन्द कर देना चाहिए। काली मिर्च अंडों के रस को चूस कर फूल जायँगी और अण्डे फूट जायँगे। इन मिर्चों और अंडों के छिलकों को छाया में सुखा कर किसी को साँप काटे तो उसे, आध सेर केले के डंठल के पानी में चौदह

मिर्च पीस कर पिला देना चाहिए। (५) केले के पेड़ के बीच का गूदा कूटकर, रस निकाल ले फिर आधा सेर रस, जिस मनुष्य को साँप ने काटा हो उसे पिला देना चाहिए। (६) गाँजा पीने की चिलम में जो एक काली पपड़ी-सी जम जाती है, उसे बारीक पीस कर पानी में घोल लेना चाहिए फिर साँप की काटी हुई जगह पर किसी तेज़ औज़ार से छील कर जिससे लाल ख़ून निकल आवे फिर उस पपड़ी को पानी में घोल कर ख़ूब मलना चाहिए। उस काटी हुई जगह को कई वार काटना चाहिए अगर कई वार काटने से भी लाल ख़ून न निकले तो आँख की पलकों को उलटकर यही दवा लगाना चाहिए। (७) दस तोले पानी में पाँच तोले खाने की तम्बाकू को पीस कर साँप काटे मनुष्य को पिला देना चाहिए। यदि मरीज़ वेहोश है तो पानी उसके गले में डालकर पेट में पहुँचाना चाहिए और यदि दाँत बंध गये हैं तो नाक के द्वारा पेट में पहुँचाना चाहिए। पानी पेट में पहुँच जाने से कै हो जाने से विष निकल जायगा और मरीज अच्छा हो जायगा। (८) एक सेर गौमूत्र पाव भर गोवर मिलाकर कपड़े से छानकर पिलाना चाहिए या काटे हुए स्थान पर ख़ून निकाल कर गोवर और गौमूत्र की पुल्टिश बाँधना चाहिए। (९) सात काली मिर्चें, सफेद कनेर की जड़ की छाल वारह तोले पानी में पीसकर शीशी में भर ले फिर एक एक घन्टे में शीशी को खूब हिला-हिला-कर, एक-एक मिर्च पिला देना चाहिए। (१०) चिचिड़ा या अपा-मार्ग के पत्ते, डंठल या जड़ पानी में पीसकर, काटी हुई जगह पर

लगा देना चाहिए। और जब तक कड़वा न मालूम होने लगे तब तक रोगी को पिलाते रहना चाहिए। (११) काली मिर्च ग्यारह, छः माशे साठी की जड़, दोनों को पानी में घोलकर पिला देना चाहिये। यदि एक बार फायदा न हो तो तीन चार बार पिलाना चाहिए। (१२) नैचे में जमी हुई हुक्के की कीट को घी में मिलाकर चने के बराबर खिलाना चाहिए यदि एकबार में आराम न हो तो थोड़ी थोड़ी देर में कई बार खिलाना चाहिये और काटे पर लगा भी देना चाहिये।

बिच्छू के डंक मारने पर

जिस स्थान पर बिच्छू ने काटा हो उस स्थान से लेकर कुछ नीचे तक अपामार्ग (चिड़चिड़ा) की जड़ को हाथ से मलना चाहिये और जड़ को पीसकर लेप करना चाहिये। (२) खटाई और चूने को खूब महीन पीस कर काटे हुये स्थान पर रखने से दर्द मिट जाता है। (३) जिस स्थान पर बिच्छू ने डंक मारा हो उस स्थान पर छः माशे नौसादर रख कर, ऊपर से मोटे कपड़े की पट्टी बाँध कर ठंडे पानी की धार कुछ मिनटों तक डालना चाहिये। (४) निर्मली के बीजों को पानी में डालकर, घिस कर, बिच्छू के डंक मारे स्थान पर लेप करना चाहिए। (५) जिस स्थान पर बिच्छू ने डंक मारा हो केवल वहीं पर, (और इधर-उधर नहीं) तेज़ाब की बूंदें डालना चाहिए। (६) बिच्छू के डंक मारे स्थान में मूली के पत्तों का रस लगा देना चाहिये। (७) सीता फल के डंठल को पानी में

घिस कर काटे हुये स्थान पर लगादेना चाहिये। (८) जमाल-गोटा पानी में घिस कर लगाना चाहिए। (९) दियासलाई की सींकों का मसाला पानी में घिस कर लगाना चाहिये। (१०) पुरानी खाल को जलाकर काटे हुये स्थान पर लगा देना चाहिये। (११) डंक का विष उतारने के लिये एक माशा चूना पानी में मिलाकर पिलाना चाहिये। (१२) डंक मारे स्थान पर शहद और घी बराबर मिलाकर लगाना चाहिये।

वर्र के काटने पर

(१) काटे हुये स्थान पर कुछ दियासलाइयों को पानी में भिगोकर रगड़ देना चाहिये। (२) नौसादर और चूना मिलाकर मलना चाहिए। (३) काटे हुए स्थान पर गेंदे की पत्ती मलनी चाहिये। शहद और घी भी बराबर मिलाकर लगा देने से वर्र का काटा हुआ अच्छा हो जाता है।

कुत्ते के काटने पर

(१) कुत्ते के काटने पर जो घाव हो जाता है उसमें लाल मिर्च पीस कर भर देना चाहिये। (२) घाव में कुत्ते की विष्ठा जलाकर भर देनाचाहिये। (३) घाव में सातदिन तक एक एक रत्ती कुचला पीसकर लगाना चाहिए। (४) कुत्ते के काटे हुए रोगी को चिड़चिड़े की जड़ को पीसकर शहद में चटाना चाहिए। (५) कुत्ते के काटे हुए स्थान पर, गुर्वार के पट्ठे को एक ओर छीलकर, फिर उसपर सेंधा निमक बारीक पीसकर छिड़क दे और बाँध देना चाहिए। दो तीन दिन तक बाँधना चाहिए। (६) पागल कुत्ते के काटने पर,

केले की एक पकी फली के तीन टुकड़े कर लेना चाहिए और फिर सिंह की खाल के बाल साफ करके, एक एक रत्ती केले के टुकड़े में भर कर एक एक घंटे पर खिलाना चाहिए।

अफ़ीम का विष चढ़ने पर

(१) हींग को पानी में घोलकर पिला देने से अफ़ीम का विष उतर जाता है। (२) अफ़ीम का विष चढ़ने पर प्याज़ का रस सुँघाना चाहिये। (३) रीठे को पानी में भिगोकर उसका जल पिलाना चाहिये। (४) बिनौले का सत और फिटकरी का चूर्ण मिलाकर विष चढ़े रोगी को खिलाना चाहिये। (५) घी में चौकिया सुहागा पिसा हुआ मिलाकर पिलाना चाहिये। (६) नारी के साग को और उसके रस को निकालकर पिलाना चाहिये। (७) नमक और अंडी को बराबर पीसकर पानी में घोलकर पिलाना चाहिये। (८) अरहर के पत्तों का रस निकालकर या चौराई के पत्तों का रस निकाल कर पिलाना चाहिए। (९) अफ़ीम का नशा जिसको चढ़ा हो उसे नशा उतरने तक सोने न देना चाहिए। टहलाना चाहिए।

संखिया का ज़हर चढ़ने पर

(१) संखिया खाने पर और नशा चढ़ने पर गूलर के पत्तों का रस या गूलर का दूध पिलाना चाहिए। (२) गूलर की छाल को पीसकर पिलाना चाहिए। (३) नशा चढ़ने पर कत्थे को घोलकर पिलाना चाहिए। (४) नारंगी का रस पिलाना चाहिए।

धतूरे का विष चढ़ने पर

(१) जिसको धतूरे का विष चढ़ा हो उसे अदरक का रस पिलाना चाहिए। (२) बैंगन के पत्ते, फल और जड़ को पानी में पीसकर पिलाना चाहिए। (३) निबौरी या उसकी मींगी को पानी में पीसकर पिलाना चाहिए। (४) गुर्च या चौराई की जड़ को पानी में पीसकर पिलाना चाहिए। (५) कपास के फूल, फल, पत्ते, डंठल पानी में पीसकर पिलाना चाहिए।

भंग का नशा चढ़ने पर

(१) भग का नशा उतारने के लिए इमली का पानी पिलाना चाहिए। (२) अरहर की दाल का उबाला पानी पिलाना चाहिए।

सचित्र

स्वास्थ्य और योगासन

"अपने ढङ्ग की नवीन रचना है। इस विषय की इस समय जितनी भी पुस्तकें प्राप्त हैं, उनमें मेरे विचार से यह, अनूठी है।"

—आनन्दभिक्षु सरस्वती।

"इस स्वास्थ्य और योगासन पुस्तक के विषय का प्रतिपादन बड़े रोचक, सुगम और सरल ढङ्ग से किया गया है। शरीर की रचना और आसनों की विधि समझाने के लिये पचासों चित्र दिये गये हैं।"

—घासीराम एम० ए०, एल एल० बी० एडवोकेट, मेरठ।

"पुस्तक न केवल नवीन संतति और किशोर अवस्था वाले विद्यार्थियों के लिये ही उपयोगी है, अपितु वृद्धावस्थापन्न पुरुषों और स्त्रियों के लिये भी जो अपनी अनियमितताओं और त्रुटियों के कारण अपनी अमूल्य सम्पत्ति—स्वास्थ्य को नष्ट कर चुके हैं—एक बड़े सहायक का काम देनेवाली है।"

एक नई खुशखबरी

बालक बालिकाओं को स्वस्थ, प्रसन्न चित्त, योग्य चरित्रवान बनाने का सरल उपाय

बाल-साहित्यमाला का प्रकाशन

हर एक पढ़ा लिखा व्यक्ति इस बात का अनुभव कर रहा है कि बालकों के लिये अबतक ऐसी पुस्तकें प्रकाशित नहीं हुईं जिनको पढ़ने से न तो बालक घबड़ावें और न शुरू से ही उनको बुद्धि पर अधिक जोर पड़े और सब तरह से वे उन्नत हों। यह सब विचार कर ही बाल-साहित्य-माला में इस कमी को पूरा करने वाली बालकों के लायक बढ़िया पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं।

१—बाल-साहित्य-माला से प्रकाशित प्रत्येक पुस्तक सचित्र और बड़े अक्षरों में बढ़िया मजबूत कागज पर छपी हुई होती है।

२—पुस्तकों का मूल्य लागत मात्र रखा जाता है।

३—बाल-साहित्य-माला के स्थाई ग्राहकों को प्रति वर्ष उपहार दिया जाता है।

४—किसी भी आर्डर में पाँच पुस्तकें एक साथ मँगाने से चौथाई मूल्य की पुस्तकें इनाम में मुफ्त भेजी जाती हैं।

५—स्थाई ग्राहकों को माला की सब पुस्तक लेनी होती हैं जो पौने मूल्य में मिलती हैं।

६—स्थाई ग्राहक को प्रवेश फीस ।) चार आना है।

७—बाल-साहित्य की दूसरे जगहों की पुस्तकें भी यहाँ मिलती हैं।

तकं के लिये न कहना होगा डाटना या मरना तो दूर रहा। वे आप से आप पढ़ जावेंगे, हँस खेल कर स्वस्थ होंगे साथ ही अच्छी शिक्षाएँ सीखेंगे। इसी लिये मजबूत, चिकने, बढ़िया कागज पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य भी लागत मात्र केवल ।=) छे आना रक्खा गया है।

२—कनेठी पड़ाका

यह पुस्तक भी "दोनों भाई" की तरह रोचक सरल, सचित्र मनोरंजक और शिक्षा प्रद है जिसे लेकर बालक बिना कहे आप से आप पूरी पुस्तक रट डालते हैं और गाते रहते हैं। चित्रों को देख कर मस्त हो जाते हैं, छोटे छोटे बालक बालिकाओं के लिये ये पुस्तकें फौरन मँगा लेनी चाहिये। इन पुस्तकों की बहुत प्रशंसा की गई है। इसकी प्रत्येक कहानी बहुत ही बढ़िया रोचक और शिक्षा देने वाली है जिससे बालक आप ही बुराइयों से बचते हैं। इस प्रकार की पुस्तकें बालकों के लिये अबतक निकली ही नहीं। बीसों चित्रों से युक्त मजबूत, बढ़िया कागज पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य सिर्फ ।=) छे आना है।

३—भारत की वीर बालाएँ

वैसे तो यह पुस्तक प्रत्येक स्त्री पुरुष के पढ़ने लायक है पर बालिकाओं के लिये विशेप रूप से उपयोगी है। आज कल लड़कियों की शिक्षा का कितना अभाव है और उनके अन्दर से वीरता

धीरता, तथा स्त्रियोचित गुण किस प्रकार दूर हो गये हैं और होते जाते हैं यह बतलाने की आवश्यकता नहीं। हमारे यहां कैसी २ विदुषी वीर, धीर, पतिव्रता बालायें और स्त्रियाँ हुई हैं और उन्होंने वंश जाति तथा देश के गौरव की रक्षा की है जिसकी मिसाल विदेशी इतिहासों में नहीं मिल सकती। इस पुस्तक में ऐसी ही बालाओं का चरित्र, तथा उनकी जीवन घटनाएँ दी गई हैं जिनको पढ़कर हमारी लड़कियाँ अपने अस्तित्व को समझेंगी। भविष्य की सच्ची धार्मिका आदर्श गृहणी बनेंगी। पुस्तक जोरों से बिक रही है। दूसरा संस्करण होने से पहले ही बेटी बहू के हाथ में दीजिए। सचित्र पुस्तक का मूल्य केवल ।।) आठ आना।

४--बाल महाभारत

महाभारत हिन्दू जाति का अमूल्य ग्रन्थ है। लेकिन वह ऐसी पुस्तक है जिसमें बालकों के लायक बहुत कुछ होते हुए भी वे उसे नहीं पढ़ सकते। इस पुस्तक में महाभारत की शिक्षाप्रद कथा बालक बालिकाओं के ही पढ़ने योग्य सरल भाषा में लिखी गई है। लिखने का ढंग अत्यन्त रोचक है जिसे बच्चे बड़े चाव से पढ़ते हैं। धार्मिक शिक्षा और प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकों के विचार से इधर उधर की व्यर्थ की बातें किस्से कहानियां न पढ़ा कर यह पुस्तक उन्हें पढ़ने को देना चाहिये जिससे वे कुछ सीखें समझें भी और पढ़ने में पूरा आनन्द आवे। बाल महाभारत की जितनी पुस्तकें निकली हैं यह उनमें सब से अधिक पसन्द की गई है। सचित्र पुस्तक का मूल्य सिर्फ ।।) आठ आना।

स्त्रियों के व्यायाम

(३१ चित्र-सहित)

लेखक
विद्यावाचस्पति
पं० गणेशदत्त शर्मा गौड़ "इंद्र"

प्रकाशक
गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
प्रकाशक और विक्रेता
लखनऊ

प्रथम संस्करण

जिल्दसार २)] संवत् १९८७ वि० सादी १॥)

महाराजकुमारी श्रीकमलाराजा सेंधिया
(ग्वालियर के अल्पवयस्क नरेश की बड़ी बहन)

समर्पण-पत्र

सेवा में—

श्रीमंत माननीया महाराजकुमारी
श्रीकमलाराजा साहिबा
लश्कर (ग्वालियर)

पूज्य बहन !

यद्यपि परमात्मा की कृपा से आपको संसार के सभी पदार्थ सहज सुलभ हैं, और मुझ-जैसे की कृति आपके लिये कोई अलभ्य वस्तु नहीं मानी जा सकती, तथापि प्रजाजन के नाते मुझे "अभावे शालिचूर्णं वा शर्करा च गुडस्तथा" के अनुसार सुदामा के तंदुलवत् अपनी यह कृति आपको समर्पण करने में अपार हर्ष हो रहा है। मुझे आपके उदार स्वभाव से पूर्ण आशा है कि आप अपने एक लेखक-बंधु की इस तुच्छ भेंट को अंगीकार कर कृतकृत्य करेंगी।

शांति-कुटीर
आगर (ग्वालियर)
विजयादशमी, १६८६

विनीत धर्मबंधु—
गणेशदत्त शर्मा गौड़
"इंद्र"

भूमिका
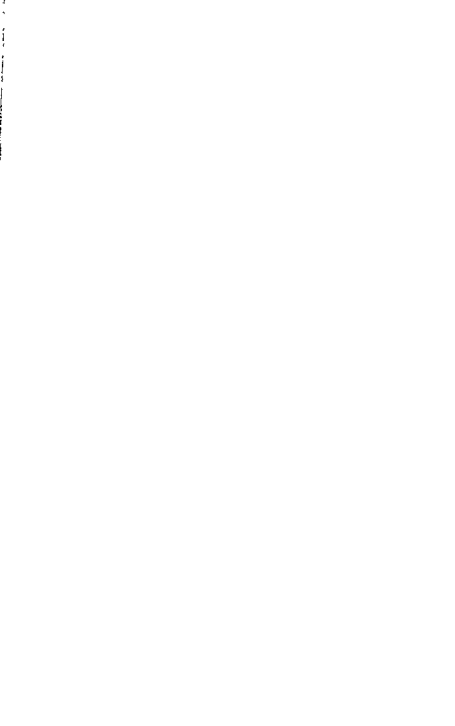
शरीर को सबल तथा सुडौल बनाए रखने एवं दीर्घजीवी बनने के लिये व्यायाम कितना आवश्यक है ; इसे हमारी बहनें तो क्या, बल्कि पुरुष भी बहुत कम समझते हैं ! जैसे किसी मशीन को कार्यक्षम बनाए रखने के लिये उसे साफ़ रखने तथा तेल आदि देते रहने की आवश्यकता होती है, उसी तरह इस शरीर-रूपी उत्तम मशीन को चालू रखने के लिये व्यायाम भी परमावश्यक है। मानव-निर्मित मशीन के ख़राब हो जाने पर अथवा बंद हो जाने पर तो वह फिर बनाई तथा चालू की जा सकती है, परंतु प्रकृति-निर्मित इस मानव-देह की गति एक बार बंद हो जाने पर फिर इसे गतिशील बना सकना अभी तो असंभव-सी बात है। आगे चलकर विज्ञान क्या करेगा, इसे ईश्वर जाने। अस्तु।

प्राणियों के जीवन को स्थिर रखने के लिये शुद्ध वायु एक सबसे पहली और ज़रूरी चीज़ है। तंदुरुस्ती उस वक़्त तक ठीक नहीं रक्खी जा सकती, जब तक कि मनुष्य शुद्ध वायु काम में न लावे। यह सबों को मालूम ही है कि बिना अन्न और जल के कुछ दिनों जीवित रहा जा सकता है, परंतु बिना हवा के कुछ ही मिनटों में मृत्यु हो जाती है। तात्पर्य यह कि स्वास्थ्य की उत्तमता एवं निकृष्टता बहुत कुछ वायु पर अवलंबित है। इसलिये व्यायाम के समय विशेषतः शुद्ध और खुली हवा की आवश्यकता है।

व्यायाम के द्वारा फेफड़ों में रक्त का तेज़ी से संचालन होने लगता है। रक्त और वायु का फेफड़ों में समागम होता है। हवा में मिश्रित प्राण-वायु (Oxygen), जो कि शरीर की जीवित सेलों (Cells) के जीवन तथा विकास के लिये एक अत्यावश्यक वस्तु है, ख़ून में मिलकर

शरीर के प्रत्येक भाग में पहुँच जाती है। इससे यकृत, मस्तिष्क तथा अन्य अवयव पुष्ट होकर ठीक-ठीक दशा में अपना काम करते रहते हैं—परिणाम यह होता है कि शरीर में शिथिलता-रूपी जंग कभी लगने ही नहीं पाता।

हवा की तरह सूर्य का शुद्ध प्रकाश भी प्राणियों के लिये जीवन प्रदान करता है। सूर्य-प्रकाश के द्वारा विविध रोग पैदा नहीं होने पाते। आजकल पाश्चात्य चिकित्सक भी सूर्य-रश्मियों (Ultro voilet Rays) द्वारा भयंकर-से-भयंकर रोगों का—जैसे क्षय, कुष्ठ, ज़हरीले फोड़े, फुंसी इत्यादि का— उपचार करने लगे हैं। पाश्चात्य लोगअपने मकान बनवाते वक्त रोशनी और शुद्ध हवा के अंदर आने के लिये यथास्थान द्वार रखते हैं। वे लोग अपना समय अधिकांश खुली हवा में व्यतीत करते हैं। वहाँ की स्त्रियाँ पर्दे में तो रहती ही नहीं, अतएव खुली हवा में स्वतंत्रता-पूर्वक मर्दों ही की तरह चलती, फिरती, घूमती एवं खेलती-कूदती हैं। वे घोड़े की सवारी करती, नावें चलाती, शिकार खेलती, और फ़ौजी कवायद करती हैं। इस प्रकार चंद्र, सूर्य, वायु इत्यादि से लाभ उठाकर वे बलिष्ठ एवं स्वस्थ बन जाती हैं। वीर नेपोलियन ने कहा है—

"A Country needs nothing so much to promote its regeneration as good mothers."

अर्थात् राष्ट्र की उन्नति या अवनति स्त्री-जाति पर निर्भर है। वे अच्छी संतानें उत्पन्न करके राष्ट्रोन्नति करती हैं। परंतु खेद के साथ लिखना पड़ता है कि हमारे भारतवर्ष में लोग प्रकाश और शुद्ध वायु के महत्त्व से बिलकुल अनभिज्ञ हैं। यहाँ के लोग अधिकांश अँधेरे, गंदे और तंग मकानों में रहते हैं, सूर्य की किरण तथा हवा की लहर उन मकानों में आ-जा नहीं सकती। स्त्रियों का स्वतंत्रता-पूर्वक घूमना और व्यायाम करना तो दूर रहा, उन्हें कड़े-से-कड़े पर्दे के अंदर क़ैद

रक्खा जाता है ! वे मकान की चहारदीवारी में बंद रहती हैं, और उन पौधों की तरह, जो अँधेरे और वायु-शून्य स्थान में उगने के कारण पीले, कमज़ोर तथा बौने रह जाते हैं, वे भी दुर्बल, कृश एवं रोगिणी बन जाती हैं।

वैसे तो भारत के प्रायः सभी मनुष्य क्या—पुरुष और क्या स्त्री—निर्बल हैं, परंतु पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की दशा अत्यंत दयनीय है। यही कारण है कि सन् १९२१ की मनुष्य-गणना की रिपोर्ट में स्त्रियों के लिये लिखा गया कि—

"It apprears that mortality is always highest among females."

अर्थात् भारत में सबसे ज़्यादा स्त्रियाँ ही मरती हैं। इसका एक-मात्र कारण पुरुष-समाज की स्वार्थ-परता है। पुरुष स्त्रियों को पर्दे के कठिन कारागार में रखने के साथ ही इस बात का प्रयत्न भी करते हैं कि गृहदेवियाँ किसी प्रकार नाज़ुक बनें। गृह-कार्य, जैसे चक्की पीसना, पानी भरना, झाड़ू-बुहारी करना, चौका-बरतन करना, चर्खा चलाना, पशुओं की सार-सँभार करना इत्यादि फ़ैशन के विरुद्ध समझे जाते हैं!! हरएक बात में नौकरों की ज़रूरत पड़ती है। चारपाई पर बैठकर सिवा हुक्म चलाने के बाक़ी सब काम शान के ख़िलाफ़ (Below dignity) समझे जाते हैं। चारो ओर नज़ाकत और फ़ैशन की उपासना की जाती है। खाने में नज़ाकत, पीने में नज़ाकत, पहनने में नज़ाकत, ओढ़ने में नज़ाकत ग़र्ज़ कि जिधर देखो, उधर नज़ाकत-ही-नज़ाकत दिखाई देती है। दूध, दही वग़ैरा को छना-बनाकर चा और बिस्कुट पर गुज़र होती है। इस तरह न तो उन्हें शुद्ध हवा ही मिलती है, न सूर्य-प्रकाश ही प्राप्त होता है। न शुद्ध एवं पौष्टिक भोजन ही मिलता है, और न किसी तरह का व्यायाम ही होने पाता है। सारांश यह कि मानव-शरीर के लिये इन आवश्यक

वस्तुओं के अभाव में उनका शरीर अस्वस्थ एवं निकम्मा हो जाता है और वे Phthysis, Rickets, Obesity, Osteomalacia, Hysteria, Indigestion, Dyspepsia, Rheumatism इत्यादि भयंकर रोगों की शिकार बनकर असमय में ही मृत्यु का ग्रास बन जाती हैं।

हमारी बहनों की इतनी दुर्दशा होते हुए भी, आश्चर्य है कि हम कुंभकर्णी निद्रा में पड़े हुए हैं। हमारा ध्यान उनकी ओर तनिक भी नहीं जाता। हम लोग देश-देश पुकारते हैं; और स्वराज्य-स्वराज्य का हो-हल्ला मचाकर आकाश-पाताल एक कर देना चाहते हैं; परंतु स्मरण रहे कि दुर्बल, रोगिणी, मूर्ख और अस्वस्थ माताओं के गर्भ से उत्पन्न संतानें स्वराज्य नहीं पा सकतीं। यदि हमें स्वतंत्र बनकर स्वराज्य के आनंद का उपभोग करना है, तो सबसे पहले मानव-जाति को प्रसव करनेवाली माताओं के सुधार की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। किसी ने ठीक कहा है—

"Weaklings have no place in the world. It is sin to be weak. It is a sin to be get weak children."

अर्थात् इस संसार में दुर्बल व्यक्तियों के लिये कहीं भी स्थान नहीं है, यह वीर-भोग्या वसुंधरा है। दुर्बल होना और दुर्बल संतानें पैदा करना पाप है। इस संसार-रूपी महान् युद्ध-क्षेत्र में कमज़ोरों को कौन पूछता है! याद रहे, अगर हम अपने देश को स्वतंत्र करना चाहते हैं, तो हमें अपनी और अपनी बहनों की शारीरिक दशा ठीक करनी चाहिए। संतानें यदि उत्पन्न करना हो, तो उत्तम एवं बलवान् ही उत्पन्न की जावें—निर्बल तथा ग़ुलाम उत्पन्न करने से लाभ ही क्या है?

हमारे देश में विविध भाषाएँ एवं लिपियाँ प्रचलित हैं, किंतु राष्ट्र-भाषा का अभिमान रखनेवाली हिंदी-भाषा में स्त्रियों के लिये व्यायाम

पर आज तक किसी पुस्तक का न होना एक बड़ा भारी अभाव था। यद्यपि स्त्रियोपयोगी पुस्तकें हिंदी में यथेष्ट प्राप्त नहीं होतीं, तथापि हिंदी-भाषा का भंडार अब उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा है। शायद यह समझकर कि स्त्रियों को व्यायाम की आवश्यकता ही क्या है? या उन्हें व्यायाम द्वारा पहलवान बनाकर अखाड़े में कुश्तियाँ थोड़े ही मारना है? स्त्रियों को व्यायाम की शिक्षा देने से उनकी सुकुमारता नष्ट होकर मर्दानापन आ जाता है—इत्यादि। लेखकों ने इस ओर ध्यान ही नहीं दिया हो! परंतु मुझे अपार हर्ष है कि इस आवश्यक अभाव की पूर्ति हिंदी-साहित्य के परिचित एवं प्रसिद्ध साहित्य-सेवी मेरे मित्र पं० गणेशदत्तजी शर्मा गौड़ "इंद्र" (विद्यावाचस्पति) ने ही कर दी। आपने बेचारी बहनों के लिये "स्त्रियों के व्यायाम"-जैसी एक उपयोगी तथा सर्वांग-पूर्ण पुस्तक लिखकर स्त्री-जाति का जो उपकार किया है, वह स्तुत्य एवं प्रशंसनीय है।

इस पुस्तक में घरू काम-काज, आसन, डंबेल्स, सूर्य-भेदन आदि विविध व्यायाम, जिनसे हमारी बहनें फ़ायदा-ही-फ़ायदा उठा सकती हैं, लिखे गए हैं। मेरे व्यक्तिगत विचारों से यदि हमारी बहनें अपने घरू काम-काज जैसे आटा पीसना, पानी भरना, झाड़ू-बुहारी करना, बरतन इत्यादि मलना वग़ैरा काम अपने हाथों कर लिया करें, तो भी उन्हें बहुत कुछ लाभ हो सकेगा। तपेदिक़, स्थूलता (Reckets, Osteomalacia,), कुब्ज, बदहज़मी, हिस्टीरिया वग़ैरा रोग इन घरेलू व्यायामों से ही घर में नहीं घुसने पावेंगे। अतएव मेरा माताओं, बहनों तथा पुत्रियों से अनुरोध है कि वे व्यायामशील बनकर भारत की उन्नति में सहायक हों।

प्रस्तुत पुस्तक बहनों के लिये पथ-प्रदर्शक का काम देगी। लेखक ने भाषा भी सरल ही प्रयोग की है, ताकि बहनें सहज ही में समझ सकें। मुझे आशा है, इस पुस्तक को आद्यंत एक बार पढ़कर बहनें

इस पर अमल करेंगी और स्वयं स्वस्थ एवं बलवान् बनकर देश के बंधन को तोड़ फेंकने में सहायक होंगी।

सिविल डिस्पेंसरी आगर कृष्णाष्टमी सं० १९८७ वि० ता० १६—८—१९३०	डॉक्टर एम्० आर० लूँबा एल्० सी० पी० एँड एस्०

विषय-सूची

पं० गणेशदत्त शर्मा गौड़ "इंद्र"

Ganga Fine Art Press, Lucknow.

स्त्रियों के व्यायाम

पहला अध्याय

व्यायाम की आवश्यकता

आजकल देखा जाता है कि हमारा स्त्री-समाज बहुत ही निर्बल और रोगी बन गया है। जिसके गर्भ से मानव-सृष्टि उत्पन्न होती है, वही स्त्री-जाति आजकल कमजोर हो गई है। आजकल देखा जाता है कि स्त्रियाँ प्रायः क्षय, प्रसुति और हिस्टीरिया आदि रोगों से घिरी रहती हैं। हमारे भाई, स्त्रियों की इस गिरी दशा पर, बिलकुल ही ध्यान नहीं देते। वे स्त्रियों की इस नाजुक स्थिति पर बड़े ही प्रसन्न होते हैं। जरा-सी सर्दी में जुकाम और सिर-दर्द, जरा-सी गरमी में जी घबराना, बेचैनी इत्यादि उत्पातों को देखकर पुरुष उस स्त्री को बहुत ही सुकुमार समझते हैं। यह कैसी वज्र मूर्खता है! सभ्य कहलानेवाले घरों में जाकर देखिए, स्त्रियों की कैसी दुर्दशा है! उनके मुख पीले, विवर्ण और निस्तेज हो गए हैं। शरीर में मांस और रक्त का पता नहीं है। खाल से ढकी

हुई सिर्फ़ हड्डियों की ठठरी बाक़ी है। एक शक्ति-हीन रोगी शरीर चटकीले-भड़कीले कपड़े और गहनों से लपेटा हुआ दिखाई पड़ता है।

इतनी निर्बलता होने पर भी एक बच्चा दूध पीना छोड़ने भी नहीं पाता कि दूसरा पैदा हो जाता है। गर्भ रहने के दिन से लगाकर प्रसव के समय तक अनेक प्रकार की दवा-दारू करके उस जर्जर शरीर को नाश होने से बचाया जाता है। ऐसी स्त्रियों से पैदा होनेवाले बालक तो प्रायः मर ही जाते हैं, परंतु साथ ही वे अपनी माता को भी ले जाते हैं। इस तरह आजकल भारतीय स्त्री-समाज अत्यंत दुर्दशा-ग्रस्त है।

स्त्रियों में "क्षय"-रोग अधिकता से होता है। यह रोग उन स्त्रियों को होता है, जो प्रायः दूषित वायु में ही रहती हैं। ऐसे मकानों और गलियों में, जहाँ शुद्ध वायु का मिलना असंभव है, रहनेवाली स्त्रियाँ क्षय-रोग से पीड़ित पाई जाती हैं। पर्दे की कुप्रथा भी इस रोग के बढ़ाने में पूरी तरह सहायक है। यह रोग फेफड़ों की कमज़ोरी से ही होता है, और शुद्ध वायु के न मिलने ही से फेफड़े ख़राब हो जाया करते हैं।

छोटे-छोटे ग्रामों की अपेक्षा बड़े-बड़े नगरों में रहनेवालों को क्षय अधिक होता है। इसका एक-मात्र मुख्य कारण यही है कि शहर में रहनेवालों की अपेक्षा गाँवों में रहनेवालों को

शुद्ध वायु अधिक परिमाण में मिलती है—बड़े-बड़े नगरों में सिवा बदबूदार हवा के और कुछ नहीं मिलता। गटरों की बदबू, अधिक जन-संख्या के कारण फैली हुई गंदगी, श्वास के द्वारा दूषित वायु, कल-कारख़ानों की चिमनियों का धुआँ, इत्यादि प्राण-घातक कारण बड़े-बड़े शहरों में ही होते हैं; छोटे-छोटे गाँवों में नहीं होते। यदि "फ़िनायल" छिड़ककर पाख़ाने आदि बदबूदार स्थानों की बदबू को न दबाया जाय, तो चौबीस घंटे में ही महानरक का दृश्य उपस्थित हो जाता है। भला ऐसे स्थानों में हमेशा चौबीसो घंटे रहनेवाली स्त्रियों की क्या दुर्दशा होनी चाहिए, इसे एक समझदार आदमी सहज ही में समझ सकता है। मर्द कहलानेवाले लोग तो घरों को छोड़ इधर-उधर घूमकर वायु का परिवर्तन कर लेते हैं, किंतु घरों में रहनेवाली पर्दे की स्त्रियों को जीते ही जो नरक-यातना भोगनी पड़ती है।

हल्के व्यायाम में आजकल "वायु-सेवन" के लिये ग्राम के बाहर जंगल अथवा बाग़-बग़ीचों में जाना भी सम्मिलित है। न्यू फ़ैशन के बाबू लोग भी, जिन्हें अखाड़ों में जाकर अथवा अपने घरों के कमरों में दंड-बैठक लगाना असभ्यता मालूम होती है, "वायु-सेवन" के लिये जाना ठीक समझते हैं। वायु-सेवन एक प्रकार का व्यायाम है, किंतु लोग इसे भी

विधिवत् नहीं करते। घर से निकलकर कहीं पर बैठ जाने का नाम ही "वायु-सेवन" हो गया है। यह व्यायाम निर्बल आदमियों के लिये बड़ा ही अच्छा है, किंतु इसे अपनी शक्ति के अनुसार दूर चलकर ही करना चाहिए। कम-से-कम एक-दो मील शुद्ध वायु में, एक-चाल से, बिना किसी से बातचीत किए और नाक से ही साँस लेने तथा छोड़ने पर, यह व्यायाम होता है। मोटर, बग्घी, ताँगों में बैठकर वायु-सेवन करने से उसका सोलहवाँ हिस्सा भी लाभ नहीं होता।

हमारे समाज में ये सब सहूलियतें केवल पुरुषों के लिये हैं; स्त्रियों के लिये नहीं। स्त्रियों को तो घरों की चहारदीवारी में बंद रक्खा जाता है—उनके स्वास्थ्य पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता। जबसे देश में पर्दे का रिवाज जारी हुआ है, तभी से स्त्री-जाति का अधःपतन आरंभ हुआ है। पर्दे की प्रथा ने स्त्रियों को इस तरह बंधन में डाल दिया है, जिस तरह कि चिड़ियाँ पिंजड़ों में बंद रक्खी जाती हैं। पिंजड़े में बंद की गई चिड़ियों की तरह उन्हें खाने-पीने का सामान दिया जाता है, और यदि कहीं एक घर से दूसरे घर पहुँचाना हुआ, तो बड़ी ही सावधानी से एक पिंजड़े के समान गाड़ी में, अथवा डोली में, बिठाकर ले जाया जाता है। कहीं बाहर की हवा न लग जाय, इस बात का पुरुष लोग पूरा-पूरा ध्यान

रखते हैं। कैसा अंधेर है? कैसी दुर्दशा है? कितना भयंकर नैतिक पतन है?

इस तरह स्त्री-जाति को दबोचकर रखने में ही पुरुष लोग अपने को बहुत कृतकृत्य समझते हैं। इसी में वे अपनी मर्दानियत मानते हैं। पुरुषों ने स्त्रियों को न-जाने क्या समझ लिया है? वे उन्हें दबाकर रखना ही अपनी मर्दानगी समझते हैं। पुरुषों ने स्त्रियों को अपनी जर-खरीद दासी समझ रक्खा है। उन्हें स्त्रियों के अधिकारों की तनिक भी परवा नहीं है—वे सब तरह स्त्रियों को पैरों से कुचलकर रखना चाहते हैं। स्त्री-जाति को दबाकर रखने का नाम ही स्वार्थी पुरुषों ने "इज्जत-आबरू बनाए रखना" मान लिया है। उन्हें खयाल है कि स्त्रियों को स्वतंत्रता दी गई कि बस, प्रलय हुआ! कैसा भ्रम है? कितनी भूल है? कैसी संकीर्ण-हृदयता—कैसी तंग-खयाली है?

पर्दे के प्रथा के प्रेमियों से मैं पूछ सकता हूँ कि क्या उन देवियों का, जिनमें पर्दे की प्रथा का नामो-निशान ही नहीं है, संसार में मान नहीं है? क्या उनमें पति-भक्ति-परायणा, सती-साध्वी स्त्रियों का अभाव है? क्या वे सभी व्यभिचार को ही पसंद करती हैं? और वे स्त्रियाँ, जिन्हें पुरुषों ने पर्दे के भयंकर शिकंजे में दबा रक्खा है, क्या सभी सम्माननीय,

सती-साध्वी, पवित्र आचरणवाली और पतिव्रता हैं ? मैं समझता हूँ कि इसका उत्तर उनके विचारों के विरुद्ध ही होगा। इस बात की अधिक जाँच करने पर पर्दे में ही अधिक दोष पाए जायँगे। कहने का तात्पर्य यह कि पर्दे की रीति में जितने भी दोष हैं, उनमें यह सबसे भयंकर है कि शरीर की उन्नति में उससे भारी रोक हो रही है। पर्दे की कृपा ही से आज हमारा स्त्री-समाज निर्बल और रोगी हो रहा है।

जो स्त्रियाँ पर्दे में दबोचकर रक्खी जाती हैं, उन्हें प्रसूतिका-रोग भी अवश्य होता है। बच्चा पैदा होते वक्त उन्हें अत्यंत कठिन प्रसव-वेदना सहनी होती है। वे बीमार होकर जिंदगी से हाथ धो बैठती हैं। दैव-योग से यदि उनका जीवन-दीप बुझने से रह गया, तो वह अपने को धन्य और नए सिरे से जन्मी हुई मानती हैं। जो स्त्रियाँ पर्दों में रहने के कारण व्यायाम नहीं करती हैं, उन्हीं की यह दुर्दशा होती है। देखा गया है कि जो स्त्रियाँ मेहनत किया करती हैं, उनका प्रसव-काल बिना किसी कष्ट के, आनंद के साथ, निकल जाता है। मजदूरी पेशा स्त्रियों के बच्चा पैदा होते वक्त उतनी पीड़ा, तकलीफ और चिंता नहीं होती, जितनी कि एक आराम-तलब स्त्री को होती है। यदि हम प्रकृति के नियमों के अनुसार चलनेवाले प्राणियों की ओर दृष्टि डालते हैं, तो देखा जाता

है, उन्हें प्रसव-काल में जरा भी तकलीफ नहीं होती। पक्षियों को तथा जंगली जानवरों को देखिए, चलते-फिरते प्रसव-क्रिया हो जाती है, और थोड़ी ही देर बाद वे घूमते-फिरते अपने तथा अपने बच्चों के भोजन की खोज में मेहनत करते दिखाई पड़ते हैं। क्या इस पर कभी विचार किया गया है?

आजकल स्त्रियों में, जो एक रोग अधिकता से पाया जाता है, उसे "हिस्टीरिया" कहते हैं। यह रोग ज्ञान-तंतुओं की निर्बलता से उत्पन्न होता है। यह रोग स्त्रियों के जीवन को मिट्टी में मिला देता है। ज्ञान-तंतुओं की कमजोरी से पैदा होने के कारण यह रोग रोगी के ज्ञान को नष्ट कर देता है, जिससे रोगी इसके दौरे के वक्त बे-सिर-पैर की अंट-संट बातें करने लगता है। कभी-कभी तो रोगी को बेहोशी तक हो जाती है। ऐसी दशा में लोग भूत की लीला समझकर झाड़-फूँक करनेवाले नाउत और ओझा आदि को बुलाकर जादू-टोना, टुटका, गंडा-तावीज वगैरह कराते हैं। लेकिन वास्तव में देखा जाय, तो यह रोग स्त्रियों को उनकी कमजोरी के ही कारण होता है। आज से २५-३० वर्ष पहले इस तरह के रोग स्त्रियों में बहुत ही कम पाए जाते थे। खेद है, आज ऐसे रोगों की दिन-दिन बाढ़ हो रही है।

स्त्री-जाति के इस शारीरिक पतन पर क्या कभी विचार

किया गया है ? कभी इसके कारण को खोजा गया है ? यदि इस ओर ध्यान दिया गया होता, तो आज यह दुर्गति न हुई होती ! हमारे विचार से तो इन सब दुर्गतियों का एक-मात्र कारण स्त्रियों में व्यायाम का न होना ही है। आजकल स्त्रियाँ आराम-तलब हो गई हैं। उनके पतिदेव स्त्रियों को ठाली बैठा रखने में ही अपना बड़प्पन समझते हैं। स्त्रियाँ भी आराम को ही पसंद करने लग गई हैं। बड़े कह-लानेवाले, पैसेवालों के घरों की गृह-देवियाँ तो आजकल स्नान करके अपनी धोती तक धोने में अपना अपमान समझने लगी हैं। रोटी बनाने, पानी लाने, बरतन माँजने, चौका लगाने और बच्चे खिलाने के लिये नौकर रक्खे जाते हैं।

पुरुषों की यह एक दृढ़ धारणा-सी हो गई है कि "स्त्रियों को बलवान् नहीं होने देना चाहिए, जहाँ तक हो सके, उन्हें कमजोर बनाकर ही रखना चाहिए। यदि स्त्रियों को बलवान् होने दिया, तो फिर वे हम लोगों की परवा नहीं करेंगी, हमें तुच्छ समझने लग जायँगी। हम उन्हें दबा न सकेंगे, वे हमारे सिर के बाल उखाड़ेंगी।" इसी तरह के मूर्खता-पूर्ण विचारों ने स्त्री-जाति के लिये अवनति का मार्ग दिखाया है। "स्त्रियों में काम-शक्ति पुरुषों की अपेक्षा आठगुणा अधिक होती है"—इस लोकोक्ति से भी पुरुष लोग स्त्रियों से डरते-

से रहते हैं। वे सोचते हैं कि बिना खिलाए-पिलाए और व्यायाम के ही जब स्त्री-जाति में काम-शक्ति पुरुषों से आठ-गुनी अधिक है, तो खिलाने-पिलाने और व्यायाम की आज्ञा देने पर तो न-जाने क्या ग़ज़ब हो जायगा ?

हमने देखा है कि जाड़े के दिनों में पुरुष लोग शक्ति बढ़ानेवाले पाक और तरह-तरह की पुष्टई की चीज़ों का सेवन करते हैं, लेकिन स्त्रियों को ये चीज़ें नहीं दी जातीं। वैसे भी घर में प्रतिदिन पुरुष जितने पौष्टिक पदार्थ खाता है, उतने स्त्रियाँ नहीं खातीं। बचपन में माता-पिता लड़कों को जितनी पौष्टिक एवं बल बढ़ानेवाली चीज़ें खिलाते हैं, उतनी लड़कियों को नहीं। व्यायाम तो स्त्री-समाज में से बिलकुल ही भाग गया है। लाख स्त्रियों में एक भी ऐसी नहीं निकलेगी, जो दंड-बैठक या मुद्गर आदि के व्यायाम करती हो। घरेलू व्यायाम जैसे पानी लाना, चक्की पीसना, धान कूटना, गीत गाना इत्यादि का भी दिन-दिन अभाव होता जा रहा है। अलाउद्दीन खिलजी से लड़नेवाली वीर-स्त्री कलावती, मेवाड़ के महाराणा भीम-सिंह की पुत्री कृष्णाकुमारी, मेवाड़ के महाराणा समरसिंह की धर्मपत्नी कर्मदेवी, वीर नारी दुर्गावती, धाय पन्ना, संयुक्ता, ताराबाई, लक्ष्मीबाई आदि वीर-महिलाओं की वीर-

किया गया है ? कभी इसके कारण को खोजा गया है ? यदि इस ओर ध्यान दिया गया होता, तो आज यह दुर्गति न हुई होती ! हमारे विचार से तो इन सब दुर्गतियों का एक-मात्र कारण स्त्रियों में व्यायाम का न होना ही है। आजकल स्त्रियाँ आराम-तलब हो गई हैं। उनके पतिदेव स्त्रियों को ठाली बैठा रखने में ही अपना बड़प्पन समझते हैं। स्त्रियाँ भी आराम को ही पसंद करने लग गई हैं। बड़े कहलानेवाले, पैसेवालों के घरों की गृह-देवियाँ तो आजकल स्नान करके अपनी धोती तक धोने में अपना अपमान समझने लगी हैं। रोटी बनाने, पानी लाने, बरतन माँजने, चौका लगाने और बच्चे खिलाने के लिये नौकर रक्खे जाते हैं।

पुरुषों की यह एक दृढ़ धारणा-सी हो गई है कि "स्त्रियों को बलवान् नहीं होने देना चाहिए, जहाँ तक हो सके, उन्हें कमजोर बनाकर ही रखना चाहिए। यदि स्त्रियों को बलवान् होने दिया, तो फिर वे हम लोगों की परवा नहीं करेंगी, हमें तुच्छ समझने लग जायँगी। हम उन्हें दबा न सकेंगे, वे हमारे सिर के बाल उखाड़ेंगी।" इसी तरह के मूर्खता-पूर्ण विचारों ने स्त्री-जाति के लिये अवनति का मार्ग दिखाया है। "स्त्रियों में काम-शक्ति पुरुषों की अपेक्षा आठगुणा अधिक होती है"—इस लोकोक्ति से भी पुरुष लोग स्त्रियों से डरते-

से रहते हैं। वे सोचते हैं कि बिना खिलाए-पिलाए और व्यायाम के ही जब स्त्री-जाति में काम-शक्ति पुरुषों से आठ-गुनी अधिक है, तो खिलाने-पिलाने और व्यायाम की आज्ञा देने पर तो न-जाने क्या ग़ज़ब हो जायगा ?

हमने देखा है कि जाड़े के दिनों में पुरुष लोग शक्ति बढ़ानेवाले पाक और तरह-तरह की पुष्टई की चीज़ों का सेवन करते हैं, लेकिन स्त्रियों को ये चीज़ें नहीं दी जातीं। वैसे भी घर में प्रतिदिन पुरुष जितने पौष्टिक पदार्थ खाता है, उतने स्त्रियाँ नहीं खातीं। बचपन में माता-पिता लड़कों को जितनी पौष्टिक एवं बल बढ़ानेवाली चीज़ें खिलाते हैं, उतनी लड़कियों को नहीं। व्यायाम तो स्त्री-समाज में से बिलकुल ही भाग गया है। लाख स्त्रियों में एक भी ऐसी नहीं निकलेगी, जो दंड-बैठक या मुद्गर आदि के व्यायाम करती हो। घरेलू व्यायाम जैसे पानी लाना, चक्की पीसना, धान कूटना, गीत गाना इत्यादि का भी दिन-दिन अभाव होता जा रहा है। अलाउद्दीन खिलजी से लड़नेवाली वीर-स्त्री कलावती, मेवाड़ के महाराणा भीम-सिंह की पुत्री कृष्णाकुमारी, मेवाड़ के महाराणा समरसिंह की धर्मपत्नी कर्मदेवी, वीर नारी दुर्गावती, धाय पन्ना, संयुक्ता, ताराबाई, लक्ष्मीबाई आदि वीर-महिलाओं की वीर-

गाथाएँ इतिहास में मिलती हैं। वे भी स्त्रियाँ ही थीं। आज भी मिस ताराबाई नाम की एक बलवान् स्त्री भारत में मौजूद है, जो अपने शरीर के बल के कामों को दिखाकर संसार को अचंभे में डाल रही है। वह बता रही है कि अबला स्त्रियों में इतना महान् बल है कि दुनिया दाँतों-तले उँगुली दबा सकती है।

दूसरे देशों की स्त्रियाँ अब पुरुषों की तरह ही शरीर का श्रम करने लगी हैं। इँगलैंड-देश की स्त्रियाँ अब अखाड़ों में कुश्तियाँ मारने लगी हैं। फ़ौजी तालीम पा रही हैं। मीलों समुद्र तैरती हैं। अफ़ग़ानिस्तान और तुर्किस्तान की स्त्रियाँ कुश्ती लड़ना सीख रही हैं। जापानी स्त्रियों ने तीर-कमान उठाए हैं, और धनुर्विद्या सीख रही हैं। इसी तरह अमेरिका की स्त्रियाँ अस्त्र-शस्त्रों के चलाने में होशियार हो रही हैं। यदि कोई ऐसा देश है, जिसकी रहनेवाली स्त्रियाँ कमज़ोर और गिरी हुई दशा में हैं, तो वह हमारा भारतवर्ष है। विदेशों की स्त्रियाँ मर्दों का काम करने में लगी हुई हैं, तो यहाँ के मर्द ज़नानेपन को अपनाने में लगे हैं। वहाँ की स्त्रियाँ अगर अखाड़ों में जातीं और धनुर्विद्या सीखती हैं, तो यहाँ के मर्द सिर पर माँग-पट्टी निकालकर, कपाल पर एक लाल रंग की नज़ाकतदार बिंदी लगाकर, गलियों में घूमते हैं। अब

हमारे भारत के पुरुषों की यह दशा है, तो फिर यहाँ की स्त्रियों की क्या होनी चाहिए, इसे विचारवान् मनुष्य सहज ही में समझ सकते हैं।

जबसे हमारी स्त्रियाँ विलासिनी बनीं या बना दी गईं, तभी से उनका पतन आरंभ हुआ, जो आज इस दशा को पहुँच गया है। स्त्रियाँ शरीर की मेहनत को बुरा समझने लगीं, उससे मुँह चुराने लगीं, इसीलिये उनकी कमजोरी की जड़ इतनी जम गई कि उनमें स्वयं अपनी रक्षा करने तक की शक्ति नहीं रही। स्त्रियों के मान-मर्यादा की रक्षा का भार पुरुषों पर निर्भर है, यही कारण है कि जहाँ-तहाँ स्त्रियों का अपमान होता है। दुष्ट लोग उन्हें कमजोर जानकर उनके साथ मन-माना अत्याचार करते हैं। सतीत्व की रक्षा के लिये शरीर में बल होने की जरूरत है। पुराने इतिहास को उठाकर देखिए, तो आपको मालूम होगा, जिसमें बल था, वही अपने सत की रक्षा कर सकी थी। पांडवों की स्त्री द्रौपदी यदि बलवान् न होती, तो दुर्योधन आदि दुष्ट कौरवों के द्वारा भरी सभा में साड़ी खींचकर नंगी करने का प्रयत्न अवश्य सफल हो जाता। किंतु दुःशासन के समान महाबली योद्धा के हाथों को भी द्रौपदी के साथ छीना-झपटी में हार खानी पड़ी। उसने अपनी साड़ी को इतनी मजबूती से पकड़

लिया कि दुःशासन-जैसे वीर को छुड़ा लेना कठिन था। इसी तरह अज्ञात-वास में जब कीचक ने सैरंध्री (द्रौपदी) पर बुरी दृष्टि डाली, तो वहाँ भी वह अपने ही पराक्रम से अपने सतीत्व की रक्षा कर सकी थी। जहाँ देखिए, वहाँ बल की जरूरत है।

आजकल देखा जा रहा है कि जहाँ-तहाँ गुंडों द्वारा स्त्रियों पर अत्याचार हो रहे हैं, और वे सब निर्बलता के कारण चुपचाप सह लिए जाते हैं। यदि स्त्रियों में बल होता, तो फिर क्या मजाल थी कि कोई उनको तरफ़ आँख उठाकर भी देख सकता। हमारे नेता स्त्रियों को शस्त्र रखने की सलाह देते हैं, ताकि जरूरत के वक़ उनको चलाकर वे दुष्ट मनुष्यों से अपने धर्म की रक्षा कर सकें। स्त्रियाँ शस्त्र पकड़ने के लिये तैयार हैं। वे चाहती हैं कि वे छुरा अथवा पिस्तौल हमेशा अपने पास रक्खें, परंतु जब शरीर में बल ही न होगा, तो सब कुछ बेकार है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को अपनी रक्षा के लिये बल की अधिक आवश्यकता है, क्योंकि रूप-लावण्य के कारण दुष्टों की पाप-पूर्ण दृष्टि उन पर अधिक होती है। अपने सतीत्व की रक्षा करना प्रत्येक स्त्री का परम धर्म है। फिर स्त्रियाँ जेवर पहनती हैं, इसलिये चोर-डाकुओं से उनकी रक्षा के लिये भी उनमें शारीरिक बल होने की महान् आवश्यकता है।

स्मरण रहे, "संसार निर्बलों के लिये नहीं है।" यहाँ तो वही रह सकता है जिसकी क़लाई में बल होगा। हम देख रहे हैं कि "जिसकी लाठी उसकी भैंस"-वाली कहावत होती है। निर्बल को हमेशा सबल से दबकर रहना पड़ता है। इतिहासों के पन्नों को लौट-पौटकर देख जाइए, ऐसा एक भी उदाहरण नहीं मिल सकता, जहाँ निर्बलता ने भी विजय-लक्ष्मी पाई हो। निर्बल शासक अधिक दिन नहीं टिक सकता। निर्बल को शासित गुलाम तथा परतंत्र बनकर रहना पड़ता है। जो निर्बल है, वह अपनी मान-मर्यादा, धर्म-कर्म या अभिमान किसी की भी रक्षा नहीं कर सकता। इसीलिये कवि ने कहा है—

सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय;
पवन जगावत आग को, दीपहिं देत बुझाय।

निर्बल को सब दबा लेते हैं। यदि हम में अपनी रक्षा के लिये काफ़ी बल है, तो किसी की क्या मजाल जो हमारी ओर देख भी सके। हम निर्बल होने के कारण सब कुछ चुपचाप सह लेते हैं। मैं आँखों देखी एक घटना का यहाँ उल्लेख करता हूँ।

विगत वर्ष की बात है एक मराठा-स्त्री पूना से न-जाने कहाँ के लिये रवाना हुई। वह रेल में स्त्रियों के डिब्बे में बैठ

गई। नागदा स्टेशन तक उस डिब्बे में स्त्रियाँ नहीं रहीं, और वह अकेली ही उसमें रह गई। एक गुंडा, जो पूना से ही उसके पीछे लगा था, उसे अकेली देखकर उसके डब्बे में चढ़ गया। चलती ट्रेन में उसने उसके जेवरों को छीनने के लिये छीना-झपटी शुरू की। स्त्री बलवान् थी; उसने उस दुष्ट की एक न चलने दी। तब उसने छुरा निकाला और उसकी एक छोटी उम्र की पुत्री को मार डालने की धमकी दी, किंतु वह वीर नारी नहीं घबराई। तब उस दुष्ट ने अपना छुरा पास की खाली सीट पर रख दिया, और लड़की को उसकी गोदी से छीनकर खिड़की में से बाहर फेंक दिया। यह देखकर उस स्त्री को क्रोध आया, और उसने लपककर उसका छुरा उठा लिया और उस पामर के पेट में भोंककर उसका काम तमाम कर दिया। इसके बाद जंजीर खींचकर उसने ट्रेन को ठहराया, और सारा क़िस्सा कह सुनाया। उसकी लड़की भी उसे जीवित ही मिल गई।

आगे क्या हुआ, मालूम नहीं। किंतु उसके बल ने उसकी रक्षा की, और उसने लोगों में यश भी पाया। महापुरुषों का कथन है—

"नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।"

अर्थात् जो बल से हीन हैं, उनको यह आत्मा नहीं

मिलता। इसलिये बहनो, उठो, विचार करो। अपनी अधोगति पर पश्चात्ताप करो। मेहनत करो, मजबूत बनो। स्वयं मजबूत बनकर भारत में बलवान् संतान उत्पन्न करो। वेद कहता है—

"वीरसूर्देवृकामा संत्वयैधिषी महि सुमनस्यमाना।"

(अथर्व)

अर्थात् यदि संतान उत्पन्न करो, तो वीर संतान हो। परंतु जब माता ही निर्बल होगी, तो संतान बलवान् कैसे हो सकती है। इसलिये स्त्रियों को चाहिए कि मेहनत से मुँह छुपाकर अपना नाश अपने हाथों न करें। स्त्रियों को व्यायाम-शील बनकर राष्ट्र की उन्नति में सहायक बनना चाहिए। अब हम आगे के अध्याय में घरेलू व्यायाम पर प्रकाश डालेंगे।

दूसरा अध्याय

घरेलू व्यायाम

पानी भरना

"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।"

वेद कहता है—

"देवैर्दत्तेन मणिना जङ्गिडेन मयोभुवा।
विष्कन्धं सर्वा रक्षांसि व्यायामे सहामहे।"

(अथर्व २।४।४)

अर्थ—(देवैः) देवतों द्वारा दिए हुए (मणिना) मणि के समान अतिश्रेष्ठ (मयोभुवा) आनंद देनेवाले (जङ्गिडेन) रोगों के भक्षक (व्यायामे) व्यायाम में (विष्कन्धं) विघ्न और (सर्वा) सब (रक्षांसि) राक्षसों को (सहामहे) हम दबा दें।

सारांश यह कि व्यायामशील बनकर हमें सब विघ्नों का तथा दुष्ट जनों का बल के साथ सामना करके उन्हें नाश कर देना चाहिए। दुष्टों का नाश और आत्म-रक्षा के लिये व्यायाम एक अत्यंत आवश्यक कार्य है। ऐसे महत्त्व-पूर्ण कार्य की ओर से आज हमारा स्त्री-समाज एकदम उदासीन

हो गया है। फ़ालतू व्यायाम का तो ज़िक्र ही क्या है, घरू काम-धंधों को भी छोड़कर वे बिलकुल अकर्मण्य हो रही हैं। कुएँ, तालाब या नदियों से पानी भरकर लाना, चक्की पीसना, अन्न कूटना, पशुओं की सानी आदि कामों को स्त्रियाँ नीच कर्म समझने लगी हैं। ऐसा समझना नादानी है! भूल है!!

कुओं से पानी भरकर लाना बुरा और निंदनीय काम नहीं है। घर के लिये पानी भरना स्त्रियों का ही काम है। इसके लिये वेद साक्षी है—

'एमा अगुर्योषितः शुंभमाना उत्तिष्ठ नारि तवसं रभस्व।
सुपत्नी पत्या प्रजया प्रजावत्या त्वागन् यज्ञः प्रति कुम्भं गृभाय।।"
(अथर्व ११।१।१४)

अर्थात्—हे नारी! उठ, खड़ी हो (तवसं) बल (रभस्व) लाभकर (कुम्भं) घड़ा (प्रतिगृभाय) ले, और घर का कार्य कर। इस मंत्र में स्पष्ट झलक रहा है कि जो स्त्रियाँ घर के ख़र्च के लिये कुएँ से या नदी आदि से पानी भरकर लाती हैं, वे बलवान् हो जाती हैं। परंतु स्त्रियों का यह व्यायाम हमारे "वाटर वर्क्स" (water works—पानी की कलों के मोहकमे) ने नष्ट कर दिया। बड़े-बड़े शहरों के प्रत्येक घर में नल के होने से विना किसी श्रम के ही जल

मिल जाता है। इधर परदानशीनी भी स्त्रियों को इस काम से रोक रही है। यदि विचार के साथ देखा जाय, तो पानी खींचना और उसे उठाकर लाना एक बड़ा ही अच्छा व्यायाम है। स्वर्गीय महाराजा खंडेराव गायकवाड़ अपने पहलवानों से अपने सामने मेहनत लेते थे। दंड, बैठक, दौड़, कुश्ती की तरह वे उनसे कुएँ में का पानी भी खिंचवाया करते थे।

जब स्त्रियों को आलस्य-देवता ने नहीं दबोचा था, तब देखा जाता था कि गृह-देवियाँ मन-डेढ़ मन का पानी से भरा हुआ बर्तन अपने सिर पर रखकर ले जाया करती थीं। अब भी उन घरों की देवियाँ, जिनमें पानी भरना बुरा नहीं समझा जाता, जल से भरे बड़े-बड़े पात्र अपने सिर पर रख-कर लाती हैं। जहाँ पानी दूर होता है, वहाँ की तो पूछिए नहीं, उन्हें काफ़ी श्रम हो जाता है। आराम-तलब स्त्रियाँ या नए फ़ैशन की कठपुतलियाँ इस तरह के कामों को बुरा सम-झती हैं। पानी का भरा हुआ बर्तन सिर पर रखकर लाना तो दूर रहा, उनसे टेनिस खेलने के रेकेट्स, जिनमें १३-१४ औंस वजन होता है, नहीं उठाए जाते। हलके-हलके रेकेट लेकर टेनिस खेलने को ही आजकल की "लेडी-फ़ैशन" स्त्रियाँ व्यायाम समझती हैं। परंतु स्मरण रहे, घर के पानी भर

लाने से यह टेनिस का व्यायाम कदापि श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता।

हम देखते हैं कि स्त्रियों के लिये टेनिस-क्लबों की स्थापना की जा रही है; किंतु प्रथम तो यह व्यायाम उतना उत्तम नहीं जितना कि जल भरना है; दूसरे सभी स्त्रियाँ न तो टेनिस खेलती ही हैं और न खेल ही सकती हैं। क्योंकि इस खेल में पैसे का खर्च है, जिसका भारत-जैसे दरिद्र देश में प्रचार होना ही भयानक पाप है। इसलिये टेनिस आदि के खेल हमारे देश के लिये घातक हैं। कुएँ से पानी भरकर लाने में कुछ भी खर्च नहीं होता। घर का काम हो जाता है और उत्तम व्यायाम भी हो जाता है। टेनिस के लिये रेकेट चाहिए, जाल चाहिए, गेंदें चाहिए, अच्छी भूमि चाहिए, खिलानेवाले चाहिए, इत्यादि अनाप-शनाप खर्च-ही-खर्च हैं। इस पर भी इससे उतना श्रम नहीं होता, जितना कि पानी भरने में हो जाता है।

क्या कभी आपने कुओं से पानी भरती हुई स्त्रियों को इस दृष्टि से भी देखा है कि उनको कैसी मेहनत हो जाती है? अगर ध्यान से देखा होगा, तो आपने पाया होगा कि पानी खींचते वक्त समस्त अंगों की परिचालन-क्रिया होती है। उस समय वह एक तरह का युद्ध-सा होता है। कुएँ में का पानी

से भरा हुआ बर्तन रस्सी-सहित पानी भरनेवाले को तो कुएँ के भीतर ले जाना चाहता है, और पानी भरनेवाला उसे खींचकर बाहर लाना चाहता है। एक प्रकार का मल्ल-युद्ध होता है। ज़रा भी शिथिलता आई कि बर्तन और रस्सी कुएँ में! पानी खींचते वक्त पैरों को मज़बूती से जमाना पड़ता है, रस्सी को हाथों से मज़बूत पकड़ना पड़ता है और फिर वज़नदार बर्तन को खींचना पड़ता है। इससे सारे शरीर को व्यायाम मिल जाता है। हाथों का व्यायाम तो हो ही जाता है, परंतु साथ ही सिर, गर्दन, पेट, छाती, पीठ, नितंब आदि अंगों को भी पूरी थकावट आ जाती है। रस्सा खिंचाई के व्यायाम से जो-जो लाभ होते हैं, उनसे कहीं अधिक लाभ पानी भरने के काम से होते हैं। मुट्ठियाँ मज़बूत, कलाइयाँ चौड़ी और बाहें सुडौल बन जाती हैं। जो व्यायाम "डंबल्स" के द्वारा होता है वही पानी खींचने से हो जाता है। छाती और फेफड़ों के लिये इस काम से बहुत फ़ायदा पहुँचता है। सेंडो के "चेस्ट एक्सपांडर्स" के व्यायाम से जो फ़ायदा पहुँचता है, वही लाभ पानी खींचने से होता है। जिन नगरों में "वाटर वर्क्स" की कृपा से नल हो गए हैं, वहाँ तो दूसरे प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता है, किंतु जहाँ नल नहीं हैं वहाँ तो स्त्रियों को चाहिए कि घर का पानी अवश्य अपने हाथों भरना आरंभ कर दें।

चक्की पीसना

देश धीरे-धीरे आराम-पसंद होता जा रहा है। भारत-वासियों की धारणा हो चली है कि मेहनत करना ओछा काम है। जो मेहनती है, वह बड़ा आदमी नहीं है। आज कल के जमाने में बड़ा आदमी वही है, जो खाकर पड़े रहने के सिवा दूसरा काम न करता हो, यहाँ तक कि उनके पाखाने में लोटा भी दूसरा ही मनुष्य रख देता हो। ऐसे बड़े घरों की देवियाँ, सूर्योदय के घंटे-भर बाद शय्या से उठती हैं और उठते ही चाय-देवी का आराधना में लग जाती हैं। इसके बाद शौच-स्नान आदि कार्य में भी उन्हें आलस्य आता है। जैसे-तैसे इस जरूरी काम से निबटकर भोजन करके गुदगुदे गद्दों पर पड़ी रहती हैं। परिणाम यह होता है कि शरीर वायु से फूल जाता है अथवा चर्बी बढ़कर बेडौल बन जाता है। सेंडो का कहना है—"ऐसी स्त्रियों के स्नायु ढीले पड़ जाने के कारण शरीर निर्बल बन जाता है। ऐसी स्त्रियों के लिये योग्य नियमित व्यायाम की अत्यंत आवश्यकता है। परंतु जो हमेशा घर के धंधों में लगी रहती हैं, उन्हें उनके कामों से सारे शरीर को बराबर व्यायाम मिलता है। इसलिये उन्हें अन्य किसी प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता नहीं होती।"

व्यायाम के प्रसिद्ध आचार्य सेंडो के इस कथन पर विचार करना चाहिए। स्त्रियों के लिये घरेलू धंधे ही उनका काफ़ी व्यायाम है। परंतु इस ज़माने में प्रत्येक नगर और क़स्बों में आटा पीसने की कलें (Flour Mills) मौजूद हैं। उनमें आटा बारीक पिस जाता है, पिसने में समय भी नहीं लगता और सस्ता भी पिसता है। भला फिर क्यों न मशीन में पिसाया जाय। यह सब कुछ तो है, पर इसके द्वारा होनेवाले नुक़सान की ओर कोई ध्यान ही नहीं देता! मैं यहाँ कुछ दोष दिखाना चाहता हूँ—

(१) आटा बहुत महीन पिस जाने से पचने में भारी हो जाता है।

(२) आयल एंजिन घासलेट के तेल से चलने के कारण उस आटे में घासलेट के परमाणु मिल जाते हैं।

(३) चक्की की रफ़्तार तेज़ होने के कारण पत्थर का भाग आटे में अधिक मिल जाता है।

(४) मशीन की तेज़ रफ़्तार के कारण गरमी उत्पन्न होकर आटा गरम हो जाता है, जिससे आटे का सत्त्व जल जाता है, और वह आटा शक्ति-हीन हो जाता है।

(५) मशीन से पिसे हुए आटे से जो पदार्थ बनाए जाते हैं, वे सुस्वादु, सुंदर और पौष्टिक नहीं होते।

(६) बहुत-सी अनाथ और विधवा स्त्रियाँ, जो आटा पीसकर अपना पेट भरा करती थीं, अब बे-रोजगार हो गई हैं।

(७) वे गृह-देवियाँ जो नित्य प्रातःकाल उठकर चक्की पीसा करती थीं, अब सूर्योदय तक निश्चिंत सोती रहती हैं, और चक्की का व्यायाम न मिलने से निर्बल होती जा रही हैं।

(८) नगरों की गली-गली में चक्की की मेशीनें लग जाने से मोहल्ले-भर में घासलेट के जलने का बदबूदार धुआँ फैलकर लोगों के स्वास्थ्य को बर्बाद करता है।

इत्यादि, अनेक दोष मशीन की चक्कियों में हैं। परंतु हमारे घर की चक्कियों में उक्त दोष एक भी नहीं पाया जाता। जब से घरेलू हाथ की चक्की का बहिष्कार किया गया, तभी से स्त्रियों का उषःकाल का उठना छूट गया। प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ब्राह्म-मुहूर्त में उठना कितना लाभदायक है, इसके विषय में महान् नीतिकार चाणक्य ने कहा है—

"कुचैलिनं दन्तमलोपधारिणं बह्वाशिनं निष्ठुर-भाषिणं च ;
सूर्योदये चास्तमिते शयानं विमुञ्चति श्रीर्यदि चक्रपाणिः ॥"

(च० १२ । ४)

अर्थात्—मैले कपड़ेवाले, मैले दाँतोंवाले, बहुत खानेवाले, कटुभाषी और सूर्य के उदय तथा अस्त समय सोनेवाले को लक्ष्मी छोड़ देती है, फिर भले ही वह विष्णुजी ही क्यों न हों। मनुजी ने भी कहा है—

"ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिंतयेत्।"

अर्थात्—मनुष्य को ब्राह्म-मुहूर्त में शय्या त्याग देनी चाहिए। आगे चलकर कहा है कि यदि सोते हुए सूर्य उदय हो अथवा अस्त हो, तो दिन-भर और रात्रि-भर भोजन न करे। वेद आज्ञा देता है—

"यावन्तो मा सपत्नानामायन्तं प्रतिपश्यथ।
उद्यन्त्सूर्य इव सुप्तानां द्विषतां वर्च आददे॥"

(अथर्व १७। १३। २)

अर्थ—(द्विषताम्) उन वैरियों का (वर्चः) तेज (आददे) मैं लिए लेता हूँ (इव) जैसे (उद्यन्) उदय होता हुआ (सूर्य) सूरज (सुप्तानाम्) सोनेवालों का। अर्थात् सूर्योदय तक सोनेवालों का तेज सूर्य हरण कर लेता है। इस घरू चक्की पीसने के व्यायाम के बंद हो जाने से हमारे स्त्री-समाज को बड़ा भारी नुक़सान यह उठाना पड़ता है कि वे तेज-हीन होती जा रही हैं।

चक्की चलाना एक बड़ा ही अच्छा व्यायाम है। इससे

हाथों और छाती को खूब व्यायाम मिलता है। पीठ के स्नायु भी इसके द्वारा शुद्ध हो जाते हैं। जिन स्त्रियों को चक्की चलाने का काम पड़ता है, वे हो इसके लाभ-हानि को जानती हैं। चक्की के साथ गाए जानेवाले गीत अब बहुत कम सुनने में आते हैं। प्रभात में प्रभातियाँ अब सुनाई नहीं देतीं। चक्की एक प्रकार का व्यायाम है, इसे सब जानते हैं, किंतु इस व्यायाम के द्वारा सैकड़ों रोग भी हटाए जा सकते हैं। प्रातःस्मरणीय महात्मा गांधीजो को "प्लूरसी"-नामक बीमारी चक्की पीसने से ही दूर हुई थी। स्वर्गीय पढियारजी का कहना है कि "क्षय-रोग का सबसे उत्तम उपाय चक्की पीसने का व्यायाम है।"

हम देखते हैं कि ऐसे उत्तम घरेलू व्यायाम से आज स्त्रियाँ मुँह छिपाने लगी हैं। मशीनों से पिसा हुआ आटा खाकर अपना, अपने पति तथा पुत्रों का स्वास्थ्य नष्ट करना उन्हें स्वीकार है, किंतु घर में स्वास्थ्य-प्रद आटा पीसकर खाना स्वीकार नहीं !!! इससे अधिक दुःखदायी बात और क्या हो सकती है ? हम अपनी गृह-लक्ष्मियों का ध्यान चक्की के व्यायाम की ओर आकर्षित करते हैं, और आशा करते हैं कि वे ऐसे उत्तम कार्य को फिर अपने हाथों में लेंगी। इसमें एक पंथ दो काज होता है। "आम-के-आम और गुठ-

लियों के दाम" इसी का नाम है। व्यायाम भी हो जाता है और भोजन बनाने के लिये उत्तम स्वास्थ्यदायक आटा भी पिस जाता है। बहनो ! समझो, सोचो, और मशीन से पिसे आटे को त्यागो। खुद चक्की चलाओ, और उससे लाभ उठाओ।

कूटना

चक्की पीसना जिस तरह स्त्रियों के लिये स्वास्थ्यदायक कार्य है, उसी तरह कूटना भी एक अच्छा व्यायाम है। चावल, जौ, बाजरा आदि अन्न प्रायः कूटकर काम में लाए जाते हैं। ज्वारो वग़ैरह भी कूटी जाती हैं। प्रचीन काल में लोग चावलों को छिलके-सहित घर में रक्खा करते थे, और रींधने से पहले स्त्रियाँ उन्हें कूट-फटककर तैयार कर लेती थीं। आजकल स्त्रियों को धान कूटने में आलस आता है। जब कभी ज़रूरत पड़ती है, बाज़ार से चावल मँगाकर भात बना लिया जाता है। ऐसे बाज़ारू चावल निःसत्त्व और बेस्वाद होते हैं। बाज़ारू चावलों को धोना लाज़िमी होता है, और चावलों को धोने से उनका मीठापन और बलदायक तत्त्व बर्बाद हो जाता है। जापानी लोग चावलों को कभी नहीं धोते। जब उन्हें भात बनाना होता है, तो वे चावल को कूटकर उसका छिलका निकाल डालते हैं, और बिना धोए रींधकर खाते हैं। इधर भारत में आलस बढ़ रहा है। बाज़ार

से चावल लाकर पकाए जाते हैं। स्त्रियों ने कूटना, बाँटना बंद-सा कर दिया है। छोटे-छोटे गाँवों की रहनेवाली बहनें तो अभी तक चावल, जौ, बाजरा वगैरह कूटती हुई देखी जाती हैं, इसी कारण वे नगर की स्त्रियों की अपेक्षा हृष्ट-पुष्ट, बलवान् और नीरोग होती हैं। बड़े-बड़े शहरों की दशा तो बहुत ही दया के योग्य हो गई है।

स्त्रियों को चाहिए कि कूटने के धंधे को बुरा न समझें। घर में इस तरह का अन्न यदि न भी आता हो, तो उसे अवश्य मँगावें और अपने हाथों कूटकर साफ़ किया करें। वेद कहता है—

"शुद्धाः पूता योषितो यज्ञिया इमा आपश्चरुमव सर्पन्तु शुभ्राः।
अदुः प्रजां बहुलान् पशून् नःपक्तौदनस्य सुकृतामेतु लोकम्॥"

(अथर्व ११।१।१७)

अर्थ—(शुद्धाः) शुद्ध (पूताः) पवित्र (शुभ्राः) उत्तम वर्णवाली (यज्ञियाः) पूज्य (इमाः योषितः) ये स्त्रियाँ (आपः चरुं) अन्न-जल के कार्य में (अवसर्पन्तु) प्राप्त हों। (ओदनस्य पक्ताः) चावल आदि पकानेवाले (सुकृतां) उत्तम काम करनेवालों के (लोकं) स्थान को (एतु) प्राप्त हों।'

तात्पर्य यह कि अन्न को पकाने योग्य तैयार करना स्त्रियों का काम है। जौ, बाजरा, चावल आदि पदार्थ कूटकर शुद्ध किए जाते हैं। अन्न कूटना कोई सहज काम नहीं है। इसमें खूब

मेहनत होती है। जो व्यायाम मुद्गरों द्वारा किया जा सकता है, इसी से मिलता-जुलता व्यायाम मूसलों द्वारा कूटने से हो जाता है। कूटनेवाली स्त्रियों की मुट्ठियाँ, कलाइयाँ, बाहें और छाती मजबूत हो जाती हैं। इसलिये अन्न कूटने का काम स्त्रियों को बड़े ही हर्ष के साथ करना चाहिए।

बाँटना

कूटने की तरह एक धंधा और है, वह है "बाँटना"। शाक, भाजी, तरकारी वगैरह में डालने के लिये नमक, मिर्च, मसाला नित्य ही पीसा जाना चाहिए। आजकल तो देखा गया है कि स्त्रियाँ नमक, हल्दी, मिर्चें, धनियाँ वगैरह सभी मसाले पीसकर रख छोड़ती हैं और रोज-रोज के बाँटने के झंझट से बच जाती हैं। हल्दी, नमक, धनिया वगैरह चक्की से पीसकर रख देती हैं। इससे बाँटने का व्यायाम जो नित्य होना चाहिए, नहीं हो पाता। साथ ही मसाला भी उतना सुस्वादु नहीं होता, जितना कि ताज़ा पिसा हुआ होता है। पकौड़ी, मुँगौड़े, मुँगौड़ी, बड़ी, कचौरी आदि बनाने के लिये मूँग अथवा उड़द की दाल को भिगोकर पीसना पड़ता है। चटनी वगैरह भी सिल-बट्टे पर बाँटनी होती है। यह व्यायाम भी छाती और हाथों के लिये बहुत ही लाभदायक होता है। ऐसे कामों से मुँह नहीं चुराना चाहिए, बल्कि अच्छी तरह नित्य करना चाहिए।

कपड़े धोना

कपड़े धोना भी स्त्रियों के लिये एक उत्तम व्यायाम माना गया है। परंतु देखने में आता है कि बड़े घरों की स्त्रियाँ अपनी धोती तक भी नहीं धोतीं। या तो नौकर धोते हैं या धोबी आकर रोज़ ले जाता है, और धोकर दे जाता है। स्त्रियों को चाहिए, अपने कपड़े अपने हाथों ही धोया करें और अपने बच्चों के पहनने के कपड़े भी खुद साफ़ किया करें। अपने पतिदेव की धोती अपने हाथों नित्य धोने में उन्हें अपना परम सौभाग्य समझना चाहिए। स्त्रियों के हाथों में चूड़ियाँ होती हैं, उनके टूटे जाने के भय से वे एक छोटी-सी मोगरी द्वारा कपड़ों को कूट-पीटकर साफ़ किया करती हैं। यह मोगरी से धोने का कार्य बहुत अच्छा व्यायाम है। इस व्यायाम द्वारा अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

देव परिक्रमा

प्राचीन समय में मंदिरों में देव-दर्शन के लिये स्त्रियाँ अधिकता से जाया करती थीं। अब वह बात नहीं है। पहले वे मंदिरों में जाकर देवता की मूर्ति, पीपल पेड़, तुलसी या केले के वृक्ष को बीच में लेकर प्रदक्षिणा करती थीं। कम-से-कम १०८ चक्कर तो अवश्य ही देती थीं। यदि मंदिर की परिक्रमा की गोलाई कम-से-कम ३० फ़ुट मान ली जाय, तो

१०८ चक्कर में ३२४० फ़ुट की दूरी हो जाती है। देखने में यह कुछ भी बात नहीं है, वहीं-की-वहीं घुमाई हो रही है, किंतु हिसाब लगाने से लगभग पौन मील का चक्कर हो जाता है। नित्य की इतनी घुमाई अर्थात् वाकिंग (walking) एक रफ़्तार से क्या कुछ कम व्यायाम है? स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये इतना व्यायाम काफ़ी होता है। हमारे पूर्वजों ने ऐसी अच्छी तरकीबें रक्खी थीं जिनके द्वारा धर्म-कर्म दोनो की रक्षा हो। परंतु समय के चक्कर में पड़कर सब कुछ जाता रहा।

आजकल भी कुछ फ़ैशनेबुल लेडीज़ चहलक़दमी (Walking) का शौक़ करती हैं, किंतु वे बग्घी-गाँगे में लदकर किसी बाग़-बग़िया में जा बैठती हैं। बस, इतने ही में अपना अहोभाग्य मान लेती हैं। किंतु चहलक़दमी (Walking) के लिये बाग़ीचे में जाना और मंदिर में जाना, दोनों में बहुत अंतर है। बाग़ीचे में सफ़ाई वग़ैरह का इतना ध्यान नहीं रक्खा जाता है जितना कि मंदिरों में। यद्यपि बाग़ीचों में भी पुष्पों के वृक्ष होते हैं, तथापि मंदिर में पुष्प, तुलसी के पत्ते, बिल्वपत्र आदि रोग-नाशक सुगंधित वस्तुएँ होती हैं और साथ ही गुग्गुल, धूप आदि सुगंधित द्रव्य सुलगाकर सारे देवालय की वायु शुद्ध एवं सुगंधित कर दी जाती है। इस

देव-दर्शन की प्रथा के नष्ट होने का अधिक उत्तरदायित्व देवालय के पुजारियों के सिर पर है। उनके पापाचार से अब स्त्रियों ने मंदिरों में जाना रोक दिया है। जो देवालय किसी समय स्त्रियों के लिये स्वास्थ्य के बढ़ाने तथा मन को पवित्र करने-वाले थे, वे ही आज मूर्खों और पापियों के हाथ में पड़कर उनके स्वास्थ्य के नाशक और अपवित्र करनेवाले बन गए हैं! कैसा घोर पतन है ?

पशुओं का पालन

पशुओं का पालन प्रत्येक गृहस्थ का मुख्य धंधा है। वैद्यक-ग्रंथों में दूध ही मनुष्य का मुख्य आहार माना गया है। प्रतिदिन के भोजन में दूध एक आवश्यक पदार्थ है। परंतु आज हम इसका अभाव देखते हैं। और इसके अभाव से आज हमारा शारीरिक पतन कैसा हुआ है, इसे सभी समझदार लोग भली प्रकार जानते हैं। आज दूध की कमी के कारण हमारे देश में बच्चों की मृत्यु-संख्या बढ़ गई है, और मनुष्य-जाति निर्बल बन गई। इसकी जवाबदेही किस पर है ? यदि ध्यान के साथ देखा जाय, तो इसका दोष हमारी गृह-लक्ष्मियों को ही है। प्राचीन समय में देखा जाता था कि हरएक घर में दुधारू पशु पाले जाते थे, परंतु खेद है कि आजकल की स्त्रियाँ पशुओं के पालन से घृणा करती हैं।

गौ आदि दूध देनेवाले पशुओं को पालना ठीक नहीं समझतीं। वे लोग गोबर उठाना, चारा डालना, पशुओं को पुचकारना, पोंछना और दूध निकालना वगैरह बुरा धंधा समझती हैं। उन्हें घर का उत्तम, पवित्र और स्वास्थ्य बढ़ानेवाला दूध पीना पसंद नहीं। बाजारू खराब, पानी-मिला, रोग पैदा करनेवाला दूध खरीदना उन्हें अच्छा मालूम होता है। जबसे स्त्रियों ने इस कार्य को घृणा की दृष्टि से देखा, तभी से हमारे देश के दुधारू पशुओं की संख्या दिन-दिन घटती जा रही है। और साथ-ही-साथ कमजोरी भी बढ़ती चली जा रही है। पशुओं के पालन पर एक अच्छी मोटी पुस्तक स्वतंत्र-रूप से लिखी जा सकती है, परंतु यह हमारा विषय न होने से हम अधिक नहीं लिख सकते। इस विषय पर प्रकाश डालने के लिये जितना आवश्यक था, उतना ही यहाँ लिखा गया है।

पशु-पालन स्त्रियों का एक बहुत अच्छा व्यायाम है। यह धंधा पुरुषों का नहीं है, बल्कि स्त्रियों ही का है। यदि पुरुष लोग पशुओं के पालन के काम में लग जायँ, तो गिरिस्ती के दूसरे जरूरी खर्चों के लिये धन कौन कमाएगा? इसलिये पशु-पालन स्त्रियों का ही काम है। वेद में भी इस बात का उल्लेख पाया जाता है। वेद ने स्पष्ट-रूप से यह काम स्त्रियों का बतलाया है। देखिए—

"शिवा भव पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यः शिवा ।
शिवास्मै सर्वस्मै क्षेत्राय शिवान इहैधि ॥"
(अथर्व ३ । २८ । ३)

अर्थ—(पुरुषेभ्यो) पुरुषों के लिये (गोभ्यो) गौओं के लिये (अश्वेभ्यः) घोड़ों के लिये (शिवा भव) कल्याण करनेवाली हो । इत्यादि

"अभ्यावर्तस्वपशुभिः सहैनां प्रत्यङेनां देवताभि सहैधि ।
मात्वा प्रापच्छपथो माभिचारः स्वे क्षेत्रेअनमीवाविराज ॥"
(अथर्व ११ । १ । २२)

अर्थ—(पशुभिः सह) पशुओं के साथ (एनां) इसके (अभ्यावर्तस्व) चारो ओर घूम । इत्यादि अनेक मंत्र आते हैं।

तत्पार्य यह है कि पशु-पालन स्त्रियों का काम है । इस काम को पुराने समय के राजघरानों में भी करते थे । उनकी रानियाँ गौओं का दूध निकालती थीं, और उनकी सेवा अपने हाथों करती थीं । भारत के प्रसिद्ध सूर्य-वंश और चंद्र-वंश के लोग गो-पालन अपना परम कर्तव्य मानते थे और उनकी पटरानियाँ पशुओं की सेवा करती थीं ।

पशुओं का पालन करना मामूली कसरत नहीं है । दूध दुहने से हाथ की उँगुलियाँ और कलाइयाँ मज़बूत होती हैं । पशुओं

के लिये करबी या घास की कुट्टी के लिये गँडासा चलाते वक्त जो श्रम होता है वह स्त्री-जाति के लिये बहुत अच्छी कसरत है। कुट्टी काटने से सारे शरीर को तो व्यायाम मिलता ही है, किंतु साथ ही हाथों के लिये खासा व्यायाम हो जाता है। दूध निकालते वक्त बछड़े-बछड़ियों को पकड़ना या उन्हें इधर-से-उधर बाँधना साधारण काम नहीं है। कमज़ोरों को तो वे कुछ समझते ही नहीं, उन्हें घसीट ले जाते हैं। यह कुछ कम व्यायाम नहीं है, एक मामूली कुश्ती-सी हो जाती है। दही मथ-कर उसमें से मक्खन निकालना कितना अच्छा व्यायाम है! यदि किसी को मक्खन निकालते हुए देखा हो, तो आप सहज ही अनुमान कर सकते हैं। खूब मेहनत होती है। शरीर का हरएक हिस्सा हिल जाता है। एक गौ के दूध की छाछ बनाने में सौ दंड और सौ बैठक की मेहनत पड़ जाती है। हमारा यह कथन सच है या झूठ, इसके बारे में वे ही कह सकती हैं, जो इस काम को करती हैं। अपने हाथों पशुओं का पालन करनेवाली स्त्रियों का शरीर फुर्तीला, सुडौल, दृढ़, पुष्ट और नीरोग होता है। हम अपनी बहनों से प्रार्थना करते हैं कि यदि आपके घर में पशु-पालन नहीं होता, तो अवश्य ही इसे आरंभ कीजिए। इससे तुम्हारे घर का स्वास्थ्य भी उत्तम हो जायगा और गो-वंश का नाश भी रुक

जायगा। इसलिये अपने और पराए कल्याण के लिये पशुओं का पालन अवश्य आरंभ कीजिए।

बहनों, मिहनत करने से मुँह न छिपाओ। जो श्रम को बुरा समझती हैं, वे मानो अमृत को विष की तरह माने बैठी हैं। घर के धंधे जैसे पानी भरना, पीसना, कूटना, धोना, चौका-बरतन, ढोरों का पालन इत्यादि से शरीर के सारे अंगों की कसरत हो जाती है। यही कारण है कि काम-धंधा न करनेवाली औरतों से ग़रीब और मध्यम दर्जे की स्त्रियाँ स्वस्थ, बलवान् और नीरोग होती हैं। उनके अधिक संतान उत्पन्न होने पर भी वे बुढ़ापे तक मजबूत बनी रहती हैं। मजदूर स्त्रियों को देखिए, कैसी हृष्ट-पुष्ट और बलवान् होती हैं। अब भी वे स्त्रियाँ जो पुरानी मरजाद के अनुसार अपने घर के काम अपने आप करती हैं, बलवान और स्वस्थ रहती हैं। घर के कामों के करने की आदत बचपन से ही डालनी चाहिए। वे माता-पिता जो अपने बड़प्पन के अहंकार में या प्यार के कारण अपनी कन्याओं से बचपन में काम-धंधा न कराकर उन्हें आलसी बनाते हैं, उनके जानी दुश्मन हैं। लड़कियों को नाजुक नहीं बनाना चाहिए, बल्कि उन्हें हृष्ट-पुष्ट और बलवान् बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। बचपन से ही यदि मेहनत करने की आदत डाल दी जायगी, तो मरते

दम तक वे कभी भी आलसी बनकर नहीं रहेंगी। इस अध्याय में हमने घरू धंधों में होनेवाले व्यायाम का ज़िक्र किया है। अब आगे के अध्याय में हम एक ज़रूरी और स्वास्थ्य बढ़ानेवाली क्रिया "प्राणायाम" की विधि का वर्णन करेंगे।

तीसरा अध्याय

प्राणायाम

डॉ० कर्मेट का कथन है कि

"कन्या-पाठशालाओं में तथा बोर्डिंग में स्त्रियों के शारीरिक वृद्धि के साधनों का अभाव एक महान् त्रुटि है। और इस त्रुटि के हटाने के प्रयत्नों का न होना, तो इससे भी भयानक भूल है। वास्तव में देखा जाय, तो मानसिक शिक्षा की अपेक्षा शारीरिक शिक्षा का महत्त्व अधिक है। नियमित व्यायाम के अभाव से लड़कियाँ बेपरवाह और मनोबल-शून्य बन जाती हैं। कमजोरी, कमर का झुक जाना, और रक्त-हीन शरीर इत्यादि बातें शारीरिक क्रियाओं की अव्यवस्था के ही परिणाम-रूप होती हैं। शरीर को सुदृढ़ रखने से मस्तिष्क भी बलवान् होता है, और दोनों तरह से लाभ होता है।"

ऊपर-लिखे कथन से यह बात साफ़ हो जाती है कि स्त्रियों को कसरत करने की बेहद ज़रूरत है। पुराने समय में स्त्रियाँ बलवान् होती थीं। इतिहास के देखने से मालूम होता है कि प्राचीन काल में कई वीर स्त्रियों ने लड़ाई के मैदान में जाकर

दुश्मनों के दाँत खट्टे किए हैं। महाराजा दशरथजी के साथ कैकेयी का रण-भूमि में जाना बहुत पुरानी बात है, परंतु कुछ सदी पहले ही कई वीर-नारियाँ इस भारतवर्ष में अपना नाम कर गई हैं। मेवाड़ की वीर-भूमि के इतिहास में अपने पति के साथ समर-भूमि में उतरनेवाली अनेक वीर-माताओं के नाम इतिहास में सोने के अक्षरों से लिखे हैं।

रण-भूमि बच्चों का खेल नहीं है। उस जगह बड़े-बड़े वीर पुरुषों के कलेजे हिल जाते हैं। भेरियों का भैरव तुमुल शब्द कानों के पर्दों को फाड़ता है। शस्त्रों की झंकार हृदय को कंपित करती है। रक्त की नदियाँ और खून-खच्चर आँखों को डराता है। ऐसे मैदानों में भूखे सिंह की तरह शस्त्र उठाए वीर-नारियों की वीरता के वर्णन को पढ़कर किसे उनके इस बल पर गर्व न होता होगा। किंतु जब आजकल की चूहे और बिल्लियों से डरकर भागनेवाली स्त्रियों की दुर्दशा पर ध्यान जाता है, तो अपार दुःख होता है। हमारे देश की सभी तरह से अधोगति हो रही है। भावी प्रजा को बिना बलवान् और सहिष्णु बनाए हमारी उन्नति असंभव है, इस-लिये स्त्रियों को चाहिए अब हमारे बताए हुए उपायों पर चल कर अपना तथा अपने देश का उद्धार करें। पिछले अध्याय हम घरू काम-धंधों पर प्रकाश डाल आए हैं, अब हम यहाँ

प्राणायाम पर लिखेंगे। प्राणायाम स्त्रियों के लिये अत्यंत लाभप्रद किया है। आशा है, बहनें इससे अवश्य लाभ उठावेंगी।

"प्राणायामैरेव सर्वे प्रशुष्यंति मला इति।"

अर्थ—प्राणायाम-क्रिया के द्वारा समस्त शारीरिक मलों का नाश होता है। वेद का वचन है कि

"प्रविशतं प्राणापानावनड्वाहा विव व्रजम्।
अयं जरिम्णः शेवधिररिष्ट इह वर्धताम्॥"
(अथर्व ७। २३। २)

अर्थ—(प्राणापानौ) हे प्राण और अपान! तुम (प्रविशतम्) प्रवेश करते रहो (इव) जैसे (अनड्वाहौ) रथ को ले चलने-वाले दो बैल (व्रजम्) गोशाला में। (अयम्) यह जीवात्मा (जरिम्णः) स्तुति का (शेवधिः) पात्र (अरिष्टः) दुःख-रहित होकर (इह) यहाँ (वर्द्धताम्) वृद्धि पावे।

प्राण, अपान आदि वायु के द्वारा शरीर दुःख-रहित होकर वृद्धि पाता है। हिंदू-शास्त्रों में प्राणायाम की बहुत ही प्रशंसा है। योगाभ्यास के आठ अंगों में से यह चौथा अंग है। इसके गुणों पर मोहित होकर हमारे पूर्वाचार्यों ने इसे संध्योपासना में सम्मिलित कर दिया है। इसे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति का मुख्य साधन माना है। पूर्व इसके

कि हम प्राणायाम की क्रिया बतावें, हमें इसके लाभ पाठिकाओं के सम्मुख रखना उचित जान पड़ता है।

(१) प्राणायाम स्वास्थ्य-प्रद है और क्षय-रोग का शत्रु है।

(२) प्राणायाम द्वारा यक्ष्मा (राजरोग) दूर हो जाता है। वेद कहता है—

"आ ते प्राणं सुवामसि परा यक्ष्मं सुवामि ते ।
आयुर्नो विश्वतो दधदयमग्निर्वरेण्यः ॥"

(अथर्व ७ । ५३ । ६)

अर्थ—हे मनुष्य ! (तेप्राणम्) तेरे प्राण को (आ सुवामसि) हम अच्छे प्रकार आगे बढ़ाते हैं। (ते) तेरे (यक्ष्मम्) यक्ष्मा-रोग को (परासुवामि) मैं दूर निकालता हूँ।

(३) प्राणायाम से उम्र बढ़ती है। वेद कहता है—

"आयुर्यत्ते अतिहितं पराचैरपानः प्राणः पुनरातावितान् ।"

(अथर्व ७ । ५३ । ३)

अर्थ— (यत्) जो (ते) तेरा (आयुः) उम्र (पराचैः) पराङ्मुख होकर (अतिहितम्) घट गई है, (तौ) वे दोनों (प्राणः) प्राण और (अपानः) अपान (पुनः) फिर (आइताम्) आवें।

(४) फेफड़ों को प्राणायाम द्वारा नवजीवन तथा शक्ति प्राप्त होती है।

(५) मानसिक अथवा शारीरिक अधिक श्रम द्वारा जिन का स्वास्थ्य खराब हो गया हो, उनके लिये भी प्राणायाम जीवन-दाता है।

(६) बद्धकोष्ठता (क़ब्ज़) के लिये भी प्राणायाम रामबाण क्रिया है।

(७) प्राणायाम करनेवाले को भूख भी खुलकर लगती है। खाया हुआ भोजन अच्छी तरह पच जाता है।

(८) प्राणायाम करनेवाले का सीना उठा हुआ और चौड़ा हो जाता है।

(९) चर्म-रोगों के लिये प्राणायाम अक्सीर है।

(१०) प्राणायाम के द्वारा आलस्य का नाश होकर शरीर में फुर्ती आ जाती है।

(११) प्राणायाम के द्वारा शरीर का वज़न भी बढ़ जाता है। महाशय एस० ओ० का कथन है कि "मानसिक परिश्रम के कारण मुझे क्षय हो गया, और मृत्यु के निकट पहुँच चुका था, किंतु प्राणायाम ने मुझे पुनः जीवन दान किया। २ अगस्त, १९०४ से मैंने प्राणायाम आरंभ किया। उस वक़्त मेरा वज़न ७ स्टोन ५ पौंड था, किंतु १९०७ की १८ जुलाई को जब मैंने अपने को तोला, तो मुझ में ८ स्टोन ११ पौंड और ६ औंस वज़न निकला।" इसी तरह एक

कि हम प्राणायाम की क्रिया बतावें, हमें इसके लाभ पाठिकाओं के सम्मुख रखना उचित जान पड़ता है।

(१) प्राणायाम स्वास्थ्य-प्रद है और क्षय-रोग का शत्रु है।

(२) प्राणायाम द्वारा यक्ष्मा (राजरोग) दूर हो जाता है। वेद कहता है—

"आ ते प्राणं सुवामसि परा यक्ष्मं सुवामि ते ।
आयुर्नो विश्वतो दधदयमग्निर्वरेण्यः ॥"

(अथर्व ७ । ५३ । ६)

अर्थ—हे मनुष्य! (तेप्राणम्) तेरे प्राण को (आ सुवामसि) हम अच्छे प्रकार आगे बढ़ाते हैं। (ते) तेरे (यक्ष्मम्) यक्ष्मा-रोग को (परासुवामि) मैं दूर निकालता हूँ।

(३) प्राणायाम से उम्र बढ़ती है। वेद कहता है—

"आयुर्यत्ते अतिहितं पराचैरपानः प्राणः पुनरातावितास् ।"

(अथर्व ७ । ५३ । ३)

अर्थ— (यत्) जो (ते) तेरा (आयुः) उम्र (पराचैः) पराङ्मुख होकर (अतिहितम्) घट गई है, (तौ) वे दोनों (प्राणः) प्राण और (अपानः) अपान (पुनः) फिर (आइ-ताम्) आवें।

(४) फेफड़ों को प्राणायाम द्वारा नवजीवन तथा शक्ति प्राप्त होती है।

(५) मानसिक अथवा शारीरिक अधिक श्रम द्वारा जिन का स्वास्थ्य खराब हो गया हो, उनके लिये भी प्राणायाम जीवन-दाता है।

(६) बद्धकोष्ठता (क़ब्ज़) के लिये भी प्राणायाम राम-बाण क्रिया है।

(७) प्राणायाम करनेवाले को भूख भी खुलकर लगती है। खाया हुआ भोजन अच्छी तरह पच जाता है।

(८) प्राणायाम करनेवाले का सीना उठा हुआ और चौड़ा हो जाता है।

(९) चर्म-रोगों के लिये प्राणायाम अक्सीर है।

(१०) प्राणायाम के द्वारा आलस्य का नाश होकर शरीर में फुर्ती आ जाती है।

(११) प्राणायाम के द्वारा शरीर का वज़न भी बढ़ जाता है। महाशय एस० ओ० का कथन है कि "मानसिक परिश्रम के कारण मुझे क्षय हो गया, और मृत्यु के निकट पहुँच चुका था, किंतु प्राणायाम ने मुझे पुनः जीवन दान किया। २ अगस्त, १९०४ से मैंने प्राणायाम आरंभ किया। उस वक़्त मेरा वज़न ७ स्टोन ५ पौंड था, किंतु १९०७ की १८ जुलाई को जब मैंने अपने को तोला, तो मुझ में ८ स्टोन ११ पौंड और ६ औंस वज़न निकला।" इसी तरह एक...

जापानी लोगोरो-नामक सज्जन ने भी लिखा है कि "मैंने २२ सितंबर, १९०७ से प्राणायाम आरंभ किया। उस समय मुझमें ७ स्टोन और ६ पौंड वजन था। जब १ मई, १९०९ को तोला, तो ५५७ दिन में पहले से ४ स्टोन १ पौंड और ८ औंस वजन बढ़ गया।"

(१२) प्राणायाम से हृदय भी मजबूत हो जाता है।

(१३) प्राणायाम से बुद्धि का विकास होता है।

(१४) प्राणायाम द्वारा इंद्रियाँ वश में आ जाती हैं।

इत्यादि अनेक लाभ प्राणायाम के हैं। इसीलिये योग-साधन के समस्त अंगों में प्राणायाम एक मुख्य अंग है। प्राणायाम के बिना योग-साधन वैसा ही है, जैसा कि प्राण के बिना शरीर। प्राणायाम करनेवाले की संतान भी उत्तम होती है। इसके अतिरिक्त मन की स्थिरता, ध्यान की सिद्धि और समाधि की प्राप्ति भी इसी के द्वारा होती है।

प्राणायाम की विधियाँ सैकड़ों ही हैं। जैसा जिसके जी में आया, वह वैसा ही करने लगा। आपने देखा होगा कि संध्योपासना के समय उपासक अपनी आँखें मूँदकर नाक पकड़ लेता है। यही प्राणायाम की क्रिया है। परंतु अधिकांश लोग प्राणायाम की विधि को भली भाँति नहीं जानते, और नाक पकड़ने की लकीर को पीटा करते हैं। कभी-कभी तो देखा

गया है कि घुटनों में पेट दबाए हुए बैठे हैं और नाक पकड़कर दो-तीन सेकेंड के बाद छोड़ दिया गया है। बस, उनकी प्राणायाम-विधि हो गई। इसका नाम प्राणायाम नहीं है।

प्राणायाम की क्रिया आधुनिक नहीं है। भारतवर्ष में यह लाखों वर्षों से प्रचलित है। यही कारण है कि प्राणायाम की विधि न आते हुए भी लोग उसको लकीर पीटते ही जा रहे हैं। परंतु इससे लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक है। पुरुष तो फिर भी संध्योपासना के वक्त थोड़-बहुत प्राणायाम कर ही लेते हैं, किंतु स्त्रियाँ तो जानती ही नहीं कि प्राणायाम क्या है? क्योंकि उन्हें वेद के मंत्रों के सुनने तक का अधिकार ही नहीं !!! जबसे स्त्रियों के लिये ऐसे मन-गढ़ंत श्लोक बनाकर उनके अधिकारों की हत्या की गई, तभी से नारी-समाज का घोर पतन आरंभ हो गया। जब तक स्त्रियाँ वेद-पाठी रहीं, और संध्योपासना आदि कार्यों से वर्जित नहीं की गईं, तब तक वे उन्नति के उच्चतम शिखर पर विराजमान थीं। वैदिक कार्यों में स्त्रियों को वर्जित करने का विधान स्वार्थ-पूर्ण विधान है।* जिन्होंने कौशल्या, और सीता देवी के संध्योपासना तथा अग्निहोत्र के वर्णन वाल्मीकि रामायण

* मेरी लिखी हुई "वेदों में स्त्रियाँ"-नामक पुस्तक गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय से मँगाकर अवश्य पढ़ लीजिए। लेखक

दाहिना पैर बाएँ पाँव को जाँघ पर और बायाँ पैर दाहिने पाँव की जंघा पर रक्खा जाता है। अर्थात् पद्मासन से बैठते हैं। दाहिने हाथ की हथेली को नाभि के सामने चित्त रक्खो और उसपर बाएँ हाथ को हथेली को चित्त रक्खो। हाथों के अँगूठे एक दूसरे के आमने-सामने रहें। आँखें खुली रक्खो और धीरे-धीरे श्वासोच्छ्वास को क्रिया करो।

(३) Shozaburo Otabe की विधि इस प्रकार है कि "नित्य प्रातः काल छः बजे उठो और खुली हुई खिड़की के सामने १० से १५ मिनिट तक गंभीरता-पूर्वक श्वासोच्छ्वास की क्रिया करो। फिर २० मिनिट तक खेतों में घूमो और फिर थोड़ा-सा कलेऊ करो। दिन में ३ वक़ भोजन करना चाहिए। बीच में कुछ भी नहीं खाना चाहिए। दो पहर के बाद फिर दस से पंद्रह मिनिट तक प्राणायाम करना चाहिए। रात्रि को सोने से पहले भी १०-१५ मिनिट तक प्राणायाम करना चाहिए।

(४) प्रसिद्ध जापानी विद्वान् (Hirata) हिराता की विधि के अनुसार "सोते व़क़ चित लेटो और अपने पाँवों को जितना अधिक फैला सको, खूब फैलाओ। फैलाने में जल्दी नहीं होनी चाहिए। अब इस प्रकार गंभीरता पूर्वक साँस लो कि जिससे पेट की नसों पर पूरा-पूरा जोर पड़े। साँस को रोक-

कर हाथ की अँगुलियों के पोरवों पर १०० तक गिनती गिनो, इसके बाद पावों को बिलकुल ढीले कर दो, यहाँ तक कि वे अपनी साधारण दशा में आ जायँ। अब धीरे-धीरे साँस छोड़ दो।

(५) सीधी खड़ी हो जाओ। हाथों को जाँघ पर रक्खो। दाहिना हाथ दाहिनी जंघा पर और बायाँ बाईं जंघा पर। मुँह को बंद करो और नाक से गंभीर साँस लो। साँस लेते समय दानो हाथों को ऊपर की ओर ले जाओ, दोनों हाथ कंधों की सीध में हों। यहाँ हाथों को ३ सेकेंड तक ठहराओ, और फिर साँस छोड़ते वक्त हाथों को नीचे की ओर लाओ, अर्थात् पूर्व स्थिति में आ जाओ। साँस लेने की अपेक्षा निकालने में शीघ्रता होनी चाहिए।

(६) सीधी खड़ी हो जाओ। दोनो हाथों को जाँघों पर रक्खो। अब धीरे-धीरे साँस लो और हाथों को उपर ले जाओ। यहाँ तक कि हथेलियाँ सिर के ऊपर मिल जायँ। अर्थात् अकाश की ओर हाथ जुड़े हुए हों। साथ ही अपने शरीर को पैरों के अँगूठों के बल उठाओ। तीन सेकंड तक इसी दशा में रहकर साँस छोड़ना आरंभ करो और पहले के ढंग में आ जाओ।

(७) अपने दाहने-बाएँ सीधे हाथ फैलाकर खड़ी हो जाओ। मानो तैरने के लिये खड़ी हो। फिर उन्हें धीरे-धीरे

लाकर सामने इस तरह से मिलाओ कि दोनो हाथों की हथेलियाँ आपस में मिल जायँ। और जब साँस लेना आरंभ करो, तब हाथों को धीरे-धीरे अलग करते हुए पीठ की तरफ़ यहाँ तक ले जाओ कि कमर के नीचे दोनो हथेलियाँ आपस में मिल जायँ। तीन सेकेंड तक इसी दशा में रहकर साँस छोड़ना आरंभ करो और पहले की स्थिति में आ जाओ।

इस प्रकार प्राणायाम की अनेक तरकीबें हैं, परंतु हमें ये विधियाँ पसंद नहीं हैं, और ख़ास करके स्त्रियों के लिये इस प्रकार का प्राणायाम ठीक नहीं है। अब स्त्रियों के करने योग्य प्राणायाम की आधुनिक भारतीय विधि बतलाते हैं। इसके पहले निम्न-लिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए।

(१) गंदे, बंद, बदबूदार, दलदलवाले, मैले, खँडहर भयप्रद स्थानों में प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

(२) पेट भरे हुए प्राणायाम करना भी अनुचित है।

(३) अत्यंत भूखे और अत्यंत प्यासे प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

(४) जिसके शरीर की गरमी १०० डिग्री से अधिक हो, उसे प्राणायाम हानि-प्रद है।

(६) प्राणायाम करनेवाले को नाक और मुँह बहुत शुद्ध रखने चाहिए।

चौथा अध्याय

व्यायाम

कुछ लोगों की आदत-सी पड़ जाती है कि वे नए परिवर्तनों को बुरा समझते हैं। उन्हें हमेशा उनमें दोष-ही-दोष दिखाई पड़ते हैं। इतना ही नहीं, वे अपनी मानी हुई बातों को घटा-बढ़ाकर दूसरे लोगों को सुनाते हैं, और उन्हें उन बातों को मानने के लिये विवश भी करते हैं। यही हालत स्त्रियों के व्यायाम के लिये भी है। व्यायाम का विषय तो एक ऐसी बात है, जिस पर नाक-भौं चढ़ाना कोई बड़ी बात नहीं, परंतु स्त्रियों को पढ़ाना-लिखाना भी आज कई मनुष्यों को अच्छा नहीं लगता। जिस तरह पढ़ने-लिखने के विषय में उनका कहना है कि "स्त्रियों को पढ़ा-लिखाकर क्या उन्हें बाबू बनाना है? या उनसे नौकरी कराना है? पढ़ने-लिखने से स्त्रियाँ बिगड़ जाती हैं।" इत्यादि। उसी तरह वे व्यायाम के लिये भी कहते हैं कि "क्या व्यायाम कराके स्त्रियों को कुश्ती मारनी है? या फ़ौज में भर्ती होकर युद्ध में जाना है? अथवा उन्हें मर्द बनाना है? व्यायाम से उनमें मर्दानापन आ जाता है।" इत्यादि। इस प्रकार की बातें नासमझ

मनुष्यों को कही जा सकती हैं। जो लोग अपनी अच्छी-बुरी हालत का विचार नहीं कर सकते, ऐसे ही मनुष्य स्त्रियों के सुधार के विरुद्ध अंट-शंट बातें बका करते हैं। परंतु ऐसे लकीर के फ़क़ीरों की बातों पर आज लोग अधिक विश्वास नहीं करते।

"व्यायाम के द्वारा स्त्रियों का रूप-लावण्य नष्ट हो जाता है।" इस बात को भी कोई समझदार व्यक्ति नहीं मानेगा। व्यायाम के द्वारा तो शरीर सुडौल एवं ख़ूबसूरत बनता है। व्यायाम के आचार्यों का दावा है कि "व्यायाम से सौंदर्य बढ़ता है, मुख कांतिमय बन जाता है, रंग निखरता है।" फिर कैसे मान लिया जाय कि व्यायाम के द्वारा स्त्रियों का लावण्य नष्ट हो जाता है? व्यायाम न करनेवाली स्त्रियाँ सभी लावण्य-मयी होती हैं, इसे भी कोई नहीं मान सकता। हाँ, यह अवश्य कहा जा सकता है कि श्रमशील स्त्रियाँ आलसी स्त्रियों की अपेक्षा कहीं अधिक लावण्यमयी होती हैं। "व्यायाम से स्त्रियों में मर्दानगी आ जाती है।" इत्यादि बातें बे-सिर-पैर की हैं। व्यायाम यदि हद से ज़्यादा किया जायगा, तो स्त्री हो या पुरुष, सभी के लिये हानिकारी है। स्त्रियों को चाहिए कि मर्दों के व्यायाम, जिनसे उनके मर्दाना हो जाने का डर हमारे मर्द कहलानेवाले भारतवासियों को है, न करें। कुछ

व्यायाम ऐसे हैं, जो मर्दों को लाभ पहुँचाते हैं, तो स्त्रियों को हानिप्रद होते हैं। इसीलिये हमने इस पुस्तक में ऐसे ही व्यायाम बतलाए हैं, जो स्त्रियों के लिये लाभकारी हैं।

स्त्रियाँ पुरुषों के-से व्यायाम भी कर सकती हैं, परंतु ऐसे व्यायाम उन्हीं स्त्रियों को करना चाहिए जो जीवन-भर ब्रह्मचर्य-व्रत पालन करने की इच्छुक हों। हमारे देश में जीता-जागता उदाहरण श्रीमती मिस ताराबाई हैं। जिन लोगों ने सरकस में उन्हें काम करते देखा है, वे समझ सकते हैं कि स्त्रियाँ ऐसे काम भी कर सकती हैं, जिन्हें मर्द भी नहीं कर सकते। अपनी छाती पर से भरी हुई गाड़ी निकलवाना। भाले की नोक अपने माथे में लगाकर उससे भरी हुई गाड़ी को ढकेलना। अपने बालों से सैकड़ों पौंड के वजन का पत्थर बाँधकर उठाना, क्या कुछ कम बात है ? माना कि व्यायाम से स्त्रियाँ मर्दाना हो जाती हैं, परंतु यहाँ प्रश्न यह होता है कि इससे हानि क्या है ? देश को इस वक्त इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि स्त्रियाँ अपनी रक्षा अपने आप कर सकें। हाँ, स्त्रियों के व्यायाम से पुरुषों को चिढ़ने का एक कारण अवश्य हो सकता है। वह यह कि कहीं ऐसा न हो कि "औरतें व्यायाम करके, हम माँग-पट्टी निकालकर, मुँह पर तेल और कपाल पर लाल बिंदी लगाकर, पतले महीन मुला-

व्यायाम नं० १

पृथ्वी पर चित सो जाओ। अपनी टाँगें जमीन से सटा दो और अपने दोनो हाथ सिर के पीछे सीधे लंबे फैला दो। अब उठने का प्रयत्न करो। उठते वक्त जल्दी नहीं करनी चाहिए, और न झटके के साथ ही उठना चाहिए, बल्कि पेट के स्नायु के बल पर बहुत ही आहिस्ता-आहिस्ता उठने का प्रयत्न करना चाहिए। उठते वक्त पैर पृथ्वी से न उठ जायँ और हाथ सीधे पैरों की ओर बढ़ते चले जायँ। यहाँ तक कि दोनो हाथों से पैरों के दोनो अँगूठों को पकड़ लो, जैसा कि चित्र नं० १ में है। इतना करने के बाद अपने सिर को दोनों घुटनों के बीच में रखने का प्रयत्न करो, जैसा कि चित्र नं० १ में दिखाया गया है।

सिर को घुटनों में रखते वक्त पैर जमीन से नहीं उठने चाहिए। इस वक्त पीठ, गर्दन और पैरों में काफ़ी तनाव होता है। एक दिन में एक ही बार में ऐसा नहीं किया जा सकता। पहले तो धीरे-धीरे उठने में ही बड़ी कठिनाई पड़ेगी; क्योंकि पृथ्वी से पाँव उठाए बिना अथवा झटका लिए बिना उठ जाना सहज बात नहीं है। इसके बाद पैरों को सीधा रखकर हाथों से पैरों के अँगूठों को पकड़ लेने में कमर में कष्ट-सा होने लगेगा। फिर घुटनों में माथा टिकाते

चित्र नं० १ (पृष्ठ ७०)

क तो और भी कठिन मालूम होगा। एक-दो दिन इस यायाम में संभवतः कुछ कष्ट हो, परंतु कुछ दिन के अभ्यास यह सहज ही में होने लगेगा। न आने पर हताश होकर छोड़ देना ठीक नहीं है, बल्कि प्रयत्न द्वारा इसमें सफ- ता प्राप्त करनी चाहिए। इसके करने से सारे शरीर को व्यायाम मिलता ही है, किंतु पृष्ठ-वंश, सिर, गर्दन, पीठ और टनों के नीचे के हिस्से को अच्छी तरह शुद्धि होकर वे बलवान् न जाते हैं। इसको करते समय जब तक थकान न आ जाय, ब तक इसे करना चाहिए। १५-२० मिनट तक घुटनों में सिर ककर रहने का अभ्यास अवश्य ही करना चाहिए। इस व्या- ाम को यौगिक भाषा में "पश्चिमोत्तान आसन" कहते हैं।

व्यायाम नं० २

चित लेट जाना चाहिए। दोनो पैरों को पृथ्वी पर चिपके रखना चाहिए। बाएँ हाथ से दाहने हाथ की भुजा और दाहने से बाएँ हाथ की भुजा को पकड़ लो, और अब धीरे- धीरे बैठी होने का प्रयत्न करो। देखना, पैर पृथ्वी से न उठ जायँ. और उठने में झटके से न उठो। बैठने पर फिर उसी तरह धीरे-धीरे लेट जाओ और फिर पहले की तरह उठो। इस तरह जहाँ तक थकान न मालूम हो, उठो-बैठो। यह व्यायाम नं० १ से कुछ कठिन है।

व्यायामों को धीरे-धीरे करने ही से लाभ होता है, जल्दी करने में हानि होती है। इन व्यायामों के करनेवाली बहनों को प्रसव-काल में बिलकुल कष्ट नहीं होता।

व्यायाम नं० ५

चित लेट जाओ और लेटे-लेटे ही पद्मासन लगाओ। अर्थात् अपने दाहने पैर के टखने को बाईं जंघा पर और बाएँ पैर के टखने को दाहने पैर की जंघा पर रक्खो। इसके बाद अपने सिर के नीचे दाहने हाथ से बाएँ भुजदंड को और बाएँ हाथ से दाहने भुजदंड को पकड़कर उस पर अपना सिर जमा दो। अपनी कमर को, जितनी हो सके, उतनी पृथ्वी से ऊँची उठाओ। ध्यान रखिए, इस वक़्त दोनों घुटने पृथ्वी से लगे रहें। ऊपर न उठने पावें। जब तक थकान न आ जाय, तब तक इसी स्थिति में पड़े रहना चाहिए (देखो चित्र नं० २)। योग के आसनों में इसका नाम "मीनासन" है। कहते हैं, इस आसन से जल के ऊपर रहनेवाला व्यक्ति कभी डूब नहीं सकता। इस व्यायाम से सारे शरीर की शुद्धि होती है। खास करके पेट और पीठ के स्नायु बलवान् और नीरोग हो जाते हैं। इसके अभ्यासी को कभी भी क़ब्ज़ की शिकायत नहीं होती। इसे थोड़ा जल-पान करके करने से विशेष लाभ होता है।

चित्र नं० २

(पृष्ठ ७४)

व्यायाम नं० ६

इस आसन में भी कई प्रकार के व्यायाम किए जा सकते हैं। सिर के नीचे हाथ लगाए हुए ही, जैसा कि चित्र में दिखाया गया है, धीरे-धीरे उठने का प्रयत्न करना चाहिए। और उठ-बैठकर फिर धीरे-धीरे पीछे को तरफ जाकर लेट जाना चाहिए। जब तक थकान न आ जाय, इसे करना चाहिए। इसमें उठके बैठी हो चुकने के बाद पैरों पर सिर टिका देने का अभ्यास भी किया जा सकता है।

फिर इसी प्रकार पैरों की पालथी को धीरे-धीरे जमीन से उठाकर सिर के ऊपर ले जाना चाहिए। उसके बाद आहिस्ता-आहिस्ता लाकर पृथ्वी पर जमा देना चाहिए। इस व्यायाम को कई बार करना चाहिए।

व्यायाम नं० ७

अभी तक हमने लेटकर करने के कुछ व्यायामों की विधि बताई है, अब हम बैठकर करने के व्यायामों का वर्णन करेंगे। आलथी-पालथी लगाकर अर्थात पद्मासन से बैठ जाओ। दाहने पैर का पंजा बाईं जंघा पर और बाएँ पैर का पंजा दाहने पैर की जंघा पर रखने से पद्मासन बन जाता है। इसमें सिर्फ इसी बात का ध्यान रखना पड़ता है कि पैरों के घुटने पृथ्वी से लगे हुए रहें, उठने न पावें। इस

आसन पर बहुत समय तक बैठने से भी स्वास्थ्य को बहुत लाभ होता है। इसके करने में सिर, पीठ, कमर, गला सभी सम-रेखा में रखने चाहिए। पाँवों के रखने का ढंग चित्र नं० ३ के अनुसार होना चाहिए, और हाथ चित्र नं० ३ के अनुसार न रखकर सीधे घुटनों पर रख देना चाहिए। इस व्यायाम के द्वारा पैरों की नस-नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। इस प्रकार बैठकर ठोड़ी को कंठ की जड़ में कुछ देर जमाए रखने से मस्तिष्क का मज्जा-प्रवाह ठीक हो जाता है, विचार-शक्ति बढ़ती है और स्मरण-शक्ति स्थिर हो जाती है।

इस व्यायाम में हाथों को इधर-उधर फैलाकर भी व्यायाम हो सकता है। दोनो हाथों की हथेलियाँ ठीक सिर पर मिलाने अर्थात् ठीक अपने सिर पर आकाश की ओर हाथ जोड़े रखने से भी अच्छा व्यायाम होता है। इस वक्त केवल इसी बात का ध्यान रखना चाहिए कि हाथों में ढीलापन न आवे। वे ऊपर की ओर तने हुए ही रहें। इस प्रकार दस-पंद्रह मिनट बैठना चाहिए। यह व्यायाम गर्भवती स्त्रियों के लिये अत्यंत उपयोगी है। गर्भ में इससे किसी प्रकार की बाधा पहुँचने की आशंका नहीं है।

व्यायाम नं० ८

पद्मासन से बैठने की विधि हम व्यायाम नं० ७ में बता

चुके हैं, उसी विधि के अनुसार बैठ जाइए। अब अपना दाहना हाथ बाएँ घुटने पर रखिए, और अपना धड़ बाईं ओर घुमाइए। अपनी छाती, जितनी पीठ की ओर ला सकती हो, ले जाइए। ऐसा करते वक़्त यदि आवश्यक हो, तो बायाँ हाथ जमीन पर रखकर सहारा लिया जा सकता है। जब आपकी छाती पीठ की ओर अच्छी तरह पहुँच जाय, तब वहाँ ही उसी दशा में ठहरे रहिए। इस व्यायाम में इस बात का ध्यान रखना बड़ा आवश्यक है कि पद्मासन जमा रहे; घुटने इधर-उधर न सरकने पावें। बाईं ओर अच्छी तरह घुमाने के बाद अब बाएँ हाथ को दाहने घुटने पर रखकर अपना धड़ दाहनी ओर उसी तरह घुमाइए। कुछ लोग घुमाने में जल्दी करते हैं, यह अनुचित है। इस व्यायाम से पेट की शुद्धि होती है। यह व्यायाम अत्यंत सरल, किंतु बड़ा ही अच्छा है।

व्यायाम नं० ६

दाहना पैर बाईं जाँघ पर और बायाँ पैर दाहनी जाँघ पर इस तरह से रक्खो कि पैरों की एड़ियाँ पेट से अड़ जायँ। इसके बाद पीछे की ओर दाहना हाथ ले जाकर दाहने पैर का अँगूठा पकड़ो और बाएँ हाथ को पीठ पीछे से ले जाकर बाएँ पैर का अँगूठा पकड़ो। दोनो हाथों से दोनो

पैरों के अँगूठों को पकड़ने के बाद अपनी ठोड़ी को कंठ के मूल में जमाकर बैठ जाओ (देखो चित्र नं० ३)। इससे सारे शरीर की शुद्धि होती है। इसके करनेवाले को कोई व्याधि नहीं होने पाती। परंतु सिर्फ एक-दो मिनट कर लेने से इस व्यायाम से कोई लाभ नहीं हो सकता। कम-से-कम १५-२० मिनट करने से लाभ हो सकेगा। इससे अधिक बैठने से अधिक लाभ होता है। स्थिरता-पूर्वक ४-६ महीने करने से पूर्ण आरोग्य लाभ किया जा सकता है।

इस व्यायाम से कमर के स्नायु तथा पैरों की नस-नाड़ियाँ अच्छी तरह शुद्ध हो जाती हैं। पीठ के मेरुदंड में जो टेढ़ापन आ जाता है, वह पीठ के दबाव से सीधा हो जाता है। इस व्यायाम से पीठ का मज्जा-प्रवाह उचित रीति से होने लगता है। इसके द्वारा मज्जा-तंतु के समस्त रोग फ़ौरन् नष्ट हो जाते हैं। पृष्ठ-वंश का सीधा होना मनुष्य के लिये एक उत्तम आरोग्य-दायक बात है, क्योंकि इसके टेढ़े हो जाने से मनुष्य में भाँति-भाँति की असंख्य बीमारियाँ हो जाती हैं।

इस व्यायाम के करने में पहलेपहल पीठ पीछे से हाथ अँगूठों तक पहुँचते ही नहीं। इसका कारण यह नहीं है कि हाथ-पैर छोटे हैं। नहीं, शरीर में विजातीय द्रव्यों की अधिकता से ऐसा होता है। ज्यों-ज्यों शुद्धि होती जाती है, त्यों-त्यों

चित्र नं० ३ (पृष्ठ ७८)

चित्र नं० ४ :- (पृष्ठ ७१)

इस व्यायाम में सफलता मिलती जाती है। पहलेपहल यदि बहुत ही कष्ट हो, तो एक हाथ और एक पैर से ही करना चाहिए। एक से कर चुकने पर फिर उतने ही समय तक दूसरे से भी करना चाहिए। दोनो से न करने में किसी दोष के उत्पन्न हो जाने की संभावना है। जब शारीरिक दोष हट जायँ, तब दोनो हाथों से चित्र नं० ३ के अनुसार करना चाहिए। इस व्यायाम से पेट की बढ़ी हुई तिल्ली भी नष्ट हो जाती है।

व्यायाम नं० १०

स्वस्थ-चित्त से बैठकर अपना दाहना पैर बाएँ पैर की जंघा पर रक्खो और इसी तरह बाएँ पैर को दाहने पैर की जंघा पर जमा दो। इसके बाद अपने दोनो हाथों की हथेलियाँ बल-पूर्वक पृथ्वी पर टेककर हाथों के बल ऊपर को पालथी-सहित अपना शरीर उठाओ। जितना हो सके, उतना ऊपर की ओर उठो (देखो चित्र नं० ४)।

इस व्यायाम के करते वक्त इस बात का ध्यान अवश्य रखना होगा कि शरीर सीधा रहे। आगे की ओर धड़ झुक न जाय। जहाँ तक हो सके, शरीर सीधा रखने का प्रयत्न करना चाहिए। मस्तक आगे की तरफ नहीं झुकना चाहिए। इस व्यायाम में एकदम उठकर ऊँचा हो जाने से या एकदम

ज़मीन पर बैठ जाने से कोई लाभ नहीं होगा। बहुत ही धीरे-धीरे पृथ्वी से उठकर ऊपर की ओर उठना चाहिए और उसी दशा में कुछ समय तक ठहरना चाहिए। पहले दिन ज्यादा नहीं ठहरना चाहिए, बल्कि धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाना ही अच्छा है। इस व्यायाम को २०-२५ मिनट करने से ही पूरा-पूरा फ़ायदा नजर आता है।

इसके करने से कंधे सुदृढ़ और हाथ पुष्ट होते हैं। कलाइयाँ सुडौल बन जाती हैं। हाथों के सब दोष दूर हो जाते हैं। साथ ही पीठ और कमर के स्नायु भी शुद्ध हो जाते हैं।

व्यायाम नं० ११

दोनो पैरों को सीधे जमीन पर फैलाकर बैठो। और दोनो हाथों से दोनो पैरों के अँगूठों को पकड़ लो। फिर एक पाँव को ज़मीन पर ही जमा रहने दो और उसे हाथ से पकड़े रहो, दूसरे पैर को खींचकर अपने कान तक लाओ और वहीं ताने रक्खो। जिस तरह धनुष को तानना पड़ता है, उसी तरह इस पैर को कान के पास, और दूसरे पृथ्वी पर रक्खे हुए पैर को सामने की ओर ताने रहना चाहिए। इसी तरह कुछ देर तक रहना चाहिए (चित्र नं० ५ को देखकर समझा जा सकता है)। इसी प्रकार दूसरे हाथ तथा पाँव से उतने ही समय तक करो।

चित्र नं० ५ (पृष्ठ ८०)

(६) तंबाकू, गाँजा, शराब आदि मादक पदार्थों के सेवन करनेवाले को प्राणायाम से लाभ नहीं हो सकता।

(७) आरंभ में अधिक देर तक प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

(८) प्राणायाम करनेवाले को चाहिए कि सदा नाक से ही श्वासोच्छ्वास की क्रिया किया करे, मुँह से नहीं।

स्वच्छ भूमि पर एक पट्टा अथवा चौकी रक्खो, उस पर कुशासन बिछाकर उसके ऊपर कृष्ण मृग-चर्म डालो। इस मृग-चर्म पर तीन अंगुल ऊँचा ऊनी आसन बिछाओ और इस ऊनी आसन पर एक अंगुल मोटा सूत का आसन रक्खो। ध्यान रहे कि आसन न तो बहुत गुदगुदा ही हो और न अत्यंत कठोर ही। ऐसे उत्तम आसन पर आलस त्याग कर प्रसन्न मन से प्राणायाम करने के लिये बैठो। स्वधर्मानुसार ईश्वर का स्मरण करो और पद्मासन लगाकर बैठ जाओ। अब प्राणायाम करने के पूर्व कुछ देर तक "भस्त्रिका" करो। भस्त्रिका की विधि इस प्रकार है—

सीधी खड़ी रहो, या बैठ जाओ। किंतु इस बात का ध्यान रक्खो कि तुम्हारी कमर झुकी न रह जाय। प्राणायाम के वक्त सिर और पीठ बिलकुल सीधे रहने चाहिए। इसके लिये यदि सीधी दीवार के सहारे भी बैठा जाय, तो कोई हानि

नहीं। पीठ की रीढ़ टेढ़ी रहने से बीमारियाँ तो उत्पन्न होती हैं, अपितु बुद्धि की धारणा-शक्ति भी निर्बल पड़ जाती है। इसीलिये भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि

"समं कायशिरोग्रीवं"

शरीर, सिर और गर्दन को सम-सूत्र में रखकर ही प्राणायाम करना चाहिए। प्राणायाम के समय ही नहीं, प्रत्युत सर्वदा इस नियम का पालन करने से मनुष्य दीर्घायु एवं बुद्धिमान् हो जाता है। जो लोग कमर को कमान बनाकर बैठते-उठते अथवा संध्या-प्राणायाम आदि करते हैं उन्हें बहुत हानि होती है।

अब दाहने हाथ के अँगूठे से अपना दाहना नथुना दबाओ और बाएँ नथुने से साँस खींचो। फिर मध्यमा और अनामिका अँगुली से बायाँ नथुना बंद करके दाहना खोल दो। अब दाहने नथुने से साँस लो और अँगूठे से बंद करके बायाँ नथुना खोल दो। अर्थात् एक नथुने से साँस लो, दूसरे से छोड़ो; फिर छोड़े हुए नथुने से साँस खींचो और दूसरे से छोड़ो। इस प्रकार २५ । ५० बार करो। अथवा इससे भी अधिक बार कर सकते हो। पहले दिन कम करने चाहिए और फिर धीरे-धीरे बढ़ाते जाना चाहिए। इसे "भस्त्रिका" प्राणायाम कहते हैं। "भस्त्रिका" लोहार की धौंकनी को कहते

हैं। इस प्राणायाम के समय प्राण-वायु की गति धौंकनी की तरह होती है, इसलिये इसका नाम "भस्त्रिका" है।

भस्त्रिका से फेफड़ों की शुद्धि होती है। शक्ति से अधिक करने से सिर में चक्कर-सा आ जाता है। दौड़ने में या किसी प्रकार के श्रम में भस्त्रिका आप-ही-आप होने लगता है। प्राणायाम के पहले इसे कर लेने से नासिका आदि की शुद्धि हो जाती है। इसीलिये हमने पहले भस्त्रिका करने की सलाह अपनी पाठिकाओं को दी है।

'प्राणायाम'-शब्द प्राण और आयाम इन दो शब्दों से बना है।

"प्राणः स्वदेहजो वायुरायामस्तन्निरोधनम्।"

प्राणवायु के निरोध को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम-क्रिया में प्राणों का आयाम करना आवश्यक होता है। नियमन और विस्तार को आयाम कहते हैं। संपूर्ण प्राण-शक्ति का नियमन करना, उस शक्ति को अपने अधीन करने का प्रयत्न करना, और उसका विस्तार करना, प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य है। अपनी छाती में जो फेफड़े हैं, उनमें प्राण का मुख्य स्थान है। फेफड़ों में विश्वव्यापिनी प्राण-शक्ति वायु के साथ नासिका द्वारा जाकर रुधिर में मिल जाती है, और रुधिर के साथ सारे शरीर में पहुँचती है। प्राण ही हमारी जीवन-कला है, इसके बिना जीवन ही नहीं।

प्राणों का निवास फेफड़ों में है। जितने बड़े फेफड़े होंगे और जितनी उनमें धारणा-शक्ति होगी, उतना ही प्राण हमारे शरीर में प्रवेश हो सकेगा। जिनकी छाती सिकुड़ी हुई, कम चौड़ी होती है, उनके फेफड़ों में प्राण कम पहुँचता है। यही कारण है, सिकुड़ी हुई छातीवाले मनुष्य को प्रायः क्षय आदि भीषण रोग हो जाते हैं। प्राणायाम के अभ्यास से फेफड़े बलवान् हो जाते हैं, जिससे किसी तरह की बीमारी का भय नहीं रहता। स्त्रियों को प्राणायाम द्वारा मर्दों की अपेक्षा अधिक बड़े और शुद्ध फेफड़े बनाने की आवश्यकता है। क्योंकि जब स्त्रियाँ दोहद (गर्भवती) होती हैं, तब उन्हें अपने ही फेफड़ों से उस गर्भस्थ प्राणी को भी हवा पहुँचानी पड़ती है। इसलिये स्त्रियों को चाहिए कि प्राणायाम द्वारा अपने फेफड़ों को सर्वदा शुद्ध बनाए रक्खें।

बहनो, लोहार की धौंकनी को हवा देते हुए तुमने कई बार देखा होगा। धौंकनी द्वारा जब हवा अग्नि को प्रदीप्त करती है, तब उससे लोहा तक भी पिघलकर भस्म हो जाता है। इसी प्रकार शारीरिक अग्नि को प्रदीप्त रखने के लिये ईश्वर ने हमारे शरीर में फेफड़े की धौंकनी बनाई है फेफड़ों के द्वारा प्राण-मिश्रित वायु का प्रवाह ज्यों-ज्यों शरीर की अग्नि पर पहुँचता है, त्यों-त्यों वह प्रदीप्त होता है।

शारीरिक अग्नि के प्रदीप्त होने से शरीर की कांति और तेज बढ़ता है और भूख भी बढ़ जाती है। इस प्रकार का प्राणायाम एक उत्तम प्रकार का व्यायाम है।

माता-पिता को चाहिए कि अपने आठ वर्ष के लड़के-लड़कियों को प्राणायाम की क्रिया सिखा दें। धीरे-धीरे बढ़ाकर दस-बारह वर्ष की उम्र तक उन्हें अच्छी सिद्धि प्राप्त करा देना आवश्यक है। प्राणायाम को धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। यद्यपि प्राणायाम करनेवाले की प्रवृत्ति ऐसी होती है कि मैं बहुत अभ्यास बढ़ा लूँ, तथापि शक्ति से अधिक प्राणायाम करने से हानि ही होती है। प्राणायाम करनेवाले को दो वर्ष तक जल्दी नहीं करनी चाहिए अन्यथा हानि होना संभव है। जिस प्रकार अधिक व्यायाम से लाभ को जगह हानि होने लगती है, उसी प्रकार अधिक प्राणायाम से भी नुक़सान पहुँचता है। जैसे शारीरिक व्यायाम के बहुत करने से शरीर में दर्द होने लगता है, परंतु थोड़ा-थोड़ा व्यायाम प्रतिदिन करने और धीरे-धीरे बढ़ाने से बहुत व्यायाम करने पर भी शरीर नहीं दुखता। इसी तरह प्राणायाम का व्यायाम करने से फेफड़े और आस-पास के स्नायु आरंभ में खट्टे हो जाते हैं। क्योंकि बाहर के अंगों की अपेक्षा अंदर के अंग बड़े ही कोमल होते हैं। यदि आरंभ में ही अधिक प्राणायाम किया

जायगा, तो अंदर के स्नायु क्षीण हो जायँगे। दो वर्ष के नियम-पूर्वक अभ्यास के बाद ही प्राणायाम में अधिकता करनी चाहिए।

साँस के निकालने से छाती सिकुड़ जाती है और साँस के अंदर लेने से छाती बढ़ जाती है। छाती के चारो ओर रस्सी लगाकर संकुचित छाती को नाप लो और फिर साँस भरकर अपनी छाती नापो। दोनो में चौबीस अंगुल का अंतर होना चाहिए। यदि साँस भरने पर छाती चौबीस अंगुल फैल जाय, तो उत्तम। जो लोग प्राणायाम नहीं करते, उनकी छाती का फैलाव साँस रोकने पर ४-५ अंगुल ही होता है। छाती का विस्तार ही आयु का विस्तार है और उसका तंग होना ही मृत्यु है। साँस भरने पर जिसकी छाती २४ अंगुल फैल जाती हो, उसे मृत्यु का भय नहीं रहता। इसीलिये प्राणायाम को महा-मृत्युंजय कहते हैं। जिनकी छाती कम चौड़ी होती है, प्रायः वे ही जवानी में मरते हैं। चौड़ी छातीवाले मनुष्य १०० पीछे पाँच भी जवानी में नहीं मरते। यदि कन्याओं को आठ वर्ष की उम्र से प्राणायाम की क्रिया सिखा दी जाय, तो वे अवश्य पूर्ण आयु प्राप्त करेंगी। प्राणा-याम के अतिरिक्त भी श्वासोच्छ्वास की क्रिया दीर्घ होनी चाहिए। लंबी साँस लेनेवाले अल्पायु नहीं होते। साँप के

दीर्घजीवी होने का एक कारण यह भी है कि वह दीर्घ साँस लेता है। जो लोग सर्प की भाँति लंबी साँस लेने के अभ्यासी हैं, वे अवश्य चिरजीवी हैं।

साधारण लोग जैसी साँस लेते हैं, उससे फेफड़ों का आधा भाग ही काम में आता है, और आधा कमज़ोर हो जाता है। इसलिये हमेशा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि साँस में गंभीरता अवश्य हो। स्त्रियाँ प्रायः गीत गाती हैं। गीत गाते वक़्त प्राणवायु का निरोध होता है। इससे फेफड़ों को बहुत लाभ होता है। गानेवाले को छाती के रोग कदापि नहीं होते। गायन से फेफड़ों को खूब व्यायाम मिलता है। परंतु एक छोटी-सी तंग कोठरी में बहुत-सी स्त्रियों का एक साथ बैठकर गीत गाना अत्यंत ही हानिकारी है। क्योंकि वहाँ उन प्राणियों के योग्य यथेष्ट परिमाण में शुद्ध वायु नहीं मिलता। प्राणायाम के व्यायाम द्वारा फ़ी सैकड़ा ५० रोग नष्ट किए जा सकते हैं, इसलिये स्त्रियों को चाहिए कि नियम-पूर्वक विधि के अनुसार प्रतिदिन एक बार तो अवश्य ही प्राणायाम कर लिया करें। वे बहनें जो बड़े-बड़े नगरों की बदबूदार तंग गलियों में और जन-संकीर्ण मकानों में रहती हैं, हमारे बतलाए हुए प्राणायाम के लिये तरसेंगी, क्योंकि शुद्ध वायु में किया हुआ ही प्राणायाम लाभकारी होता है। हाँ, इतना

अवश्य हो सकता है कि वे अपने मकान की सबसे ऊँची मंजिल पर जाकर प्राणायाम कर सकती हैं, यदि वहाँ का वायु शुद्ध हो तो।

प्राणायाम तीन प्रकार का होता है—

"प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तः पूरकुंभकरेचकैः।"

(१) पूरक, (२) कुंभक और (३) रेचक।

"बाह्यादापूरणं वायोरुदरे पूरको हि सः।"

बाहरी हवा को नाक के द्वारा पेट में ले जाने का नाम पूरक है।

"संपूर्णं कुंभवद्वायोर्धारणं कुंभको भवेत्।"

हवा को पेट के अंदर ज्यों-का-त्यों धारण किए रहने का नाम कुंभक है। जिस प्रकार जल-पूर्ण घड़ा होता है, उसी तरह वायु-पूर्ण पेट रहता है, इसीलिये इसका नाम कुंभक है।

"बहिर्यद्रेचनं वायोरुदराद्रेचकः स्मृतः।"

पेट में की हवा को नासिका मार्ग द्वारा बाहर निकाल देने का नाम रेचक है।

पूरक, कुंभक और रेचक इन तीनों क्रियाओं द्वारा एक प्राणायाम होता है। पहले बताए हुए आसन पर पद्मासन से बैठकर पहले 'भस्त्रिका' प्राणायाम करो और पश्चात् पूरक आरंभ करो। पूरक करने के लिये एक नथुना बंद करो।

यदि दाहना बंद करो, तो बायाँ खुला रहने दो; और बायाँ बंद करो तो दाहना खुला रहने दो। अब जो नथुना खुला हुआ है, उससे धीरे-धीरे ऊपर को ओर साँस खींचो। यह पूरक हुआ।

इस पूरक के वक्त एक क्रिया और करनी चाहिए कि गुदा का संकोचन करके ऊपर को ओर खींचना चाहिए। इस क्रिया को यौगिक भाषा में "मूल-बंध" कहते हैं।

जब पूरक हो जाय तब "कुंभक" करना चाहिए। इस वक्त दोनो नासा-रंध्र बंद कर देने चाहिए, और पेट के अंदर हवा को रोक रखना चाहिए। हवा को उतनी ही देर तक रोके रखना चाहिए, जब तक कि वह आसानी से रह सके। हवा को रोकने के लिये जबर्दस्ती नहीं करना चाहिए। बल-पूर्वक कुंभक करने से हानि होती है, मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

कुंभक के समय "उड्डियान-बंध" भी करना चाहिए। अपने पेट को बल-पूर्वक अंदर की ओर धकेलकर रहने का नाम 'उड्डियान-बंध' है। इसको बिना कुंभक के भी करते रहने से बहुत लाभ होता है।

कुंभक के बाद रेचक का नंबर है। पूरक के समय जिस नथुने को दबाकर रक्खा था, अब उसे छोड़कर रेचक करना चाहिए अर्थात् उससे धीरे-धीरे साँस छोड़ना चाहिए। साँस

एकदम छोड़ने से हानि होती है। बहुत सँभालकर धीरे-धीरे ही साँस त्यागना चाहिए।

इस वक्त "जालंधर-बंध" करना चाहिए। जालंधर-बंध उसे कहते हैं कि साँस छोड़ते वक्त गले के आस-पासवाली नलियों का संकोचन किया जाय। इसमें पहलेपहल कठिनता होती है, परंतु अभ्यास से फिर सरल हो जाता है।

योग-शास्त्रों में लिखा है कि

"युक्तं युक्तं त्यजेद्वायुं युक्तं युक्तं च पूरयेत्।
युक्तं युक्तं च बध्नीयादेव सिद्धिमवाप्नुयात्॥"

अर्थात् पूरक, कुंभक और रेचक तीनो को युक्ति-पूर्वक विधि के साथ धीरे-धीरे करने से ही प्राणायाम में सफलता मिलती है।

"प्राणायामेन युक्तेन सर्वरोगक्षयो भवेत्।
अयुक्ताभ्यासयोगेन सर्वरोगसमुद्भवः॥"

अर्थात् विधि-पूर्वक प्राणायाम करने से ही समस्त शारीरिक दोषों का नाश होता है; और विधि-रहित करने से अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

आजकल के लोगों ने प्राणायाम को एक हौवा मान लिया है, और उसे करने से ऐसे डरा करते हैं, मानो प्राणायाम से मृत्यु ही हो जाती हो। प्राणायाम कोई भयावह [illegible]

है। हाँ, विधि-पूर्वक न करने से तो प्रत्येक कार्य घातक हो जाता है। जैसे भोजन शरीर की रक्षा के लिये किया जाता है, किंतु वही यदि असावधानी से किया जाय, तो प्राणघातक बन जाता है। सारांश यह कि प्राणायाम से डरने की कोई आवश्यकता नहीं। यह एक परम पवित्र और सर्वोत्तम क्रिया है। प्रत्येक स्त्री को चाहिए कि वह बिला नाग़ा नित्य नियमपूर्वक प्राणायाम करे। गर्भवती होने पर भी यह क्रिया घातक नहीं है।

अब यहाँ यह देखना है कि प्राणायाम में कितना वक़्त लगाना चाहिए ? कई आचार्यों का मत है कि जितना वक़्त पूरक में हो, उससे दुगुना समय रेचक में और रेचक से दुगुना वक़्त कुंभक में लगाया जाय। मान लो कि एक दो से गिनती गिनते हुए १५ तक पूरक किया, तो फिर एक दो से गिनकर ६० तक कुंभक और फिर एक दो से गिनकर तीस तक रेचक किया जाय। इसी विधि को प्रायः सबों ने श्रेष्ठ माना है। परंतु हमारे विचार से आरंभ में इस उलझन में पड़ना ठीक नहीं। पहलेपहल जितना भी सध सके, करना चाहिए, और फिर धीरे-धीरे इस परिमाण पर आ जाना चाहिए। पहले दिन प्रातःकाल एक मिनिट से भी अधिक अभ्यास नहीं करना चाहिए। और इस एक मिनिट में भी

सिर्फ तीन प्राणायाम करने चाहिए । उसी दिन सांयकाल को दो मिनिट और दूसरे दिन ३ । ४ मिनिट, इस प्रकार पाँच दिन में ८ । १० मिनिट तक प्राणायाम किया जा सकता है । पहलेपहल एक प्राणायाम में २० सेकंड लगाने चाहिए, पूरक में ९ सेकंड, कुंभक में ३ सेकंड और रेचक में ८ सेकंड लगाकर २० सेकंड में एक प्राणायाम करना चाहिए । यह आरंभिक अभ्यास के लिये ठीक है । बाद में ऊपर लिखे अनुसार ही अभ्यास लाभदायक होगा । स्मरण रहे कि आरंभ में अधिक गंभीर साँस लेने या देर तक अभ्यास करने से मस्तक बिगड़ जाता है, इसलिये किसी भी बात में जल्दी नहीं करनी चाहिए ।

लोग प्रायः प्रश्न किया करते हैं कि प्राणायाम के समय हाथ की किन-किन अँगुलियों से नाक पकड़ना चाहिए ? इसका उत्तर घेरंडसंहिता से इस प्रकार है—

"कनिष्ठानामिकांगुष्ठैस्तर्जनीमध्यमौ विना ।"

मध्यमा और तर्जनी अँगुली को नाक से छुआना भी नहीं चाहिए । अंगुष्ठ, अनामिका और कनिष्ठिका से ही काम लेना चाहिए । अँगूठे से दाहना नथुना और अनामिका तथा कनिष्ठिका से बायाँ दबाना चाहिए । परंतु हमारे विचार से इस झंझट में पड़ना आवश्यक नहीं है ।

अब एक प्रश्न और है कि प्राणायाम किस वक्त करने से लाभ होता है ? इसका उत्तर यही है कि प्रातःकाल में सूर्योदय के पूर्व एक प्रहर से लगाकर सूर्योदय के १½ घंटे बाद तक, मध्याह्न में ११ बजे से १२½ एक बजे तक, और सायंकाल को सूर्यास्त के समय। क्या रात्रि में भी प्राणायाम किया जा सकता है ? लोगों का कहना है कि रात में कार्बोनिक एसिड गैस के अधिक हो जाने से हवा बिगड़ जाती है। परंतु यह केवल बाल की खाल निकालना है। साधारणतः इस गैस का हवा पर प्रभाव कम ही होता है। इसके अतिरिक्त रात्रि के वक्त हवा दिन की अपेक्षा अधिक स्वच्छ एवं शीतल होती है। इसलिये यदि रात में भी प्राणायाम किया जाय, तो कोई हानि नहीं।

क्या व्यायाम के साथ प्राणायाम करना ठीक है ? नहीं, व्यायाम के समय प्राणायाम करना हानिकारक है। क्योंकि व्यायाम करते समय आक्सीजन का संग्रह अधिक होता है, और वह शरीरस्थ भोजन से मिलकर कार्बोनिक एसिड गैस को अधिक बनाता है। ऐसी दशा में कार्बोनिक एसिड गैस अधिक निकलना चाहिए। किंतु प्राणायाम से वह साधारण साँस की अपेक्षा कम निकलता है। इसलिये यदि कार्बोनिक एसिड गैस का संग्रह अधिक हो गया, तो वह शरीर के लिये

हानि अवश्य करेगा। प्राणायाम और व्यायाम अलग-अलग होने चाहिए। प्राणायाम के द्वारा दम बढ़ाना चाहिए। और उससे व्यायाम में लाभ उठाना चाहिए। प्राणायाम और व्यायाम के सम्मेलन से "सोना और सुगंध" की कहावत चरितार्थ हो जायगी। व्यायाम करते समय ज़बर्दस्ती साँस रोकने से हानि होती है। हाँ, गंभीरता-पूर्वक साँस लेना ज़रूरी है। प्रोफ़ेसर राममूर्ति के आश्चर्यजनक खेल, सभी प्राणायाम और व्यायाम के सम्मेलन के फल हैं। इसलिये प्राणायाम और शारीरिक व्यायाम को अलग-अलग रखना ही ठीक है। व्यायाम के साथ प्राणायाम विधि-पूर्वक किया जाना भी कठिन है। अतएव दोनो का अलग-अलग अभ्यास करना चाहिए।

प्राणायाम के विषय में कई लोगों का विचार है कि "केवल साँस को अंदर रोके रखने ही का नाम प्राणायाम है।" परंतु ऐसा समझ बैठना भारी भूल है। वायु को अंदर खींचकर उसे रोकना और फिर उसे बाहर निकालने की क्रिया को प्राणायाम कहते हैं। केवल वायु ही हमारा प्राण है, ऐसा समझनेवाले ग़लती पर हैं। "परम पिता परमात्मा की यह विश्वव्यापिनी दिव्य-शक्ति सूर्य के द्वारा वायु में स्थिर की जाती है, जिसे अपने शरीर में धारण करना ही प्राणायाम है।" जो इस बात को नहीं मानते, वे ग़लती पर हैं। उन्हें

प्राणायाम करने से उतना लाभ नहीं हो सकता, जितना कि होना चाहिए। प्राणायाम करते समय हृदय में यह दृढ़ भावना होनी चाहिए कि

"मैं एक विश्वव्यापिनी महान् शक्ति को अपने में भर रहा हूँ। वह पूर्ण रूप से मुझमें भरी हुई है और मैं उसके बीच में हूँ। मेरे शरीर के सारे अंगों में प्राण-शक्ति का संचार हो रहा है, जिससे मुझमें नवजीवन का संचार हो रहा है। इस प्राणायाम-क्रिया के द्वारा मेरा बल, तेज, साहस, बुद्धि, आयु, शौर्य इत्यादि बढ़ रहा है, और मेरी पवित्रता हो रही है।"

इत्यादि। इस तरह की ऊँची भावना को लेकर किया हुआ प्राणायाम बड़ा लाभदायक होता है। श्वास, उसका निरोध और उच्छ्वास, ये तीन प्राणायाम के भाग हैं। प्राण का स्थान नासिका है, अतएव श्वासोच्छ्वास नासिका से करना नहीं भूलना चाहिए। मुख के द्वारा श्वासोच्छ्वास की क्रिया करना मानो रोगों और मृत्यु को निमंत्रण देना है। कारण विशेष से किए गए प्राणायामों को छोड़कर नाक से ही साँस लेना और छोड़ना चाहिए। सीत्कारी, शीतली आदि प्राणायामों में मुख से ही साँस लिया जाता है।

प्राणायाम-विषय पर एक बड़ी सी पोथी तैयार हो सकती

का मेरु दंड न झुकने पावे। यथासंभव शरीर सीधा रक्खा जाय। इस व्यायाम में पैरों को धनुष की तरह खींचना पड़ता है, इसलिये योगाभ्यास के अभ्यासियों ने इसका नाम "धनुरासन" किया है।

योगाभ्यास के आसनों का नाम सुनकर बहनों को डरना नहीं चाहिए। योगासन पूरी आरोग्यता देनेवाले हैं। इनसे सिवा लाभ के हानि तो कभी संभव ही नहीं, बशर्ते कि बताई हुई विधि के अनुसार किए जायँ। कुछ लोगों की धारणा है कि योग-संबंधी आसन गृहस्थाश्रमियों के लिये नहीं हैं, बल्कि योगी लोगों के लिये ही हैं। परंतु ऐसा मान बैठना भारी भूल है। गृहस्थ पुरुष आनंद के साथ निर्भयता-पूर्वक योग के आसन ही नहीं, योग के समस्त अंगों का पालन कर सकता है। इसलिये "आसन" नाम सुनकर डरने की आवश्यकता नहीं है।

व्यायाम नं० १३

अभी तक सभी व्यायामों में बैठने की विधियाँ अत्यंत सुगम थीं। किंतु इस व्यायाम में बैठने की विधि ज़रा कठिन है। दाहने पाँव का टखना बाएँ कूल्हे (नितंब) के नीचे और बाएँ पाँव का टखना दाहने कूल्हे के नीचे रखकर बैठो (देखो चित्र नं० ६)। इस बैठक में एक घुटना दूसरे घुटने

चित्र नं० ६ (पृष्ठ ८७)

पर आ जायगा। यहाँ दोनो घुटने मिले हुए रहने चाहिए। अलग-अलग न हों। नीचेवाला घुटना पृथ्वी से लगा रहे, उठने न पावे। जब इस प्रकार बैठ जाओ, तब शरीर को बिलकुल सीधा तान दो। जब शरीर सम-सूत्र में हो जाय, तब दाहना हाथ कंधे पर से ऊपर की ओर पीठ पर ले जाओ, और बायाँ हाथ नीचे से कमर के पास से पीठ के पीछे ले जाओ। फिर दाहने हाथ की तर्जनी अँगुली से बाएँ हाथ की तर्जनी अँगुली को दृढ़ता से पकड़ लो (देखो चित्र नं० ६)।

ऐसा करने में सिर आगे झुकने लगता है, परंतु मत झुकने दो, बल्कि सम-सूत्र में बिलकुल सीधा रक्खो। जो हाथ ऊपर की ओर से पीछे को जायगा, उसी से उस ओर का कान दबा रहेगा, तो शरीर सीधी रेखा में होगा। अब पैरों और हाथों के हेर-फेर से इसी व्यायाम को दूसरी ओर से करना चाहिए। अर्थात्, यदि बैठने में पहले दाहने पैर का घुटना नीचे था, तो अब बाएँ पैर का रक्खो, और पहले अगर दाहना हाथ कंधे के ऊपर से पीछे की ओर गया था, तो इस बार बाएँ हाथ को ऊपर की ओर से कंधे के पीछे ले जाकर दाहने हाथ की तर्जनी ऊपर कहे-मुताबिक़ पकड़ लो। इस व्यायाम को दोनो ओर से करना चाहिए, और १०-१५ मिनट इसी तरह बैठने का अभ्यास करना चाहिए। इस

व्यायाम को खड़े होकर भी केवल हाथों द्वारा ही किया जा सकता है। इस व्यायाम के द्वारा छाती, हाथों और पैरों को लाभ पहुँचता है। पेट पर यदि तनाव डाला जाय, तो पेट के लिये भी लाभकारी है।

व्यायाम नं० १४

अब हम एक ऐसा व्यायाम बतावेंगे, जो अत्यंत कठिन किंतु बड़ा ही लाभदायक है। अपने दोनो हाथों के पंजे ज़मीन पर रखिए और कुहनियाँ नाभि के आसपास जमाइए। अब अपने शरीर को पृथ्वी से ऊपर हाथों के बल उठाइए। थोड़ी देर इस तरह रहकर अपने छाती और मुख को आगे की तरफ थोड़ा-सा झुकाइए। जब छाती और मुँह आगे की ओर झुकेंगे, तब पाँव अपने आप पीछे की तरफ चले जायँगे। इसके बाद सिर और पैरों को बिलकुल सीधा करके अपनी कुहनियों पर ही सँभाले रहिए (देखो चित्र नं० ७)।

यह व्यायाम कठिन है। आरंभ में इसे किसी दूसरे व्यक्ति की सहायता से करना चाहिए। और, करते वक्त सामने गद्दा या कुछ मुलायम चीज़ होनी चाहिए, ताकि यदि मुँह के बल गिर भी, तो कहीं पर चोट लगने न पावे। यह व्यायाम कई दिनों के निरंतर परिश्रम ही से सफल होता है। दो-चार दिन तक करने पर यदि कुछ भी न हो सके, तो इससे

चित्र नं० ५ (पृष्ठ ८४)

निराश होकर इसे छोड़ बैठना ठीक नहीं है। एक महीने के नित्य अभ्यास से यह होने लगेगा।

पाँवों के पंजे भूमि पर लगे रखकर भी यह व्यायाम किया जा सकता है। बाक़ी सब चित्र नं० ७ के अनुसार करके सिर्फ़ पैरों के पंजे जमीन पर रखने चाहिए। इस व्यायाम से उतना लाभ नहीं होता, जितना कि ऊपर कहे हुए व्यायाम से होता है।

चित्र नं० ७ के अनुसार व्यायाम करने से जठराग्नि प्रदीप्त होकर भूख खूब बढ़ जाती है। दस्त साफ़ होता है। गुल्म उदर आदि विकारों को दूर करने के लिये यह परम उपयोगी है। यह वात, पित्त आदि दोषों को नष्ट करता है। बुरा भोजन अथवा अति भोजन इससे पच जाता है। तात्पर्य यह है कि पेट के लिये यह व्यायाम बड़ा हो हितकर है। पर इससे यह न समझ लेना चाहिए कि अब क्या है, मजे में कुपथ्य किए जाओ, इस व्यायाम से कुछ खराबी पैदा न होगी। नहीं, हमेशा पथ्य-पदार्थ उचित परिमाण में ही सेवन करने चाहिए। इस व्यायाम का जितना अभ्यास बढ़ाया जायगा, उतना ही अधिक लाभ भी होगा।

व्यायाम नं० १५

अभी तक इस अध्याय में जितने व्यायाम बताए गए हैं,

वे लेटकर या बैठकर ही करने के थे, अब खड़े होकर करने के व्यायाम लिखे जाते हैं।

सीधी खड़ी रहो। शरीर बिलकुल सम-सूत्र में रक्खो। पाँव की एड़ी, नितंब, पीठ और सिर का पिछला हिस्सा एक सीध में होना चाहिए। अभ्यास के लिये कुछ दिन दीवार के सहारे खड़ी रहकर इसे कर सकती हो। अब चित्र नं० ८ के पास बनाए हुए ताड़-वृक्ष के पत्तों की तरह अपने हाथ फैलाइए। पहले पत्ते नं० १ की जगह दोनो हाथों को फैलाओ। फिर नं० २ की जगह दोनो हाथों को रक्खो और फिर चित्र नं० ३ की जगह दोनो हाथों को ले जाओ। बाद में ऊपर से नीचे की ओर धीरे धीरे लाकर नं० ४ के स्थान पर दोनो हाथों को रक्खो।

अब इसे इस प्रकार भी कर सकती हो। दाहना हाथ नं० २ की जगह रक्खा जाय और बायाँ नं० ४ की जगह। इसी तरह बायाँ नं० २ की जगह रक्खा जाय, तो दाहना नं० ४ की जगह हो। फिर बायाँ नं० २ की जगह रक्खा जाय और दाहना नं० १ की जगह। फिर दाहना नं० २ के स्थान पर रखकर बायाँ नं० १ की जगह हो। इसी प्रकार दाहना नं० ३ की जगह हो, तो बायाँ नं० ४ की जगह और बायाँ नं० ३ की जगह रखकर दाहना नं० ४ की जगह रक्खो। इस

चित्र नं० ८ (पृष्ठ ८६)

प्रकार हाथों को इधर-उधर फैलाकर यह व्यायाम कई तरह से किया जा सकता है। इसे दोनों हाथों से एक साथ न करके एक-एक हाथ से भी किया जा सकता है।

प्रत्येक बार के तनाव में एक-दो क्षण ठहरने से कुछ भी लाभ नहीं होता, बल्कि कम-से-कम दो-तीन मिनट तक एक-एक दशा में रहने से ही लाभ होता दिखाई पड़ेगा। इस व्यायाम को करते वक्त ढीले शरीर से या ढीले हाथों से नहीं करना चाहिए, बल्कि जितना हो सके, बल-पूर्वक हाथों को तनाव देना चाहिए। जब नं० ३ पर और २ पर हाथ होंगे, उस वक्त पेट की ओर गुदा तक की नस-नाड़ियाँ ऊपर की ओर खिच जानी चाहिए। जिस स्नायु पर खिचाव होगा, वही दोष-रहित शुद्ध होकर उसमें उत्तम रक्त का उचित रीति से संचार होने लग जायगा। पेट और हाथों पर इस व्यायाम का अच्छा प्रभाव पड़ता है। इस व्यायाम के करते वक्त श्वासोच्छ्वास की क्रिया अत्यंत शांत और गभीर होनी चाहिए।

इस व्यायाम को पास-पास पाँव रखकर या पाँवों को कुछ फ़र्क़ से रखकर भी किया जा सकता है। जब इस व्यायाम में पूर्ण दक्षता हो जाय, तब कमर के ऊपरी भाग को दाएँ-बाएँ घुमाकर भी यह व्यायाम करना चाहिए। कमर

के नीचे का हिस्सा ज्यों-का-त्यों रखकर केवल ऊपरी पर ही घुमाना चाहिए। इस घुमाने से पेट के समस्त विकार समूल नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार व्यायाम के समय हाथों के पंजों को बल-पूर्वक फैलाना और बंद करना चाहिए। ऐसा कई बार करना चाहिए। पंजों के थक जाने पर फिर बहुत न करो। धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाओ।

इसे बैठकर या चारपाई पर लेटकर भी किया जा सकता है। चारपाई तंग कसी हुई होनी चाहिए, ढीली न हो। इस व्यायाम से थकान दूर होकर शरीर में चेतनता आ जाती है। यह व्यायाम दिखने में बिलकुल सरल मालूम होता है, पर यह शरीर के लिये काफी मेहनत पहुँचाता है। इसे लगातार १५-२० मिनट तक करने से सारे शरीर को उत्तम व्यायाम मिल जाता है। इसे चलते-फिरते हर कहीं किया जा सकता है।

कई लोग इस व्यायाम के समय अपनी ठोढ़ी को कंठ-मूल में, दाहने कंधे पर, बाएँ कंधे पर तथा सिर के पिछले भाग को गर्दन के मूल में लगाने का यत्न करते हैं। यह भी अच्छा है। इस तरह करने से कंठ के समस्त स्नायु शुद्ध होकर पुष्ट होते हैं और उनमें नवजीवन आ जाता है। इस प्रकार कई बार और कुछ देर तक करना चाहिए। गर्दन और कंठ के लिये यह एक उत्तम व्यायाम है।

व्यायाम नं० १६

पहले दोनो पैरों को छोदे करके खड़ी होश्रो। फिर व्यायाम नं० १५ को तरह पीठ, पैर, गर्दन, सिर सब सम-सूत्र में रक्खो। अब अपने एक पाँव को मोड़ो, दूसरा सीधा ही रहे। मुड़े हुए पैर का अँगूठा उसी हाथ से पकड़ो, जिस ओर कि पाँव मुड़ा हो। यदि दाहना पाँव मोड़ा गया हो, तो दाहने हाथ से उसका अँगूठा पकड़ो। दूसरे हाथ को अपने सिर पर से इस तरह सीधा तानो कि जमीन पर रक्खे हुए सीधे पैर और तने हुए हाथ का सोध सम-रेखा में हो जाय। चित्र नं० ९ के देखने से यह व्यायाम सहज ही समझ में आ सकता है। कुछ देर तक इसी प्रकार खड़े रहो। इसके बाद दूसरे पाँव को मोड़कर दूसरी तरफ़ व्यायाम करो। जब दाहनी और बाईं तरफ़ व्यायाम हो चुके, तब पूरा व्यायाम समझना चाहिए।

इसके समझने को दूसरी तरकीब यह है। पहले खड़े हो जाओ। दोनो पाँवों का अंतर लगभग २॥ या ३ फ़ुट रक्खो। अब किसी एक हाथ को बिलकुल सीधा ऊपर को ओर तानो, फिर दूसरे हाथ को अपने बराबर कंधे की सीध में तानो। चित्र नं० ८ में ताड़-वृक्ष का चित्र देखो और मान लो कि यदि दाहना हाथ नं० ३ के स्थान पर है, तो बायाँ

यकृत और प्लीहा की शुद्धि होती है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। पेट की शुद्धि हो जाती है। इसे करते वक्त पेट को अंदर खींचने से विशेष लाभ होता है।

व्यायाम नं० १८

जमीन पर चित लेट जाओ। पैरों तथा हाथों को पृथ्वी पर लगा दो। दोनों पैरों को पास-पास सटाकर रक्खो और हाथों को सीधे जमीन पर नितंबों के पास रक्खो। तत्पश्चात् दोनो पैरों को एकसाथ सटे हुए पृथ्वी से ऊपर की तरफ धीरे-धीरे उठाओ। अब पैरों को छत की ओर इतने उठाओ कि कंधे और सिर के अतिरिक्त सब शरीर भूमि से उठ जाय। यदि आवश्यकता मालूम हो, तो दोनो हाथों से अपनी कमर को सहारा दे सकते हो (देखो चित्र नं० ११)।

इस व्यायाम को कई तरह से किया जा सकता है। एक पाँव को आगे और एक को पीछे रखकर भी यह व्यायाम किया जा सकता है। जैसा कि चित्र नं० ११ में बिंदुओं की रेखाओं द्वारा दिखाया गया है। एक-एक पाँव से न करके बिंदुओं द्वारा बताए हुए स्थानों पर दोनों पैरों से भी रहा जा सकता है। इसी व्यायाम के करते वक्त एक टाँग को सिर के पीछे जमीन पर लगाया जा सकता है। दोनों टाँगें भी लगा सकते हो। इस व्यायाम से बहुत लाभ होते हैं। गर्भवती स्त्रियों

चित्र नं० १०　　　　(पृष्ठ ६१)
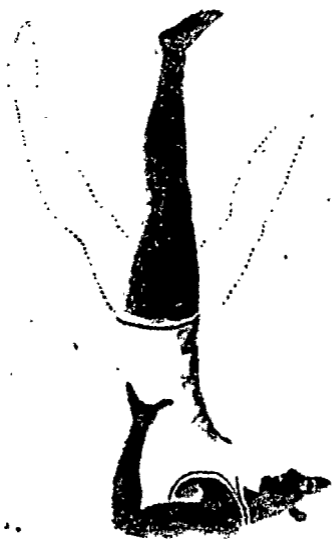
को ये व्यायाम नहीं करने चाहिए। स्वास्थ्य के लिये ये व्यायाम बड़े ही लाभदायक सिद्ध हुए हैं। कन्याओं को इन व्यायामों द्वारा खूब लाभ उठाना चाहिए।

सिर-दर्द के लिये यह एक अत्यंत उपयोगी व्यायाम है। जिन्हें रात-दिन सिर-दर्द की शिकायत रहती हो, उन्हें इस व्यायाम से लाभ उठाना चाहिए। आरंभ में इसे थोड़ी देर तक ही करना चाहिए। अभ्यास बढ़ जाने पर समय भी बढ़ा देना चाहिए। इस व्यायाम से हृदय को विश्राम मिलता है। शरीर में रक्त का प्रवाह उलटा हो जाने से रक्त की शुद्धि होती है। आँखों को ज्योति बढ़ती है और कंठ का कफ-विकार कम हो जाता है। पेट के स्नायु शुद्ध होकर जठराग्नि प्रदीप्त होती है। पैरों के रक्त की भी शुद्धि होती है। पीठ के छोटे-बड़े सभी स्नायु शुद्ध होकर उनमें नवजीवन का संचार होता है। इस व्यायाम के कर चुकने पर पैरों को पृथ्वी की ओर बहुत ही आहिस्ता से उतारने चाहिए। जल्दी उतारने से हानि होती है।

व्यायाम नं० १६

यह व्यायाम अत्यंत कठिन है, किंतु स्वास्थ्य के लिये सर्वोपरि है। इसके करने की यह रीति है कि किसी कपड़े की एक ऐसी गोलमोल गुँडली बनाओ, जिसमें अच्छी तरह सिर

रक्खा जा सके। यदि ऐसा न करो, तो सिर के नीचे कम-से-कम तीन-चार अंगुल मोटा गुदगुदा गद्दा या तकिया रक्खो। जो लोग सिर के नीचे कोई मुलायम गद्दा या तकिया रक्खे बिना ही इस व्यायाम को करते हैं, वे भयंकर हानि उठाते हैं। मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसलिये सबसे पहले सिर के नीचे रखने के लिये गुँदली या गद्दे का पहले इंतज़ाम कर लेना चाहिए। इस व्यायाम में ढीले कपड़े नहीं पहनने चाहिए।

गद्दा या गुँदली रखकर उसमें अपना सिर रख दो। सिर के ऊपर का भाग (कपाल) अच्छी भाँति जमाकर दोनों हाथ सिर के पीछे ले जाओ, और वहाँ हाथों की अँगुलियों को मज़बूत रीति से फँसाकर सिर के पिछाड़ी के हिस्से को पकड़ लो। इस वक्त हाथों की कुहनियाँ सिर के दोनों ओर ज़मीन में जमी रहेंगी। इस प्रकार करने से नाभि तक का सारा अंग सीधा खड़ा हो जाता है। अब केवल टाँगें ऊपर को ओर उठानी बाक़ी रह जाती हैं। सो अब टाँगों को भी ऊपर की ओर उठाने का प्रयत्न करो। यही कार्य कठिन है। टाँगों को धीरे-धीरे ऊपर की तरफ़ उठाओ। एकदम सीधी टाँगें ऊपर को न करके घुटने मुड़ी हुई टाँगें ऊपर करो। इस वक्त दोनों पैरों की एड़ियाँ नितंबों से लगी होनी चाहिए। अब इस

चित्र नं० १२ (पृष्ठ ४५)

प्रकार घुटने मोड़ हुए सिर के बल रहने का अभ्यास हो जाय, तब अपनी टाँगों को ऊपर को तरफ़ सीधी करो। टाँगें ही नहीं, बल्कि पाँवों के पंजों को भी सीधे रक्खो (देखो चित्र नं० १२)। इस प्रकार सिर के बल ऊपर को टाँगें किए हुए कुछ देर तक रहो। जब टाँगें नीची करना हो, तो बहुत ही धीरे-धीरे नीचे लाओ। घुटने मोड़कर पहले की भाँति नितंबों को एड़ियाँ लगाकर ठहरो और फिर नीचे आओ। पहले दिन इस व्यायाम को कुछ सेकंड ही करना ठीक है।

यह व्यायाम प्रारंभ में बड़ा ही तकलीफ देता है। सहज ही में इसे कोई नहीं कर सकता। पहलेपहल इसका अभ्यास या तो मनुष्य की सहायता से करना चाहिए या दीवार की सहायता ली जा सकती है। चार-पाँच दिनों में इसका अभ्यास होने पर सहायता लेने की ज़रूरत नहीं रहेगी। कभी-कभी देखने में आता है कि इस व्यायाम को एक व्यक्ति तत्काल कर दिखाता है, तो दूसरे को सीखने में महीनों बीत जाते हैं और बहुत हो देर से आता है। परंतु ऐसा बहुत ही कम देखने में आता है। उद्योगी व्यक्ति के लिये संसार में एक भी बात असंभव नहीं है। वीर नेपोलियन ने तो यहाँ तक कह डाला था कि "शब्द-कोषों में से "असंभव"-शब्द को निकाल देना चाहिए। क्योंकि दुनिया में कोई बात असंभव नहीं।

सब असंभव ही नहीं, तो इस शब्द की जरूरत ही क्या है।" इत्यादि। इसलिये इस व्यायाम में यदि शीघ्र ही सफलता न मिले, तो बराबर प्रयोग द्वारा अवश्य ही सफलता प्राप्त कर लेनी चाहिए। इस व्यायाम में सिर पर खड़ा होना पड़ता है, इसलिये योगीजनों ने इसका नाम "शीर्षासन" रक्खा है। इसे वृक्षासन, कपाली आसन और विपरीत आसन भी कहते हैं। योगाभ्यास में आसनों को व्यायाम माना गया है।

इस व्यायाम को बलवान् होने पर भी पहले दिन १५-२० सेकंड से अधिक मत करो। फिर आठ-दस दिन के बाद ४-५ मिनट तक करना चाहिए। हाँ, छः महीने के निरंतर अभ्यास के बाद २५-३० मिनट तक करने में कोई हानि नहीं। इस व्यायाम के पहले थोड़ी देर तीसरे अध्याय में लिखे अनुसार भस्त्रिका-प्राणायाम अथवा पूरक-कुंभक-रेचक प्राणायाम कर लेना ठीक होता है। भस्त्रिका १५-२० बार करना चाहिए और प्राणायाम ४-५ बार किया जा सकता है।

इस व्यायाम से अनेक लाभ होते हैं। यह सबसे उत्तम व्यायाम है। समस्त शरीर के समग्र रोग इससे दूर हो जाते हैं। एड़ी से चोटी तक के नस-नाड़ी शुद्ध होकर उनमें नवीन बल का संचार होता है। हृदय, यकृत, फेफड़ा आदि के लिये यह अत्यंत हितकर है। इस व्यायाम के द्वारा ऐसे-ऐसे

रोगियों ने अपने रोग खोए और स्वास्थ्य लाभ किया है, जिन्होंने बड़े-बड़े वैद्य, हकीम और डॉक्टरों की बहुमूल्य दवाएँ खाकर अपने जीवन की आशा छोड़ दी थी। १५-२० दिन करने से कोई लाभ दिखाई नहीं पड़ता। हाँ, थोड़ा-बहुत लाभ २-३ महीने में मालूम पड़ने लगता है। यदि बचपन से ही इसे नियम-पूर्वक किया जाय, तो सिर के बाल बुढ़ापे में भी सफ़ेद नहीं होंगे। इस व्यायाम के द्वारा बूढ़े जवान और जवान बलवान् एवं स्वस्थ हो जाते हैं।

कन्याओं को कन्या-काल में यह व्यायाम अवश्य ही करना चाहिए, क्योंकि इसके करनेवाली कन्या अच्छी प्रकार ब्रह्मचारिणी रह सकती है और आगे चलकर उत्तम संतानों की जननी बन सकती है। जवानी में इसे करना चाहिए, किंतु गर्भवती स्त्री को नहीं करना चाहिए। ७० वर्ष से कम उम्रवाली बूढ़ी माताएँ इसे करके अच्छा लाभ उठा सकती हैं। हम अधिक तो नहीं कहना चाहते, किंतु इतना अवश्य बतला देना चाहते हैं कि ६ महीने के नियम-पूर्वक अभ्यास द्वारा बुढ़ापे के कारण उत्पन्न हुई मुख पर की झुर्रियाँ मिट जायँगी।

इस व्यायाम के करनेवाले की समस्त इंद्रियाँ उसके अधीन रहती हैं। इसे प्रातः-सायं खाली पेट ठंडे वक़्त में करना चाहिए।

भरे पेट या धूप चढ़ जाने पर करने से कुछ भी लाभ न होकर उल्टी हानि ही होती है। भोजन कर चुकने के ५-६ घंटे बाद ही यह व्यायाम करना चाहिए। इस व्यायाम के करनेवाले को सादा भोजन करना उचित है। नशे की वस्तुओं से हमेशा बचना चाहिए।

यह व्यायाम कई प्रकार से किया जा सकता है। अच्छा अभ्यास हो जाने पर पैरों को आगे-पीछे भी किया जा सकता है। पैरों की पालथी भी लगाई जा सकती है। सिर के पास से हाथों को भी हटाया जा सकता है। इस व्यायाम के कर चुकने पर कोई दूसरा व्यायाम तत्काल ही नहीं करना चाहिए। सोना भी नहीं चाहिए, बल्कि धीरे-धीरे कुछ देर टहलना चाहिए।

व्यायाम नं० २०

यह व्यायाम खास करके पैरों के लिये ही है। इसके समझने में कुछ अधिक सोचने-समझने की भी ज़रूरत नहीं है। बिना कुर्सी के बस प्रकार रहना ही इस व्यायाम का मुख्य उद्देश्य है। पहले बिलकुल सीधे खड़े हो जाओ। दोनों हाथों को अपनी कमर पर रक्खो। फिर धीरे-धीरे इस प्रकार बैठना आरंभ करो, जैसे किसी कुर्सी, स्टूल या तिपाई पर बैठते हैं।

इस नक़शे के देखने से सहज ही में यह व्यायाम समझा
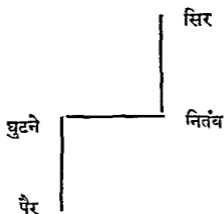
जा सकता है। इसी दशा में कुछ मिनट तक ठहरे रहो। स्मरण रहे कि सिर या धड़ आगे की ओर झुकने न पावें। पहलेपहल इस व्यायाम में कुछ कष्ट होता है, किंतु अभ्यास हो जाने पर यह सुगम हो जाता है। इसको इस प्रकार भी किया जा सकत .. कि बैठक तो कुर्सी की ही तरह रहे, परंतु टाँगें घुटनों के पास से होकर चौकोन हो जायँ।
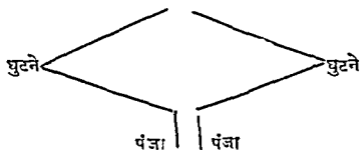
इसको देखकर, पैरों को कैसे रखना चाहिए, यह सहज ही समझ में आ सकता है। जिनके पैर कमज़ोर हों, उन्हें यह व्यायाम अवश्य करना चाहिए। इसमें फोलना वगैरह कोई रोग नहीं होता। इस व्यायाम को १५-२० मिनट करने से पैर बड़े ही मज़बूत हो जाते हैं।

अब इस अध्याय को हम यहीं समाप्त करके अगले अध्याय में "सैंडो के डंबल्स" के व्यायाम का उल्लेख करेंगे।

पाँचवाँ अध्याय

डंबल्स का व्यायाम

कसरत करने से सुंदरता बढ़ती है। प्रकृति ने स्त्रियों के लिये आरोग्य और सौंदर्य, दो मुख्य वस्तुएँ बनाई हैं। सौंदर्य हो और आरोग्यता न हो, तो सौंदर्य किसी भी काम का नहीं। लोगों ने आजकल आरोग्यता का एक विचित्र अर्थ समझ लिया है। लोग अच्छी तरह खाने-पीने और चलने-फिरने का नाम ही आरोग्यता समझे बैठे हैं। किंतु आरोग्यता इन शब्दों में सीमित नहीं है। बहुत-से लोग ऐसे हैं, जो खूब खाते-पीते और अच्छी तरह चलते-फिरते हैं, देखने में स्वस्थ भी मालूम होते हैं, किंतु वास्तव में वे रोगी होते हैं। कुछ लोग अपनी अस्वस्थता की चिंता नहीं करते और उसी दशा में अपनी जिंदगी व्यतीत करते रहते हैं। कुछ लोग रोगी होते हुए भी अपने को तंदुरुस्त जाहिर करते हैं।

स्त्रियों को व्यायाम और शुद्ध वायु न मिलने के कारण वे प्रायः रोगिणी रहती हैं। वे स्त्रियाँ जो मेहनत करती और शुद्ध वायु में रहती हैं, यदि पूर्णतया नहीं तो भी बड़े-बड़े नगरों में, मकान-रूपी पिंजरों में बंद रहनेवाली आलसी स्त्रियों से

सैकड़ों-गुणा स्वस्थ और नीरोग होती हैं। एक अँगरेज़ का कहना है कि "जिसके नीरोग शरीर में नीरोग ही मन हो, वही स्वस्थ कहा जा सकता है।" यह उक्ति बिलकुल ठीक है। अर्थात् शारीरिक और मानसिक, दोनो प्रकार की स्वस्थता आवश्यक है। शरीर के लिये जिस प्रकार ज्वर, फोड़ा, फुंसी, दमा, क्षय, मृगी, खाँसी, सिर-दर्द आदि रोग उसे अस्वस्थ बना देते हैं, उसी तरह मन को अस्वस्थ रखनेवाले काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, ईर्षा, द्वेष, स्पर्द्धा आदि अनेक रोग हैं। शरीर और मन, दोनो को ही स्वस्थ रखने की परम आवश्यकता है। पहले शरीर को स्वस्थ रखना चाहिए, क्योंकि कहा भी है—

"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।"

शरीर को स्वस्थ रखने के लिये व्यायाम की अत्यंत आवश्यकता है। शरीर कितना ही गोरा और सुन्दर कितना ही ख़ूबसूरत क्यों न हो, परंतु जब तक शरीर स्वस्थ नहीं, तब तक टेसू के फूल की तरह सब व्यर्थ है।

जिस तरह शरीर-शास्त्र के मर्मज्ञों का कहना है कि शरीर की स्वस्थता पहले आवश्यक है, उसी तरह यह भी कहा जा सकता है कि पहले मन की स्वस्थता आवश्यक है। क्योंकि यह एक मानी हुई बात है कि मनुष्य का जीता मन होता है

वैसा ही उसका शरीर भी हो जाता है। परंतु हमारे विचार से पाठिकाओं को इस प्रश्न की उलझन में न पड़कर यथा-साध्य दोनो ही की उन्नति करनी चाहिए। हमने इस पुस्तक के अंत में "मानसिक व्यायाम" पर भी एक अध्याय लिखा है।

स्वस्थ मनुष्य वही है, जिसके शरीर का कोई अंग अपूर्ण न हो, और न जिसके शरीर में कोई अंग अधिक ही हो। आँख, नाक, कान सब दुरुस्त हों। नाक से जिसके अधिक श्लेष्मा न बहता हो *। शरीर से निर्गंध पसीना निकलता हो। दाँत स्वच्छ हों। मुँह में बदबू न आती हो। पाँव मैले न हों। हाथ-पाँव आदि शारीरिक अंग बलवान् हों। कभी कोई रोग न होता हो। तेज-से-तेज धूप में, जिसे लू न लगती हो अथवा व्याकुलता न होती हो, जिसे जाड़े-पाले में रहने पर भी जुकाम वग़ैरह न होता हो अर्थात् जिसे वर्षा, शीत और गर्मी के मौसम बाधा न पहुँचाते हों, वही मनुष्य स्वस्थ है।

कई बहनों का यह ख़याल रहता है कि अगर स्वास्थ्य बिगड़ भी गया, तो दवा खा-पीकर उसे ठीक किया जा सकता है। कई तो घर में पाचक चूर्ण की शीशी के बल पर ख़ूब

* नाक, कान, आँख आदि के व्यायामों के लिये हमारी लिखी हुई पुस्तक "शरीर और व्यायाम" "गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ" से मँगाकर देखिए।—लेखक

भोजन कर जाती हैं। दवाओं के बल पर स्वास्थ्य को अच्छे रखनेवाले लोग बहुत ही भूल करते हैं। डॉक्टर, वैद्यों और हकीमों को ही अपनी दवाओं पर विश्वास नहीं होता। जब कभी उनके घर में कोई मनुष्य बीमार होता है, तो वे दूसरे का इलाज कराते हैं। स्वयं इलाज नहीं करते। इससे स्पष्ट होता है कि जिन दवाओं को वे रोगी के पेट में डालकर उसे चंगा करना चाहते हैं, उन पर वे खुद ही विश्वास नहीं करते। डॉक्टर एस्टली का यह कथन सर्वथा सत्य है कि "वैद्यकशास्त्र केवल अटकल-पच्चू ही चल रहा है।" चिकित्सक लोग औषधि को बार-बार बदलते हैं, यह इस बात का प्रमाण है कि उनका शास्त्र अटकल से चलता है। डॉक्टरों का कहना है कि "दवाओं से रोगों की कमी नहीं होती, बल्कि वृद्धि होती है। जितने लोग दवाओं से मरते हैं, उतने रोगों से नहीं मरते। दवाओं पर अपने स्वास्थ्य को अवलंबित रखना बड़ी भारी ग़लती है।" इत्यादि। तात्पर्य यह कि बहनों को दवा-दारू से बहुत ही बचना चाहिए और प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा ही आरोग्यता प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। पिछले अध्याय में हमने ऐसे अनेक व्यायाम लिखे हैं, जिनसे बिना दवा-दारू के ही समस्त रोगों को हटाकर पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की जा सकती है। इस अध्याय

में हम डंबल्स के व्यायाम का वर्णन करेंगे। स्त्रियों को चाहिए कि इस व्यायाम के द्वारा अवश्य लाभ उठावें।

मि० सैंडो का कहना है कि "कई लोगों का ऐसा खयाल है कि मेरे काम स्त्रियों के लिये लाभदायक नहीं हैं। परंतु मैं ऐसे भ्रम-पूर्ण विचारों को शीघ्र-से-शीघ्र हटा देने के लिये आतुर हूँ। आजकल उन स्त्रियों के लिये, जो घर के काम-धंधों को छोड़ बैठी हैं, व्यायाम आवश्यक है। इस युग में तो स्त्रियाँ साइकलें चलाती हैं, नावें खेती हैं, कई तरह के गेंद के खेल भी खेलती हैं। इन कामों को पहले पुरुषों के लिये ही समझा जाता था। स्त्रियों में श्रम के लिये मानसिक आदेश पुरुषों की अपेक्षा कुछ अधिक ही होता है, वे हमेशा कड़ी मेहनत करने के लिये तैयार रहती हैं। परंतु यदि उनके शरीर के अंग अच्छी तरह दृढ़ न किए गए हों, तो अधिक श्रम से हानि होने की संभावना है। मेरी पद्धति के अनुसार व्यायाम करने से किसी प्रकार की हानि होने की संभावना नहीं। क्योंकि मेरे डंबल्स के व्यायाम इतने अच्छे हैं कि उनसे मनमाना श्रम नित्य क्यों न किया जाय, उससे शरीर अधिक मज़बूत और स्वस्थ होगा।"

पिछले व्यायामों में टके-पैसे के खर्च का ज़िक्र नहीं था। परंतु इस व्यायाम में एक जोड़ "डंबल्स" को सबसे पहले

आवश्यकता है। डंबल्स का व्यायाम मि० सैंडो-नामक एक प्रसिद्ध पाश्चात्य पहलवान ने आविष्कार किया है। पश्चिमीय ढंग के सभी व्यायामों में थोड़ा-बहुत खर्च अवश्य करना पड़ता है। डंबल्स के व्यायाम में एक जोड़ "डंबल्स" अवश्य खरीदने पड़ेंगे। किसी भी दुकान से, जहाँ पर अँगरेजी खेलों का सामान बिका करता है, डंबल्स खरीदे जा सकते हैं। ये कई तरह के होते हैं। लकड़ी के भी मिलते हैं। लोहे के भी होते हैं। मेरे विचार से, यदि लोहे के डंबल्स खरीदने हों, तो चार-चार पाउंड वजन के लेने चाहिए। स्प्रिंगवाले डंबल्स कुछ महँगे होते हैं, किंतु अच्छे होते हैं। इसलिये जहाँ तक हो सके, स्प्रिंगदार डंबल्स खरीदने चाहिए। लकड़ी के डंबल्स नमूना देकर बढ़ई से बनवाए जा सकते हैं। सारांश यह कि इस व्यायाम में सबसे पहले डंबल्स की ज़रूरत है, इसलिये कहीं से भी डंबल्स जुटा लेने चाहिए।

ग़रीब बहनें जो कि डंबल्स प्राप्त नहीं कर सकतीं, वे भी इस व्यायाम को कर सकती हैं। उनके लिये सिर्फ़ यही उपाय है कि वे अपनी मुट्ठियाँ इतनी मज़बूती से बंद रक्खें कि भुजा और कलाइयों पर खूब बल पड़े। जितनी ताक़त कमानी-दार डंबल्स के पकड़ने में लगती हो, उतनी ही ताक़त से अपनी मुट्ठियाँ बंद रखनी चाहिए। ऐसा करने से उतना ही

फ़ायदा हो सकता है, जितना कि डंबल्स के द्वारा होता है। परंतु इसका यह अर्थ न समझ लेना चाहिए कि डंबल्स रखने ही नहीं चाहिए। नहीं, डंबल्स ज़रूर ख़रीदने चाहिए। यह उपाय तो अत्यंत निर्धन बहनों के लिये है।

व्यायाम नं० १

सीधी खड़ी हो। दोनो एड़ियाँ मिली रक्खो और पैरों के अँगूठों में ७-८ इंच का फ़ासला रक्खो। पीठ, एड़ी, नितंब और सिर का पिछला भाग सम-सूत्र में रक्खो। दोनो कुह-नियाँ बग़लों में लगाओ। डंबल्स को खड़े पकड़कर बिलकुल कुहनियों की सीध में सामने की तरफ़ रक्खो। अब कुहनियों को शरीर से लगाए हुए ही डंबल्स को डमरू को भाँति हिलाओ। दोनो डंबल्स एक साथ हिलने चाहिए। इस व्यायाम में सिर्फ़ कलाई ही हिलानी पड़ती है। हाथ की मुट्ठियाँ जब औंधी होंगी, तब एक दूसरे डंबल के सिर आमने-सामने होंगे, और इसी तरह जब हाथ की मुट्ठियाँ ऊपर की ओर होंगी, तब डंबल्स के सिर आमने-सामने होंगे। इस तरह कम-से-कम दस बार धीरे-धीरे डंबल्स को हरकत देनी चाहिए (देखो चित्र नं० १३)।

जब इस प्रकार कर चुको, तब दोनो हाथों को एक साथ सामने की ओर बिलकुल सीधे फैला दो। दोनो हाथ कंधों को

सीध में रहें। पेट या छाती बाहर की ओर न निकलने पावे। कमर में टेढ़ापन न आ जाय। जब हाथ सीधे कर दिए गए हों, उस वक्त डंबल्स हाथ में खड़े पकड़े रखना चाहिए। आड़े न हों। अब फिर डमरू की भाँति आहिस्ता-आहिस्ता दस बार डंबल्स को हिलाओ। डंबल्स जितने धीरे-धीरे और बल-पूर्वक हिलाए जायँगे, उतना ही अधिक लाभ पहुँचेगा।

यदि कमानीदार डंबल्स हों, तो उन्हें दबाकर रखने में हाथों को जोर से उन्हें पकड़ना ही होगा, परंतु यदि कमानीदार न हों और लोहे या लकड़ी के हों, तो उन्हें बल-पूर्वक पकड़ना चाहिए। ढीले-ढीले हाथों से और मन न लगाकर करने से डंबल्स का व्यायाम कदापि लाभप्रद साबित नहीं हो सकता। इसलिये डंबल्स खूब दृढ़ता-पूर्वक पकड़ने चाहिए।

इस तरह १० बार हिला चुकने पर हाथों को अपने दाहने-बाएँ कंधों की सम-रेखा में फैला दो (देखो चित्र नं० १४)। दोनो हाथों का तनाव दोनो दिशाओं की तरफ बल-पूर्वक रहे। मन में यह ध्यान रखना चाहिए कि मैं दोनो दिशाओं को स्पर्श करना चाहता हूँ। इस वक्त शरीर बिलकुल सीधा सम-सूत्र में रखकर पहले की तरह दस बार डंबल्स को धीरे-धीरे हिलाना चाहिए।

चित्र नं० १३ (पृष्ठ.१०७)

चित्र नं० १५ (पृष्ठ १०८)

अब हाथों को अपने माथे पर ले जाओ । अर्थात् कंधों के ऊपर बिलकुल सीधे कर देने चाहिए (देखो चित्र नं० १५)। इस वक्त हाथों को ऊपर की ओर जितना हो सके, तनाव देना चाहिए । पसलियों और पेट तक तनाव पड़ना चाहिए। हाथों को ऊपर रखकर डमरू की तरह दोनो डंबल्स एक साथ धीरे-धीरे दस बार हिलाने चाहिए।

इस व्यायाम में चाहो, तो पैरों को कुछ फ़ासले पर रखकर भी व्यायाम कर सकते हो । यदि दोनो हाथों से एकसाथ व्यायाम करने में असुविधा जान पड़े, तो पहलेपहल एक-एक हाथ से ही अभ्यास करना चाहिए। जब एक-एक हाथ से अभ्यास हो जाय, तब एकसाथ दोनो हाथों से करना चाहिए। इस समय श्वासोच्छ्वास नाक से ही करना चाहिए। किसी भी व्यायाम में भूलकर भी मुख से साँस नहीं लेना चाहिए । डंबल्स के व्यायाम में कपड़े चुस्त नहीं पहनने चाहिए। ढीले कपड़े पहनकर व्यायाम करने से लाभ होता है; क्योंकि व्यायाम के समय रुधिर की गति तेज हो जाती है, और वह तंग वस्त्रों के कारण सारे शरीर में, यथेष्ट परिमाण में, नहीं दौड़ने पाता। इस व्यायाम से कलाइयाँ बहुत ही बलवान् और मजबूत बन जाती हैं। मजबूत और सुडौल कलाइयों से शरीर की शोभा भी बढ़ जाती है। इसके

अतिरिक्त पेट, फेफड़े और पसली को पूर्णतया मेहनत मिल जाती है।

व्यायाम नं० २

चित्र नं० १५ के अनुसार सिर पर डंबल्स तानकर खड़ी हो जाओ। अब तने हुए हाथों से डंबल्स को जमीन की ओर धीरे-धीरे झुकाओ, यहाँ तक कि दोनो हाथ भूमि के जितने निकट जा सकें, ले जाओ। ऐसा करते समय घुटने न मुड़ने पावें, इस बात का बखूबी ध्यान रक्खा जाय (देखो चित्र नं० १६)।

इसके बाद फिर हाथों को ऊपर की ओर ले जाओ। ऊपर ले जाते वक्त हाथों में ढीलापन न आने पावे, वे अच्छी तरह तने रहें (देखो चित्र नं० १५)।

ऊपर ले जाकर फिर डंबल्स को कंधों के नीचे बगल में लाओ। कुहनी तक दोनो हाथ पसलियों से सटे रहें। डंबल्स सामने की ओर खड़े हुए हों (देखो चित्र नं० १३)।

इसके बाद दोनो हाथों को दाहनो-बाईं ओर फैलाओ और डंबल्स को कंधों की सीध में रक्खो। इस वक्त हाथों में खूब तनाव देना चाहिए। यदि व्यायाम कमरे के अंदर किया जा रहा हो, तो इस बात का खयाल करना चाहिए कि मैं अपने हाथों को दीवारों से लगा दूँगा (देखो चित्र नं० १४)।
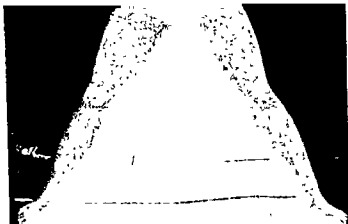
चित्र नं० ६५ (पृष्ठ १०६)

चित्र नं० १६ (पृष्ठ ११०)

थोड़ी देर तक हाथों को चित्र नं० १४ के अनुसार तने हुए रखकर, फिर चित्र नं० १६ के अनुसार हाथों को पृथ्वी की तरफ़ झुका दो। देखना, घुटने न झुकने पावें और हाथों को जितना हो सके, भूमि की ओर ले जाया जाय।

इतना हो चुकने पर विश्राम के लिये दोनो पैरों को मिलाकर और डंबल्स-सहित हाथों को सीधे लटकाकर खड़े हो जाओ। इस वक़ सारे शरीर को ढीला छोड़ दो यदि कमानीदार डंबल्स हों, तो कमानियों को भी ढीली छोड़ दो।

इस व्यायाम नं० २ के करने से भुजाएँ, टाँगें, पीठ और छाती मज़बूत होती हैं। इस व्यायाम को एक बार करने से काम नहीं चलेगा। अपनी शक्ति के अनुसार कई बार करना चाहिए।

व्यायाम नं० ३

नंबर २ के व्यायाम की थकान जब कुछ कम हो जाय तब ताज़ा होकर नंबर ३ के व्यायाम के लिये तैयार हो जाओ। अपने दोनो डंबल्स अपने कंधों पर कुहनियाँ मोड़कर रक्खो। हाथों की कुहनियाँ नीचे की ओर या आगे-पीछे की तरफ़ झुकी हुई या मुड़ी हुई न हों, बल्कि सीधी सम-रेखा में हों (देखो चित्र नं० १७)।

अब धीरे-धीरे, हाथ और कलाइयों पर ज़ोर देते तथा कंधों पर भी पूरा वज़न डालते हुए अपने दाहने हाथ को कंधे की सीध में सीधा फैलाओ। हाथ में किसी तरह का झोक अथवा टेढ़ापन न रहे, इस बात का पूर्णतया ध्यान रक्खो (देखो चित्र नं० १८)।

अब हाथ को खींचकर फिर कंधे की ओर लाओ और डंबल को अपने कंधे पर रक्खो (देखो चित्र नं० १७)। अब फिर पहले की तरह अपना हाथ फैलाओ (देखो चित्र नं० १८)। इस तरह दस बार करो।

जिस तरह दाहने हाथ से व्यायाम किया है, उसी तरह अब बाएँ हाथ से करो। और, जितनी बार दाहने से किया हो, उतनी ही बार बाएँ हाथ से भी करो। या यों भी किया जा सकता है कि एक बार यह व्यायाम दाहने हाथ से किया जाय और दूसरी बार बाएँ हाथ से, फिर तीसरी बार दाहने से और चौथी बार बाएँ से। इस प्रकार करने पर भी वही फल होता है, जो अलग-अलग करने से होता है।

इसके बाद दोनो हाथों को चित्र नं० १४ के अनुसार फैला दो और फिर डंबल्स-सहित दोनो हाथों को एक साथ खींचकर चित्र नं० १७ के अनुसार कंधों पर रक्खो। इस प्रकार इस हरकत को भी १० बार करो।

चित्र नं० १६ (पृष्ठ ११४)

इस व्यायाम से कंधें मजबूत हो जायँगे, और भुजदंड सुदृढ़ और सुडौल बन जायँगे। कलाइयाँ भी मजबूत हो जायँगी।

व्यायाम नं० ४

सीधे खड़े हो जाओ, और अपने दोनो हाथों को अपने ठीक सिर के ऊपर चित्र नं० १५ में बताए-अनुसार रक्खो। सिर के ऊपर दोनो हाथ ठीक कंधे की सीध में रहें। अब डंबेल्स बग़लों के पास ले आओ, जैसा कि चित्र नं० १३ में है। इसके बाद हाथों को दोनो ओर फैलाओ और मुट्ठियों को दोनो कंधों की सम-रेखा में रक्खो (देखो चित्र नं० १४)। इस चित्र में डंबेल्स दोनो हाथों में आड़े हैं, परंतु इस व्यायाम में वे चित्र नं० १३ की तरह हाथों में खड़े पकड़े रहने चाहिए। इस प्रकार थोड़ी देर रहने के बाद हाथों को नीचे की ओर गिरा दो। अर्थात् दोनो हाथ दोनो पैरों के बराबर आ जायँ।

इस व्यायाम को भी दस बार करना चाहिए। इसके करने से हाथ बहुत ही मजबूत बन जाते हैं। हमने प्रत्येक व्यायाम को दस-दस बार करने के लिये लिखा है, किंतु यदि शरीर कमजोर हो, तो कम भी कर सकते हैं, और अभ्यास तथा बल के बढ़ जाने पर धीरे-धीरे व्यायाम में भी वृद्धि करते रहना चाहिए।

डंबेल्स के व्यायाम करते वक्त किसी से भी बातचीत नहीं करना चाहिए। बोलने की आवश्यकता भी आ पड़े, तो उसे टाल देना ही ठीक है। क्योंकि बोलने के समय मुँह से साँस लेना और छोड़ना पड़ता है। इस व्यायाम में क्या, प्रत्येक व्यायाम में हमेशा नाक से ही साँस लेना चाहिए। जो लोग इस बात का ध्यान नहीं रखते, उन्हें व्यायाम से पूर्णतया लाभ भी नहीं होता। ऐसे मनुष्य अपनी भूलों पर ध्यान न देकर व्यायाम के द्वारा न होनेवाले लाभ अथवा उसके द्वारा पहुँची हुई हानि को जनता में प्रकट करते फिरते हैं। प्रत्येक मनुष्य को यह बात अच्छी तरह ध्यान में रखनी चाहिए कि विधि-पूर्वक और परिमाण में किए हुए व्यायाम से कभी हानि नहीं हो सकती। हाँ, जो लोग अंधाधुंधी से व्यायामों के नियमों को न जानते हुए अथवा अधिक व्यायाम करते हैं, वे अंत में अवश्य रोते हैं।

व्यायाम नं० ५

अपना एक दाहना पाँव क़रीब-क़रीब २॥-३ फुट के फ़ासले पर आगे की ओर रक्खो। पिछला पाँव बिलकुल सीधा रहे, और अगले पैर का घुटना कुछ झुक जाय। (देखो चित्र नं० १९)।

अब दोनों हाथों को कंधों के ऊपर अर्थात् सिर के ऊपर

चित्र नं० १६ (पृष्ठ ११४)

चित्र नं० २० (पृष्ठ ११४)

ले जाओ। इस बात का ध्यान रक्खो कि डंबेल्स बिलकुल सीधे और हाथ भी बिलकुल सीधे हो रहें। चित्र नं० १९ देखकर समझा जा सकता है।

अब सीधे खड़े हो जाओ और पहले की तरह व्यायाम करो। इस वक्त सिर्फ इतना ही अंतर होगा कि पहले दाहना पैर आगे था और अब की बार बायाँ होगा। दाहना पिछली ओर पूर्ववत् रहेगा। फिर सीधे खड़े हो जाओ। जब सीधे खड़े हो, तब दोनो पाँव मिल जाने चाहिए। इस प्रकार आठ-दस बार करो।

इस व्यायाम के करने से भुजाएँ, छाती और टाँगों के पट्ठे मजबूत बन जाते हैं।

व्यायाम नं० ६

बिलकुल सीधे खड़े रहो। दाहने पैर को दाहनी ओर सामने की तरफ फैलाओ। पिछली टाँग बिना मुड़े हुए सीधी रहे और अगली टाँग कुछ मुड़ जाय। अब दोनो हाथों को सामने की तरफ ले जाकर कुछ ऊपर की ओर दोनो डंबेल्स मिला दो (देखो चित्र नं० २०)।

अब फिर सीधे खड़े हो जाओ, और ध्यान रहे कि चित्र नं० २१ की दशा में खड़े होओ। खड़े होते समय डंबेल्स के दोनो मुँह पीछे इस तरह मिला दो कि उनके टकराने का

'खट्' शब्द हो। किस तरह खड़े होकर, पीछे किस तरह डंबेल्स मिलाए जायँ, यह बात चित्र नं० २१ के देखने से साफ मालूम हो जायगी।

बिलकुल सीधे खड़े हो जाने पर अब को बार बाईं टाँग आगे की ओर बढ़ाकर पहले की तरह डंबेल्स को ऊपर की ओर मुख के सामने ले जाकर मिला दो। और फिर चित्र नं० २१ की पोजीशन में आ जाओ। इस व्यायाम को दस बार करो। खड़े होते वक़्त डंबेल्स को पीछे टकराना मत भूल जाओ।

इस व्यायाम से भी कंधे, सीने और टाँगों के पुट्ठे बलवान् और दृढ़ हो जाते हैं।

व्यायाम नं० ७

सीधे रहकर डंबेल्स को दोनों हाथों में पकड़े हुए सीने के पास रक्खो। इस वक़्त डंबेल्स सीधे रहें अर्थात् खड़े रक्खो, आड़े न हों। डंबेल्स दोनों ओर सीने से लगे रहें। अब हाथों को शीघ्रता के साथ आगे की ओर बढ़ाओ, परंतु यह स्मरण रक्खो कि कुहनियाँ पसली के निकट ही रहें (देखो चित्र नं० १३)। इस चित्र में हाथ छाती से आगे हैं, परंतु इस व्यायाम नं० ७ में डंबेल्स पकड़े हुए हाथ सीने के पास रहेंगे, और आगे की ओर ले जाते वक़्त ठीक नं० १३
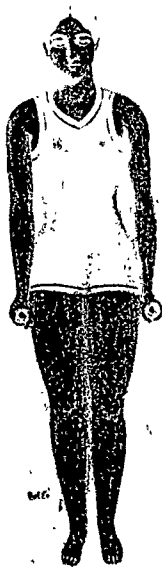
चित्र नं० २१ (पृष्ठ ११६)

की तरह आगे आ जायँगे। इस प्रकार दस बार आगे-पीछे ले जाओ।

इसके बाद डंबेल्स एकदम सिर के ऊपर ले जाओ (देखो चित्र नं० १५)। और फिर एकदम कंधों पर ले आओ (देखो चित्र नं० १७)। इस ऊपर ले जाने और फिर कंधे पर लाने की क्रिया को भी दस बार करो।

इस प्रकार हो चुकने के बाद डंबेल्स नीचे गिरा दो और ढीले हाथ-पाँव करके खड़े हो जाओ। इस व्यायाम से कंधे और छाती को काफी मेहनत पड़ती है। कंधे मजबूत और पुष्ट हो जाते हैं। छाती चौड़ी और पसलियाँ मजबूत बन जाती हैं। फेफड़े स्वस्थ और बलवान् होकर शरीर में अच्छे प्रकार रक्त की शुद्धि करते हैं। हृदय की चाल ठीक होकर उसके द्वारा शरीर के समस्त स्नायु शुद्ध हो जाते हैं।

इस व्यायाम में एक शंका होना आवश्यक है। वह यह कि इसमें डंबेल्स को जल्दी लाने-ले जाने की विधि क्यों लिखी गई ? इसका उत्तर यही है कि डंबेल्स का व्यायाम जल्दी-जल्दी भी किया जा सकता है और धीरे-धीरे भी। जैसी रुचि हो, करो।

व्यायाम नं० ८

खड़े होकर दोनों हाथों को कंधों की सीध में दाहने-बा

फैला दो (देखो चित्र नं० १४)। इस तरह मुट्ठियों की पीठ ऊपर की ओर हों। अब बाएँ हाथ को नीचे की ओर उतारो और दाहने को ऊपर की ओर ले जाओ। अपनी निगाह ऊपर किए हुए डंबेल पर रक्खो (देखो चित्र नं० २२)। फिर चित्र नं० १४ के अनुसार दोनो हाथ कंधों की सीध में फैलाकर खड़े हो जाओ।

इस प्रकार आठ-दस बार करो। बाद में दूसरी तरफ से व्यायाम आरंभ करो, अर्थात् बाएँ हाथ को ऊपर की ओर ले जाकर दाहने को नीचे गिरा दो, और फिर दोनो हाथ कंधों की सीध में चित्र नं० १४ की तरह सीधे कर दो। मुट्ठियों की पीठ आकाश की तरफ रहे।

इस प्रकार इस व्यायाम को भी उतनी ही बार करो, जितनी बार कि दाहनी ओर से किया गया हो। या इस व्यायाम को यों भी किया जा सकता है कि एक बार दाहने हाथ से डंबेल ऊँचा ले जाया जाय, तो दूसरी बार बाएँ से ले जाया जाय। तबीयत के अनुसार जो अच्छा मालूम पड़े, उसी विधि से करना चाहिए।

ऊपर की ओर डंबेल ले जाते वक्त, पीठ पर खूब तनाव डालना चाहिए। इस व्यायाम से पीठ की सारी नस-नाड़ियाँ शुद्ध हो जाती हैं। यहाँ यह बात ध्यान देनी चाहिए कि

चित्र नं० २२ (पृष्ठ ११८)
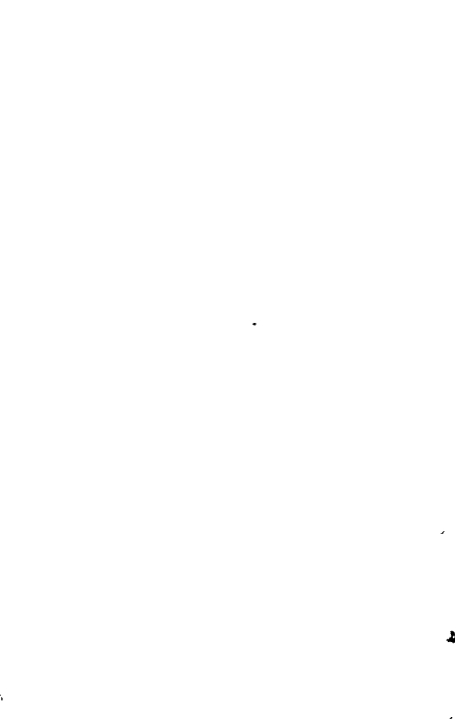
मानव-शरीर की पीठ में सैकड़ों रक्त-वाहिनी छोटी-छोटी नाड़ियाँ और नसें हैं। इन्हें हमेशा सबल रखना चाहिए। इनकी सबलता से ही शरीर की सबलता और इनको दुर्बलता से ही मनुष्य की दुर्बलता है। इसीलिये हम पिछले अध्याय में सीधी पीठ रखने का महत्त्व समझा आए हैं। व्यायाम के समय ही नहीं, बल्कि सदा सर्वदा मनुष्य को सीधी पीठ से ही रहना चाहिए। इसी में जीवन है, और झुकी हुई पीठ रखने ही में मृत्यु है। इस व्यायाम द्वारा पीठ को व्यायाम मिलकर वहाँ के रक्त को शुद्धि होती है, अतएव यह व्यायाम स्वास्थ्यदाता और आयु का बढ़ानेवाला है।

छठा अध्याय

सूर्य-भेदन व्यायाम

अब हम जिस व्यायाम का वर्णन करेंगे उसे "सूर्य-भेदन" व्यायाम कहते हैं। यह व्यायाम प्रातःकाल सूर्योदय के बाद पूर्व की ओर मुख करके किया जाता है। सूर्य का प्रकाश जीवन के लिये परम आवश्यक है। यह व्यायाम ऐसी जगह करना चाहिए जहाँ पर सूर्य का प्रकाश पूर्णतया सारे शरीर पर पड़ता हो। वेद कहता है—

"उत् पुरस्तात् सूर्य एति विश्वदृष्टो अदृष्टहा।
दृष्टांश्च घ्नन्नदृष्टांश्च सर्वांश्च प्रमृणन् क्रिमीन्॥ ६॥"

(अथर्व ५ । २३)

अर्थ—(विश्वदृष्टः) सबको दिखनेवाला (अदृष्टहा) और अगोचर पदार्थों में भी गतिवाला (सूर्यः) सूरज (दृष्टान्) दिखनेवाले (च) और (अदृष्टान्) नहीं दिखाई देनेवाले (सर्वान्) सब (क्रिमीन्) कीड़ों को (च) अवश्य (घ्नन्) मारता हुआ (च) और (प्रमृणन्) मिटाता हुआ (पुरस्तात्) सामने से अथवा पूर्व दिशा से (उत् एति) उदय होता है।

अर्थात् सूर्य के प्रकाश द्वारा रोग उत्पन्न करनेवाले कीटाणुओं

का नाश होता है। वेद में कई मंत्र ऐसे हैं, जिनमें सूर्य के प्रकाश द्वारा दीर्घ आयु होने का वर्णन है। ऋग्वेद में लिखा है—

"हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय।" १।४।१।६।५०

"सविता नो रासतां दीर्घमायुः।" ७।८।११।१०।३।३७

"सूर्य आत्माजगतस्तस्थुषश्च।" १।८।७।१।१६।१६४

सूर्य-प्रकाश के विधि-पूर्वक सेवन करने से हृद्रोग अर्थात् हृदय-संबंधी रोग नाश हो जाते हैं। मनुष्य की उम्र बढ़ती है। क्योंकि सूर्य इस विश्व का आत्मा है। यदि सूर्य न हो, तो न-जाने क्या हो जाय।

सूर्य के तेज को Solar enerjy (सोलार एनर्जी) कहते हैं। सूर्य के द्वारा आकाश में सर्वदा शक्ति का विक्षेप अर्थात् रेडियो ऐक्टिविटी (Radio Activity) होती रहती हैं। सूर्य-माला में अनेक ग्रह और उपग्रह हैं, जिनकी स्थिति सूर्य पर ही अवलंबित है। हमारी पृथ्वी भी सूर्य-माला का एक ग्रह है। हमारी पृथ्वी रात-दिन सूर्य के चारो ओर घूमा करती है। सूर्य की किरणों द्वारा हवा में प्राण-शक्ति या जीवन-शक्ति जिसे (Vital energy) व्हिटल् एनर्जी कहते हैं, उत्पन्न होती है। सूर्य की किरणों द्वारा प्राप्त होनेवाली संजीवनी-शक्ति का नाम ही प्राण-शक्ति है। भविष्य-पुराण में लिखा है—

"आरोग्यं भास्करादिच्छेत्।"

सूर्य से आरोग्यता की इच्छा करनी चाहिए। हम अपनी उन बहनों से क्या कहें, जो सूर्य के प्रकाश से वंचित मकानों में अपना जीवन बिता रही हैं। पर्दे की प्रथा के बहाने पुरुष-जाति का स्त्री-जाति के साथ यह असह्य गुरुतर अन्याय है कि वे स्वास्थ्य के देने एवं आयु के बढ़ानेवाले सूर्य के प्रकाश से उन्हें वंचित रखते हैं। पर्दे का रिवाज उन्हीं कुटुंबों में होना चाहिए, जिनमें स्त्रियों के घूमने-फिरने तथा रहने के लिये काफ़ी मकान और बगीचे बनवाने की शक्ति हो, जिनमें स्त्रियाँ सुख-पूर्वक अपना जीवन बिता सकें। परंतु बड़े-बड़े नगरों की तंग गलियों के सीलदार और प्रकाश-हीन मौत के पिंजरे-रूपी मकानों में स्त्रियों को पर्देवाली बनाकर रखना पुरुषों का स्त्रियों के प्रति निर्दयता-पूर्ण व्यवहार है।

"जिस घर में 'सूर्य का स्वच्छ प्रकाश' पहुँचता है, उसमें वैद्य का पैर नहीं पड़ता।" यह एक मानी हुई बात है। सूर्य की किरणों के समान दूसरी कोई औषधि अभी तक नहीं देखी गई। सूर्य की किरणों में एक अद्भुत रोग-जंतु-नाशक शक्ति है। ऐसे-ऐसे भयंकर रोग उत्पन्न करनेवाले कीटाणु, जो अंधकार, उपयुक्तता पाकर मौजूद रहते, वे सिर्फ़ १५ मिनट में सूर्य-किरणों द्वारा मर जाते हैं। शरीर के आंतरिक रचना को ठीक बनाने में सूर्य की किरणें एक मात्र उपयोगी साबित हुई हैं।

सूर्य के प्रकाश में रहनेवालों की पाचन-शक्ति बलवान् रहती है, और जो लोग सूर्य के प्रकाश में नहीं रहते, उनकी जठराग्नि मंद पड़ जाती है। देखा गया है कि वर्षा-ऋतु में जब कई दिनों तक सूर्य के दर्शन नहीं होते, तब लोगों को खाया हुआ भोजन पचाना भी कठिन पड़ जाता है। इसका यही कारण है कि सूर्य के प्रकाश के अभाव से हवा भली भाँति शुद्ध नहीं हो पाती, जिससे खाया हुआ भी हजम नहीं होता।

सूर्य के प्रकाश को बुरा मत समझो बल्कि उसे एक अच्छा वैद्य या अपना सच्चा हितैषी मित्र समझो। नियम-पूर्वक रोज सूर्य के प्रकाश का सेवन करो। अपने शरीर पर सूर्य की किरणें अच्छी प्रकार पड़ने दो। प्राचीन आर्य लोग संध्योपासन आदि अपने पवित्र कार्य प्रातःकाल सूर्योदय की दिशा में और सायं-समय सूर्यास्त की दिशा में मुँह करके करते थे। इसमें एक पंथ दो काज हो जाते हैं। ईश्वर-स्मरण भी हो जाता है और स्वास्थ्य बढ़ानेवाली सूर्य की किरणें भी शरीर पर अच्छी तरह घंटा-आधा घंटा पड़ जाती हैं। सूर्य की ओर मुख करके प्राणायाम करने से श्वास (दमे) की बीमारी भी नहीं होने पाती। सूर्य का प्रकाश हम लोगों के लिये अमृत है। इसलिये सूर्य के नाम "भास्कर" तेजदाता,

"पूषन्" पुष्टि करनेवाला, "हंस" अशुद्ध द्रव्यों को हवा में से नष्ट कर देनेवाला इत्यादि रक्खे गए हैं।

योग-शास्त्र में मानव-शरीर में सात चक्र माने गए हैं। इनमें अनाहत-चक्र का ही नाम सूर्य-चक्र है। इस सूर्य-चक्र में मन को स्थिर किए बिना यथार्थ आत्म-ज्ञान नहीं होता। यह सूर्य-चक्र ही जीवन-शक्ति की वृद्धि करता है और शरीर के प्रत्येक अवयव में अपनी शक्ति पहुँचाता है, इसी से शरीर पुष्ट होता है। शरीर को प्रफुल्ल और तेजस्वी बनाना इसी सूर्य-चक्र के अधीन है। सूर्य-भेदन व्यायाम के द्वारा सूर्य-चक्र में मन स्थिर होने लगता है। अर्थात् विलक्षण निर्माण-शक्ति (क्रीएटिव पावर) उत्पन्न होती है। मानसिक व्यापार तथा प्राण-शक्ति पर विजय पाने के लिये सूर्य-चक्र और मूलाधार-चक्र पर अपना अधिकार होना आवश्यक है।

व्यायाम और योग के संयोग बिना शक्ति का संचय करना कठिन बात है। उदाहरणार्थ, हमालों (बोझा ढोनेवालों) को देखिए। हमाल दिन-भर बड़ी मेहनत करता है, और मल्ल (पहलवान) कुछ ही देर तक नियमित रूप से व्यायाम करता है, परंतु इन दोनों में मल्ल बलवान् और तेजस्वी होता है। हमाल के शरीर पर कुछ भी विशेष परिणाम नहीं होता। इसका एक-मात्र यही कारण है कि हमाल मानसिक की व्याय-

नुसार वजन उठाकर इधर-से-उधर रखता रहता है, और मल्ल विचार-शक्ति के योग का फ़ायदा उठाता है, हमाल नहीं उठाता। सारांश यह कि व्यायाम करते वक़्त योग का लाभ अवश्य उठाना चाहिए।

योग-शास्त्र का मूल-तत्त्व यह है कि मनुष्य की उम्र श्वासोच्छ्वास पर अवलंबित होने के कारण श्वासों को अधिक खर्च नहीं करना चाहिए। श्वासोच्छ्वास के साथ-ही-साथ आयु भी कम होती जाती है। मानवी आयु प्राण-वायु पर निर्भर है और उचित रीति से श्वासोच्छ्वास करने पर आयु दीर्घ होती है और विविध रोगों का नाश होता है। तेजस्विता आती है। श्वासोच्छ्वास के द्वारा ज्ञान-तंतु, ज्ञान-तंतुओं के द्वारा मन, और मन के द्वारा शरीर पर अपना पूर्ण अधिकार हो जाता है। किंतु इसके विरुद्ध यदि श्वासोच्छ्वास का खर्च अधिक किया गया, तो आयु शीघ्र ही समाप्त हो जायगी।

आरोग्यता और श्वासोच्छ्वास का घनिष्ठ संबंध रहने के कारण व्यायाम के समय इस श्वासोच्छ्वास की क्रिया पर जरूर ध्यान रखना चाहिए। जिन व्यायामों में श्वासोच्छ्वास की क्रिया कम होती है, वे ही आयु बढ़ानेवाले होते हैं। हमने अभी तक स्त्रियों के लिये जितने भी व्यायाम बतलाए हैं, वे

सभी ऐसे हैं, जिनमें श्वासोच्छ्वास की क्रिया का बढ़ जाना संभव ही नहीं। यह "सूर्य-भेदन व्यायाम" भी इसी प्रकार का एक बहुत अच्छा व्यायाम है।

जो व्यक्ति रात-दिन अर्थात् २४ घंटों में २१६०० बार श्वासोच्छ्वास की क्रिया करता है, वही पूर्ण आयु अर्थात् १०० वर्ष की आयु पावेगा। यह योग-शास्त्र का निश्चित मत है। क्योंकि सौ वर्षों में ७७ करोड़ ७६ लाख बार श्वासोच्छ्वास होता है। अर्थात् प्रति घंटा ९०० और प्रति मिनट १५ बार श्वासोच्छ्वास की क्रिया होती है। यदि नाड़ी की चाल फ़ी मिनट ६८ से ७२ तक हो, तो डॉक्टर लोग उसे सशक्त समझते हैं। परंतु योग-शास्त्र के अनुसार जिसकी नाड़ी एक मिनट में ४५ बार चलती हो, उसे बलवान् और नीरोग समझना चाहिए। नाड़ी की एक धड़कन के साथ ४ श्वासोच्छ्वास हो जाते हैं। शांत-स्थिति में प्रति मिनट १८ बार, व्यायाम करते वक़्त ४० से ६० तक, सोते समय १६ से १८ तक, ज्वर अथवा फेफड़े की बीमारी में ५० से ६० तक मैथुन के समय ३० तक, और क्रोध द्वेष इत्यादि के समय ३० से ४० तक श्वासोच्छ्वास होता है। अतएव जिस व्यायाम से मानसिक एकाग्रता अथवा प्राणायाम मिल सकता हो, वही व्यायाम सर्वोत्तम समझना चाहिए। "सूर्य-भेदन"

में श्वासोच्छ्वास अधिक नहीं होते, अतएव यह अत्यंत उप-योगी व्यायाम है।

सूर्य-भेदन के समय नाक के द्वारा ही साँस लेना और छोड़ना चाहिए। प्रोफ़ेसर काइल का कथन है कि "मुख के द्वारा साँस लेने से रक्त-गोलकों की संख्या कम हो जाती है और रक्त-दुर्बलता बढ़ जाती है, किंतु नासिका श्वास लेने-छोड़ने की क्रिया करने से रक्त-गोलकों की संख्या बढ़ती है।" मुख से हवा खींचने के कारण वायु के अंदर रहने-वाले रोग-जंतु और धूलि-कण वग़ैरह सीधे अंदर जाकर स्वास्थ्य को ख़राब करते हैं, और नासिका द्वारा साँस लेने से वायु नाक के बालों द्वारा छनकर अंदर प्रवेश करता है, अतएव किसी प्रकार के रोग होने की आशंका नहीं रहती।

यह एक प्राकृतिक नियम है कि "The muscle that is used in developed." अर्थात् "स्नायु वही सुदृढ़ एवं उन्नत होता है, जिसके द्वारा कुछ काम होता है।" इस सिद्धांत के अनुसार शरीर के प्रत्येक अवयव को थोड़ा-बहुत श्रम अवश्य मिलना चाहिए, नहीं तो वे निकम्मे हो जाते हैं। "सूर्य-भेदन" व्यायाम के द्वारा शरीर के प्रत्येक भाग को समान गति मिलती है, जिससे शरीर के सब स्नायु मज़बूत और नीरोग हो जाते हैं। इससे शरीर के किसी भी भाग पर अनुचित श्रम

नहीं पड़ता। इसलिये सूर्य-भेदन व्यायाम एक उत्तम प्रकार का व्यायाम सिद्ध हुआ।

वर्तमान समय में मानसिक श्रम की अधिकता से उनके मज्जा-तंतुओं में फ़ास्फ़रस की कमी हो जाने के कारण लोग शीघ्र ही दुर्बल-शरीर हो जाते हैं, और उनकी चेतन-शक्ति धीरे-धीरे नाश होने लगती है। इस रोग को अँगरेज़ी भाषा में "Nervous Dilibity." (नर्वस डेलिबिटी) कहते हैं। इस रोग के रोगी तुनुक मिज़ाज होते हैं। उदासी रहना, स्मरण-शक्ति कम हो जाना, अपचन, क़ब्ज़, सिर-दर्द वग़ैरह इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। ऐसी दशा में सात्त्विक व्यायाम तथा सात्त्विक अन्न से ही मज्जा-तंतुओं की निर्बलता हट सकती है। ऐसे बीमार से यदि सूर्य-भेदन व्यायाम कराया जाय और गौ का दूध आहार में दिया जाय, तो रोग समूल नष्ट हो सकता है। इस व्यायाम के करनेवाले अत्यंत तीव्र रोग जैसे हैज़ा, प्लेग आदि के चंगुल में नहीं फँसते, क्योंकि भयंकर-से-भयंकर रोग के कीटाणु पेट में जाकर मर जाते हैं, और मल-द्वार से बाहर निकल जाते हैं।

सूर्य-भेदन व्यायाम के द्वारा 'पेरिटोनियम' त्वचा पर दबाव पड़ने के कारण, गर्भाशय में लगे हुए उसके बंधन पर प्रभाव पड़ता है। इससे गर्भाशय के स्नायु की ओर रक्त

का प्रवाह उत्तम रीति से होने लगता है, और गर्भाशय बलवान् हो जाता है। आजकल स्त्रियों में गर्भाशय की निर्बलता इतनी अधिक दिखाई पड़ती है कि अक़्ल परेशान है। जिसे देखो, उसे ही प्रदर-रोग के चंगुल में देखोगे। आज ९९ प्रतिशत स्त्रियाँ प्रदर-रोग से पीड़ित हैं। इस रोग का मूल-कारण गर्भाशय की निर्बलता है। ऊपर बताए हुए व्यायाम से गर्भाशय-संबंधी समस्त विकार दूर हो जाते हैं।

गर्भाशय और स्तनों का बहुत ही निकट संबंध है। प्रसव के बाद यदि बच्चा स्तन-पान न करे, तो गर्भाशय को पहले की स्थिति प्राप्त करने में बहुत ही समय लगेगा। बच्चे के दूध पीने से गर्भाशय शीघ्र ही पहली दशा में आ जाता है। जितनी कमजोरी गर्भाशय में होगी, उतनी ही दुर्बलता स्तन की ग्रंथियों में हो सकती है। आलसी बनकर घर में चारपाई पर बीमार की तरह बैठनेवाली स्त्रियों की अपेक्षा खुली हवा में काम करनेवाली एक मजदूर स्त्री के स्तनों में काफ़ी दूध उतरता है। उसके गर्भाशय को पहले की दशा में आने के लिये डेढ़-दो महीने न लगकर १५ दिन में ही वह दशा प्राप्त होती है। ये सब बातें उत्तम बलवान् गर्भाशय के कारण हैं। उनका गर्भाशय बलवान् और नीरोगी होने के कारण ही स्तनों में ख़ूब दूध उतरता है, जिससे उनके बालक हृष्ट-पुष्ट

और बलवान् होते हैं। सूर्य-भेदन व्यायाम के द्वारा गर्भाशय पर बड़ा ही उत्तम प्रभाव पड़ता है।

इस व्यायाम से सौंदर्य की भी वृद्धि होती है, जो कि स्त्रियों के लिये एक आवश्यक वस्तु है। इस व्यायाम से शरीर के समस्त अंगों पर एक समान उत्तम प्रभाव पड़ता है। यदि हमारी बहनें इस व्यायाम को आरंभ कर देंगी, तो इसका बहुत अच्छा परिणाम यह होगा कि देश की भावी संतानें भी इसे करने लगेंगी। "एक माता की शिक्षा सौ गुरुओं के समान होती है।" इस कहावत के अनुसार यदि बालक अपनी माता को यह व्यायाम करते देखें, तो वे अवश्य ही इसे किया करेंगे। इसलिये बहनों को चाहिए कि वे इस व्यायाम को अवश्य करें।

इस व्यायाम को कुछ लोग सायंकाल के समय भी करना ठीक बताते हैं, किंतु हमारे विचार से इसके लिये प्रातःकाल का ही समय उत्तम है। सूर्योदय के समय ऐसे स्थान में, जहाँ सूर्य का प्रकाश शरीर पर पड़ता हो, और श्वासोच्छ्वास के लिये शुद्ध प्राण-वायु प्राप्त हो, इसे करना चाहिए। प्रातःकाल सूर्योदय से तीन घंटे तक सूर्य की किरणों में शक्ति-प्रक्षेपन (Rdio Active Properties) रेडियो ऐक्टिव प्रापर्टीज़ अधिक परिमाण में होती है, इसीलिये इस व्यायाम

के लिये ही क्या बल्कि सभी व्यायामों के लिये यही समय उपयुक्त है। पर्वतों के शिखरों पर या महाबलेश्वर पर्वत के शिखर पर यह शक्ति-प्रद्योतकत्व हवा में बहुतायत से भरा हुआ होता है; यही कारण है कि ऐसे पर्वतों पर हवा बदलने के लिये लोग जाकर वहाँ स्वास्थ्य लाभ करते हैं। वही गुण प्रातःकालीन सूर्य की किरणों में है। इसलिये इसी समय व्यायाम करना चाहिए।

इस सूर्य-भेदन व्यायाम को "सूर्य-नमस्कार" भी कहते हैं। जो लोग मूर्ति-पूजक हैं, वे इस व्यायाम के समय सूर्य को अपना आराध्य-देव मानकर उसके सामने ही एकाग्र-चित्त से इस व्यायाम को करें। और, जो लोग सूर्य-पूजक नहीं हैं, वे अपने इष्टदेव की मूर्ति या चित्र अपने सामने रखकर इस व्यायाम को कर सकते हैं। इसमें एक पंथ दो काज हो जायँगे। "आम के आम और गुठलियों के दाम।" जो एकेश्वर-वादी हैं, वे विना किसी संदेह के यों ही कर सकते हैं। अब हम यहाँ यह बतला देना चाहते हैं कि किस उम्र की स्त्री को कितनी बार "सूर्य-भेदन" व्यायाम करना चहिए।

आयु	आरंभ में	बढ़ाने का क्रम	आखिरी हद
७ से १० ——	१ ——	४ दिन में १ ——	२५
१० से १४ ——	२ ——	४ ,, २ ——	५०

इस प्रकार के विश्राम के बाद आरंभ किया जाय, तो धीरे-धीरे संख्या बढ़ानी चाहिए। पहले दिन ४-५ बार, दूसरे दिन ७-८ बार, इस तरह दो-चार की संख्या नित्य बढ़ाकर पूर्ण व्यायाम पर पहुँच जाना चाहिए। जो स्त्रियाँ बलवान् हैं, उन्हें तो उचित गति के साथ ही इसे करना चाहिए और जो कमजोर बहनें हैं, उन्हें शांति-पूर्वक मंद वेग से करना उचित है। यदि बीच-बीच में विश्राम भी ले लिया करें, तो कोई हानि नहीं।

इस व्यायाम को सैकड़ों स्त्रियाँ कर रही हैं और उन्होंने पूरा-पूरा लाभ उठाया है। इस व्यायाम की करनेवाली स्त्रियों को प्रसव-काल में बिलकुल कष्ट नहीं होता, और उनकी संतानें भी हृष्ट-पुष्ट और नीरोग होती देखी गई हैं। हम स्त्रियों के लिये इस व्यायाम के करने का अनुरोध करते हैं। वे बहनें, जो तरह-तरह के शारीरिक कष्टों से व्यथित हैं, उन्हें चाहिए कि इस व्यायाम द्वारा अवश्य अपने कष्टों को नष्ट कर डालें।

"सूर्य-भेदन" के विषय में जितनी भी सूचनाएँ देनी थीं, उन्हें हम लिख चुके। अब हम इसके करने की विधि बतलाते हैं। सूर्य-भेदन व्यायाम कई तरह से किया जाता है। किंतु स्त्रियों के लिये जो विधि उपयोगी है, वही हम यहाँ ही लिखेंगे।

चित्र नं० २१ (पृष्ठ १२५)

चित्र नं० २४ (पृष्ठ १२५)

सीधी खड़ी हो जाओ। खड़े होने का ढंग वही हो अर्थात् शरीर बिलकुल सम-सूत्र में रहे। एड़ी से चोटी तक शरीर कहीं से भी आगे-पीछे झुका हुआ न रहने पावे। अब दोनो हाथ जोड़ो। यदि किसी उपास्यदेव की प्रतिमा सामने हो, तो उसे अथवा सूर्य को हाथ जोड़ना हो, तो सूर्य को हाथ जोड़ो। किंतु जो स्त्रियाँ परमात्मा के सिवा प्रतिमा वग़ैरा की उपासना करना ठीक नहीं समझतीं, वे अपने दोनो हाथ नीचे की ओर सीधे लटकते हुए रहने दें। अथवा परमेश्वर को सर्वव्यापी मानकर हाथ जोड़े रहें (देखो चित्र नं० २३)।

इसके बाद अपने दोनो हाथों की हथेलियाँ अपने दोनो पैरों के सामने दाहने-बाएँ पृथ्वी पर रक्खो। इस वक़्त घुटने अपने आप ही मुड़ेंगे, परंतु उन्हें मुड़ने नहीं देना चाहिए, सीधे ही रखना चाहिए। इस वक़्त अपना सिर अंदर की ओर ले जाकर, नाक को घुटनों से लगाना चाहिए (देखो चित्र नं० २४)।

यह बात कुछ कठिन नहीं है, परंतु आरंभ में तो कठिनता होवे ही गी। बिना घुटने झुकाए हाथों की हथेलियाँ भूमि पर टिकाने में कठिनता पड़ेगी। जैसे-तैसे यदि यह भी हो गया, तो नाक को घुटनों पर लगाना फिर भी कठिन काम है। आरंभ में यह किसी से भी नहीं हो सकता। हाँ, जिन्हों-

चौथे अध्याय में लिखे हुए व्यायाम नं० १७ का अच्छी तरह अभ्यास कर लिया हो, उन्हें यह चित्र नं० २४ के अनुसार स्थिति में रहना कोई मुश्किल बात नहीं होगी। यदि बिना घुटने झुकाए जमीन पर हथेलियाँ न टिक सकें और घुटनों में नाक न लग सके, तो हिम्मत हारकर बैठ नहीं जाना चाहिए, और न आगे का व्यायाम बंद ही कर देना चाहिए। वरन् इसको ठीक करने का प्रयत्न करते रहने से एक-दो महीने में यह अत्यंत सुगम बन जाता है।

इस व्यायाम के अतिरिक्त भी इसका अभ्यास अलग करने से शीघ्र ही सफलता मिल जाती है। यदि "सूर्य-भेदन" प्रातःकाल किया जाता हो, तो इसका अभ्यास सायंकाल को नित्य किया जा सकता है। परंतु पहलेपहल इसे अधिक अथवा बल-पूर्वक नहीं करना चाहिए। जिस समय हाथ भूमि पर रक्खे हों, उस समय पेट को अंदर ले जाना चाहिए। अर्थात् इसी पुस्तक के तीसरे अध्याय में प्राणायाम-विधि के अंतर्गत वर्णित उड्डियान-बंध की क्रिया करनी चाहिए।

इसके बाद एक पाँव पीछे की ओर फैलाना चाहिए। एक पाँव और हाथ तो वहीं-के-वहीं पर स्थित रहें, सिर्फ एक पाँव, दाहना अथवा बायाँ कोई-सा भी, जितना भी दूर पीछे हो

चित्र नं० २५

(पृष्ठ १३७)

चित्र नं० २६ (पृष्ठ १२७)

सके, ले जाना चाहिए (देखो चित्र नं० २५)। पाँव पीछे की तरफ़ फैलाते वक़्त केवल पंजा ही भूमि पर टिके, एड़ी न टिकने पावे।

जब एक पाँव पीछे की ओर फैला दो, तब दूसरा पैर भी उसी तरह पीछे की ओर ले जाकर उसके बराबर उसी तरह जमा दो (देखो चित्र नं० २६)।

इस वक़्त हाथ बिलकुल सीधे बिना मुड़े हुए हों। पैर दोनो पंजों के बल पर रहें। सिर नीचे की तरफ़ कुछ झुका रहे। हाथों का फ़ासला वही हो जो पहले था। हाथों में छाती की चौड़ाई के बराबर फ़ासला होना आवश्यक है। हाथों के और पाँवों के पंजों के बल पर सारा शरीर रहे। अब पृथ्वी पर शरीर के आठो अंगों को छुआ दो। सारा शरीर पृथ्वी पर सीधा पड़ जावे, परंतु दोनो हाथ जहाँ-के-तहाँ ही पूर्ववत् जमे रहें। नीचे लिखे आठ अंग पृथ्वी को लगने चाहिए—

२ पाँवों के पंजे।
२ घुटने।
२ हाथों के पंजे।
१ छाती।
१ सिर या नाक।

योग ८

इसे अष्टांग प्रणिपात भी कहते हैं। इस समय पेट का स्पर्श भूमि से नहीं होने देना चाहिए। जिनके पेट आगे की ओर लटक गए हों, उनके पेट तो ज़मीन से छूना अनिवार्य ही है। परंतु इस व्यायाम को नियमित विधि-पूर्वक करते रहने से, जिनका पेट गर्भ के बिना ही आगे की ओर लटका हुआ रहता है, सिकुड़कर उचित दशा में आ जाता है। आठ अंगों को किस प्रकार भूमि को स्पर्श कराया जाय, यह चित्र नं० २७ के देखने से मालूम हो जायगा।

इसके बाद अब उठना चाहिए। उठते समय हाथों के बल सीधे ही ऊपर को ओर उठना चाहिए। छाती को जितनी हो सके उतनी आगे की तरफ़ तानकर सिर को जितना हो सके पीछे की तरफ़ झुकाना चाहिए। इस समय केवल हाथों के और पैरों के पंजों को ही पृथ्वी पर टिकाए रखना चाहिए, बाक़ी सब शरीर पृथ्वी से ऊपर उठ आना चाहिए (देखो चित्र नं० २८)।

जब ३-४ मास का गर्भ हो, तब इसे नहीं करना चाहिए। इससे गर्भस्थ जीव को हानि पहुँचने की संभावना है। यहाँ तक यह व्यायाम सीधा होता आया, अब उलटी विधि से करो। अर्थात् छाती को अंदर की तरफ़ ले जाओ, और सिर को नीचे की ओर लाओ (देखो चित्र नं० २९)।

(पृष्ठ १३८)

चित्र नं २७

चित्र नं० २८ (पृष्ठ १२८)

अब वह एक पाँव अपने दोनों हाथों के बीच में ले जाकर रक्खो जो पहले पीछे की ओर फैलाया था (देखो चित्र नं० २५)।

अब दूसरे पाँव को भी उसी पाँव के पास लाकर जमा दो, और हाथ-पाँव पृथ्वी पर टेके हुए तथा घुटने को नाक लगाए हुए खड़े हो (देखो चित्र नं० २४)।

इसके बाद बिलकुल सीधे खड़े हो जाओ, और हाथ जोड़े रहो, या मत जोड़ो (देखो चित्र नं० २३)। जिनके सामने प्रतिमा रक्खी हो, उन्हें हाथ जोड़ना आवश्यक है। इस सारे व्यायाम का मिलकर एक सूर्य-भेदन व्यायाम होता है।

इस सूर्य-भेदन व्यायाम को जितनी जल्दी हो सके करना चाहिए। आरंभ में देर से होगा। फिर अभ्यास बढ़ जाने से इसे विधि-पूर्वक शीघ्रता से करना चाहिए। एक व्यायाम ६ सेकेंड में होना चाहिए, और इस प्रकार एक मिनट में ३० बार पूरा-पूरा व्यायाम होना चाहिए। इस व्यायाम को शीघ्रता-पूर्वक करने ही से सूर्य-चक्र पर परिणाम होता है, और उसका विकास होता है। जो निर्बल स्त्रियाँ हैं, उन्हें चाहिए कि व्यायाम करते समय जहाँ आवश्यकता पड़े, वहाँ साँस लें और जहाँ चाहें, वहाँ छोड़ दें। तथा एक मिनट में दस व्यायाम करने के बजाय दो-चार—जितने हो

सकें, शांति के साथ करें, और अपनी शक्ति के अनुसार ही करें।

मामूली ताक़तवाली स्त्रियों को चाहिए कि "सूर्य-भेदन" व्यायाम के पूर्व साँस ले लें, और जब छाती निकालकर तथा सिर को पीछे तानकर क्रिया की जाती है, (देखो चित्र नं० २८) तब छोड़ दें। पश्चात् फिर साँस लें और खड़े होने पर छोड़ें। अर्थात् एक सूर्य-भेदन में दो बार श्वासोच्छ्वास कर सकती हैं। कुछ दिन तक इस प्रकार श्वासोच्छ्वास करने के लिये ध्यान रखना पड़ता है, बाद में इसका अभ्यास हो जाने पर यही ताल-सी चलने लगती है। जो बलवान् स्त्रियाँ हैं और जिन्हें प्राणायाम का अभ्यास है, वे एक मिनट में दस "सूर्य-भेदन" करने का ही यत्न करें और प्रत्येक "सूर्य-भेदन" में एक बार साँस लेवें और छोड़ें। अर्थात् व्यायाम से पहले लें, और बाद में छोड़ें। इससे श्वासोच्छ्वास की क्रिया कम होकर, दीर्घायु की प्राप्ति भी होगी, और व्यायाम के द्वारा शरीर भी पुष्ट होता रहेगा। परंतु वे बलवान् स्त्रियाँ, जो १०० से अधिक संख्या में व्यायाम करना चाहती हैं, उन्हें तो एक बार के व्यायाम में दो बार ही श्वासोच्छ्वास की क्रिया करनी चाहिए।

इस व्यायाम का फल दो-चार दिन में ही शरीर पर नह

मालूम हो सकता। एक महीने में शरीर की कांति बढ़ने लगती है और दूसरे महीने में भुजाएँ और छाती पुष्ट होना आरंभ होती हैं। छः महीने में पूरा-पूरा लाभ स्पष्ट मालूम होने लगता है। आशा है, हमारी भारतीय बहनें इस व्यायाम से अवश्य लाभ उठाएँगी।

सातवाँ अध्याय

विविध व्यायाम

अब हम एक ऐसा व्यायाम लिखेंगे, जो बिछौनों में लेटे-लेटे ही किया जा सकता है। इसे खेल-का-खेल और व्यायाम-का-व्यायाम कह सकते हैं। इस व्यायाम में कुछ भी दिक्कत नहीं। "हल्दी लगे न फिटकरी, और रंग बढ़िया आवे।" एक कौड़ी भी खर्च न हो, और व्यायाम भी हो जाय। शरीर के भीतरी अवयवों की शुद्धि एवं वृद्धि तथा शारीरिक इंद्रियों की पुष्टि के लिये यह बिछौनों का व्यायाम सर्वोत्तम है। क्योंकि इससे शरीर के प्रत्येक स्नायु को गति प्राप्त हो जाती है, रक्त का संचालन बढ़ जाता है। पेट के भीतर की अँतड़ियाँ, जिगर और कोप के अंदर की नसें तथा फेफड़े पुष्ट होते हैं। खास करके मध्यम श्रेणी—औसत दर्जे—की स्त्रियों के लिये तो यह सर्वोत्तम व्यायाम है। यह नए ढंग का व्यायाम एक अमेरिकन ने ढूँढ निकाला है। उसका तो कहना यहाँ तक है कि इस व्यायाम से जैसा लाभ होता है, वैसा और किसी से भी नहीं होता।

मर्दों के लिये भी यह मुफीद है। विशेषतः उन मर्दों के

लिये जो अखाड़ों में जाकर व्यायाम करने में शर्माते हैं। जो लँगोट बाँधकर दंड-बैठक करना "आउट ऑफ़ एटीकेट" (सभ्यता के विरुद्ध) समझते हैं, उन्हें यह घरू व्यायाम अवश्य करना चाहिए। जो लोग बाहर जाकर व्यायाम करते शर्माते हैं, और घर के अंदर ही गुपचुप व्यायाम कर लेना चाहते हैं, ऐसे मर्द (!!!) कहलानेवाले प्राणी को यह बिस्तरे का व्यायाम अवश्य ही करना चाहिए। इसके द्वारा उन्हें अवश्य लाभ पहुँचेगा।

हमारी बहनों को चाहिए कि इस व्यायाम को अनुभव के लिये अवश्य आरंभ करें, और कुछ महीने के बाद इसके गुणों का चमत्कार देखें। इसे कन्या, तरुणी, वृद्धा, सभी बिना किसी संकोच और भय के कर सकती हैं। परंतु यह न भूल जाना चाहिए कि चारपाई तंग कसी हुई हो, ढीली न हो। अथवा जमीन पर ही बिस्तरा हो।

(१) बिछौनों में चित लेटो। अपनी टाँगें सीधी फैला दो और हाथ शरीर के दोनो ओर सीधे कर दो। अपना तकिया अपनी छाती पर रख लो। एक हाथ से एक तरफ के और दूसरे हाथ से दूसरी तरफ के तकिए का कोना पकड़ लो, और तकिए को सीधा छत की तरफ उठा दो। जब तकिए को छत की तरफ उठाओ, तब पैरों को [illegible] स प्रकार ले

जाओ कि घुटने छाती पर आ जायँ। अर्थात् जब तकिया ऊपर पहुँचे, तब घुटने छाती पर पहुँचने चाहिए। इसके बाद तकिए को नीचे लाओ, और पैरों को पहले की तरह सीधे कर दो। इस व्यायाम को दस बार करो।

(२) तकिए के दोनो कोने हाथों से पकड़ लो और सिर के ऊपर उसे उठाओ। पहले छाती पर उठाए रखना था और अब सिर पर उसी भाँति उठाए रखना है। जब तकिए को ऊपर उठा चुको, तब एक जोर की साँस खींचकर रोक लो, और साँस रोके हुए ही पाँच बार अपने दाहने पाँव को ऊपर-नीचे ले जाओ। अब बाएँ पैर को भी दाहने पैर की तरह ऊपर-नीचे झुलाओ। यदि दोनो पाँवों को झुलाने तक साँस न रोक सको, तो एक टाँग झुला चुकने पर साँस छोड़ दो और नई साँस ले लो।

(३) अब तकिए को अपने पाँवों से पकड़ लो। जहाँ तक हो सके, अपने पैरों को ऊँचा उठाओ। इस बात का प्रयत्न भी करना चाहिए कि तकिए को पाँवों में पकड़े हुए उसे अपने सिर पर ले जाओ। चौथे अध्याय में वर्णित व्यायाम नं० १८ और चित्र नं० ११ के अनुसार यह व्यायाम करना होता है। वहाँ देखने से मालूम हो जायगा कि किस तरह पैरों को ऊँचे उठाना तथा सिर पर लाना चाहिए। इसे दस बार करो।

(४) दोनो हाथों को सिर के ऊपर उठाओ। पैरों को सीधे बिछौनों में फैलाए रक्खो। अब बाएँ हाथ से तकिया उठा लो, और बाएँ हाथ तथा दाहने पैर को साथ-साथ ऊपर उठाओ और तकिए से दाहने हाथ का अँगूठा छू लो। इस तरह दस बार करो, और फिर इसी तरह दाहने हाथ में तकिया पकड़कर दस बार व्यायाम करो।

(५) दोनो हाथों से छाती को खूब ज़ोर से दबाओ। अब छाती के अंदर धीरे-धीरे इतनी हवा साँस के द्वारा भरो कि वह फैलने लगे, और हाथों से छूटने लगे। जहाँ तक हो सके, छाती को दबाए रहो। पाँच सेकंड तक साँस को रोको और फिर छोड़ दो। अभ्यास बढ़ जाने पर देर तक साँस रोकना चाहिए। इस व्यायाम को भी दस बार करो।

(६) सिर के पीछे दोनो हाथों को क़ैंची बनाकर दोनो हाथों की क़ैंची में अपना सिर रख दो। दोनो पैरों को सीधा ऊपर की ओर उठाओ, और उसी के साथ-साथ सिर को भी ऊँचा उठाओ। दस बार इस व्यायाम को करो।

(७) केवल दोनो हाथों को ऊँचा करो। पैरों को सीधे रहने दो। हाथों की मुट्ठियाँ खूब ज़ोर से बाँध लो। दोनो को एकसाथ नीचे लाओ और ऊपर ले जाओ। इस तरह दस बार करो। अब ऐसा करो कि जब एक हाथ ऊँचा हो, तब दूसरा

नीचा हो और जब दूसरा ऊँचा हो, तो पहला नीचा हो। छाछ मथते समय जिस तरह आगे-पीछे हाथ चला करते हैं, उसी तरह दस बार चलाओ। इसी तरह टाँगों से भी दस-दस बार करो।

(८) दोनो हाथों को ऊपर की ओर अपने सामने की तरफ़ फैला दो। अब अपने धड़ को बिना किसी आश्रय के क़मर तक उठाओ और फिर लेट जाओ। इस तरह दस बार करो।

(९) अब पट लेटो, और अपने हाथों को पीछे की ओर ले जाकर पैरों के अँगूठों को पकड़ो। पैरों को हो सके, उतना सिर की तरफ़ पकड़कर लाओ। इसे एक-दो मिनट तक करो। सगर्भा होने पर इसे नहीं करना चाहिए।

(१०) पट लेटी रहो। पैरों को सीधे फैलाए रहो। दोनो हाथों को पीछे की ओर ले जाकर जितनी दूर हो सके, उतनी दूरी पर पैरों को छुओ। इस व्यायाम के करते वक़्त नाभि तक शरीर पृथ्वी से उठ जाना चाहिए। इसे एक-दो मिनट तक यथाशक्ति करो। सगर्भा होने पर इसे करना ठीक नहीं है।

(११) दाहनी करवट लेट जाओ और अपने बाएँ हाथ, तथा बाईं टाँग को जितना हो सके, उतना ऊपर उठाकर तानो।

फिर नीचे गिरा दो और पुनः पूर्ववत् ऊँची टाँग और ऊँचा हाथ करो। इस प्रकार दस बार करो। तत्पश्चात् बाईं करवट लेटकर दाहनी टाँग तथा दाहने हाथ से भी वैसे ही करो। जितनी बार बाईं तरफ़ से किया हो, उतनी ही बार दाहनी बाज़ू से भी करना चाहिए।

इन व्यायामों से अच्छा लाभ होता देखा गया है। प्रातः-काल ही शौच, मुख-मार्जन आदि कार्य से निपटकर इसे करना चाहिए। विना शौच आदि कार्य से निपटे भी किया जा सकता है, परंतु पेट को साफ़ करके ही व्यायाम करने से लाभ होता है। जिन्हें क़ब्ज़ रहता हो, उन्हें चाहिए कि इस व्यायाम को करने के पहले थोड़ा-सा जल पान कर लिया करें।

स्त्रियों में यह एक दृढ़ विश्वास-सा हो गया है कि विन कुछ खाए पानी पीने से हानि होती है। स्त्रियाँ अपनी भाषा में इसे "कोरा कालजा" और "निरना बासा" कहती हैं। वे घर के किसी भी मनुष्य को विना कुछ खाए-पिए प्रातःकाल पानी पीने से रोक देती हैं; किंतु यह एक भूल है। सूर्योदय के पहले जल-पान करने के गुणों से वैद्यक-शास्त्र भरा पड़ा है। इस वक़् के जल-पान को "अमृत-पान" और "उषः-पान" कहते हैं। इस अमृत-पान करनेवाले को कभी कोई रोग नहीं होता—

हकीम, वैद्य और डॉक्टरों के द्वारों पर चक्कर नहीं लगाने पड़ते। क़ब्ज़ की शिकायत कभी नहीं होती। मैं अपनी बहनों से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस "अमृत-पान" का प्रचार करें, और अपने बच्चों को भी इसकी आदत डाल दें। शय्या से उठते ही उन्हें थोड़ा पानी पी लेने की आदत डाल देनी चाहिए। आदत पड़ जाने पर फिर जीवन-भर नहीं छूटती। घर के समझदार लोगों को इसके गुण समझाकर "अमृत-पान" करने के लिये अवश्य कहना चाहिए। यह हमारा विषय न होने से हम इस पर अधिक कुछ भी नहीं लिख सकते।

मुद्गर (जोड़ी)

स्त्रियाँ मुद्गर का व्यायाम भी कर सकती हैं। मुद्गर का व्यायाम विशेषतः छाती और हाथों के लिये अत्यंत हितकर है। मुद्गर लकड़ी के बनाए जाते हैं और इसी नाम से भारत में प्रसिद्ध हैं। कई लोग इन्हें जोड़ी भी कहते हैं। इसके करने की कई विधियाँ हैं। इस व्यायाम की प्रत्येक विधि को "हाथ" कहते हैं। यह व्यायाम बड़ा ही अच्छा और मनो-रंजक तथा नयनाभिराम होता है। हम यहाँ मुद्गर के हाथ नहीं बतला सकते, क्योंकि इसे लिखकर समझा देना अत्यंत कठिन बात है। एक तरह के हाथ को समझाने के लिये ही

कई चित्रों की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिये जोड़ी के हाथों का "व्यायाम" समझना अत्यंत कठिन और व्यय-साध्य होने के कारण हम इसे यहाँ नहीं लिखते।

यदि समय मिला, तो इस विषय पर एक स्वतंत्र पुस्तक लिखने का विचार है।

जिन बहनों को मुद्गर के व्यायाम का शौक़ हो, उन्हें चाहिए कि इस विषय को किसी अच्छे जानकार से सीखें। अथवा किसी व्यायामशाला में जाकर मुद्गर के हाथ फिरानेवाले को ध्यान-पूर्वक देखें। यह व्यायाम भारत का अत्यंत प्राचीन काल का व्यायाम है। आज भी भारत में भारी-से-भारी मुद्गर-जोड़ी के हाथ निकालनेवाले अनेक पहलवान हैं। स्त्रियों को मुद्गर की हल्की जोड़ी रखनी चाहिए। भारी मुद्गरों से उनकी सुकुमारता को धक्का पहुँचता है। इस व्यायाम से कलाई सुडौल और सुदृढ़ बन जाती हैं। भुजदंड पुष्ट एवं गठीले बनकर भुजा की शोभा को बढ़ाते हैं। छाती उन्नत एवं विशाल बन जाती है। जिन्हें इस व्यायाम की इच्छा हो, वे अवश्य करके लाभ उठावें। इससे किसी प्रकार की हानि होने की संभावना नहीं।

पैरेलल बार्स

यह एक अँगरेजी ढंग का व्यायाम है। बड़े स्कूलों और

हकीम, वैद्य और डॉक्टरों के द्वारों पर चक्कर नहीं लगाने पड़ते। क़ब्ज़ की शिकायत कभी नहीं होती। मैं अपनी बहनों से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस "अमृत-पान" का प्रचार करें, और अपने बच्चों को भी इसकी आदत डाल दें। शय्या से उठते ही उन्हें थोड़ा पानी पी लेने की आदत डाल देनी चाहिए। आदत पड़ जाने पर फिर जीवन-भर नहीं छूटती। घर के समझदार लोगों को इसके गुण समझाकर "अमृत-पान" करने के लिये अवश्य कहना चाहिए। यह हमारा विषय न होने से हम इस पर अधिक कुछ भी नहीं लिख सकते।

मुद्गर (जोड़ी)

स्त्रियाँ मुद्गर का व्यायाम भी कर सकती हैं। मुद्गर का व्यायाम विशेषतः छाती और हाथों के लिये अत्यंत हितकर है। मुद्गर लकड़ी के बनाए जाते हैं और इसी नाम से भारत में प्रसिद्ध हैं। कई लोग इन्हें जोड़ी भी कहते हैं। इसके करने की कई विधियाँ हैं। इस व्यायाम की प्रत्येक विधि को "हाथ" कहते हैं। यह व्यायाम बड़ा ही अच्छा और मनोरंजक तथा नयनाभिराम होता है। हम यहाँ मुद्गर के हाथ नहीं बतला सकते, क्योंकि इसे लिखकर समझा देना अत्यंत कठिन बात है। एक तरह के हाथ को समझाने के लिये ही

कई चित्रों की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिये जोड़ी के हाथों का "व्यायाम" समझना अत्यंत कठिन और व्यय-साध्य होने के कारण हम इसे यहाँ नहीं लिखते।

यदि समय मिला, तो इस विषय पर एक स्वतंत्र पुस्तक लिखने का विचार है।

जिन बहनों को मुद्गर के व्यायाम का शौक़ हो, उन्हें चाहिए कि इस विषय को किसी अच्छे जानकार से सीखें। अथवा किसी व्यायामशाला में जाकर मुद्गर के हाथ फिरानेवाले को ध्यान-पूर्वक देखें। यह व्यायाम भारत का अत्यंत प्राचीन काल का व्यायाम है। आज भी भारत में भारी-से-भारी मुद्गर-जोड़ी के हाथ निकालनेवाले अनेक पहलवान हैं। स्त्रियों को मुद्गर की हल्की जोड़ी रखनी चाहिए। भारी मुद्गरों से उनकी सुकुमारता को धक्का पहुँचता है। इस व्यायाम से कलाई सुडौल और सुदृढ़ बन जाती है। भुजदंड पुष्ट एवं गठीले बनकर भुजा की शोभा को बढ़ाते हैं। छाती उन्नत एवं विशाल बन जाती है। जिन्हें इस व्यायाम की इच्छा हो, वे अवश्य करके लाभ उठावें। इससे किसी प्रकार की हानि होने की संभावना नहीं।

पैरेलल बार्स

यह एक अँगरेज़ी ढंग का व्यायाम है। बड़े स्कूलों और

कॉलेजों में, प्रायः यह व्यायाम विद्यार्थियों से, कराया जाता है। यह क़ीमती व्यायाम है, क्योंकि इसके लिये "बार्स" वग़ैरा बनवाने में ख़र्चा पड़ेगा। कहीं खेलों के सामान की दूकान से बना-बनाया मँगाया जायगा, तो बहुत ही क़ीमत लग जायगी, और यदि स्थान पर ही बनवाया जायगा, तो १५ और २० रुपए से कम नहीं लगेंगे। फिर इसे गाड़ने के लिये और व्यायाम की कूद-फाँद के लिये ख़ूब जगह भी चाहिए। हम इस व्यायाम के विषय में यहाँ कुछ भी नहीं लिखना चाहते। केवल परिचय-मात्र करा देना ठीक समझते हैं।

यह व्यायाम स्त्रियों के लिये हानिप्रद नहीं है। इसे बेफ़िक्री से किया जा सकता है। किंतु यह सुलभ नहीं है। या तो किसी स्कूल कॉलेज में जाकर या किसी व्यायामशाला में जाकर, नहीं तो अपने घर पर "बार्स" बनवाकर, यह व्यायाम किया जा सकता है। मेरी समझ से तो यह व्यायाम स्त्रियों को कहीं जाकर करना या घर पर प्रबंध करवाना असुविधा-जनक ही होगा। इसीलिये हम इस पर विशेष प्रकाश नहीं डालते। ईश्वर करे वह शुभ दिन भारत में आवे कि प्रत्येक गाँव में स्त्रियों की "व्यायामशालाएँ" स्थापित हों, और वहाँ हमारी बहनें इन व्यायामों को कर सकें।

पैरेलल बार्स का व्यायाम सीखने के लिये किसी शिक्षक की आवश्यकता होती है। इस व्यायाम की विधि "फ़िज़ी-कल ड्रिल"-नामक पुस्तक में भी दी गई है। जिन्हें ज़रूरत हो, उक्त पुस्तक में देख सकती हैं।

इसी प्रकार "हारोजेंटल बार" का व्यायाम भी है। किंतु ये दोनो व्यायाम उन्हीं स्त्रियों को करने चाहिए, जो मर्दाना ढंग पसंद करती हों। गृहस्थी के कार्यों में लिप्त रहनेवाली बहनों के लिये तो पिछले अध्यायों में वर्णित व्यायाम ही स्वास्थ्य-प्रद एवं हितकर हैं। हाँ, इन व्यायामों को कन्या-काल में, विद्याभ्यास के दिनों में, यदि स्कूलों में कराया जाय, तो बड़ी ही अच्छी बात हो।

चर्खा कातना

स्त्रियों के लिये चर्खा कातना भी एक आवश्यकीय कार्य है। यह हाथों का अच्छा व्यायाम है। चर्खा कातते वक़् दोनो हाथों से काम करना पड़ता है। एक हाथ से चक्र को घुमाना होता है, और दूसरे से सूत निकालना होता है। दोनो हाथों को निराधार करके काम करना पड़ता है। इसलिये चर्खे द्वारा हाथों को पूरा व्यायाम मिल जाता है।

पहले घर-घर में चर्खा था और स्त्रियों का यह मुख्य धंधा था। जिस तरह वाटर वर्क्स और आटे की मशीनों ने स्त्रियों

के पानी भरने तथा चक्की पीसने के व्यायाम को नष्ट कर दिया है, उसी तरह कपड़े बनाने और सूत कातने की मिलों ने उनके चर्खे के व्यायाम को मटियामेट कर दिया।

चर्खा कातने से हाथों को अच्छा व्यायाम मिलता है। इस व्यायाम को किसी भी वक्त किया जा सकता है। स्त्रियाँ प्रायः दोपहर के वक्त ही भोजन आदि से निपटकर इस कार्य में जुटती हैं। इससे व्यायाम भी होता है और आर्थिक लाभ भी। जब से यह व्यायाम नष्ट हुआ, तभी से भारतवर्ष की स्वतंत्रता भी नष्ट हो गई, और अब परतंत्रता से मुक्त होने का साधन भी यही माना गया है। यह कार्य स्त्रियों का ही है। वेद भी इस कार्य को स्त्रियों का ही कार्य बतला रहा है।* इसलिये बहनों को चाहिए कि इस व्यायाम को अपने तथा अपने देश के लिये जरूर अपनावें। क्योंकि इस व्यायाम से अपना और देश का, दोनो का बल बढ़ता है।

इस चर्खे के युग में इस विषय पर अधिक लिखना व्यर्थ है, जब कि स्वयं श्रीमहात्मा गांधीजी महाराज ने ही इस काम को हाथ में ले रक्खा है और इसी में "स्वराज्य" बताया है।

---

* मेरा लिखा हुआ "खादी का इतिहास" गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ से मँगाकर पढ़िए। —लेखक

हाथ-पैर दाबना

स्त्रियों को उचित है कि नित्य अपने वयोवृद्ध मनुष्यों के हाथ-पाँव दबाया करें। ससुर, सासु और अपने पतिदेव के हाथ-पाँवों को नित्य दाबना चाहिए। हाथ-पैर का दाबना कोई सहज काम नहीं है। इसमें भी शक्ति की जरूरत है। अगर घर में सासु-ससुर सभी मौजूद हुए, तो फिर तो खासा व्यायाम हो जायगा। प्रत्येक स्त्री का कर्तव्य है कि वह अपने पूज्य जनों के पैर-हाथ दबा दे। वर्तमान काल में स्त्रियाँ इसे बुरा समझने लग गई हैं। हाथ-पैर दबाना दासी, बाँदी का काम समझ लिया है। यही कारण है कि हम आजकल देखते हैं कि सासु-ससुर तो क्या, स्त्रियाँ अपने पतिदेव के हाथ-पाँव दाबना भी अपना अपमान समझने लगी हैं।

हमने देखा है कि इस ज़माने में सासु और बहू में प्रायः झगड़ा चला करता है। इसका कारण एकमात्र विद्या की कमी है। अज्ञान होने के कारण ही ऐसी बेहूदी बातें होती हैं। स्त्रियों को यह ध्यान रखना चाहिए कि पति से कहीं अधिक पद सासु और ससुर का है। क्योंकि वह व्यक्ति, जिसे अपना बना चुकी हो, उन्हीं की संतान है, जिन्हें तुम सासु और ससुर कहती हो। अतएव सासु और ससुर के प्रति हृदय में संकीर्णता रखना मूर्खता है—गुरुतर पाप है। उन्हें अपने धर्म के माता-

पिता समझकर उनकी इज्ज़त करो और सच्चे मन से उनकी सेवा करो। इससे तुम्हारा गृह स्वर्ग के समान सुखद बन जायगा। ससुर से पर्दा करना बेहूदापन है। उनकी सेवा पिता समझकर बड़े आदर से करो।*

इस हाथ-पैर दबाने से धर्म और कर्म, दोनो की प्राप्ति होती है। इस व्यायाम द्वारा हाथों के पंजे मजबूत बन जाते हैं। कलाई पुष्ट और सबल हो जाती है। हाथों को इस व्यायाम से पूर्ण लाभ मिलता है।

मानसिक व्यायाम

यह एक मानी हुई बात है कि "मनुष्य का जैसा मन होता है, वैसा ही उसका शरीर बन जाता है।" इस शरीर में मन की विशेष महत्ता है। जिस तरह मानव-शरीर को शारीरिक बल की आवश्यकता है, उसी तरह मानसिक बल की भी ज़रूरत है। जिसमें केवल शारीरिक बल तो है, किंतु मानसिक नहीं, वह मनुष्य संसार में बलवान् नहीं माना जा सकता। उसका बल एकांगी कहा जा सकता है। परंतु जिसमें दोनो बलों का समावेश है, वही सच्चा बली है। महाभारत के

---

* सासु और ससुर के पद का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना हो, तो गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ से मेरी लिखी हुई पुस्तक "वेद में स्त्रियाँ" मँगाकर पढ़ो। —लेखक

योद्धाओं को आप देखिए, अथवा किसी भी नामी प्रसिद्ध व्यक्ति के जीवन-चरित्र की ओर दृष्टि डालिए, उसमें आप शारीरिक और मानसिक, दोनों ही तरह का बल देखेंगे। द्रोणाचार्यजी शास्त्रों के महान् पंडित थे और साथ ही शस्त्रास्त्रों के भी विलक्षण विद्वान थे। जिसमें केवल शारीरिक बल हो और मनोबल न हो, तो वह अपने शारीरिक बल से कुछ भी लाभ नहीं उठा सकता। उदाहरणार्थ मान लीजिए कि एक शेर आ गया, उसे वध करने के लिये आपके पास हथियार हैं, और शरीर में भी इतना बल है कि चाहे तो बिना हथियार ही के उसे मार सकते हैं; परंतु मनोबल कम है, तो आप उसे कदापि नहीं मार सकते, बल्कि वह तुम्हें मार सकता है। इत्यादि बातों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शारीरिक बल को सार्थक करने के लिये मानसिक बल की भी अत्यंत आवश्यकता है। इसीलिये कवि ने कहा है कि—

"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।"

मन के बल पर ही मनुष्य बंधन अथवा मुक्ति-सुख अथवा दुःख प्राप्त करता है। सत्य है—

"मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।"

हम पीछे कहीं कह आए हैं कि "स्वस्थ वही कहा जा सकता है, जिसके नीरोग शरीर में नीरोग मन हो।" यह सत्य

है; क्योंकि शरीर और मन का घनिष्ठ संबंध है। मान लीजिए कि शरीर तो बिलकुल स्वस्थ है, और मन उसका दुर्व्यसनी है, तो क्या ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ, बलवान् कहा जा सकता है? कदापि नहीं। और, मन यदि पवित्र है, और शरीर रोग-जरा-जीर्ण है, तो वह भी स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। जो बहनें चरित्रवान् हैं और शरीर से भी हृष्ट-पुष्ट नीरोग हैं, वे ही वास्तव में स्वस्थ हैं।

मन का और शरीर का आपस में घनिष्ठ संबंध है। इन दोनो में कौन प्रधान और कौन गौण है? इस विषय में कुछ स्पष्ट उत्तर नहीं दिया जा सकता। मानस-शास्त्र के ज्ञाता मन को मुख्य मानते हैं, और शरीर-शास्त्र के विद्वान् शरीर को। हम इस झगड़े में न पड़कर दोनो को समान मानते हैं। शारीरिक कार्य में शरीर का दर्जा ऊँचा है, और मानसिक कार्य में मन का। यदि मन अस्वस्थ है, तो शारीरिक स्वस्थता उसे अवश्य स्वस्थ बना देगी। इसी तरह यदि मन स्वस्थ रहा, तो वह शरीर को बिना किसी औषध के स्वस्थ कर सकता है। तात्पर्य यह कि जिसे शारीरिक स्वास्थ्य और बल की आवश्यकता है, उसे अपना मन भी निर्विकार, स्वस्थ और सबल बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। मन की शक्ति को साधारण शक्ति मत समझो। यह सब इंद्रियों का स्वामी है। इसी के

कहने में सब इंद्रियाँ हैं। इसलिये इसे बलवान् बनाने के लिये मानसिक रोगों को सबसे पहले हटाने का प्रयत्न करना चाहिए। ईर्षा, द्वेष, काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, व्यभिचार, घमंड, चोरी, हिंसा, जुआ, आलस्य, भय, चिंता, मूर्खता आदि मानसिक रोग हैं। जो इनमें अधिक लिप्त होगा, उसका मन उतना ही अधिक रोगी समझना चाहिए। नीरोग मन बनाने के लिये इन बातों से बचना चाहिए।

मन को बलवान् बनाना हो, तो धीरे-धीरे उसके इन रोगों को निकाल डालने का प्रयत्न करो। ऐसे रोगी और विकार-ग्रस्त मन के कहने में कभी मत चलो, बल्कि आत्मा का उस पर प्रभुत्व स्थापित करो। धीरे-धीरे अभ्यास करने से एक दिन मन पर अच्छी प्रकार आधिपत्य स्थापित हो जाता है, और मन स्वस्थ हो जाता है। मन के स्वस्थ हो जाने पर व्यायाम द्वारा उसे सबल बनाइए।

"व्यायाम" शब्द का अर्थ है श्रम करना, मेहनत करना इत्यादि। मन को मेहनत देना ही मन का व्यायाम है। इसके लिये दंड, बैठक या अन्य किसी प्रकार का व्यायाम नहीं दिया जा सकता। किसी विषय पर विचार करना

यंत्र को देखकर उसकी बनावट और उसके द्वारा होनेवाले कार्य पर खूब विचार करना, किसी आश्चर्य-जनक बात पर गंभीरता से विचार करना और उसके मूल-तत्त्व की खोज निकालना। यह न समझना चाहिए कि विचार करने तथा मनन करने के लिये कोई बात ही नहीं है। मननशील व्यक्ति के लिये तो प्रत्येक वस्तु विचार करने योग्य है। जैसे, रोटी क्यों फूलती है ? क्या यह कम मनन-योग्य बात है। स्त्रियाँ रात-दिन रोटियाँ बनाती हैं, किंतु इस प्रश्न का उत्तर शायद ही कोई स्त्री दे सकेगी कि "रोटी क्यों फूलती है ?" इस प्रकार प्रत्येक विषय पर विचार करना और यदि खुद के विचारों द्वारा मन की तुष्टि न होती हो, तो अपने से अधिक जानकार के सामने इस विषय की चर्चा चलाकर अंतिम निर्णय तक पहुँचना। इत्यादि मानसिक व्यायामों के द्वारा मनोबल की वृद्धि होती है।

पुस्तकों के पठन-पाठन से भी मन की शक्ति बढ़ती है। जो स्त्रियाँ पुस्तकों को पढ़कर उन पर मनन करती हैं, उनका मन बलवान् बन जाता है। उपदेश देना अथवा उपदेश सुन-कर उस पर विचार करना भी मन का व्यायाम है। स्त्रियों को चाहिए कि शारीरिक व्यायाम के साथ-ही-साथ मानसिक व्यायाम भी करें, और अपने मन को पवित्रता तथा निर्भयता का केंद्र बनावें। जब शारीरिक बल और मानसिक बल

दोनो एकत्र होंगे, तभी सच्ची उन्नति हो सकती है। मुझे आशा है, बहनें मानसिक बल की प्राप्ति के लिये भी प्रयत्न करेंगी।

इन व्यायामों के अतिरिक्त दूसरे अनेक व्यायाम हैं। मजदूर-पेशा स्त्रियाँ टोकरी डालती हैं। पत्थर फोड़ती हैं। लकड़ियाँ काटकर बाजार में बेचने को लाती हैं। जंगल से घास काटकर लाती हैं। चक्कियाँ पीसती हैं। रोटियाँ बनाने की नौकरी करती हैं। चौका-बर्तन करके पेट भरती हैं। दूसरों का पानी भरती हैं। इत्यादि। अनेक ऐसे काम करती हैं, जिनसे उन्हें स्वयं व्यायाम हो जाता है। परंतु ऐसी स्त्रियाँ, जो मजदूर-पेशा नहीं हैं, उन्हें अपने-अपने घरों का काम आलस्य त्यागकर दिलचस्पी के साथ करना चाहिए। आलस्य त्यागकर और मन लगाकर घरू काम करने से शरीर में शक्ति खूब बढ़ जाती है, क्योंकि शारीरिक और मानसिक दोनो व्यायाम साथ-साथ होने लगते हैं। काम को देखकर मुँह छुपाना ठीक नहीं, उसे तो दूने उत्साह से करना चाहिए। परमात्मा ने यह मानव-शरीर आलसी बनकर रहने के लिये नहीं दिया है। यदि उसे आलस में ही डालना होता, तो वह हाथ-पाँव आदि इंद्रियाँ, हाथों में भी कार्य करने के लिये अँगुलियाँ और मस्तिष्क आदि कभी नहीं देता। परमात्मा

की सृष्टि में वही जीवित रह सकता या सुख भोग सकता है, जो व्यायामशील हो। यह संसार आलसी, काहिल और सुस्त मनुष्यों के लिये नहीं है।

स्त्रियाँ यदि चाहें, तो पानी में पैरने का व्यायाम भी कर सकती हैं। रस्सा-खिंचाई, रस्से पर चढ़ना, झूलना, दौड़ना, कूदना आदि व्यायामों को भी कर सकती हैं। सगर्भा होने पर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा व्यायाम न करें, जिससे गर्भ को किसी प्रकार का धक्का पहुँचे, और गर्भ-स्राव अथवा गर्भ-पात हो जाय।

आठवाँ अध्याय

लड़कियों के व्यायाम

जब तक रजोदर्शन न हो, तब तक कन्या-काल माना जाता है। कन्याओं के लिये वे सब व्यायाम हितकर हो सकते हैं, जिन्हें लड़के कर सकते हैं। कन्या-पाठशालाओं में शारीरिक उन्नति के लिये लड़कियों से अवश्य व्यायाम कराना चाहिए। हम देखते हैं कि शिक्षा-विभाग, जितना लड़कों के व्यायाम की तरफ़ ध्यान देता है, उतना लड़कियों के व्यायाम की ओर नहीं। यह पक्षपात-पूर्ण व्यवहार अन्याय है। शिक्षा-विभाग का स्त्री-जाति के प्रति असभ्य अपराध है। वे सब व्यायाम, ड्रिल वग़ैरह कन्याओं से भी कराए जा सकते हैं। जो खेल लड़के खेलते हैं, वे प्रायः सभी खेल कन्याओं के लिये भी उपयुक्त हैं। दौड़-भाग, कूद-फाँद, डंबेल के व्यायाम, आसनों के व्यायाम, पैरेललबार्स के व्यायाम, सिंगलबार (हारिजेंटल बार) का व्यायाम, गोला फेकना, रस्सा खींचना आदि प्रत्येक व्यायाम लड़कियों के लिये भी लाभदायक हैं। ईश्वर वह सुदिन शीघ्र लावे कि फ़ुटबॉल, हॉकी, क्रीकेट वग़ैरह खेलों को हमारी बहनें भी खेलती हुई दिखाई पड़ें।

स्कूल के खेलों के अलावा कुछ घरू खेल भी लड़कियों के होते हैं। उन्हें खेलने देने चाहिए। साथ ही माता-पिता को चाहिए कि अपनी पुत्रियों से, घरू कार्य जैसे चक्की पीसना, पानी भरकर लाना, रोटियाँ बनाना, चौका-बरतन करना इत्यादि कार्य भी समय-समय पर कराया करें, ताकि वे अपनी ससुराल में जाते ही सब काम फ़ौरन् सँभाल लें और बिना आलस्य के आनंद-पूर्वक हँसते-खेलते सारे घर का काम कर डालें। प्यार में अथवा बेपरवाही से अपनी पुत्री को जो माता गृह-कार्य नहीं सिखलाती, वह उसकी माता नहीं है, बल्कि माता-नामधारिणी उसकी दुश्मन है। क्योंकि निकम्मी, ठलवी रहने की आदत बचपन से डाल देने के कारण उसका सारा जीवन का आनंद नष्ट हो जाता है।

गृह-कार्य के अतिरिक्त बालिकाओं को सभ्यता-पूर्ण और बल-वर्धक खेल खेलने से रोकना नहीं चाहिए। माता-पिता को सिर्फ़ ऐसे खेलों के खेलने से रोकना चाहिए, जिनसे किसी प्रकार की हानि होने की संभावना हो। लड़कियों को बचपन में दौड़ने-भागने देना चाहिए। चाहें तो दंड-बैठक और कुश्ती, घोर, मलखंभ वग़ैरह भी करने दें। मासिक धर्म आरंभ होने तक कन्याओं के लिये सभी मर्दाने खेल खेलने देना कोई बुरी बात नहीं है। इस उम्र में कन्याएँ यदि शारीरिक और मान-

सिक बल, अच्छी प्रकार प्राप्त कर लेंगी, तो जीवन-भर बड़े आनंद में रहेंगी।

लड़कियों के सब खेलों को यहाँ लिखना एक प्रकार से व्यर्थ-सा ही है। क्योंकि खेल भी प्रांतीय होते हैं। पंजाब में जो खेल खेले जाते हैं, मदरास में उनसे भिन्न कोई दूसरे ही खेल होते हैं। राजपूताना और बंगाल के खेल एक-से नहीं होते। यू० पी० और गुजरात के खेलों में भिन्नता दिखाई पड़ती है, अतएव कन्याओं के खेलों को यहाँ लिखकर सम-झाना यद्यपि असंभव नहीं है, तथापि कष्ट-साध्य और व्यय-साध्य कार्य अवश्य है। इसलिये अपने-अपने प्रांतीय उत्तम खेलों को, जो लाभदायक और सभ्यता-पूर्ण हों, प्रत्येक लड़की को नित्य अवश्य खेलने चाहिए। इस प्रकार नित्य के नियम-बद्ध खेलों के व्यायाम से शरीर में फुर्ती, तेजी, चपलता, सौंदर्य, बल और बुद्धि का विकास होता है।

लड़कियों को प्रायः नाचने का बहुत शौक़ होता है। नाचना एक उत्तम व्यायाम है। नाचने में भी मेहनत होती है। इसमें शारीरिक और मानसिक, दोनो प्रकार का व्यायाम होता है। नाचने आदि की क्रिया से—अंग-भंगी से—शरीर को मेहनत पड़ती है, और ताल पर विचार रखने से मान-सिक श्रम भी हो जाता है। नाचना भारत की प्राचीन-

अर्थात् एक दूसरे को खींचे हुए रक्खें। पैरों के पंजे दोनो के आमने-सामने मिले हुए हों। अब चक्कर लगाओ। पैर धीरे-धीरे वहीं-के-वहीं पर गोल चक्कर में ताल पर सरकते रहें। यह खेल बड़ा ही नयनाभिराम और अच्छा होता है। चित्र नं० २९ को देखकर यह समझा जा सकता है।

जब एक का हाथ दाहना और दूसरी का बायाँ और एक का बायाँ तथा दूसरी का दाहना आपस में खिंचा होता है, तब चक्कर खाते वक्त दोनों एक साथ हाथों में से भी निकल सकती हैं, अभ्यास हो जाने पर यह हाथों में से निकलते हुए फुग्गी खेलना बड़ा ही अच्छा मालूम होता है।

सारांश यह कि स्त्रियों को और कन्याओं को व्यायाम अवश्य करना चाहिए। व्यायाम का आरंभ कन्या-काल में ही आरंभ कर देना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि बहनें इस पर विचार करेंगी और शीघ्र ही व्यायाम आरंभ करके अपना तथा अपनी भावी संतानों का कल्याण करेंगी।

परिशिष्ट

व्यायाम-विषयक कुछ आवश्यकीय सूचनाओं को हम यहाँ लिखकर, बहनों को सावधान कर देना उचित समझते हैं। आशा है, बहनें निम्न-लिखित सूचनाओं पर विशेष ध्यान रक्खेंगी।

(१) व्यायाम करनेवाली स्त्री को सूर्योदय से पूर्व उठना चाहिए। सूर्योदय के बाद उठनेवाली स्त्रियों को व्यायाम यथेष्ट लाभ नहीं पहुँचाता।

(२) व्यायाम का समय प्रातःकाल ही उत्तम है। यदि सूरज उगने के पहले ही व्यायाम से निपट लिया जाय, तो बड़ी ही अच्छी बात हो।

(३) व्यायाम करनेवाली स्त्री को सफ़ाई की तरफ़ विशेष ध्यान देना चाहिए। आँख, नाक, कान, मुँह, दाँत, हाथ, पैर वगैरह शारीरिक अवयव बहुत शुद्ध रखने चाहिए। विशेषतः दाँतों और मुँह की खूब शुद्धि करनी चाहिए। मुख से दुर्गंध नहीं आनी चाहिए। जिनका मुँह साफ़ नहीं रहता, उनका शरीर प्रायः रोगी रहता है। व्यायाम से उन रोगों का नाश नहीं होता, बल्कि व्यायाम को बदनामी मिलती है।

(४) स्त्रियों के सिर पर बड़े लंबे-लंबे बाल होते हैं, अतः एव सिर को और बालों को साफ़-सुथरे रखना चाहिए। व्यायाम के बाद बालों में खोपड़े आदि का शुद्ध तेल लगाना चाहिए। घी वग़ैरह लगाना ठीक नहीं। बालों को सँवारकर रखना चाहिए, और व्यायाम के समय उन्हें किसी रूमाल वग़ैरह से बाँध देना चाहिए।

(५) स्नान नित्य करना चाहिए, और शीतल जल से ही करना चाहिए। व्यायाम में और स्नान में ३०-४० मिनट का अंतर अवश्य रहना चाहिए। पहले व्यायाम से [illegible] ठीक है। स्नान करते समय अच्छी तरह से बहुत-से [illegible] शरीर के प्रत्येक अंग को खूब मसल-रगड़कर धोना चाहिए, यहाँ तक कि रगड़ने से शरीर की त्वचा लाल हो जाए, चाहिए।

(६) स्नान के पूर्व या व्यायाम के समय कभी-कभी शरीर पर शुद्ध तेल की मालिश कर लेना चाहिए। ठंड के मौसिम में शरीर पर तेल अवश्य लगाना चाहिए। गर्मी और वर्षा-ऋतु में तेल की आवश्यकता ही हो, तो लगाना चाहिए, अन्यथा कोई आवश्यकता नहीं। तिलों का या सरसों का तेल अच्छा होता है।

(७) भोजन सादा और जल्दी पचनेवाला होना चाहिए।

उसमें पौष्टिक पदार्थ जैसे घृत, दुग्ध, फल, शाक वग़ैरह अवश्य होने चाहिए। ज्यादातर फल-मूल, भाजी, हरे शाक वग़ैरह खाने चाहिए। मिर्च-मसाले तथा उत्तेजक पदार्थ और मादक द्रव्यों से हमेशा बचना चाहिए।

(८) व्यायाम खुले स्थान में ऐसी जगह करना चाहिए, जहाँ शुद्ध वायु और सूर्य का प्रकाश अच्छी प्रकार आता हो। जिस जगह व्यायाम किया जाय, वह स्थान अत्यंत साफ़-सुथरा हो, जहाँ व्यर्थ का सामान और चीज़ों की भरमार न हो।

(९) व्यायाम के बाद जब तक शरीर की गर्मी कम न हो जाय, तब तक कोई वस्तु खाना तथा पीना ठीक नहीं है।

(१०) यदि व्यायाम बंद कमरे में किया हो, तो एक-दम खुली हवा में कदापि नहीं आना चाहिए।

(११) भोजन के तीन घंटे आगे-पीछे व्यायाम करना चाहिए।

(१२) व्यायाम के समय कपड़े तंग नहीं पहनने चाहिए। मर्दों की भाँति स्त्रियों को लँगोट बाँधने की आवश्यकता नहीं है।

(१३) व्यायामशील स्त्रियों को ज़ेवर कम पहनने चाहिए। और प्रत्येक आभूषण ऐसा होना चाहिए, जो व्यायाम के समय, यदि आवश्यकता हो, तो तत्काल निकाला जा सके।

व्यायाम-रूपी भूषण से शरीर में जो सौंदर्य आता है, वह चाँदी-सोने के जेवरों से नहीं आ सकता।

(१४) इंद्रियों का संयम करना चाहिए। ब्रह्मचर्य-व्रत पालन करने का ध्यान रखना चाहिए।

(१५) सगर्भा होने पर व्यायाम नहीं करना चाहिए। कई व्यायाम ऐसे हैं, जो गर्भ रहने के बाद से ही नहीं किए जाने चाहिए; और कई ऐसे हैं, जो गर्भ के २-४ मास तक किए जा सकते हैं। हमने व्यायामों के साथ-साथ जहाँ-तहाँ इस बात की भी सूचना दे दी है।

(१६) गर्भ के दिनों में प्राणायाम हमेशा किया जा सकता है। चाहो तो प्रसव के बाद एक-दो दिन तक मत करो।

(१७) मासिक धर्म के समय में कोई-सा भी व्यायाम नहीं करना चाहिए। हाँ, प्राणायाम कर सकती हो।

(१८) प्रसव के ३ महीने बाद तक भी व्यायाम आरंभ नहीं करना चाहिए।

(१९) जब कभी व्यायाम आरंभ किया जाय, तब पहले दिन बहुत थोड़ा करके धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाना चाहिए।

(२०) शक्ति से अधिक व्यायाम नहीं करना चाहिए। शक्ति से आधा ही व्यायाम लाभदायक होता है।

(२१) रात्रि में कभी व्यायाम नहीं करना चाहिए।

(२२) जब छाती और बगलों में पसीने की बूँदें झलकने लग जायँ और तालू, मुँह सूखने लगे, तब व्यायाम बंद कर देना चाहिए। इससे अधिक व्यायाम हानि पहुँचाता है।

(२३) गर्मी के मौसिम में सूर्योदय के बाद व्यायाम न करके सूर्योदय से पहले ही कर लेना चाहिए। बरसात और गर्मियों में व्यायाम अधिक नहीं करना चाहिए।

(२४) व्यायाम के समय बातचीत नहीं करनी चाहिए। साँस नाक से लेना और छोड़ना चाहिए। मुँह खुला रखकर व्यायाम करने से कोई लाभ नहीं।

(२५) व्यायाम करते समय यह इच्छा रखनी चाहिए कि मैं ईश्वरीय महान् शक्ति को अपने शरीर में आकर्षण कर रही हूँ। मैं रोगों को नष्ट करके नीरोग बन रही हूँ। मैं बल संचय करके महान् बलवान् बनूँगी, इत्यादि।

(२६) व्यायाम को गुप्त रखना चाहिए।

(२७) व्यायाम को नित्य नियम-पूर्वक ठीक निश्चित समय पर करना चाहिए। चाहे जिस वक्त और मन चाहा जब किया, और मन चाहा जब न किया, ऐसा करने से लाभ की जगह हानि होने लगती है।

(२८) व्यायाम के लिये घड़ी की सहायता यदि ली जाया करे, तो बहुत ही अच्छी बात है।

(२९) बेगार समझकर या ऊपरी मन से व्यायाम करने से कुछ भी लाभ नहीं होता।

(३०) जिस व्यायाम के करने की जो विधि बताई है, उसी के अनुसार व्यायाम करना चाहिए।

(३१) किसी दिन कम और किसी दिन ज्यादह इस तरह व्यायाम करने से हानि होती है।

(३२) जल्दी सोकर जल्दी उठना चाहिए। बिलकुल कम या बिलकुल अधिक सोने से शरीर को हानि होती है। व्यायाम करनेवाली स्त्रियों को ठीक समय पर सोने और ठीक समय पर उठने की आदत डालनी चाहिए।

(३३) मानसिक व्याधियों से सदा दूर रहना चाहिए।

(३४) मानसिक व्यायाम अवश्य करते रहना चाहिए।

(३५) किसी भी व्यायाम के बाद तत्काल बैठ जाना या सो जाना ठीक नहीं है। जब तक शरीर में व्यायाम की गर्मी रहे, तब तक धीरे-धीरे टहलते रहना चाहिए।

सावित्री-सत्यवान

सावित्री और धर्मराज

"सती-रत्न-माला" का १ ला रत्न।

सावित्री-सत्यवान

स्त्री-शिक्षा-विषयक सचित्र भारतीय आदर्श

लेखक—

पं॰ कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय

प्रकाशक

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,

२०३, हरिसन रोड,

कलकत्ता।

शाखा—ज्ञानवापी, काशी,

प्रथम बार] १९८६ [मूल्य ।≡)

प्रकाशक—
बैजनाथ केडिया,
प्रोप्राइटर—
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
२०३, हरिसन रोड,
कलकत्ता।

मुद्रक—
किशोरीलाल केडिया,
"वणिक् प्रेस"
१, सरकार लेन,
कलकत्ता।

उपहार
श्री

सावित्री-सत्यवान

सावित्री-सत्यवान

—:*०*:—

विषय-प्रवेश

क समय था जब इसी भारतवर्षके लोग— हमारे पूर्व-पुरुष—अपने ज्ञान-गौरव, बल-वैभव, सभ्यता-शिष्टता, दया-दाक्षिण्य आदि मनुष्योचित समस्त गुणोंसे अलंकृत होकर सारे संसारके सिरताज माने जाते थे। परन्तु आज समयके फेरसे हम अपनी समस्त विभूतियोंको विस्मृतिके गहरे गढ़ेमें डाल, अपने पूर्वरूपको भूल, अपना सब कुछ गँवाकर, सब ऐश्वर्यों से वञ्चित होकर एक पद-दलित, पराश्रित और पराधीन जातिके रूपमें परिणत हो गये हैं। यही कारण है, कि जब कभी प्राचीन भारतके विगत वैभवकी झलक क्षण भरके लिये भी हमारी आंखोंके सामने आती है, तब एक ओर जहां करुणा उमड़ आती है और हम आंसुओंकी नदी बहाने लगते हैं वहां दूसरी ओर हमारे अन्तस्तलमें पुनरुद्धार और पुनरुत्थान-की परिकल्पनाएं भी जागृत हो उठती हैं। पर अपने उस पूर्व-गौरवकी झलक हमें कहां दिखाई देती है? हमारे पूर्वजों द्वारा रचित उन थोड़े-से बचे-खुचे अमूल्य ग्रन्थ-रत्नोंमें ही वह देखनेको मिलती है, जो विजातीय शासकोंके समयमें नष्ट-भ्रष्ट होनेसे बच

गये हैं। इन ग्रन्थोंमें महाभारत सर्वमान्य और सर्वश्रेष्ठ है। सावित्रीकी कथा यों तो अन्य कई प्राचीन ग्रन्थोंमें मिलती है, पर महाभारतमें विशेष विस्तारके साथ है। महाभारतके "आरण्यक" पर्वमें कई अध्यायोंमें यह कथा समाप्त हुई है।

कथा तो कथा ही है। यह सत्य घटना है या कविकी कल्पना—इस दुविधामें पड़ना ठीक नहीं। न इससे कोई लाभ ही है। लाभ तो कथामें वर्णित उच्चतम आदर्श ही है। उसे ही ग्रहण करना चाहिये। उसके उन्नत भावोंको अपने हृदयमें अंकित करना ही कथा पढ़नेका ध्येय होना चाहिये। कथाओंके लिखे जानेमें लेखकका उद्देश्य भी यही होता है।

सावित्रीका चरित्र नारी-चरित्रका, पातिव्रत-धर्मका, जीवन-संगिनीका और सच्ची सहधर्मिणीका एक अपूर्व उज्ज्वल आदर्श है। उसका आदर्श पति-प्रेम प्रत्येक स्त्री-पुरुषके हृदयको पवित्र करता है, उसकी सफलता निराश हृदयमें आशाका संचार करती है और एक अपूर्व शान्ति प्रदान करती है। सावित्रीकी कष्टसहिष्णुताकी तो कोई सीमा ही नहीं दिखाई देती। क्योंकि वह अपने पतिके प्रेममें अपने आपको इस तरह भुला देती है कि उसे अपने कष्टोंका कुछ पतातक नहीं चलने पाता है! वास्तवमें जहां सच्चा प्रेम होता है, वहां असाध्य भी साध्य हो जाता है—असम्भव भी सम्भव हो जाता है। अस्तु। इस विषयको यहीं छोड़, हम अब सावित्रीका पावन चरित्र आरम्भ करते हैं।

———

सावित्रीका जन्म

१

ज-कल जिस प्रान्तको हम मदरास कहते हैं, उसका पुराना और असली नाम मद्रराज्य था। मद्र-राज्य शब्द ही टूट-फूटकर अब मदरास हो गया है। स्थानों और देशोंके नाम प्राय: इसी प्रकार बदला करते हैं। भारतवर्षके तो अधिकांश प्रान्तों, नगरों, ग्रामों आदिके नाम एकदम परिवर्त्तित हो गये हैं। जो हो, इसी मद्रराज्यके एक महाप्रतापी,प्रजापालक, न्यायनिष्ठ और धर्मात्मा राजा थे। उनका नाम अश्वपति था।

महाराज अश्वपतिके राज्यमें बसनेवाले सभी प्रजाजन परम सन्तुष्ट और सुखी थे। किसीको किसी बातका कष्ट नहीं था। वे जैसाही सद्व्यवहार आपसमें रखते थे, वैसा ही राजा और राज्यके इष्टका भी सदा ध्यान रखते थे। अपने राजाके प्रति उनकी अपार श्रद्धा और भक्ति थी, राजा भी अपने प्राणोंसे बढ़कर अपने प्रजाजनोंको जानते और मानते थे। जहाँ दोनों ओरसे ऐसा सद्भाव बना रहता है, वहां शान्ति न होगी तो कहां होगी?

सुयोग्य राजा और दूरदर्शी मन्त्रियोंके द्वारा शासित मद्र-राज्यकी उन्नतिकी सीमा नहीं थी। वहांके कृषक कभी अतिवृष्टि

गये हैं। इन ग्रन्थोंमें महाभारत सर्वमान्य और सर्वश्रेष्ठ है। सावित्रीकी कथा यों तो अन्य कई प्राचीन ग्रन्थोंमें मिलती है, पर महाभारतमें विशेष विस्तारके साथ है। महाभारतके "आरण्यक" पर्वमें कई अध्यायोंमें यह कथा समाप्त हुई है।

कथा तो कथा ही है। यह सत्य घटना है या कविकी कल्पना—इस दुविधामें पड़ना ठीक नहीं। न इससे कोई लाभ ही है। लाभ तो कथामें वर्णित उच्चतम आदर्श ही है। उसे ही ग्रहण करना चाहिये। उसके उन्नत भावोंको अपने हृदयमें अंकित करना ही कथा पढ़नेका ध्येय होना चाहिये। कथाओंके लिखे जानेमें लेखकका उद्देश्य भी यही होता है।

सावित्रीका चरित्र नारी-चरित्रका, पातिव्रत-धर्मका, जीवन-संगिनीका और सच्ची सहधर्मिणीका एक अपूर्व उज्ज्वल आदर्श है। उसका आदर्श पति-प्रेम प्रत्येक स्त्री-पुरुषके हृदयको पवित्र करता है, उसकी सफलता निराश हृदयमें आशाका संचार करती है और एक अपूर्व शान्ति प्रदान करती है। सावित्रीकी कष्टसहिष्णुताकी तो कोई सीमा ही नहीं दिखाई देती ; क्योंकि वह अपने पतिके प्रेममें अपने आपको इस तरह भुला देती है कि उसे अपने कष्टोंका कुछ पतातक नहीं चलने पाता है! वास्तवमें जहां सच्चा प्रेम होता है, वहां असाध्य भी साध्य हो जाता है—असम्भव भी सम्भव हो जाता है। अस्तु। इस विषयको यहीं छोड़, हम अब सावित्रीका पावन चरित्र आरम्भ करते हैं।

सावित्रीका जन्म

१

आज-कल जिस प्रान्तको हम मदरास कहते हैं, उसका पुराना और असली नाम मद्रराज्य था। मद्र-राज्य शब्द ही टूट-फूटकर अब मदरास हो गया है। स्थानों और देशोंके नाम प्रायः इसी प्रकार बदला करते हैं। भारतवर्षके तो अधिकांश प्रान्तों, नगरों, ग्रामों आदिके नाम एकदम परिवर्त्तित हो गये हैं। जो हो, इसी मद्रराज्यके एक महाप्रतापी, प्रजापालक, न्यायनिष्ठ और धर्मात्मा राजा थे। उनका नाम अश्वपति था।

महाराज अश्वपतिके राज्यमें बसनेवाले सभी प्रजाजन परम सन्तुष्ट और सुखी थे। किसीको किसी बातका कष्ट नहीं था। वे जैसाही सद्व्यवहार आपसमें रखते थे, वैसा ही राजा और राज्यके इष्टका भी सदा ध्यान रखते थे। अपने राजाके प्रति उनकी अपार श्रद्धा और भक्ति थी, राजा भी अपने प्राणोंसे बढ़कर अपने प्रजाजनोंको जानते और मानते थे। जहाँ दोनों ओरसे ऐसा सद्भाव बना रहता है, वहां शान्ति न होगी तो कहां होगी?

सुयोग्य राजा और दूरदर्शी मन्त्रियोंके द्वारा शासित मद्र-राज्यकी उन्नतिकी सीमा नहीं थी। वहांके कृषक कभी अतिवृष्टि

या अनावृष्टिकी शिकायत नहीं करते थे। न वे अतिरिक्त कर-भारसे आर्त्त आकर त्राहि-त्राहिकी पुकार ही मचाते थे। वे कृषिकार्यकी सुन्दर शिक्षा पाते और बड़ी दक्षताके साथ खेती करते थे। अन्नादि इतना उत्पन्न करते कि राज्यकी मांग तो पूरी होती ही थी, अन्य राज्योंमें भी उनकी उपज चलान जाती थी और इससे राज्यकी श्रीवृद्धि होती थी। यही नहीं, वे उत्तम अन्न इस परिमाणमें उत्पन्न करते और उसे ऐसे यत्नसे सुरक्षित रखते, कि जब दैव-दुर्योगसे यदि दुष्काल भी पड़ता तो राज्यमें किसीको अन्नका कष्ट नहीं होने पाता। और इस प्रकार वहां कभी अकाल पड़नेका पता ही नहीं चलने पाता था।

वहांके व्यवसायी भी बड़े सत्यनिष्ठ होते थे। दगाबाजी या धोखेबाजीका व्यवसाय करना तो वे जानते ही नहीं थे। आज-कल जैसे अधिकांश वस्तुओंमें मिलावट करके, वस्तुकी उपका-रिताको छिपाकर अधिक लाभकी आशासे खराब चीजको अच्छी बताकर बहुतेरे व्यवसायी सत्य और धर्मका गला घोंटते हैं, महाधिपति अश्वपतिके राज्यमें वैसे व्यवसायी नहीं होते थे। उनके व्यापार-वाणिज्यकी कुञ्जी सच्चाई और ईमानदारीपर होती थी। इसीसे दूर-दूरके देशोंके लोग भी उनका विश्वास करते और उनसे माल लेने या उन्हें दाम देनेमें तनिक भी हिचकते न थे। देश-विदेशोंमें उनका विश्वास जमा रहता था और इस प्रकार उनके पास धन भी सर्वत्रसे मानों आप-ही-आप चला आता था। इसी प्रकार धन-वैभवसे वे महाराज्यकी शोभा बढ़ाते थे।

क्षत्रियोंका तो कर्त्तव्य ही देश-रक्षाके लिये आत्मोत्सर्ग करना था। वे अपने इस कर्त्तव्यमें सदा तत्पर रहते थे। उनकी तत्परताके कारण राज्यमें कभी अनाचार-अत्याचार अपना सर उठाने नहीं पाते थे। कहीं लूट-मार, खून-खराबी या राहज़नी नहीं होने पाती थी। सबकी सम्पत्ति सदा सुरक्षित रहती थी। बल, वीरता तथा शस्त्रास्त्रोंके प्रयोगकी कुशलतामें वे अपना सानी नहीं रखते थे। राज्य अथवा प्रजाजनोंकी रक्षाके लिये वे किसी बाहरी शत्रुको कभी आक्रमण करने नहीं देते थे। जब काम पड़ता तभी वे देश-रक्षाके लिये हँसते-हँसते बलिवेदीपर चढ़ जाते थे। शत्रुसे डरना तो वे जानते ही नहीं थे। इन कारणोंसे दूर-दूर तक उनकी वीरता, धीरता, कर्त्तव्य-परायणता आदिकी ख्याति फैली हुई थी।

ब्राह्मणोंका कर्त्तव्य तो इनसे भी आगे बढ़ा हुआ था। उनका तो जीवन ही सत्य, धर्म, ज्ञान-विज्ञान, न्याय, परोपकार आदि सद्वृत्तियोंसे ओत-प्रोत होता था। एक ओर जहां वे त्यागके प्रतिमूर्त्ति-स्वरूप होते थे, वहां दूसरी ओर कठोर तपस्यामें सदा निरत रहते थे। राज्यका, देशका, संसारका कल्याण ही उनके जीवनका व्रत था। लोगोंके कल्याणके लिये वे मानो जन्म लेते, जीवन धारण करते और अन्तमें एक अपूर्व आदर्श छोड़कर संसार त्याग करते थे। धर्म, कर्म आदिकी शिक्षा देना ही उनका कर्त्तव्य था। प्रत्येक वर्णको अपने-अपने कर्त्तव्य-पथपर दृढ़ रखना उनका लक्ष्य होता था। वे आप तो

सुखकी आशा भी नहीं करते थे, पर दूसरोंको दुःख न पहुंचे और सदा सुखी रहें—इस बातको सदा ध्यानमें रखते थे। राज्यमें ईर्षा-द्वेष, हिंसा-मात्सर्य, वैर-विरोध आदि दुर्गुणोंका प्रवेश न होने पावे और सभी वास्तविक सुख-शान्तिका आनन्द भोग करें—यही ब्राह्मणोंकी चेष्टा थी।

जहां इस प्रकार सभी लोग अपने-अपने कर्मोंमें सदा संलग्न और तत्पर रहते थे, वहां किसी बातकी कमी क्योंकर हो सकती थी? राजा अश्वपति अपनेको प्रजाका प्रतिनिधि, रक्षक, पालक और सेवक समझते थे। उन्हें राज्य-ऐश्वर्य पानेका तनिक भी अहंकार नहीं था। उनका धन-भाण्डार सदा परिपूर्ण रहता था, पर उसे वे प्रजाजनोंकी थाती समझते और उसकी रक्षा करना अपना कर्त्तव्य मानते थे। अपने धनागारके अनन्त धन-रत्नोंको वे अपनी विलास-वासना परितृप्त करनेका साधन न तो समझते थे और न कभी प्रजाकी इच्छाके विरुद्ध उस धनका दुरुपयोग ही करते थे।

महाराज अश्वपतिकी सहधर्मिणी महारानी मालवी परम साध्वी, विदुषी, पतिगतप्राणा और आदर्श महिला थीं। सैकड़ों दास-दासियोंके सदा सेवा-तत्पर रहते हुए भी वे स्वयं सब प्रकारसे पतिकी सेवामें निरत रहती थीं। महाराज अश्वपति भी कभी कोई काम ऐसा नहीं करते अथवा ऐसी कोई बात नहीं कहते जिससे रानीके मनको तनिक भी चोट पहुंचे। पति-पत्नीमें जैसा सद्भाव होना चाहिये, इस राज-दम्पतीमें वह पूर्ण मात्रामें

विद्यमान था। इन कारणोंसे महाराज अश्वपतिका दाम्पत्य जीवन भी परम सुखद और आनन्दवर्द्धक था। जहां पति-पत्नी दोनों एक-दूसरेके सुखोंकी कामनामें ही अपना सुख मानता हो, वहां दुःख, क्लेश या कष्टका काम ही क्या है ?

इस प्रकार हम देखते हैं, कि मद्रराज्य एक धन-धान्यपूर्ण और सुख-शान्तिपूर्ण आदर्श राज्य था। वहां सभी सुखी थे—सभी सन्तुष्ट थे।

२

परन्तु इन तमाम सुखद सामग्रियोंके उपस्थित रहते हुए और सम्पूर्ण वातावरणके सब प्रकारसे अनुकूल होते हुए भी महाराज अश्वपति और महारानी मालवीके हृदयोंमें एक अभाव सदा बुरी तरह खलता रहता था। पर इस मनोवेदनाको वे सदा मनमें ही रखते थे। कभी किसी औरपर प्रकट नहीं करते थे। हां, राजा-रानी आपसमें कभी-कभी इस दुःखके विषयमें बातें करते और दोनों इस इस प्रकार अपने हृदयका दुःख-भार हल्का करनेको चेष्टा करते थे। वास्तवमें दुःखका कारण भी पर्याप्त था। उनके कोई सन्तान नहीं थी।

जब राजा-रानीकी उम्र आधीसे अधिक बीत गयी, और उन्हें सन्तानके मुख-दर्शनका सौभाग्य प्राप्त होनेकी कोई आशा न देख पड़, तब पति-पत्नीने इस बातपर बड़ी गम्भीरताके साथ विचार

किया। निश्चय हुआ कि महाराज अश्वपति प्रजाजनोंकी एक विराट् सभा बुलायें और उस सभामें अपने सन्तानहीन होनेकी बात प्रगट करें और उन्हें अभीसे भविष्यके लिये सावधान और सतर्क रहनेकी सूचना दे दें। इस निश्चयके अनुसार शुभ मुहूर्तमें सभा बुलायी गयी।

राज्यभरके प्रतिनिधियोंके बैठने योग्य विशाल मण्डप तैयार हुआ। दूर-दूरसे आये हुए प्रतिनिधियोंको ठहराने और उनका आतिथ्य-सत्कार करने तथा भोजनादिका प्रबन्ध करनेका भार भिन्न-भिन्न अमात्योंने लिया। राज्यके कोने-कोनेमें इस सभाकी सूचना कर दी गयी, प्रतिनिधियोंके पास निमंत्रण-पत्र भेजे गये। ब्राह्मण-पण्डितों, ऋषि-मुनियों और साधु-संन्यासियोंको भी सादर निमन्त्रित किया गया, क्योंकि संसारसे उदासीन और विरक्त रहनेपर भी वे लोग संसारका, देशका और राज्यका हित चाहते थे। आजकलकी तरह वे गृहस्थोंके भार-स्वरूप नहीं थे।

निश्चित तिथिपर सभाका अधिवेशन आरम्भ हुआ। सब लोग यथायोग्य स्थानोंपर बैठाये गये। मांगलिक कृत्य होनेके बाद प्रधान अमात्यने उठकर उपस्थित लोगोंको सभाका उद्देश्य समझा दिया। इसके बाद महाराज अश्वपतिने सभाके मंचपर आकर बड़ी विनम्रताके साथ सब लोगोंका स्वागत किया और कहा,—

"मैं राज्यके कल्याणके विचारसे ही आप लोगोंको यहां बुलानेकी धृष्टता की है और आप सबने कष्ट किया है। पर यह

देखकर मुझे परम प्रसन्नता हो रही है, कि आप सब लोगोंको राज्य-रक्षाके लिये उतनी ही चिन्ता है जितनी मुझे। यदि ऐसा न होता, तो अपने-अपने कामोंको स्थगित करके आप लोग यहां आनेका कष्ट ही क्यों उठाते? अब मेरा निवेदन यह है, कि मेरी उम्र आधीसे अधिक बीत चुकी है, मैं अबतक निस्सन्तान हूं, यह आप लोगोंको मालूम ही है। आप लोगोंने राज्य-शासन और संचालनका जो भार मेरे कन्धोंपर सौंप रखा है, उसे मैं अब और कबतक लिये रह सकूंगा? मेरे बाद यह भार कौन लेगा? मुझे निरन्तर यही चिन्ता घेरे रहती है। मैं इससे छुटकारा पाना चाहता हूं और आशा करता हूं कि आपलोग मुझे इस चिन्तासे मुक्त करनेके विषयमें अपनी-अपनी मूल्यवान सम्मतियां प्रदान कर कृतार्थ करेंगे। इस राज्यके सुशासनका दायित्व अगर मेरे ऊपर है, तो इसके सुशासित होनेका श्रेय आप लोगोंपर है। अतः मेरे साथ-साथ इस विषयमें विचार करना आपका भी कर्त्तव्य और धर्म है। आपको पहलेसे सावधान कर देना मेरा कर्त्तव्य था और मैंने यह सभा करके उसे पूरा कर दिया। अतः अब आप लोग अपने विचार प्रकट करें और जो कुछ करना उचित प्रतीत हो वह मुझे आज्ञा करें।"

राजाके इन वाक्योंका उपस्थित प्रजा-प्रतिनिधियोंपर बड़ा ही गहरा प्रभाव पड़ा। राजाके बैठ जानेपर अन्यान्य विद्वानों, पण्डितों आदिने अपने-अपने विचार प्रकट किये। कई दिनोंतक

सावित्रीका बालपन

महाराज अश्वपतिने पुत्रकी प्राप्तिके लिये अठारह वर्षोंकी कठोर तपस्या की थी। पर उन्हें पुत्रके स्थानपर कन्या मिली। इसके लिये उनको कोई विशेष दुःख नहीं हुआ। उन दिनों आजकी तरह कन्याओंको पुत्रोंकी अपेक्षा हीन नहीं माना जाता था और न लोग कन्याओंके प्रति उपेक्षाकी दृष्टिसे ही देखते थे। पुत्र हो या कन्या, सन्तान तो दोनों ही हैं। महाराज अश्वपतिने सोचा यह देवताका प्रसाद है। यदि मैं इस कन्याका ही उचित रूपसे लालन-पालन करूं, इसकी शिक्षा-दीक्षाका समुचित प्रबन्ध कर दूं, इसे नार्योचित समस्त सद्गुणोंसे परिपूर्ण कर सकूं, तो क्या इसके द्वारा ही मेरी वंश-प्रतिष्ठा संसारमें अमिट होकर स्थापित नहीं हो सकती? राज्य-संचालन तो एक साधारण काम है। मैं इसे ऐसी शिक्षा दूं, कि यह कन्या ही अपनी अपूर्व प्रतिभासे संसारको आलोकित कर दे!—सन्तानको गौरवान्वित देखनेकी अपेक्षा माता-पिताके लिये और कौन-सी बात अधिक सुखकर हो सकती है!

इधर पिताका मनोभाव ऐसा था, तो उधर विदुषी महारानी भी अपनी उस कन्याको ही पुत्रोंसे भी बढ़कर मानती थीं। वे बड़े आदर-यत्नसे उसका लालन-पालन करने लगीं। उसे सर्वगुण-सम्पन्ना, सर्व-सुलक्षणा बनानेके विषयमें वे कितना

सावित्री-सत्यवान

"माता-पिताके आदर-यत्नसे बालिका सावित्री लालित-पालित होने लगी।" [पृष्ठ—२०

करने लगीं। जहां माता-पिताके हृदयमें सन्तानके प्रति ऐसा भाव हो, वहां यदि सन्तान माता-पिताका मुख उज्ज्वल करनेवाली न हो तो कहां हो? माताके पवित्र दुग्ध-पानके साथ-साथ ही सावित्रीको वह ज्ञान प्राप्त होने लगा हो, जिसके द्वारा आगे चलकर उसने संसारको चकित कर दिया, तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है।

राजकुमारी सावित्री दिन-दिन शुक्ल-पक्षकी चन्द्रकलाकी तरह बढ़ने लगी। उसका वर्ण तप्त कांचनकी तरह था, नेत्र कमलके सदृश थे और भोली-भाली मुखश्रीमें एक अपूर्व दिव्य सौन्दर्य था। शैशवमें ही वह मूर्त्तिमती स्वर्गीय प्रतिमा-सी प्रतीत होती थी। जो कोई उसे देखता वह यही कहता कि सम्भवतः किसी देव-कन्याको ही सावित्रीदेवीने राजाके यहाँ भेज दिया है।

माता-पिता और पुरजन-परिजनके आदर-यत्नसे बालिका सावित्री लालित-पालित होने लगी। रूप-गुण दोनोंमें वह समान रूपसे उन्नति करने लगी। कुछ बड़ी होनेपर विद्या-शिक्षाके लिये सब प्रकारके प्रबन्ध कर दिये गये। इधर इसे विभिन्न कलाओं और विद्याओंकी शिक्षा मिलने लगी और उधर मातासे पातिव्रत्य धर्म, चरित्र-गठन, दया-दाक्षिण्य आदि गुणोंको ग्रहण करने लगी।

वास्तवमें विद्याध्ययनका जितना असर मानव-हृदयपर पड़ता है, उसकी अपेक्षा कहीं अधिक बलवान् प्रभाव माता-पिताके [illegible]र्शोंका पड़ता है। और यह भी पिताकी

अपेक्षा माताका प्रभाव और भी जबर्दस्त होता है। उभय प्रकारकी शिक्षाओंके संमिश्रणने सावित्रीको सरलता और गम्भीरता विनम्रता और विवेकशीलता आदि गुणोंसे परिपूर्ण कर दिया। पर इन सब गुणोंकी अपेक्षा जिस गुणकी उसपर गहरी छाप पड़ी थी, वह था पातिव्रत्य और अपूर्व मनोबल।

इसीलिये जब कभी कोई ऋषि या मुनि अतिथिके रूपमें महाराज अश्वपतिके यहां आते, तो वे सावित्रीको देखकर यही कहते, "समझमें नहीं आता कि इस परम रूपवती और गुणवती बालिकाको लक्ष्मी कहें या सरस्वती!"

सत्यवान्‌के दर्शन

१

शव और बाल्यकाल पूरा कर सावित्रीने किशोरावस्थामें पदार्पण किया। इस अवस्थामें आते ही बालिकाओंमें स्वभावतः कई तरहके परिवर्तन दिखाई देने लगते हैं। सावित्रीमें भी वे परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे। अब उसमें बाल-सुलभ चंचलता नहीं रही। उसकी जगह कुछ अंशोंमें गम्भीरताने, कुछ अंशोंमें विनम्रताने और कुछ अंशोंमें रमणी-सुलभ लज्जाने ले ली। विद्याध्ययन और सुशिक्षाने उसके मनोभावोंको अधिकाधिक पवित्र और अधिकाधिक उन्नत बनाना शुरू किया।

एक तो वह आप ही अत्यन्त सुन्दर थी, किशोरावस्थाने आकर मानो उसमें और भी माधुर्य भर दिया। उसकी विमल कान्तिमें एक अपूर्व स्वर्गीय द्युतिका समावेश होने लगा। उसके सुन्दर, सुकोमल, सुगठित, उपमा-रहित शरीरपर मानो एक स्वर्गीय लावण्य बरसने लगा। जो कोई उसकी इस सुन्दरताको देखता वही पहले तो चकित-विस्मित और स्तम्भित-सा रह जाता था; फिर बादको उसे सावित्रीमें एक अलौकिक दिव्य भाव दिखाई देने लगता।

माता-पिताके आदेशानुसार वह अब बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ

अपेक्षा माताका प्रभाव और भी जबर्दस्त होता है। उभय प्रकार-की शिक्षाओंके संमिश्रणने सावित्रीको सरलता और गम्भीरता विनम्रता और विवेकशीलता आदि गुणोंसे परिपूर्ण कर दिया। पर इन सब गुणोंकी अपेक्षा जिस गुणकी उसपर गहरी छाप पड़ी थी, वह था पातिव्रत्य और अपूर्व मनोबल।

इसीलिये जब कभी कोई ऋषि या मुनि अतिथिके रूपमें महा-राज अश्वपतिके यहां आते, तो वे सावित्रीको देखकर यही कहते, "समझमें नहीं आता कि इस परम रूपवती और गुणवती बालिकाको लक्ष्मी कहूं या सरस्वती ?"

सत्यवान्‌के दर्शन

१

शैशव और बाल्यकाल पूरा कर सावित्रीने किशोरावस्थामें पदार्पण किया। इस अवस्थामें आते ही बालिकाओंमें स्वभावतः कई तरहके परिवर्तन दिखाई देने लगते हैं। सावित्रीमें भी वे परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे। अब उसमें बाल-सुलभ चंचलता नहीं रही। उसकी जगह कुछ अंशोंमें गम्भीरताने, कुछ अंशोंमें विनम्रताने और कुछ अंशोंमें रमणी-सुलभ लज्जाने ले ली। विद्याध्ययन और सुशिक्षाने उसके मनोभावोंको अधिकाधिक पवित्र और अधिकाधिक उन्नत बनाना शुरू किया।

एक तो वह आप ही अत्यन्त सुन्दर थी, किशोरावस्थाने आकर मानो उसमें और भी माधुर्य भर दिया। उसकी विमल कान्तिमें एक अपूर्व स्वर्गीय द्युतिका समावेश होने लगा। उसके सुन्दर, सुकोमल, सुगठित, उपमा-रहित शरीरपर मानो एक स्वर्गीय लावण्य बरसने लगा। जो कोई उसकी इस सुन्दरताको देखता वही पहले तो चकित-विस्मित और स्तम्भित-सा रह जाता था; फिर बादको उसे सावित्रीमें एक अलौकिक दिव्य भाव दिखाई देने लगता।

माता-पिताके आदेशानुसार वह अब बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ

व्रत-उपवास आदिके नियमोंका पालन करती, नित्य नियमपूर्वक स्नानादि कृत्य समाप्त कर, पुष्प, चन्दन, अक्षत-बिल्वपत्र, धूप-दीप, नैवेद्य-अर्घ्य लेकर हर-पार्वतीका पूजन करती। वह अपनी सखी-सहेलियोंके साथ प्रति दिन देव-दर्शनके लिये मन्दिरोंमें जाती और भक्ति-भावमें भरकर कभी स्तोत्र पाठ करती, कभी आरती उतारती, कभी जल चढ़ाती और कभी बड़ी देरतक ध्यान लगाये बैठी रहती थी। मतलब यह, कि सावित्रीने अबतक जिन सद्ग्रन्थोंका अध्ययन किया था, उनके अनुसार वह एक प्रकारसे तपश्चरण करने लगी। बिना शिवजीको जल चढ़ाये वह कभी पानीतक न पीती थी। और जिस दिन कोई विशेष पर्व होता उस दिनका तो कहना ही क्या था? सावित्री अपनी सुध-बुध भूलकर पूजन-अर्चनमें लग जाती थी।

इस भक्ति-भावका उसपर गहरा प्रभाव पड़ा। सती पार्वतीके अपूर्व आदर्शको उसके हृदयपर गहरी छाप पड़ गयी। पातिव्रत-धर्मको महिमाको उसने खूब समझा—उसके मनमें यह बात गहरी जड़ जमाकर बैठ गयी कि नारी-जातिके लिये पातिव्रतसे बढ़कर कोई धर्म नहीं है, तन-मनसे पतिकी सेवा करना ही नारी-का कर्त्तव्य है—इसीमें नारी-जीवनकी सफलता है। पतिसे बढ़कर पत्नीके लिये और कोई उपास्य देव नहीं है। पतिके सुखों-के लिये पत्नीको किसी भी कष्टसे मुँह नहीं मोड़ना चाहिये। यही नहीं, स्वामीके सुखोंमें ही सती नारीको अपना सुख मानना चाहिये।

कौन कह सकता है, कि सती-पार्वतीके उस आदर्श चरित्रका ध्यान कर सावित्रीने भी अपने भावी जीवनके लिये एक निश्चित मार्ग निर्द्धारित नहीं कर लिया होगा ?

२

इधर सावित्रीका हृदय नारी जातिके आदर्शकी कल्पनाओंसे, समुन्नत भावनाओंसे परिपूर्ण होता जाता था, साथ ही इन विचारोंका जो प्रभाव उसके शरीरपर पड़ता था, वह उसके वाह्य सौन्दर्यको भी बढ़ाता जाता था। उधर महाराज अश्वपति और महारानी मालवीको इस बातकी चिन्ता दिन-दिन बढ़ती जाती थी कि सावित्री जैसी रूपवती और गुणवती है, इसके लिये वैसा ही उपयुक्त वर कैसे और कहाँ ढूंढ़ा जाये ? महारानीके कहनेसे अश्वपतिने भीतर-ही-भीतर अपने परम विश्वासपात्र व्यक्तियोंको सावित्रीके रूप-गुणोंके अनुकूल वरका अनुसन्धान करनेपर नियुक्त किया।

उन्होंने जिन लोगोंको अपनी कन्याके योग्य पात्र ढूढ़नेके लिये भेजा था, एक-एक कर वे सभी प्रायः विफल-मनोरथ होकर लौट आये। किसी-किसीने तो यह कहा कि अमुक-अमुक देशोंके राजकुमार ही सावित्रीके उपयुक्त हैं और वे शीघ्र ही यहाँ आकर सावित्रीको देख जायेंगे तथा अपना निर्णय बतायेंगे। पर अधि-

गयी । राज्य भरसे राजकुमारीका स्वयंवर देखनेके लिये दर्शक वृन्द आ जुटे। जहां-तहां मेलेसे लग गये। लोगोंमें एक अपूर्व आनन्दोत्साह दिखाई देने लगा।

पर स्वयंवरकी तैयारी भी व्यर्थ होती दिखाई दी। बहुत ही थोड़े राजा और राजकुमार स्वयंवर-सभामें उपस्थित हुए। अधिकांश लोग तो पहलेसे ही अपनेको सावित्रीके योग्य न समझ कर चुपचाप रह गये थे। कुछ लोग आ-आकर सावित्रीको देख भी गये थे। इसीलिये स्वयंवरमें बहुत ही कम राजा-राजकुमार आये थे।

अन्तमें महाराज अश्वपतिने सावित्रीको अपने पास बुलाकर कहा,—"बेटी, सावित्री! यह स्वयंवर सभा तुम्हारे ही लिये रची गयी है। तुम वहां जाओ और जो थोड़ेसे राजन्यवर्ग उपस्थित हैं, उनमें जिन्हें तुम अपने उपयुक्त समझो उनका वरण करो। तुम्हें एक बात और बता देना आवश्यक समझता हूं, वह यह कि तुम्हारे अलौकिक रूप-गुणकी बातें सुनकर बहुतेरे लोगोंने तो यहां तक आनेका भी साहस नहीं किया है। अतः यदि तुम किसीको वरने योग्य समझो, तो उनके गलेमें वर-माल्य पहना दो।"

आंखें नीची कर, सिर झुकाकर सावित्रीने पिताके ये वचन सुने। पिताको प्रणाम कर वह वहांसे विदा हुई। सखियोंके साथ सावित्री स्वयंवरमें लायी गयी। उसके रूप-यौवनपर राजाओं और राजकुमारोंकी मानों आंखें ही न ठहर सकीं। सब-के-सब

चकित-विस्मित हो रहे। फिर भी मद्रराजके प्रधान अमात्य आकर नियमानुसार एक-एक राजा और राजकुमारका परिचय देने लगे। सावित्रीने एक-एक कर सबको देखा। पर उसने किसीके गलेमें वर-माल्य नहीं पहनाया।

राजन्यवर्ग उदास होकर लौट गये। महाराज अश्वपति भी दुखी हुए। उन्हें सावित्रीपर क्रोध नहीं हुआ, उसपर क्रोध करनेका कोई कारण भी तो नहीं था। सावित्रीके मनको जो नहीं भाता, उसे वह वरण ही क्योंकर करती ? हां, राजाको चिन्ताकी मात्रा अब और बढ़ गयी। वे सोचने लगे, कि अब इसका विवाह कैसे हो?

३

कुछ दिन और भी व्यतीत हो गये। सावित्रीने अपनी आयुका पन्द्रहवां वर्ष पूरा किया। अब वह पूर्ण षोड़शी युवती हो गयी। राजा सदा उसके विवाहके विषयमें चिन्ता करते रहते थे। कभी सोचते,—क्या सावित्रीके भाग्यमें विधाताने वर ही नहीं लिखा है? धनहीन, रूपहीन, गुणहीन कन्याओं तकका विवाह हो जाता है, उन्हें अनायास वर मिल जाते हैं, फिर सावित्री जैसी रूप-गुण-सम्पन्ना कन्याके योग्य क्या संसारमें कोई वर नहीं मिलेगा ? कभी विचारते—नहीं, जब समय आयेगा तब आप ही उसे योग्य वर मिल जायेगा। मैं व्यर्थमें चिन्ता करता हूं।

कर्त्तव्य करना मेरा धर्म है, फल भगवानके हाथमें है। मैंने उसके विवाहके लिये चेष्टा की, उसमें सफलता नहीं मिली। पर इसके लिये मैं चेष्टा करनेसे क्यों बाज आऊं ?

एक दिन किसी बूढ़े मन्त्रीने कहा,—"महाराज, सावित्रीको आप तीर्थाटनके लिये भेजें। सम्भव है, तीर्थाटनके पुण्य-स्वरूप उसे अपने मनोनुकूल पतिकी प्राप्ति हो जाये।

महाराज अश्वपतिको यह बात पसन्द आ गयी। उन्होंने सावित्रीको तीर्थाटनके लिये भेजनेका विचार पक्का कर लिया। कई सुन्दर-सुन्दर रथ सजाये गये। एक रथ तो राजकुमारी सावित्रीके लिये, दूसरा उसकी सखियोंके लिये, तीसरा एक योग्य तथा प्रवीण अमात्यके लिये, चौथा दासियोंके लिये। कई गाड़ियों-पर खाद्य-पदार्थ, बरतन-भांड़े तथा सफरमें काम आने योग्य अन्यान्य असबाब लादे गये। साथमें जानेके लिये बहुतेरे कुशल और वीर शरीर-रक्षक, दास-दासियां और सारथि वगैरह भी ठीक कर दिये गये।

अबतक सावित्री कभी माता-पिताको छोड़ कर नहीं रही थी, न कभी कहीं गयी ही थी। इसलिये उनके बिछोहकी चिन्तासे वह पहले तो दुःखी हुई पर अपने कर्त्तव्य और पिताकी आज्ञाके पालनका विचार आते ही उसके सब दुःख भूल गये। वह तीर्था-टनके लिये तैयार हो गयी।

शुभ दिन, शुभ घड़ीपर राजकुमारीके प्रस्थान करनेका निश्चय हो गया। उस दिन प्रातःकालसे ही सावित्रीने परम-

बांयी भुजा थिरकी, बांयी आँख फड़की। सावित्री चौंकसी उठी।

मंत्रीने देखा कि संध्या होनेवाली है। अतः उन्होंने राजकुमारीके पास कहला भेजा कि आज इसी आश्रममें टिकनेका प्रबन्ध किया जाये तो कैसा हो? सावित्रीने प्रसन्नताके साथ इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया।

रथ आश्रमके पास पहुंचा, तो सावित्रीकी दृष्टि सहसा एक अपूर्व रूप लावण्य-मंडित, देव-स्वरूप नवयुवकपर पड़ी। उसकी दृष्टि मानो उस परम रूपवान् युवकके साथ चिपट गयी। हटाये न हटी। वह स्थिर दृष्टिसे उस सुन्दर सुडौल शरीरवाले युवकको देखने लगी। उसकी चतुरा सखियोंने भी उसका यह भाव देखा। पर वे कुछ बोलीं नहीं।

इधर मन्त्रीने रथसे उतर उस युवकसे पूछा,—"राजकुमार, यह आश्रम किसका है? मद्राधिपति महाराज अश्वपतिकी कन्या तीर्थाटनको निकली हैं, हम उन्हींके सेवक हैं। आज रातको हम यहीं टिकनेकी अभिलाषा करते हैं। क्या हमें स्थान मिल सकता है?"

उस नवयुवकने कहा,—"आप मुझे राजकुमार क्यों कहते हैं? मैं तो धन-सम्पत्तिसे रहित, राज्यसे वंचित, वृद्ध, अन्ध, पिताका पुत्र हूं। मेरा नाम सत्यवान है। मेरे माता-पिता अधुना मुनि-जीवन बिता रहे हैं। आइये, मैं आपको उनके पास ले चलता हूं। मेरे पिता पहले शाल्व देशके राजा थे।"

सावित्री-सत्यवान

सावित्रीकी दृष्टि उस परम रूपवान युवकपरसे हटाये न हटी ।
[पृष्ठ—३२]

थोड़ी ही दूरपर कुटीके पास शाल्वाधिपति अपनी धर्मपत्नी-के साथ बैठे बातें कर रहे थे। मन्त्रीने उनके पास जाकर प्रणाम किया, अपना परिचय दिया और उद्देश्य बताया। अन्ध मुनिने मद्रदेशकी राजकुमारीके आनेकी बात सुन परम प्रसन्नता प्राप्त की और अपनी वर्त्तमान असमर्थता प्रकट करते हुए कहा,— "राजकुमारी सावित्रीका आना हमारे लिये परम सौभाग्यकी बात है। पर हम इस समय ऐसी अवस्थामें नहीं हैं कि उनका उचित सम्मान कर सकें। यह तो आप देख ही रहे हैं।"

इसके बाद उन्होंने सत्यवानको अतिथियोंके आदर-सत्कारमें किसी प्रकारकी त्रुटि न होने पावे, इसके लिये सचेत कर दिया। सत्यवानने भी सब प्रबन्ध ठीक कर दिये।

उस रातको सावित्री सब लोगोंके साथ वहीं ठहरी। आस-पास और भी ऋषि-मुनियोंके आश्रम थे। जब वहां मद्रदेशकी राजकुमारीके आनेका समाचार पहुंचा, तो वहांसे मुनि-पत्नियां और ऋषि-कन्याएं सावित्रीको देखनेके लिये आयीं। सावित्री बड़ी विनम्रताके साथ सबसे मिली। उसने उनके उपदेश सुने और अन्यान्य बात भी हुईं। वृद्ध मुनि-दम्पतीने भी सावित्रीको धर्म-कथाएं सुनायीं।

उधर अन्ध मुनिके पुत्र सत्यवानने भी ध्यानसे एक बार राजकुमारी सावित्रीकी ओर देखा। उसके हृदयके अन्तर्तम-प्रदेशमें एक स्फुरण हुआ। पर उसने किसीपर अपने आन्तरिक भावको प्रकट नहीं किया। हां, सेवा-सुश्रूषा उसने अवश्य बड़ी लगनके

साथ की। राजकुमारीको किसी बातका कष्ट होने न पाये, इसका उसने विशेष ध्यान रखा।

इस प्रकार सत्यवानका सुन्दर स्वरूप सावित्रीके हृदयमें बैठ गया और सावित्रीकी देवी-मूर्त्ति सत्यवानके हृदयमें अङ्कित हो गयी। पर इस समय उनमेंसे किसीने किसीपर अपना मनोभाव व्यक्त नहीं किया। प्रायः देखा जाता है कि आन्तरिक प्रेम प्रथम दर्शनके समय ही अंकुरित हो उठता है; नहीं तो नहीं। कुछ लोग इसे पूर्व-संस्कार भी कहते हैं।

वह रात सबने बड़े आनन्दसे बितायी।

दूसरे दिन सवेरे उठकर राजकुमारी सावित्रीने अपने नियमानुसार दीन-दुखियोंमें अन्न-धन बांटा, गुरुजनोंको यथायोग्य भेंट चढ़ायी और ऋषि-कन्याओंके पास जा-जाकर कितने ही मूल्यवान प्रीति-उपहार दिये। मद्रराजके मन्त्रीने भी सबसे मिल-मिलाकर चलने की तैयारी की।

जब सब सामान गाड़ियोंपर लद गये, सब लोग रथोंमें सवार हो गये तब सावित्रीने मन्त्रीको बुलाकर कहा,—"मन्त्रिवर, अब और कहीं जानेकी इच्छा नहीं है। चलिये, हम घर लौट चलें।"

राजकुमारीकी इस बातसे मन्त्रीको आश्चर्य हुआ। वे उसके मनोभावको न समझ सके। उन्होंने मन-ही-मन सोचा, 'महाराज अश्वपतिने जिस उद्देश्यसे भेजा था, वह तो कहीं सफल सिद्ध नहीं हुआ है, अभी अगर लौटते हैं, तो न जाने महाराज क्या करेंगे? इधर राजकुमारीकी आज्ञा भी नहीं टाली जा सकती। जो हो,

इस समय तो राजकुमारीकी आज्ञाका पालन ही मेरा कर्त्तव्य है।' इस प्रकार सोच-विचार कर वे मद्रदेशकी ओर लौटे।

तपोवनके रीत्यनुसार सत्यवानने भी अपने एक प्यारे घोड़े-पर सवार हो, इस पर्यटक मण्डलीको अपने तपोवनसे कुछ दूर तक पहुंचा दिया। जब वह लौटा तो सावित्रीने उसे और उसने सावित्रीको देखा।

वहांसे मद्रदेश बहुत दूर था। अतः शीघ्र पहुंचना असम्भव था। फिर भी राजकुमारीके कहनेसे अमात्य यथासम्भव शीघ्र मद्रदेशकी ओर चले। जब जिस ग्रामके पास सन्ध्या होती, वहीं पड़ाव पड़ता। सब लोग रात वहीं बिताते। जिस गांवके पास वे ठहरते, वहींके लोग मद्राधिपतिकी राजकुमारीके दर्शनोंको आते और जिससे जो कुछ बनता, उनकी सेवामें ला उपस्थित करता। इसी प्रकार चलते-चलते अन्तमें वे लोग अपने राज्यमें आ पहुंचे।

सावित्रीका विवाह

१

हाराज अश्वपति अपनी राजसभामें बैठे हुए थे। इतनेमें उन्हें देवर्षि नारदके आनेका समचार मिला। राजा स्वयं उठकर उनका स्वागत कर अन्दर लाये और विशेष आदर-सम्मानके साथ उन्होंने देवर्षिको योग्य आसनपर बैठाया। दोनों ओरसे कुशल-प्रश्न पूछे जाने लगे।

देवर्षि नारदने राजासे राज्य-संचालनके विषयमें पूछा, उनकी पारिवारिक कुशलताकी पूछ-तांछ की। फिर भक्ति, ज्ञान और कर्म आदिके दार्शनिक विषयोंकी चर्चा छिड़ी। नारदजी स्वयं परम भक्त थे। अत: वे भक्तिकी प्रधानता प्रतिपादित करने लगे। इसी प्रकारकी बातें हो रही थीं कि इतनेमें उन्हें खबर मिली, कि राजकुमारी सावित्री तीर्थाटन कर लौट आयी हैं।

यह संवाद सुनकर वे सोचमें पड़ गये। इतनेमें जिस अमात्यके साथ उन्होंने सावित्रीको तीर्थाटनके लिये भेजा था, वे भी द्वारमें आ उपस्थित हुए। राजाने उनसे कुशल-मंगलके समाचार पूछे। फिर कहा,—"क्या सावित्रीको अपने योग्य कोई वर मिल

अमात्यने कहा,—"महाराज, मैं इस विषयमें कुछ भी जान नहीं सका हूं। राजकुमारीकी आज्ञासे पहले तो हम लोगोंने उन्हें ऋषियोंके तपोवन दिखाये। फिर राजर्षियोंके तपोवनमें गये। वहां शाल्वदेशके राजा द्यु मत्सेन अन्धमुनिके रूपमें मिले। हम लोग उन्हींके आश्रममें ठहरे। दूसरे दिन सवेरे राजकुमारीने हमें लौट चलनेकी आज्ञा दी और हम लौट आये। राजकुमारीका मनोभाव पूछनेका मुझ सेवकको साहस नहीं हुआ।"

राजादेश पाकर सावित्री भी दरबारमें लायी गयी। आते ही सावित्रीने पिताको साष्टांग प्रणाम किया। फिर देवर्षि नारदके चरणोंपर माथा टेका। दोनों जनोंने सर्वान्तःकरणसे सावित्रीको आशीर्वाद दिये। सावित्रीके स्वर्गीय सौन्दर्यको देखकर एक बार देवर्षि नारद भी चकित हो रहे। फिर उन्होंने पूछा,— "महाराज, आपकी यह कन्या कहां गयी थी ? यह अभी कहांसे चली आ रही है ?"

अश्वपतिने कहा,—"भगवन् ! आप तो सब कुछ जानते ही हैं। आपसे त्रिभुवनकी कौन-सी बात अविदित है ? फिर जब आप पूछ रहे हैं, तो सुनिये। यह आप ही बतायेगी कि कहां गयी थी और क्या कर आयी है।"

२

इतना कह, उन्होंने सावित्रीसे कहा,—"बेटी, तू क्या करके लौटी है ? मुझे बड़ी उद्विग्नता हो रही है। देख, देवर्षि नारदजी

भी तेरी बातें सुननेको उत्सुक हैं। संकोच छोड़कर बता कि तुझे अपने मनोनुकूल वर मिला या नहीं ?"

पिताकी आज्ञा पाकर उसने निस्संकोच भावसे कहा,—"पिताजी, शाल्व देशके राजा द्युमत्सेनको तो आप जानते ही होंगे। वे अब अन्धे हो गये हैं। उनकी धर्मपत्नी भी वृद्धा हो गयी हैं। राजाके अन्धे हो जानेपर उनके किसी पड़ोसी राजाने उनके राज्यपर अधिकार कर लिया है। वे सपत्नीक राज-पाट छोड़कर तपोवनमें रहते हैं। वे परम ज्ञानी और सत्यनिष्ठ हैं। सत्यवान् नामक उनके एक युवक पुत्र हैं। आश्रममें जाकर मैंने उन्हें देखा और मन-ही-मन मैं उनका वरण कर चुकी हूं। इसीलिये आगे तीर्थाटनके लिये न जाकर घर लौट आयी हूं। अब आपकी जैसी आज्ञा हो।........"

एकाएक नारदजी बोल उठे,—"आह! इस लड़कीने बड़ी भूल की!"

राजा चौंक पड़े बोले,—"क्या? कौन-सी भूल? भगवन् जल्दी बताइये, क्या सत्यवान इसके अनुरूप वर नहीं है ?"

नारद,—"अनुरूप क्यों नहीं है? वह सूर्यके समान तेजस्वी, बृहस्पतिके समान बुद्धिमान, इन्द्रके समान वीर और पृथ्वीके समान सहनशील है। वह शिविके समान त्यागी एवं परोपकारी है, ययातिके समान उदार है, चन्द्रमाके समान सुन्दर और साक्षात् कामदेवके समान मनोहर है। वह यों तो सर्वथा सावित्रीके वर होने योग्य है, परन्तु......"

"परन्तु क्या देवर्षि ? उसमें कौन सा दोष है ?"

"राजन्! धैर्य धारण करें। मैं यह भी बताता हूं कि इस बालिकाने सत्यवानको वर कर कौन सी भूल की है। बात यह है कि सत्यवान अत्यन्त अल्पायु है। आज़से ठीक एक वर्ष बाद उसकी मृत्यु होनेवाली है।"

सुनते ही राजाके प्राण कांप उठे। उन्होंने कहा,—"बेटी सावित्री! तूने सुन तो लिया? सत्यवान वास्तवमें तेरे अनुरूप स्वामी है, पर इतने अल्पायु व्यक्तिके हाथ में जान-बूझकर तुझे कैसे सौंप दूं?"

सावित्री यह बात सुनकर थोड़ी देरतक चुपचाप खड़ी-खड़ी न जाने क्या-क्या सोचती रही।

उसे कोई उत्तर देते न देख, राजाने पुनः कहा,—"सावित्री, तू दूसरे वरकी खोज कर। तूने तो अभी सत्यवानको कोई वचन नहीं दिया है?"

सावित्री फिर भी कुछ न बोली। यह देख राजाने कहा,—"तेरी क्या इच्छा है? बेटी, यह संकोचका समय नहीं है। तेरे मनमें जो भाव हो, उसे स्पष्टतः व्यक्त कर।"

अब सावित्रीने कहा,—"पिताजी, यह कैसा न्याय है, मेरी समझमें नहीं आया। मैं तो यही समझती हूं कि जो चीज ऊपर उछाली जाती है वह एक ही बार नीचे गिरती है, जो वचन दे दिया जाता है वह एक ही बार दिया जाता है और दानकी वस्तु एक ही बार दी जा सकती है। मैं जब अपना तन, मन सब कुछ

सत्यवानपर सौंपनेका मैं विचार कर चुकी हूं तो फिर उसे वापस क्यों कर ले सकती हूं ?"

उसकी बात सुन नारदजीने राजाकी ओर और राजाने नारदजीकी ओर देखा। सभासदगण भी विस्फारित नेत्रोंसे परस्पर एक दूसरेकी ओर देखने लगे।

३

राजा विचार करने लगे। नारदजीने कहा,—"राजन्! आपकी कन्या बड़ी विदुषी है। इसकी प्रतिज्ञा अटल है। इसके विचार बहुत ही पक्के हैं। मेरी समझमें सत्यवानकी अपेक्षा उत्तम वर इसे मिल भी नहीं सकता। अतः इस विषयमें आपको इसकी इच्छाके अनुकूल ही कार्य करना चाहिये। इसीमें सबका कल्याण है। इसके पुण्य-प्रतापसे सत्यवान दीर्घायु भी हो सकता है।

राजाने कहा,—"आप मेरे पूज्य गुरु हैं। आप जो कहेंगे, मैं वही करूंगा।"

इसके बाद उन्होंने सावित्रीसे कहा,—"अच्छा बेटी, तुम इस समय अन्दर जाओ। तुम्हारे इच्छानुसार ही कार्य होगा।"

देवर्षि नारद आये थे सावित्रीकी परीक्षा लेने। उन्होंने सावित्रीको देखा, उसके विचारोंकी दृढ़ताको आजमाया। सावित्री

इस परीक्षामें अनायास ही उत्तीर्ण हो गयी। देवर्षि कुछ देरतक और राजासे वार्तालाप कर स्वर्ग-लोकको प्रस्थान कर गये।

राजा विवाहकी तैयारीमें लगे। उन्होंने स्वयं अन्ध मुनिके पास जाकर सत्यवानके साथ अपनी कन्याके विवाहको प्रस्ताव किया। पहले तो वे अपनी अवस्थाका विचार कर असमञ्जसमें पड़े। पर जब महाराज अश्वपतिने उनकी सब तपस्याओंको एक-कर सुलझा दिया, उनकी कठिनाइयोंको दूर कर दिया, तब वे सहमत हो गये।

महाराज अश्वपतिने तपोवनके आश्रममें ही विवाहकी सब तैयारियां करवायीं, शुभ मुहूर्तमें उन्होंने सत्यवानके हाथोंमें प्राणोंसे बढ़कर प्यारी अपनी कन्या सावित्रीका हाथ सौंप दिया। उन्होंने अन्न, धन तथा अन्यान्य सामग्रियां प्रचुर परिमाणमें देकर अन्ध मुनिके आश्रमको भर दिया।

पति-गृहमें सावित्री

१

हाराज अश्वपतिके चले जानेपर सावित्रीने अपने शरीरके सब मूल्यवान आभूषणोंको खोल डाला, बहुमूल्य वस्त्रोंको भी उतार डाला। यह सब उतार कर उसने सुरक्षित रूपसे रख दिये। इसके बाद उसने मुनि-कन्याओंकी-सी अपनी वेश-भूषा बना ली। हाथमें सौभाग्यवतीकी चिह्न-स्वरूप चूड़ियां भर रहने दीं। मुनि-पत्नियोंकी तरह मामूली गेरिक वस्त्र धारण कर लिया। इस नये वेशमें सावित्रीकी शोभाश्री पहलेसे भी दूनी हो गयी। अब जो लोग उसे देखते, उन्हें तुरन्त ही सती-कुल शिरोमणि पार्वतीका स्मरण हो आता। वास्तवमें उसके हृदयमें पार्वतीका ही आदर्श स्थापित था और वही उसके शरीर, मन, वचन, कर्म, तथा व्यवहारोंसे झलकता था।

परन्तु अड़ोस-पड़ोसकी बड़ी-बूढ़ी ऋषिपत्नियोंको तथा सावित्रीकी सासको वधूका—अपनी गृहस्थीकी कुललक्ष्मीका—यह बाना अच्छा न लगा। वे मन-ही-मन कुछ दुखित भी हुईं। एक दिन उन्होंने बड़े प्यारसे सावित्रीको पास बुलाकर कहा,—"बहू, तुमने यह बाना क्यों बनाया?"

सावित्रीने कहा,—"माताजी, वनवासी तपस्वीकी सहधर्मिणीके लिये तो यही वेश-भूषा पर्याप्त है। मुझे इस वेशमें परम सन्तोष प्राप्त हो रहा है। यदि मैं यहां राजरानियोंकी-सी वेशभूषा बनाऊं, तो भला मैं आप लोगोंकी तथा अपने पतिदेवताकी सेवा कैसे करूंगी?"

सास बहूकी ये बातें सुन परम पुलकित हुईं। उसकी बातपर वे और कह ही क्या सकती थीं?

स्वामीके घरमें आकर सावित्री तन-मनसे सास, ससुर और पतिदेवताकी सेवा करने लगी। सेवामें वह सदा इतनी सतर्क और तत्पर रहती, कि कभी किसीको किसी बातके लिये कहनेकी भी जरूरत नहीं पड़ती। मुंहसे बात निकलने भी नहीं पाती, कि सावित्री उनका मनोभाव ताड़कर सब काम पूरा कर दिया करती थी। इस छोटेसे मुनि-परिवारकी गृहस्थीके सब काम सावित्री अपने हाथों करती, सासको तो वह कोई काम ही नहीं करने देती। वह पहले ही सब काम इतनी सुन्दरताके साथ कर डालती थी, कि सासके लिये कुछ करनेको बाकी ही नहीं रहता और न उन्हें बहूसे किसी कामके विषयमें कहना ही पड़ता। इस प्रकार सावित्रीने अपनी सासको गृहस्थीके सब कामोंसे एकदम निश्चिन्त कर दिया।

अपनी सेवाओंसे उसने कुछही समयमें सास, ससुर और स्वामी सबको मानों अपनी मुट्ठीमें कर लिया। सावित्री अपने हाथों नित्य सबके लिये भोजन बनाती, परोसती और खिलाती।

पिलाती थी। बरतन-बासन भी वह स्वयं साफ कर लेती, नदीसे पानी भर लाती, घर-द्वारकी सफाईकी ओर वह विशेष ध्यान रखती थी। रातको सबके लिये बिछौने बिछाती, सोनेसे पहले वह नित्य सास, ससुर और स्वामीके पांव दाबती और तब खुद सोती थी। फिर भी वह सबसे पहले उठ बैठती, उठते ही प्रातः कृत्योंसे छुट्टी पाकर गैयोंको सानी-पानी देती, घर-द्वार लीप पोत कर साफ करती, फिर फूल चुनकर लाती, पूजाका सामान सहेजती, और जबतक लोग पूजा-पाठ करते तबतक भोजन बना लिया करती थी। मतलब यह कि सावित्री जैसी बहू पाकर सास-ससुरके आनन्दकी तो मानों सीमा ही नहीं थी। और सत्यवान ? वह तो सावित्री जैसी परम साध्वी, परम विदुषी और गुणवती पत्नी पानेके लिये अपना अहोभाग्य समझता था।

वास्तवमें यदि आज भी सावित्रीके गुणोंका हज़ारवां हिस्सा यदि किसी बहूमें होता है, तो वह दुःख-दारिद्र्यपूर्ण गृहस्थीको सुखोंका आगार बना देती है। फिर जहां सावित्री जैसी सर्वगुण-सम्पन्ना रमणीरत्न हो, वहांका तो कहना ही क्या है ? वह तो साक्षात् स्वर्गलोक ही बन जावे।

यही नहीं, अपने सब आवश्यक कर्त्तव्योंका पालन करती हुई भी सावित्रीका हृदय सदा चिन्तित और मुरझाया बना रहता था; पर वह अपनी उस आन्तरिक भावनाको कभी किसीपर व्यक्त नहीं करती थी। देवर्षि नारदकी वह बात उसे सतत स्मरण रहती। भला उस बातको वह पल भरके लिये भी भूल सकती

थी ? नहीं। स्वामीकी मंगल-कामनाके लिये, वह सदा उन सब व्रतों, उपवासों और पूजा-अर्चाओंका यथारीति पालन करती थी। स्वामीको दीर्घजीवी करनेके लिये वह सर्वान्तःकरणसे परमात्मासे प्रार्थना किया करती थी।

इसी प्रकार प्रायः एक वर्षका समय बीत चला। सत्यवान और उसके माता-पिताको सावित्रीके लिये चिन्ता होने लगी; लगातार व्रत-उपवास करते-करते सावित्री पहलेकी अपेक्षा बहुत दुबली हो गयी थी। वे लोग उसे व्रत-उपवास करनेके लिये मना करना तो चाहते; पर उसकी धर्म-निष्ठाको देख, उन्हें चुप हो रहना पड़ता था।

बस, अब वर्ष पूरा होनेमें केवल तीन दिन बाकी रह गये हैं। सावित्रीने पहलेसेही निश्चय कर रखा था, कि जब तीन दिन बाकी रह जायेंगे तो मैं कठोर त्रिरात्र-व्रत लेकर बैठ जाऊंगी। इसी निश्चयको उसने कार्यरूपमें परिणत किया। सास, ससुर और पतिसे आज्ञा लेकर वह त्रिरात्र-व्रतके उद्यापनमें लग गयी।

यह व्रत क्या था, एक कठोर तपस्या थी। इसमें तीन-दिन और तीन राततक बराबर उपवास कर, पानीतक न पीकर, एकासनपर बैठकर ईश्वर-प्रार्थना करनी पड़ती है। इसके कई दिन पहले भी सावित्रीने कोई व्रत लिया था, उसमें भी उपवास

करना पड़ा था, जिसके कारण वह बहुत ही दुर्बल हो रही थी। इसी दुर्बलताकी अवस्थामें उसने त्रिरात्रव्रत जैसे कठोर व्रतको भी ग्रहण किया।

तीन दिन बीते, तीन रातें बीतीं। सावित्रीने अपने मनोबलसे अपना व्रत पूरा किया। आज सावित्री अपने आसनसे उठी। सास-ससुर और स्वामीके चरणोंमें उसने प्रणाम किया। आस-पासके ऋषि-मुनियों और उनकी सहधर्मिणियोंने आकर सावित्री-को मनोकामना पूर्ण होनेका आशीर्वाद दिया।

लगातार तीन दिन और तीन रातके उपवासने उसे बहुत ही कमज़ोर कर दिया था। चलते-चलते भी उसके पांव लड़खड़ा जाते थे, पर उसका मनोबल बहुत ही बढ़ गया था। उसके कुम्हलाये हुए सुन्दर चेहरेपर भी मानो एक दिव्य ज्योति बरसने लगी थी।

गहन वनमें

१

वित्रीका 'त्रिरात्र-व्रत' तो निर्विघ्न समाप्त हो गया। 'पर आजका दिन कैसे बीतेगा, रात कैसे कटेगी ?'—इस बातकी चिन्ता उसके मनमें बारम्बार उठने लगी; क्योंकि देवर्षि नारदके कथनानुसार सत्यवानकी आयु आज ही तक है!—आज ही उनकी मृत्यु होनेवाली है!

दिन ढल चुका था। अभी सूर्यास्त नहीं हुआ था; पर होनेमें विलम्ब भी कम ही था। इसी समय सावित्रीने देखा, कि सत्यवान जलावनके लिये लकड़ी लानेकी तैयारी कर रहे हैं। सत्यवानने कुल्हाड़ी उठायी, उसे कन्धेपर रखा और चल खड़े हुए।

सावित्रीकी अन्तरात्मा सहसा काँप उठी। उसने स्वामीके पास जाकर कहा,—"इस असमयमें आप लकड़ी लाने क्यों जा रहे हैं? ओपले-लकड़ी काफी हैं। आज मत जाइये।"

सत्यवानने कहा,—"सावित्री, तुमने तो कभी किसी काममें मुझे नहीं रोका। आज क्यों रोक रही हो?"

सावित्री कुछ सोचमें पड़ गयी; बोली,—"अच्छा, मैं नहीं रोकती। चलिये, मैं भी आपके संग चलती हूं।"

यह सुनकर सत्यवानको और भी आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगा,—"सावित्रीको आज क्या हो गया है? लगातार कई दिनों तक उपवास करते रहनेसे शायद सावित्रीका मस्तिष्क भी दुर्बल हो गया है। इसमें चलने-फिरने या हिलने-डोलने तककी तो शक्ति नहीं रह गयी है; फिर मेरे साथ जंगलमें जानेको क्यों कहती है। व्रत पूरा करके अभीतक इसने एक घूंट पानी भी नहीं पिया है। भला इस समय यह मेरे साथ जंगलमें क्या करने जावेगी?" इस प्रकार सोच-विचार कर उसने सावित्रीको समझा-बुझाकर शान्त करना चाहा, पर सावित्री भला क्यों मानने लगी? सत्यवान उसे जंगलमें न जानेके लिये जितना ही समझाने लगा, सावित्री उतना ही आग्रह करने लगी। अन्तमें सत्यवान उसे लेकर माता-पिताके पास पहुंचा। उनसे उसने सावित्रीके आग्रहकी बात कही।

सावित्रीने भी उनके चरणोंपर गिरकर सत्यवानके साथ जानेकी आज्ञा मांगी। पर उन्होंने सावित्रीकी दुर्बलताके विचारसे उसे मना किया। अब कोई उपाय न देख, सावित्रीने कहा,—"आज मेरे व्रतके उद्यापनका दिन है। आजके दिन स्वामीसे एक क्षणके लिये भी मेरा अलग रहना ठीक नहीं है। ऐसा होनेसे महान् अमंगलकी आशंका है। आज भरके लिये आप लोग मेरी बात मान लें।"

अब वे नाहीं-नुहीं न कर सके। अन्ध मुनिने कहा,—"अच्छा, जाओ। स्वामीके संग जानेमें रोकने के लिये कहीं मनाई नहीं

है। पर व्रत-उपवास तो पूरा कर चुकी हो। पारण कर लो, तब जाओ।"

सावित्रीने कहा,—"समय उत्तीर्ण हो गया है। सन्ध्या हो चली है। अब वनसे लौटकर ही पारण कर लूंगी।"

इस प्रकार अपना मनोभाव मनमें ही छिपाकर सावित्री अपने पति-देवताके साथ चल खड़ी हुई। उसके पांव मारे कमज़ोरीके कांप रहे थे, सिरमें बार-बार चक्कर-सा आता था, और इन सबसे बढ़कर उसके हृदयमें एक भयंकर तूफान मच रहा था; पर सावित्रीने किसीपर कुछ भी व्यक्त होने नहीं दिया। उसके मनके भावोंको सत्यवान कहीं चेहरेसे ताड़ न ले, इस विचारसे वह इधर-उधर देखती-भालती जाने लगी।

जाते-जाते सूर्यास्त होने लगा। सायाह्न श्यामलताने वन-स्थलीको ढंकना शुरू किया। सूनसान जंगलमें कहीं पक्षी अपने घोसलोंकी ओर जा रहे थे। कहीं सुन्दर सुन्दर खरहे और मृग अपने जोड़ोंके साथ अपने रहनेकी सुरक्षित जगहकी ओर चले जा रहे थे। कहीं वन-फूलोंकी सुगन्ध वायुमण्डलमें बिखर रही थीं, तो कहीं किसी घने पेड़पर बैठे पक्षियोंका समूह कलरव कर रहा था। ऐसे ही वनमें आगे-आगे सत्यवान जा रहा था और पीछे-पीछे सावित्री चली जा रही थी। कुछ दूर जाकर सावित्रीके मनमें एक नयी आशंका उत्पन्न हुई। उसने धीरेसे दो पैर आगे बढ़कर सत्यवानके कन्धेपरसे कुल्हाड़ी उतार ली और उसे अपने कन्धेपर रख लिया।

सत्यवानने मुड़कर देखा। उसने कहा,—"यह क्या कर रही हो, सावित्री! क्या सचमुच उपवास करते-करते तुम्हारा माथा बिगड़ गया है? तुम इतनी कमजोर हो रही हो, तुम्हारे पैरोंमें चलनेकी शक्ति नहीं है, पैर लड़खड़ा रहे हैं, फिर तुमने कुल्हाड़ी क्यों मुझसे ले ली? जो हो, लाओ कुल्हाड़ी मुझे दे दो।"

यह कह, सत्यवानने कुल्हाड़ी लेनेको हाथ बढ़ाया। पर सावित्रीने नहीं दिया। उसने कहा,—"इतनी दूरतक तो आप ले आये हैं, अब मैं लेती चलूं तो क्या हानि है?"

सत्यवानने कहा,—"वास्तवमें मैंने बड़ी गलती की, जो तुम्हें इस सुनसान जंगलमें ऐसे वक्त आने दिया। कहा भी है—'मार्गे नारी विवर्जिता।'

सावित्रीने मुस्कराते हुए कहा,—"पर यहां मार्ग कहां है, यह तो जंगल है? हां, कहीं रास्ता हो, तो चलिये रास्तेसे होकर ही चला जाये।"

सत्यवानने कहा,—"भला जंगलमें राह कहां हो सकती है? और है भी तो यहां टकड़ा नहीं मिल सकता। इसीसे तो मैं तुम्हें मना कर रहा था, कि मेरे साथ मत चलो। अब तुम्हारे पैरोंमें कांटे-कुश गड़े हैं, तो राह खोज रही हो। जो हो, लाओ, तुम मेरा कुठार तो वापस करो।"

सावित्री बोली,—"मैंने तो कांटे-कुशोंका नाम भी नहीं लिया। अगर आपको कांटे-कुशोंसे कष्ट हो रहा हो, तो उसे और

बढ़ानेके लिये इस कुल्हाड़ीका बोझ भी क्यों अपने ऊपर लादना चाहते हैं ? इसे मेरे ही पास रहने दीजिये।"

अब सत्यवान कुछ न बोल सके। वे सावित्रीके स्वभावसे भली भांति परिचित थे। वे समझ गये कि सावित्री कुल्हाड़ी न देगी। जंगल क्रमशः घना होने लगा और अन्धकार भी। किसी-किसी तरह सावधानीके साथ पैर रखते और सावित्रीको भी सावधान करते हुए सत्यवान आगे बढ़ने लगे।

कालरात्रि

खते-देखते सन्ध्या बीत चली। रात हो आयी। चारों ओर घना अन्धकार फैल गया। जंगली पशुओंके गर्जन सुनाई देने लगे। पर इन बातोंकी ओर सावित्रीका तनिक भी ध्यान नहीं था। सत्यवानकी आयु शेष होनेका समय बहुतही पास समझकर सावित्रीकी मानसिक उद्विग्नता बहुत बढ़ गयी थी और वह स्वामीका हाथ पकड़े चुपचाप चल रही थी। वह एकाग्र मनसे परमात्मासे प्रार्थना कर रही थी और बारम्बार अपने स्वामीके मुखकी ओर ताक रही थी।

इसी समय सहसा सावित्रीको ऐसा जान पड़ा मानो सत्यवानके मुखमण्डलकी ज्योति कुछ मन्द हो गयी। मारे डरके उसके प्राण कांप उठे।

वहींपर एक सूखा पेड़ देख पड़ा। सत्यवानने कहा,—"सावित्री, तुम यहीं एक ओर खड़ी हो जाओ। इस पेड़पर काफी सूखी लकड़ियां हैं। कुल्हाड़ी लाओ।"

यह कह और कुल्हाड़ी ले, सत्यवान वृक्षपर चढ़ गया। एक मोटी डालको वह कुल्हाड़ीसे काटने लगा।

सावित्री नीचे खड़ी परमात्मासे प्रार्थना करने लगी। इस समय उसकी आंखें तो सत्यवानपर थीं, पर मन भगवानकी प्रार्थनामें तन्मय था। सहसा बड़े ज़ोरोंसे कराह उठनेकी आवाज़ सुन सावित्री चौंक पड़ी, बोली,—"क्या हुआ!"

"आह ! आ !......ह !!:सावित्री !!! बड़ी भयङ्कर शिरःपीड़ा हो रही है। लकड़ी नहीं काटी जाती।" यह कहता हुआ एक ओर कुल्हाड़ी फेंककर सत्यवान वृक्षसे उतर आया। मारे पीड़ाके वह बेचैन-सा हो उठा। सावित्रीने झट जमीन साफ कर उसे बैठाया, वह आप भी बैठ गयी और अपनी गोदमें सत्यवानका मस्तक रखकर दबाने और हाथ फेरने लगी। पर सत्यवानकी शिरःपीड़ा तो मृत्युका कारण-मात्र थी। वह आरोग्य होनेवाली न थी।

पीड़ा बढ़ने लगी। सत्यवान मारे पीड़ाके छटपटाने लगा। पर थोड़ी देर बाद सत्यवानका चिल्लाना-चीखना और छटपटाना कम होने लगा। शरीर अवश और शिथिल होने लगा। देखते-देखते चेहरेकी रंगत बदलने लगी। सत्यवानने एक बार बड़े कष्टसे आंखें खोलकर सावित्रीकी ओर देखा, एक दीर्घ निःश्वास लिया, फिर आंखें मूंद लीं। अपनी जीवन-सङ्गिनीकी गोदमें सिर रखकर वे मानों गहरी निद्रामें सो गये। सावित्रीने सत्यवानकी नाकके पास हाथ ले जाकर देखा, तो सांस बन्द जान पड़ी। शरीरपर हाथ रखकर देखा, वह एकदम ठंढा हो चुका था। सावित्री समझ गयी कि देवर्षि नारदकी बात झूठ नहीं थी। वास्तवमें उसके स्वामीने उसका साथ छोड़ दिया !

एकबारगी उसके हृदयमें हाहाकार-सा मच उठा, स्वभाव-सुलभ चिर-विछोह-वेदनासे वह बड़े ज़ोरसे रो उठी। पर क्षण-भर बाद ही उसे नारदजीकी दूसरी बात भी याद आयी। उन्होंने

सावित्री और धर्मराज

रे-धीरे दिव्य देहधारी महापुरुष सावित्रीके समीप आ उपस्थित हुए।

सावित्रीने डरते-डरते दोनों हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया और पूछा,—"हे महापुरुष, आप कौन हैं? क्या मैं आपका परिचय पा सकती हूं? देखनेसे तो आप स्वर्ग-लोकके कोई महान् तेजस्वी देवता जान पड़ रहे हैं।"

यमराजने कहा,—"मैं यम हूं। मृत सत्यवान्‌का 'जीव' ले जानेके लिये आया हूं। इनकी आयु समाप्त हो चुकी है। तुम इनका शरीर छोड़कर अलग खड़ी हो जाओ।"

सावित्रीने मनमें विचारा कि यह रोने-धोने या अधीरता प्रकट करनेका समय नहीं है। इस समय धैर्य धारण कर अपने उद्देश्य-की सिद्धिकी चेष्टा करनी चाहिये। उसको बारम्बार देवर्षि नारदके आश्वासनपूर्ण वचन और ऋषि-मुनियोंके आशीर्वचन स्मरण आने लगे। वह सोचने लगी,—"क्या सब लोगोंके आशी-र्वाद व्यर्थ जायेंगे? क्या मेरी सब प्रार्थनाएं भी बेकार जायेंगी?"

यों सोच-विचार कर बड़ी विनम्रताके साथ वह बोली,—"भगवन्! मैं तो सदा यही सुनती आयी हूं कि आपके दूतगण मृत व्यक्तियोंके 'जीव' ले जाया करते हैं। पर आज आपने स्वयं पधारनेका कष्ट क्यों उठाया?"

"हे महापुरुष ! आप कौन हैं ? क्या मैं आपका परिचय पा सकती हूं ?"

[पृष्ठ ५६

यमराजने कहा,—"सत्यवान् परम धार्मिक पुरुष हैं। इनके जैसे महापुरुषोंके 'जीव' दूत द्वारा मँगानेसे धर्मकी मर्यादा नष्ट होती है। दूसरे, तुम्हारी जैसी परम पतिव्रता सती नारी इनके शवको गोदमें लिये बैठी है। ऐसी हालतमें मुझे स्वयं ही आना पड़ा है। मेरे दूत तो संवाद पाते ही, विना मेरी आज्ञाके ही यहां आये थे ; पर तुम्हारे पातिव्रतके तेजको सहन न कर सकनेके कारण वे उल्टे पांवों लौट गये थे। उनके द्वारा संवाद पाकर ही मैं यहां आया हूं।"

"जब स्वयं धर्मराज ही आये हैं, तो फिर क्या चिन्ता है ? क्या मैं इनसे अपने पतिका जीवन भिक्षा-स्वरूप पानेके लिये प्रार्थना नहीं कर सकती ?"—इस प्रकार चिन्ता कर सावित्रीने रोते-रोते करुण-स्वरमें कहा,—"धर्मराज, आप मेरे स्वामीको पुनः जीवन दान दे दीजिये, आप स्वर्गके देवता हैं। आप सब कुछ कर सकते हैं। क्या आप मुझे यह भिक्षा नहीं दे सकते ?"

यमराजने समझाते हुए कहा,—"सावित्री, तुम्हारी प्रार्थनाको स्वीकार कर लेनेकी मुझमें शक्ति नहीं है। विधाताका लिखा भला कभी मेटा जा सकता है ? एक वार वे जिसके भाग्यमें जो कुछ लिख देते हैं, वह होकर ही रहता है। जिस व्यक्तिकी आयु समाप्त हो चुकी है, उसे जीवन-दान क्योंकर दिया जा सकता है ? तुम्हारी प्रार्थना एकदम असंगत है—असम्भव है। तुम सत्यवानका शरीर छोड़ कर हट जाओ। विधाताके विधानमें विघ्न उपस्थित [illegible] मत करो।"

सावित्रीने इसके आगे और कुछ कहना उचित न समझा। उसने धीरे-धीरे बड़ी सावधानीके साथ सत्यवानका मस्तक अपनी गोदसे उतार कर पृथ्वीपर रख दिया। इसके बाद वह उठकर खड़ी हो गयी।

धर्मराजने सत्यवानके शरीरको स्पर्श किया। साथ-ही साथ सत्यवानका 'जीव' उनके हाथमें आ गया। उसे मुट्ठीमें लेकर वे चल खड़े हुए।

वे जिस दिशासे आये थे, उसी दिशामें चले। सावित्री उनसे कुछ बोली तो नहीं, पर चुपचाप उनके पीछे-पीछे चल पड़ी। कुछ दूर जाकर यमराजको कुछ आहट मिली और उन्होंने घूमकर देखा, तो सावित्री उनके पीछे-पीछे चली आती दिखाई दी। उसे देखकर यमराजने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—

"ऐं! यह क्या? तुम मेरे साथ-साथ क्यों आ रही हो? अपने घर लौट जाओ। जाकर अपने स्वामीके शवकी अन्त्येष्टि-क्रिया कराओ।"

सावित्रीने कहा,—"भगवन्! आप मुझे कहाँ लौटनेको कह रहे हैं? घर? आप तो स्वयं ही मेरा घर तोड़कर लिये जा रहे हैं। अब मेरा घर ही कहाँ रह गया है कि लौट जाऊं? जहाँ मेरे स्वामी रहेंगे, मैं वहीं जाऊंगी—वहीं रहूंगी।"

यमराजने कहा,—"अबोध बालिका! जहाँ मैं जाऊंगा, जहाँ मैं तुम्हारे स्वामीका 'जीव' ले जाऊंगा, वहाँ मर्त्यलोकका .. ई मनुष्य सशरीर नहीं जा सकता। वहाँका सूक्ष्म शरीर

वहां नहीं जा सकता, वहां तो केवल सूक्ष्म शरीरका ही प्रवेश हो सकता है। अतएव तुम मेरी बात मानो और यहांसे लौट जाओ। जाकर नियमानुसार क्रिया-कर्म कराओ।"

यह कहकर यमराज फिर अपने गन्तव्य स्थानको ओर चल खड़े हुए। उन्होंने सोचा कि सावित्री अब लौट जायेगी।

पर सावित्री भला कब लौटनेवाली थी? वह तो कह ही चुकी थी कि 'लौटकर कहां जाऊंगी?' वह पुनः उनके पीछे-पीछे चली।

बहुत दूर चले आनेपर यमराजको फिर किसीके आनेकी आहट मिली। उन्होंने लौटकर देखा कि सावित्री अब भी उनके पीछे-पीछे चली आ रही है। वे रुके और बोले,—"सावित्री, तुम क्यों मेरे साथ आ रही हो। लौट जाओ। क्या तुम मुझसे कुछ कहा चाहती हो?"

सावित्रीने हाथ जोड़कर कहा,—"देव, मेरा निवेदन यही है कि मुझमें आपमें एक प्रकारका बन्धुत्व स्थापित हो चुका है। अब आप योंही मेरा त्याग नहीं कर सकते। बन्धुको त्याग देना शास्त्र और धर्मके विरुद्ध है।"

यमराज बोले,—"बन्धुत्व? कैसा बन्धुत्व?"

सावित्री,—"भगवन्, शास्त्रोंमें कहा गया है कि जिसके साथ-साथ सात पग-तक चलनेका अवसर आता है अथवा जिससे सात शब्द बोले जाते हैं, उसके साथ भी बन्धुत्व हो जाता है। मैं अबोध बालिका आपसे अधिक कह ही क्या सकती हूं?

आप तो स्वयं धर्मराज हैं, सब कुछ जानते हैं। मनुष्य-लोकमें धर्मोपार्जन ही मनुष्यका सर्वप्रधान कर्त्तव्य है। स्वामीके संगके सिवा स्त्रीके लिये धर्मोपार्जन असम्भव है। न इससे बढ़कर स्त्रीके लिये और कोई धर्म ही बताया गया है। मैं उसी धर्मका पालन करनेके लिये, जहांतक मेरी शक्ति है, अपने स्वामीके संग-संग चल रही हूं। मैं नहीं समझती कि धर्मराज स्वयं मेरे इस धर्म-विहित कार्यमें विघ्न डालेंगे। और न ऐसा करना आपको शोभा ही देगा।"

धर्मराज सावित्रीकी विवेकपूर्ण बातें सुनकर चकित रह गये। उन्होंने मन-ही-मन कहा,—"सावित्री परम विदुषी और नीति-निपुणा रमणी जान पड़ती है। यह जो कुछ कह रही है, वह बिल्कुल सही है। इसने एक भी ऐसी बात नहीं कही है जिसका खण्डन किया जा सके अथवा जिसकी सत्यताको अस्वीकार किया जा सके। परन्तु जैसे भी हो, इसे लौटाना तो पड़ेगा ही।"

इस प्रकार मन-ही-मन विचार कर सावित्रीसे अपना पिण्ड छुड़ानेके लिये उन्होंने कहा,—"सावित्री, तुम जैसी ही पतिव्रता नारी हो, मैं देखता हूं कि तुम्हारा धर्मज्ञान भी वैसा ही प्रबल है। मैं तुम्हारी बातोंसे बहुत प्रसन्न हूं। अपने पतिके जीवनके सिवा तुम जो वर मांगो, वही देनेको तैयार हूं। बोलो, तुम क्या चाहती हो?"

सावित्री बोली,—"यदि आप वर देना चाहते हैं, तो यही वर दें कि मेरे ससुरकी आंखें ठीक हो जायें। वे अन्धे हैं।"

यमराजने कहा,—"तथास्तु! अच्छा तो अब तुम लौट जाओ।"

यह कहकर यमराज जल्दी-जल्दी आगे बढ़े। उन्हें सन्देह हो गया कि सावित्री आसानीसे उनका पीछा नहीं छोड़ेगी। इसलिये वे द्रुतगतिसे चलने लगे। कुछ दूर और जाकर सन्देह-वश हो उन्होंने पीछे फिरकर देखा, तो सावित्री अब भी चली आती दिखाई दी। अबके उन्होंने पूछाः—

"क्यों सावित्री! तुम अब भी चली आ रही हो? तुम्हें तो मैंने अभिलषित वर दे दिया। तुमने जो मांगा, मैंने वही दे दिया। अब क्यों मेरे संग चल रही हो?"

सावित्रीने कहा,—"प्रभो, शास्त्रोंमें कहा गया है कि धर्मात्मा और साधु पुरुषोंका संग कभी मत छोड़ो। आज जब मुझे स्वयं धर्मराज मिल गये हैं, और मैं अपने पतिके सौभाग्यसे उनका संग कर सकती हूं, तो भला शास्त्रके विरुद्ध क्यों आचरण करूं? यही विचार कर मैंने आपका संग त्यागना ठीक नहीं समझा और इसीसे मैं आपके संग-संग चली आयी हूं।"

यमराजने देखा, कि सावित्री योंही उनका साथ न छोड़ेगी। उन्होंने फिर उसे वर देनेकी अभिलाषा प्रकट की।

सावित्रीने कहा,—"देव, जब आप पुनः वर देनेको प्रस्तुत हैं, तो मैं अस्वीकार क्यों करूं? आप वह वर दें कि मेरे ससुरका अपहृत राज्य पुनः प्राप्त हो जाये।"

धर्मराजने कहा,—"तथास्तु"!

यह कहकर वे वायुवेगसे भागे, ताकि सावित्री अब और उनका पीछा न कर सके। पर सावित्रीने अब भी उनका पीछा नहीं छोड़ा। वह भी हवाकी चालसे उनके साथ-साथ भागी। अब यमराजने देखा कि यह बालिका क्या है, यह तो मेरे लिये एक विकट समस्या हो रही है। उसे लौटानेके लिये वे पुनः उसे अभीप्सित वर देनेको प्रस्तुत हुए।

सावित्रीने कहा,—"भगवन्, मेरे पिताके कोई पुत्र नहीं। आप उनके लिये सौ पुत्रोंके पिता होनेका आशीर्वाद करें।"

"तथास्तु" कहकर यमराज इस बार विद्युत्गतिसे भागे चले। पर सावित्रीने फिर भी उनका संग नहीं छोड़ा। अबके यमराज बड़ी चिन्तामें पड़े। वे कुछ भी समझ न सके, कि इस बालिकाको कैसे वापस करें। वे रुके। सावित्रीको उन्होंने भांति-भांतिसे समझाया बुझाया। उसे आगे जानेसे मना किया। भय भी दिखाया।

सावित्रीने कहा,—"प्रभो! आपकी दयासे मेरे अन्धे ससुरजीको आंखें मिल जायेंगी, उनका राज्य भी वापस मिल जायेगा, पर इन बातोंसे ही उन्हें कौन-सा सुख मिलेगा; क्योंकि उनके पुत्रको तो आप अपने संग लिये जा रहे हैं। अतएव यदि आप मुझे यह वर दे दें कि मेरे गर्भसे मेरे स्वामीके सौ पुत्र उत्पन्न हों तो मैं अभी लौट आऊं।"

यमराजको तो अभी किसी तरह अपना पिण्ड छुड़ाना था। उन्हें कुछ सोचने-विचारनेका भी अवसर नहीं मिला। सावित्रीको

सावित्री-सत्यवान

"तथास्तु ! पर तुम अब मेरे साथ मत आओ। लौट जाओ ?"

पृष्ठ

धुनमें बिना विचारे ही उन्होंने कह दिया,—"तथास्तु ! तुम परम तेजस्वी सौ पुत्रोंकी माता बनोगी। पर अब तुम आगे मेरे साथ मत आओ। लौट जाओ।"

इतना कह यमराज प्रकाश-रश्मिकी गतिसे दक्षिण दिशाकी ओर लपके। सावित्री अब मुस्करायी। और फिर उनके पीछे-पीछे चली।

थोड़ी ही देर बाद यमराजने फिर सावित्रीको देखा। ठहर कर उन्होंने कहा,—"अरी लड़की, तू अब भी मेरे साथ आ रही है! मैंने तो तेरे सभी मन-वांछित वर दे दिये हैं। अब लौट क्यों नहीं जाती?"

इसके उत्तरमें सावित्रीने अत्यन्त नम्रताके साथ हाथ जोड़कर गलेमें आंचल डालकर कहा,—"भगवन्, आप धर्मराज हैं। संसारके सब प्राणियोंके पाप-पुण्योंका विचार आप ही किया करते हैं। आपके शब्द कभी मिथ्या नहीं हो सकते। आपके दिये वर कभी वृथा नहीं हो सकते। अभी-अभी आपने मुझे सौ पुत्रोंकी माता होनेका जो वर दिया है, कहीं वह झूठा न हो जाये इसी डरसे मैं आपके पीछे-पीछे चली आयी हूं।"

धर्मराजने कहा,—"क्यों? मेरा दिया वर झूठा होनेका सन्देह तुम्हें क्यों हुआ?"

सावित्रीने कहा,—"धर्मराज, मेरे स्वामीको तो आप अपने साथ लिये जाते हैं। फिर मेरे गर्भसे और मेरे स्वामीके औरससे पुत्र कैसे होंगे?"

सावित्रीकी बात सुन, यमराज मानों सोयेसे जग उठे। उन्हें अपने दिये वचनका स्मरण आया और अब उनकी समझमें आया कि नीतिमती पतिव्रता सती सावित्रीके आगे वे किस बुरी तरह ठगे गये हैं। परन्तु अब उनके पास उपाय ही क्या था? धर्मराज अपने दिये वचनको लौटा नहीं सके। अन्तमें सावित्रीसे हार मानकर उन्होंने सत्यवानको जीवन-दान किया। और कहा,— "सावित्री, तुमने आज अपने पातिव्रत-धर्मके प्रभावसे विधाताके विधानको उलट दिया, धर्मराजको तुमने बुरी तरह परास्त किया। परन्तु इससे मैं दुःखी नहीं; वरन् तुम्हारे सतीत्वके माहात्म्यको देखकर मुग्ध हो रहा हूं। धन्य है तुम्हारा यह आदर्श! तुम्हारे इस अपूर्व आदर्शने समग्र मर्त्यलोकको धन्य बना दिया, स्वर्गकी देवियां भी तुम्हारी यशगाथा गायेंगी और जबतक पृथ्वीका अस्तित्व रहेगा, तबतक तीनों लोकोंमें तुम्हारे पातिव्रतका माहात्म्य बड़े गौरव, आदर, सम्मान और श्रद्धाकी दृष्टिसे देखा जायेगा। सती! तुम जाओ, तुम्हारे पतिके पास— तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो।"

यह कह, धर्मराज अदृश्य हो गये। सावित्री पुनः उसी वनस्थलीमें लौट आयी, जहां उसके पति देवता पड़े हुए थे। जब वह वहां पहुंची और उसने अपने स्वामीको स्पर्श किया तब सत्यवान्‌के शरीरमें पुनः प्राणोंका संचार हो आया। इसी समय स्वर्गलोककी देवियोंने सावित्री-सत्यवानपर पुष्प-वृष्टि की।

सतीका माहात्म्य

१

'सन्ध्या होनेके पहले ही सत्यवान वहूको संग लेकर लकड़ी लाने जंगलकी ओर गया। बहुत रात गयी, पर वे लौटकर नहीं आये! क्यों नहीं लौटे? कहीं वनमें कोई दुर्घटना तो नहीं हो गयी? वे किधर गये हैं, यह भी किसीको नहीं मालूम है। कौन उनकी खोज करने जाये? किसीको इस रात्रिकालमें भेजना भी तो ठीक नहीं है।'—सत्यवानके माता-पिता इसी प्रकार चिन्ता करने लगे। स्नेहपरवश मन सदा अपने प्रियजनोंके लिये सशंकित रहता है, प्रियजनोंके आंखोंकी ओट होतेही स्नेहीमन अनिष्टकी आशंकासे कांपने लगता है। इसी कारण अन्धमुनि और उनकी पत्नीके हृदय में तरह-तरहकी आशंकाएँ उत्पन्न होने लगीं। ज्यों-ज्यों रात बीतती जाती, त्यों-त्यों उनकी चिन्ता बढ़ती जाती थी। वे इसी प्रकार विलाप करते हुए पड़ोसी ऋषि-मुनियोंके यहां गये। सभी सावित्री-सत्यवानकी जोड़ीको बड़े प्रेमसे देखते थे। यद्यपि कुछ लोगोंने अन्ध मुनि और उनकी पत्नीको आश्वासन देनेकी चेष्टा की, पर माता-पिताका हृदय भला कोरे आश्वासनोंसे शान्त हो सकता है? कुछ लोग सावित्री-सत्यवानको खोज लेनेके लिये वनमें जानेको तैयार हुए। पर बादको बड़े-बूढ़ोंने वैसा करनेसे

मना किया और कहा,—"आप लोग सावित्री या सत्यवानके लिये चिन्ता मत कीजिये। उनका कोई अमंगल नहीं हो सकता। अन्धेरी रातमें जंगलमें दिगुभ्रम भी होता है। सम्भवतः इसी कारण वे वनके किसी सुरक्षित भागमें ठहर गये हैं। उषःकालका प्रकाश फैलते ही वे आ पहुंचेंगे।"

परन्तु वृद्ध असहाय राज-दम्पतीको इन वातोंसे भी धैर्य न हुआ। वे बालकोंकी तरह पुका फाड़कर रोते-रोते अपने आश्रममें लौटे। उनके साथ सहानुभूति रखनेवाले ऋषि-मुनि भी आये। इसी समय सहसा एक विचित्र घटना घटित हुई। रोते-रोते और आँखें मलते-मलते एकाएक राजा द्युमत्सेनकी आंखें चमकने लगीं। वे सब कुछ देखने लगे।

यह देख, सब लोगोंको बड़ा आश्चर्य हुआ। राजाको ढाढ़स बंधाते हुए एक वयोज्येष्ठ मुनिने कहा,—"महाराज, आपके समान भाग्यवान और कौन हो सकता है! आपके पूर्वकृत पुण्योंका उदय हुआ है। आपको जैसा परम धार्मिक पुत्र-रत्न मिला है, वैसी ही महासती, साक्षात् लक्ष्मी-स्वरूपिणी परम साध्वी पुत्रवधू भी मिली है। आपको जो यह दृष्टिशक्ति पुनः प्राप्ति हुई है, निश्चय जानिये, यह उसी महासतीके पुण्य-प्रतापसे मिली है। आप उनके लिये कुछ भी चिन्ता न करें। देखिये, प्रातःकाल तक वे अवश्य ही आ पहुंचेंगे और उन्हें देखकर आप अपनी आंखोंको तृप्त कर सकेंगे।" हुआ भी वैसा ही।

२

उधर सावित्री यमराजके पाससे अपने पतिके जीवन-दानका वर पाकर वनमें लौटी। उसने पुनः स्वामीका मस्तक अपनी गोदमें ले लिया। सत्यवान अंगड़ाइयां लेता हुआ उठने लगा। यह देख, सावित्रीने धीरे-धीरे उसके शरीरको अपने कोमल हाथोंसे सहलाते हुए कहा,—"प्राणनाथ, आपकी शिरःपीड़ा कुछ कम पड़ी है?"

उसकी बात सुनते ही सत्यवानको होश हो आया। उसे ऐसा जान पड़ा, मानो वह गहरी नींदमें सो गया था और एक अद्भुत स्वप्न देख रहा था। उसने आंखें खोलीं। चारों ओर देखा, तो उसका चेत और भी सजग हुआ। उसने कहा,—"सावित्री! क्या हम लोग अबतक वनमें ही हैं? बहुत रात हो गयी। तुमने मुझे जगाया क्यों नहीं? न मालूम हम दोनोंके लिये वृद्ध माता-पिताको कितने कष्ट हुए होंगे? न जाने वे क्या-क्या सोच रहे होंगे?"

सावित्रीने कहा,—"आपकी यन्त्रणा देखकर पहले तो मैं डर गयी थी; फिर जब आप नींदमें सो गये, तो मैंने जगाना ठीक न समझा। अच्छा, अब यदि आप चल सकें तो उठिये, उषःकाल होनेको है। क्या आप चल सकेंगे?"

सत्यवान उठ खड़ा हुआ, बोला,—"हाँ, अब मुझे कोई कष्ट नहीं है। अब और विलम्ब करना ठीक नहीं। माता-पिता बहुत ही घबरा रहे होंगे।"

इसके वाद वे दोनों उषःकालकी लाली फैलनेके साथ-साथ अपने घरकी ओर चले। राहमें चलते समय सत्यवानने अपने स्वप्नकी वातें बतानी शुरू कीं। सत्यवानने कहा,—"मुझे ऐसा जान पड़ा, मानो मेरे प्राण लेनेको यमराज आये, पर तुम्हें देखकर वे अलग खड़े रहे। उन्होंने तुम्हें अलग होनेको कहा। तुम अलग हो गयीं। फिर उन्होंने मेरे प्राण निकाल लिये। इसके वाद......"

सावित्री बीचमें ही बोल उठी,—"इसके वाद मुझे उनका पीछा करना पड़ा, वे तुम्हें लेकर चले और तुम्हें पानेके लिये मैं उनके पीछे-पीछे चली।......क्यों आप यही कहा चाहते थे न?"

सत्यवानके आश्चर्यकी सीमा न रही। वह अवाक् होकर सावित्रीके चेहरेकी ओर ताकने लगा। कुछ देर वाद उसने पूछा,—"सावित्री, तुमने मेरे सपनेकी वात कैसे जान ली?"

सावित्रीने कहा,—"प्राणेश्वर! आप जो कुछ करते या जो कुछ सोचते हैं, वह मेरा मन जान लेता है; क्योंकि आप रहते तो मेरे प्राणोंमेंही हैं। फिर यदि आपके स्वप्नकी वातें मुझे मालूम हो जायं, तो इसमें आश्चर्यकी कौन-सी वात है। सपना तो सपना ही है, उन वातोंको आप भूल जाइये। घर चलिये, देखिये, कैसे सुन्दर फूल खिले हैं। कैसी भीनी-भीनी हवा चल रही है! सुनिये, पक्षीगण कैसा मधुर कलरव कर रहे हैं!"

इसी प्रकार अपने स्वामीके संग तरह-तरहकी वातें करती हुई सावित्री आश्रममें आ उपस्थित हुई।

———

३

पुत्र-पुत्रवधूने जब आकर वृद्ध राज-दम्पतीको प्रणाम किया, तब उनके आनन्दकी सीमा न रही।

कुछ ही देर बाद महाराज द्यु मत्सेनका एक पुराना अमात्य आया। उसने राजाको नेत्र-प्राप्तिपर बधाई दी तथा एक और भी सुसंवाद सुनाया, जिसे सुनकर लोगोंके आनन्दका वारापार न रहा। बात यह थी कि जिस पड़ोसी राजाने उनका राज्य हड़प लिया था, उसे राजा द्यु मत्सेनके पुराने राजकर्मचारियोंने षड्यन्त्र रचकर भगा दिया था। अतः वह अमात्य पुनः राजा द्यु मत्सेनको ले जाकर राजगद्दीपर बैठानेका विचार प्रकटने आया था।

नेत्रप्राप्ति और अपहृत राज्यकी प्राप्तिके संवादने लोगोंको आश्चर्यमें डाल दिया। पर किसीकी समझमें इन अद्भुत घटनाओं-का प्रकृत रहस्य नहीं मालूम हो सका। हां, इतना सब लोग समझ रहे थे, कि यह सब सावित्रीके अपूर्व पातिव्रत्यका ही प्रताप है।

इसी समय न जाने कहांसे घूमते घामते वीणा बजाते नारद मुनि आकाश-मार्गसे आ पहुंचे। सत्यवान-सावित्री आदि सबने आ-आकर देवर्षिके चरणोंमें प्रणाम किया। महाराज द्यु मत्सेनने उनका यथोचित आदर-सम्मान किया। बातोंही बातोंमें नारद-जीने सब लोगोंको इन अद्भुत घटनाओंका सारा रहस्य खोल कर बता दिया।

———

४

शीघ्रही शाल्व-देशसे एक बहुत बड़ा जलूस आया और वह महाराज द्युमत्सेनको बड़े समारोहसे सपरिवार राजधानीमें ले गया; पर महाराज द्युमत्सेनने स्वयं राज्य-भार न लेकर सत्यवानपर राज्यशासनका भार दिया। सत्यवान तो राजाके सब गुणों एवं लक्षणोंसे युक्त थे ही। वे योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। अब सत्यवान राजा हुए और सावित्री उनकी रानी हुईं। बड़ी योग्यताके साथ उन्होंने राज-कार्य सम्हाला।

महाराज द्युमत्सेन सत्यवानकी राज्य-संचालन-योग्यता देखकर परम प्रसन्न हुए। उन्होंने वानप्रस्थ लेकर पुनः तपोवनमें रहनेका विचार प्रकट किया। कुछ ही दिन बाद वे फिर अपने ऋषि-बन्धुओंमें जा मिले।

उधर धर्मराजके वरसे मद्राधिपति महाराज अश्वपतिको भी एक-एक कर सौ पुत्र-रत्न प्राप्त हुए। सावित्रीके पातिव्रत-प्रतापसे मद्रदेशमें भी सर्वत्र आनन्द-ही-आनन्द छा गया।

अब सत्यवान राजा हुए और सावित्री उनकी रानी हुई।

[पृष्ठ—१०]

उपसंहार

वित्रीकी कथा समाप्त हो गयी। अपने पातिव्रत-बलसे उसने जो कार्य कर दिखाया, वह निस्सन्देह अलौकिक है। वास्तवमें पातिव्रतकी महिमा ऐसी ही होती है। बात यह है, कि जो कोई काम अविचल रूपसे, एकनिष्ठ होकर किया जाता है, वह पूरा हुए बिना नहीं रहता। उद्देश्य अथवा कार्यकी सिद्धिका यही मूल रहस्य है। सुदृढ़ आत्म-विश्वास एक ओर जहाँ कार्यकी सिद्धिको अनिवार्य कर देता है, वहाँ दूसरी ओर वह कार्यकर्त्ताको मार्ग-प्रदर्शन भी करता है। सावित्रीके जीवना-दर्शसे हमें यही शिक्षा उपलब्ध होती है।

परन्तु यह शिक्षा केवल कथा पढ़नेसे न तो पूर्णरूपसे प्राप्त होती है, न उसकी सत्यताका हमें अनुभव होता है। वह तो तभी होता है, जब हम उसकी परीक्षा और प्रयोगको अपने दैनन्दिन जीवनपर घटित करते हैं। संसारमें वही शिक्षा सच्ची होती है, जिसपर अमल किया जाता है। बिना प्रयोगकी शिक्षा अधूरी होती है और अधूरी शिक्षा सदा भयंकर होती है।

बाल्यकालसे जो उत्तम वस्तुएँ हमारे मनको ग्रहण करने योग्य मिलती हैं, यदि उन्हें हम ग्रहण करते रहें और निकृष्ट वस्तुओंका त्याग करते रहें, तो इसमें तनिक भी सन्देह नहीं

कि हमारा हृदय उत्तमताओंका एक अपूर्व केन्द्र बन जायेगा। दुर्गुणको तो हमारे पास तक फटकनेका साहस नहीं पड़ेगा।

सावित्रीकी कथासे जो दूसरी अनुपम शिक्षा मिलती है, वह है उसका आत्म-प्रणिधान। उसके जीवनके प्रत्येक कार्यमें यही भाव देखनेमें आता है। वह करती तो सब कुछ थी; पर सुख-दुःख सबको उसने मानो ईश्वरपर सौंप रखा था। वास्तवमें इस प्रकारकी ईश्वर-निष्ठाका दृष्टान्त संसारमें बहुत ही कम स्थानोंपर देखनेको मिलता है। कामना या वासनाकी उसमें गन्ध तक न थी। वह जो कुछ करती, कर्त्तव्य समझकर करती और तन-मन सब लगाकर करती थी। फलको कार्यका हेतु समझ लेनेसे कार्यकी प्रणाली ठीक नहीं रहती और न तल्लीनता ही आती है। इसीलिये शास्त्रोंमें कहा गया है कि कर्त्तव्य करना तुम्हारा धर्म है, फल देना भगवानके हाथकी बात है। सावित्रीने अपने जीवनमें इस शास्त्र-वचनको सार्थक कर दिखाया है।

इसी प्रकार सूक्ष्म रूपसे विचार करनेपर सावित्रीमें हमें कितने ही अनुपम गुण दिखाई देंगे। पर गुणोंका केवल विचार करनेकी अपेक्षा उनका ग्रहण करना ही अधिक वांच्छनीय है। परमात्मासे हमारी यही प्रार्थना है कि सती-सावित्रीने जो आदर्श स्थापित किया है, भारतके घर-घरमें उसी आदर्शका प्रतिपादन हो और हमारी कन्याएं और बहनें उसका सच्चे अर्थमें अनुसरण कर भारतको पुनः पुनः धन्य करती रहें।

॥ समाप्त ॥

१—सप्तसरोज

लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीयुक "प्रेमचन्द"

इसमें सात अति मनोहर उपदेशप्रद कहानियां हैं, जिनका भारतकी प्रायः सभी भाषाओंमें अनुवाद निकल चुका है। यह हिन्दी साहित्यसम्मेलनकी प्रथमा परीक्षा तथा कई राष्ट्रीय पाठ-शालाओंकी पाठ्यपुस्तकोंमें और सरकारी युनिवर्सिटियोंकी प्राइज-लिस्टमें है। इसके अनेकों संस्करण हो चुके हैं। मूल्य ॥)

२—महात्मा शेखसादी

लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीयुक "प्रेमचन्द"

फारसी भाषाके प्रसिद्ध और शिक्षाप्रद गुलिस्तां बोस्तांके लेखक महात्मा शेखसादीका बड़ा मनोरंजक और उपदेशप्रद जीवनचरित्र तथा नीतिकथाएं, गजलें, कसीदे इत्यादिका मनोरञ्जक संग्रह किया गया है। मूल्य ॥)

३—विवेक-वचनावली

लेखक—स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्दजीके बहुमूल्य विचारों और अमूल्य उप-देशोंका बड़ा मनोरञ्जक संग्रह। बड़ी सीधी सादी और सरल भाषामें प्रत्येक बालक, स्त्री, वृद्धके पढ़ने तथा मनन करने योग्य है। ४८ पृष्ठोंका मूल्य ।)

४—जमसेदजी नसरवानजी ताता

लेखक—स्वर्गीय पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी बी० ए०

श्रीमान् धनकुबेर ताताकी जीवनी बड़ी ओजस्विनी भाषामें लिखी गयी है। इस पुस्तकको यू० पी० और बिहारके शिक्षा-विभागने अपने पारितोषिक-वितरणमें रखा है। सचित्र पुस्तकका मूल्य केवल ।)

६—सेवासदन

लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीयुत 'प्रेमचन्द'

हिन्दी संसारका सबसे बड़ा गौरवशाली सामाजिक उपन्यास। यह हिन्दीका सर्वोत्तम, सुप्रसिद्ध और मौलिक उपन्यास है। पतित-सुधारका बड़ा अनोखा यन्त्र, हिन्दू-समाजकी कुरीतियाँ जैसे अनमेल विवाह, त्यौहारोंपर वेश्यानृत्य और उसका कुपरिणाम, पश्चिमीय ढङ्गपर स्त्री-शिक्षाका कुफल, पतित आत्माओंके प्रति घृणाका भाव इत्यादि विषयोंपर लेखकने अपनी प्रतिभाकी वह छटा दिखायी है कि पढ़नेसे ही आनन्द प्राप्त हो सकता है। इसके कई संस्करण हो चुके हैं। मूल्य २॥) सजिल्दका २॥।)

७—संस्कृत कवियोंकी अनोखी सूझ

लेखक—पं० जनार्दन भट्ट एम० ए०

संस्कृतके विविध विषयोंके अनोखे भावपूर्ण उत्तमोत्तम श्लोकोंका हिन्दी शब्दार्थ सहित संग्रह। यह ऐसी खूबीसे लिखा गया है कि साधारण मनुष्य भी पढ़कर आनन्द उठा सकें। व्याख्यानदाताओं, रसिकों और विद्यार्थियोंके बड़े कामकी पुस्तक है। इसके कई संस्करण हो चुके हैं। मूल्य ।≈)

८—लोकरहस्य

लेखक—उपन्यास-सम्राट श्रीयुत बंकिमचन्द्र चटर्जी

यह "हास्यरस" पूर्ण ग्रन्थ है। इसमें वर्तमान धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक त्रुटियोंका बड़े मजेदार भाव और भाषामें चित्र खींचा गया है। पढ़िये और समझ-समझकर हँसिये। कई विषयोंपर ऐसी शिक्षा मिलेगी कि आप आश्चर्यमें पड़ जायंगे। अनुवाद भी हिन्दीके एक प्रसिद्ध और अनुभवी हास्यरसके लेखककी लेखनीका है। मूल्य ॥≈)

९—खाद

लेखक—श्रीयुक्त मुख्तारसिंह वकील

कृषिके लिये खाद सबसे बड़ा आवश्यक पदार्थ है। बिना खादके पैदावारमें कोई उन्नति नहीं की जा सकती। पुस्तकमें खादोंके भेद तथा किन अन्नोंके लिये कौनसी खादकी आवश्यकता होती है इनका बड़ी उत्तमतासे वर्णन किया गया है। इसे प्रत्येक कृषक तथा कृषिप्रेमियोंको अवश्य रखना चाहिये। मूल्य सचित्र और सजिल्दका १)

१०—प्रेम-पूर्णिमा

लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीयुक्त "प्रेमचन्द"

इसमें १५ अनूठी कहानियां हैं। प्रत्येक कहानी अपने ढङ्गकी निराली है। ज़मींदारोंके अत्याचारका विचित्र दिग्दर्शन कराया गया है। भाषा और भावकी उत्कृष्टताका अनूठा संग्रह देखना हो तो इस ग्रन्थको अवश्य पढ़िये। बीच बीचमें चित्र भी दिये गये हैं। सुन्दर मनोहर सजिल्दका मूल्य २)

११—आरोग्यसाधन

लेखक—म० गांधी

बस, इसे महात्माजीका प्रसाद समझिये यदि आप अपने शरीर और मनको प्राकृत रीतिके अनुसार रखकर जीवनको सुखमय बनाना चाहते हैं, तो महात्माजीके अनुभव किये हुए तरीकेसे रहकर अपने जीवनको सरल, सादा और स्वाभाविक बनाइये और रोगमुक्त होकर आनन्दसे जीवन बिताइये। पुस्तक कई बार छप चुकी। १३० पृष्ठकी पुस्तकका दाम केवल ।~)

१२—चित्रमय श्रीकृष्ण

इस पुस्तकमें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी लीलाओंका वर्णन चित्रोंमें किया गया है। पुस्तकमें एक तरफ कथाका सार और दूसरी तरफ उसीका चित्र दिया गया है, जिससे चित्रोंको देखकर ही सब कथा मालूम हो जाती है। पुस्तकमें ४९ चित्र हैं। सब चित्र तिनरंगे हैं। पुस्तक कई बार छप चुकी है। सुन्दर मनोहर सजिल्दका मूल्य हिन्दी ४) बंगला ४)

१३—भाव चित्रावली

चित्रकार—श्रीधीरेन्द्रनाथ गंगोपाध्याय

इस पुस्तकमें एक ही सज्जनके विविध भावोंके १०० रंगीन और सादे चित्र दिखलाये गये हैं। आप देखेंगे और आश्चर्य करेंगे। गंगोपाध्याय महाशयने अपनी इस कलासे समाज और देशकी बहुतसी कुरीतियोंपर बड़ा जबरदस्त कटाक्ष किया है। किताबके देखनेसे मनोरञ्जनके साथ साथ आपको शिक्षा भी मिलेगी। सजिल्द पुस्तकका मूल्य ४)

१४—राम बादशाहके छः हुक्मनामे

स्वामी रामतीर्थजीके छः व्याख्यानोंका संग्रह है। स्वामीजीके ओजस्वी और शिक्षाप्रद भाषणोंके बारेमें क्या कहना है जिसने अमरीका, जापान और यूरोपमें हलचल मचा दी थी। व्याख्यानोंको पढ़कर प्रत्येक भारतवासीको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। स्वामीजीकी भिन्न भिन्न अवस्थाओंके तीन चित्र भी हैं। मूल्य १)

१५—मैं नीरोग हूं या रोगी

लेखक—प्रसिद्ध जलचिकित्सक डाक्टर लुईकूने

यदि आप स्वस्थ रहकर आनन्दसे जीवन बिताना, डाक्टरों, वैद्यों और हकीमोंके फन्देसे छुटकारा पाना, प्राकृतिक नियमानुसार रहकर सुख तथा शान्तिका उपभोग करना चाहते हैं तो इस पुस्तकको अवश्य पढ़िये। मूल्य ।)

१६—रामकी उपासना

लेखक—प्रो० रामदास गौड़ एम० ए०

स्वामी रामतीर्थसे कौन हिन्दू परिचित न होगा? उनके उपदेशोंका श्रवण और मनन लोग बड़ी ही श्रद्धाभक्तिसे करते हैं। प्रस्तुत पुस्तक उपासनाके विषयमें लिखी गयी है। उपासनाकी आवश्यकता, उसके प्रकार, परब्रह्ममें मनको लीन करना, सच्ची उपासनाके बाधक और सहायक, सच्चे उपासकोंके लक्षण आदि बातें बड़ी ही मार्मिक और सरल भाषामें लिखी गयी हैं। कवरपर उपासनाकी मुद्रामें स्वामी रामतीर्थजीका एक चित्र भी है। ४८ पृष्ठोंकी पुस्तकका मूल्य।)

१७—बच्चोंकी रक्षा

लेखक—डाक्टर लुईकूने

इस पुस्तकमें डाक्टर साहबने यह दिखलाया है कि बच्चोंकी रक्षाकी उचित रीति क्या है और उसके अनुसार न चलनेसे हम अपनी सन्ततिको किस गर्तमें गिरा रहे हैं। स्त्रियोंके लिये विशेष उपयोगी है। विद्यालयोंकी पाठ्य पुस्तकोंमें रखने योग्य है। सुन्दर एण्टिक कागजके ४८ पृष्ठोंकी पुस्तकका मूल्य।=)

१८ प्रेमाश्रम

लेखक—उपन्यास सम्राट् श्रीयुत "प्रेमचन्द"

पुस्तक क्या है, वर्तमान दशाका सच्चा चित्र है। किसानोंकी दुर्दशा, जमींदारोंके अत्याचार,पुलिसके कारनामे, वकीलों और डाक्टरोंका नैतिक पतन, धर्मके ढोंगमें सरलहृदया स्त्रियोंका फंस जाना, स्वार्थसिद्धिके कलुषित मार्ग, देशसेवियोंके कष्ट और उनके पवित्र चरित्र,सच्ची शिक्षाके लाभ,गृहस्थीके झंझट, साध्वी स्त्रियोंका चरित्र,सरकारी नौकरीका दुष्परिणाम आदि भावोंको लेखकने ऐसी खूबीसे चित्रित किया है कि पढ़ते ही बनता है। इसके कई संस्करण हो चुके। पृष्ठसंख्या ६५० मनोहर जिल्दसहितका दाम ३॥)

२५—तिब्बतमें तीन वर्ष

लेखक—जापानी यात्री श्रीइकाई कावागुची

यह प्रसिद्ध यात्री कावागुचीकी तिब्बत यात्राका बड़ा भयानक विवरण है। इसमें ऐसी ऐसी घटनाओंका विवरण मिलेगा जिनका ध्यान करनेसे ही कलेजा कांप उठता है, साथ ही ऐसे रमणीक स्थानोंका चित्र भी आपके सामने आयेगा जिनको पढ़कर आनन्दके सागरमें लहराने लगेंगे। दार्जिलिङ्ग, नेपाल, हिमालयकी बर्फीली चोटियां, मानसरोवरका रमणीय दृश्य तथा कैलास आदिका सविस्तर वर्णन पढ़कर ही आप आनन्दलाभ करेंगे। इसके सिवा वहांके धार्मिक,सामाजिक, राजनैतिक अवस्थाओंका भी पूर्ण हाल विदित हो जायगा। ५२५ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य २॥) सजिल्द ३)

२६—संग्राम

लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीयुक्त "प्रेमचन्द"

प्रेमचन्दजीकी कुशल लेखनी द्वारा यह 'संग्राम' नाटक लिखा गया है। यों तो उनके उपन्यासोंमें ही नाटककासा मजा आता है; फिर उनका लिखा नाटक कैसा होगा यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। प्रस्तुत नाटकमें मनोभावोंका जो चित्र खींचा गया है वह आप पढ़कर ही अंदाजा लगा सकेंगे। बढ़िया एण्टिक कागजपर प्रायः २७८ पृष्ठोंमें छपी पुस्तकका मूल्य केवल १।)

२७—चरित्रहीन

लेखक—श्रीयुक्त शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय

यह शरत् बाबूके बङ्गला चरित्रहीनका अनुवाद है। युवा पुरुष बिना देख-रेखके कैसे चरित्रहीन हो जाते हैं,सच्चा स्वामिभक्त सेवक कैसे दुर्व्यसनके पञ्जोंसे अपने मालिकको छुड़ा सकता है, पति-पत्नीका प्रेम, पतिव्रताकी पति-सेवा और विधवा स्त्रियां दुष्टोंके षड़्यन्त्रमें पड़कर, कैसे धर्मकी रक्षा करती हैं, इन बातोंका पूर्ण रूपसे दिग्दर्शन कराया गया है। पृष्ठ ६६४जिल्दसहित मूल्य ३॥

२८—राजनीति-विज्ञान

लेखक—सुखसम्पति राय भण्डारी

यह मुनरो स्मिथ,रो,ब्लंशले,गार्नर आदि पाश्चात्य राजनीति-विशारदोंके अमूल्य ग्रन्थोंके आधारपर लिखी गयी है। इसमें राज-नीति-शास्त्र,अर्थशास्त्र,समाजशास्त्र,इकरार-सिद्धांत, शक्तिसिद्धान्त राज्य और राष्ट्रकी व्याख्या आदि राजनीतिके गूढ़ रहस्योंका प्रतिपादन बड़ी खूबीसे किया गया है। प्रत्येक राजनीति-प्रेमी पाठकको एक प्रति पास रखनी चाहिये। राष्ट्रीय स्कूलोंकी पाठ्य पुस्तकोंमें रखी जाने योग्य है। २१६ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य १।≶)

२९—आकृति-निदान

लेखक—डा० लूईकूने, स० रामदास गौड़ एम० ए०

यह पुस्तक लूईकूनेकी अङ्गरेजी पुस्तक 'The Science of Facial Expression' का अनुवाद है। इसमें लगभग ६० चित्र दिये गये हैं,चित्रोंको देखनेसे ही बीमारीका हाल मालूम हो जाता है। सब बीमारियोंकी प्राकृतिक चिकित्सा-विधि भी बतलायी गयी है। चित्रोंका गौरसे अवलोकन किया जाय तो मनुष्य एक मामूली डाकृर बन सकता है। सुन्दर जिल्द सहितका मूल्य १॥)

३०—वीर केशरी शिवाजी

ले० पं० नन्दकुमारदेव शर्म्मा

हिन्दू-धर्मको विधर्मियोंके अत्याचारसे बचानेवाले 'वीर-केशरी शिवाजी' की इतनी बड़ी जीवनी और नहीं है। औरंगजेबकी कुटिल चालोंको शिवाजीने कैसे मात किया, दगाबाज अफजल खांका कैसे अन्त किया, कैसे मराठा-राज्य स्थापित किया, इन सब विषयोंका बड़ी सरल किन्तु ओजस्विनी भाषामें वर्णन किया है। लगभग ७५० पृष्ठ हैं, रेशमी जिल्दका मूल्य ४।)

३१—भारतीय वीरता

लेखक—श्रीरजनीकांत गुप्त

इसमें भारतके गौरवकी रक्षा करनेवाले महाराणा प्रताप, शिवाजी, गुरुगोविन्द सिंह, रणजीत सिंह, रानी दुर्गावती, पद्मावती, किरणदेवी आदि ४० महापुरुषों और स्त्रियोंके जीवनचरित्र अनेकों चित्र देकर सरल भाषामें लिखें गये हैं। पुस्तक बालक बालिकाओंके बड़े कामकी है, कई कन्या-पाठशालाओंमें पाठ्य पुस्तक है। मूल्य १॥) सजिल्द २) कई बार छप चुकी।

३२—रागिणी

अनुवादक—पं० हरिभाऊ उपाध्याय

रागिणी है तो उपन्यास, परन्तु इसे केवल उपन्यास कहनेसे सन्तोष नहीं होता। इसको तर्क-शास्त्र और दर्शन-शास्त्र भी कह सकते हैं। इसमें जिज्ञासुओंके लिये जिज्ञासा, प्रेमियोंके लिये प्रेम और अशान्त जनोंके लिये विमल शान्ति मिलती है। वैराग्य खण्डका पाठ करनेसे मोह-माया और जगतकी उलझनोंसे निकलकर मनमें स्वभावतः ही भक्तिभव उठने लगता है। लेखककी लेखनशैली, अनुवादककी भाषाशैली बड़ी सुन्दर है। ८०० पृष्ठकी सजिल्द पुस्तकका मूल्य रेशमी जि० ४॥)

३३—प्रेम-पचीसी

ले० उपन्यास-सम्राट् श्रीयुक्त प्रेमचन्दजी

इसमें शिक्षाप्रद मनोरञ्जक २५ अनूठी कहानियां हैं। प्रत्येक कहानी अपने अपने ढङ्गकी निराली है। कोई मनोरञ्जन करती है, तो कोई सामाजिक कुरीतियोंका चित्र चित्रण करती है। कोई कहानी ऐसी नहीं है जो धार्मिक अथवा नैतिक प्रकाश न डालती हो। पढ़नेमें इतना मन लगता है कि कितना भी चिंतित कोई क्यों न हो, प्रफुल्लित हो जाता है। भाषा बहुत सरल है। कई बार छप चुकी। मूल्य मनोहर जिल्द सहित २॥)

३४—व्यावहारिक पत्र-बोध

ले०—पं० लक्ष्मणप्रसाद चतुर्वेदी

व्यापारिक पत्रोंका लिखना, उत्तर देना, प्रार्थना-पत्रोंका बाकायदा लिखना तथा आफिसियल पत्रोंका जवाब आदि दैनिक जीवनमें काम आनेवाली बातें इसके द्वारा सहज ही सीखी जा सकती है। कई कमरशियल कालेजोंमें पाठ्य पुस्तक है, अगर विद्यालयोंमें भी पढ़ायी जाय तो लड़कोंका बड़ा उपकार हो। लगभग १२५ पृष्ठकी पुस्तककी कीमत ॥✓) है।

३५—रूसका पञ्चायती-राज्य

ले० प्रोफेसर प्राणनाथ विद्यालंकार

जिस बोलशेविज्मकी धूम इस समय संसारमें मची हुई है, जिन बोलशेविकोंका नाम सुनकर सारा यूरोप काँप रहा है उसीका यह इतिहास है। जारके अत्याचारोंसे पीड़ित प्रजा जारको गद्दीसे हटानेमें कैसे समर्थ हुई, तथा अन्य प्रजातन्त्र-राज्यकी महत्ताका बहुत ही सुन्दर वर्णन है। प्रजाकी मर्जी बिना राज्य नहीं चल सकता और रूस ऐसा प्रबल राष्ट्र भी उलट दिया जा सकता है, इत्यादि बातें बड़े सरल और नवीन तरीकेसे लिखी गयी हैं। लेनिनकी बुद्धिमत्ता और कार्यशैली पढ़कर दांतोंतले अंगुली दबानी पड़ती है। १२६ पृ०की पुस्तकका मूल्य केवल ॥)

३६—टालस्टायकी कहानियां

सं० श्रीयुक्त प्रेमचन्दजी

यह महात्मा टालस्टायकी संसार-प्रसिद्ध कहानियोंका हिन्दी अनुवाद है। इन कहानियोंके जोड़की कहानियां सिवा उपनिषदोंके और कहीं नहीं हैं। इनकी भाषा जितनी सरल, भाव उतने ही गम्भीर हैं। विद्यालयोंमें छात्रोंको यदि पढ़ाई जाय तो उनका बड़ा उपकार हो। किसानोंको भी इनके पाठसे बड़ा लाभ होगा। मूल्य केवल १। रक्खा गया है।

३७ – सुयेनच्वांग (का भारत-भ्रमण)

ले० श्रीयुक्त जगन्मोहन वर्मा

इसके अवलोकनसे १३ सौ वर्ष पुराने भारतका दृश्य आंखोंके आगे अङ्कित हो जायगा। उस समयकी सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक अवस्थाओंको जानकर आप मुग्ध हो जायेंगे। यहांका सुशासन, विद्याका प्रचार, आर्थिक अवस्था, अनेक जातियों और धर्मोंके होते हुए आपसका प्रेम इत्यादि तथा यहांके प्राकृतिक दृश्योंका वर्णन बड़ा ही मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद है। इसमें सुयेनच्वांगकी आंखों देखी बातें हैं। मूल्य १।)

३८ – मौलाना रूम और उनका काव्य

ले० श्रीजगदीशचन्द्र वाचस्पति

फारसी भाषामें "मसनवी रूम" बड़ा ही उत्कृष्ट ग्रन्थ है। उसीमेंकी कुछ भावपूर्ण मनोरञ्जक कहानियां, शुभ उपदेश, फारसीके कुछ चुने हुए पद्य और उनका सरल भावपूर्ण अर्थ बड़े सुन्दर ढङ्गसे दिया गया है। लेखकने मौलाना रूमके विचारोंका अन्य ग्रन्थोंसे बड़ी खूबीसे मुकाबिला किया है। हिन्दी-भाषामें यह अपने ढङ्गकी एक ही आलोचनात्मक पुस्तक है। इसमें लेखककी जीवनी भी है। एण्टिक कागजके २२० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य केवल १।≈)

३९ — आधुनिक भारत

ले०—श्रीप्यारेलाल गांगराडे

अङ्गरेजी अमलदारीके पूर्व भारतके व्यापारिक, व्यावसायिक, शिक्षा और आर्थिक अवस्थाकी क्या दशा थी और आज उसकी अवनति कैसे हुई है, इसी विषयको प्रामाणिक आधारपर लेखकने लिखा है। इस पुस्तकमें शिक्षा, स्वराज्य, धन, धर्म, स्वास्थ्य इत्यादिकी हीनता सरकारी रिपोर्टों तथा विद्वान् अङ्गरेजोंकी रायसे प्रकट की गयी है। प्रत्येक देशभक्तको इस पुस्तकको पढ़ना चाहिये। एण्टिक कागजकी १४४ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य ॥।)

३७ - ह्युयेनच्वांग (का भारत-भ्रमण)

ले० श्रीयुत जगन्मोहन वर्मा

इसके अवलोकनसे १३ सौ वर्ष पुराने भारतका दृश्य आंखोंके आगे अङ्कित हो जायगा। उस समयकी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक अवस्थाओंको जानकर आप मुग्ध हो जायेंगे। यहांका सुशासन, विद्याका प्रचार, आर्थिक अवस्था, अनेक जातियों और धर्मोंके होते हुए आपसका प्रेम इत्यादि तथा यहांके प्राकृतिक दृश्योंका वर्णन बड़ा ही मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद है। इसमें ह्युयेनच्वांगकी आंखों देखी बातें हैं। मूल्य १।)

३८ - मौलाना रूम और उनका काव्य

ले० श्रीजगदीशचन्द्र वाचस्पति

फारसी भाषामें "मसनवी रूम" बड़ा ही उत्कृष्ट ग्रन्थ है। उसीमेंकी कुछ भावपूर्ण मनोरञ्जक कहानियां, शुभ उपदेश, फारसीके कुछ चुने हुए पद्य और उनका सरल भावपूर्ण अर्थ बड़े सुन्दर ढङ्गसे दिया गया है। लेखकने मौलाना रूमके विचारोंका अन्य ग्रन्थोंसे बड़ी खूबीसे मुकाबिला किया है। हिन्दी-भाषामें यह अपने ढङ्गकी एक ही आलोचनात्मक पुस्तक है। इसमें लेखककी जीवनी भी है। एण्टिक कागजके २२० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य केवल १।=)

३९—आधुनिक भारत

ले०—श्रीप्यारेलाल गांगराड़े

अङ्गरेजी अमलदारीके पूर्व भारतके व्यापारिक, व्यावसायिक, शिक्षा और आर्थिक अवस्थाकी क्या दशा थी और आज उसकी अवनति कैसे हुई है, इसी विषयको प्रामाणिक आधारपर लेखकने लिखा है। इस पुस्तकमें शिक्षा, स्वराज्य, धन, धर्म, स्वास्थ्य इत्यादिकी हीनता सरकारी रिपोर्टों तथा विद्वान् अङ्गरेजोंकी रायसे प्रकट की गयी है। प्रत्येक देशभक्तको इस पुस्तकको पढ़ना चाहिये। एण्टिक कागजकी १४४ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य ॥।)

४०—हिन्दी साहित्य विमर्श

ले०—श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी बी० ए०

यह पुस्तक क्या है, हिन्दी-साहित्यका जीता-जागता चित्र है। हिन्दी भाषाका सुन्दर आलोचनात्मक इतिहास, भाषाका विकास तथा उसकी स्थिरताके सम्बन्धमें पश्चिमीय तथा पूर्वीय विद्वानोंकी क्या राय है, उसका हिन्दी भाषाके इस विकास के समयमें कहांतक पालन होता है, हिन्दी भाषाके आधुनिक गद्य-पद्य लेखकों तथा शुभचिन्तकोंने कहांतक अपना कर्त्तव्य पालन किया है, और ब्रजभाषा तथा खड़ा बोलीके विवादास्पद विषयोंकी बड़ी विस्तृत आलोचना की गयी है। यह कई हाई-स्कूलोंमें तथा साहित्य सम्मेलनकी पाठ्य पुस्तकोंमें नियत की गई है। मूल्य १।)

४१ – धनकुबेर कारनेगी

ले० श्री अशर्फी मिश्र बी० ए०

यदि आप यह जानना चाहते हैं कि किस प्रकार एक गरीबके घरका लड़का अपने उत्साह और बाहुबलसे करोड़पती हो गया और फिर अपने अतुल धन और सम्पत्तिको परोपकारमें लगाकर अक्षय कीर्ति लाभ की, तो इस जीवनीको अवश्य पढ़िये और अपने बच्चोंको पढ़ाइये। पौने दो सौ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य १)

४२—चरित्र चिन्तन

लेखक—पं० छविनाथ पाण्डेय बी० ए० एल० एल० बी०

प्रस्तुत पुस्तक प्रसिद्ध अङ्गरेजी पुस्तक (Out for Character) "आउट फार करेक्टर" के लेखोंके आधारपर बिलकुल भारतीय ढङ्गसे लिखी गई है। पुस्तकका प्रधान विषय चरित्र-सुधार है। प्रत्यक्ष प्रमाणों द्वारा दिखलाया गया है कि ब्रह्मचर्य और चरित्रके नियमोंका पालन करनेसे क्या लाभ होता है। इसमें कुल २२ निबन्ध हैं जो एकसे एक बढ़कर हैं। मूल्य १।)

४३—रामचरितमानसकी भूमिका

लेखक—श्रीरामदास गौड़ एम०ए०

यह पुस्तक क्या है, गुसांई तुलसीदासकृत रामचरितमानस-की कुञ्जी है। इसके पांच खण्ड हैं। १ ले खण्डमें "शिक्षा और व्याकरण" है। २ रे खण्डमें "मानस शङ्कावली" है। इसमें शङ्काओंके समाधान प्रश्न और उत्तरके रूपमें दिये गये हैं। ३ रे खण्डमें "मानस-कथा-कौमुदी" है। इसमें कथाओंका संग्रह उसका पूरा विवरण देकर किया गया है। ४ थे खण्डमें "मानस-शब्द-सरोवर" है। शब्दोंका कोष दिया गया है। ५ वें खण्डमें तुलसीदासजीकी जीवनी गुसांईजीका चित्र और उनके हाथकी लिखी रामायणको फोटो दी गई है। पुस्तक बड़ी ही उपयोगी बनी है। मूल्य ३) रेशमी जिल्द ३॥)

४४—उषाकाल

लेखक—पण्डित हरिनारायण आपटे

इस उपन्यासमें वीरकेशरी शिवाजीके जन्मके पहलेकी मराठा जातिकी अवस्था तथा हिन्दुओंकी मनोवृत्तिका इतना उत्तम दिग्दर्शन कराया गया है कि पढ़ते ही बनता है। यह दो भागोंमें ११९० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य ४॥) रेशमी सुनहली जिल्द ६॥)

४५—सभ्यता-महारोग उसका निदान व निवारण

अ० श्रीसुन्दरलालजी

अङ्गरेजी साहित्यके विख्यात लेखक एडवर्ड कारपेण्टरकी प्रसिद्ध पुस्तक सिविलिजेशन, इट्स काज एण्ड क्योरका अनुवाद है। इसमें आजकलकी "सभ्यता" का बहुत ही अच्छा विवेचन किया गया है। हम लोग जिस सभ्यताके पीछे चल रहे हैं, उससे हमारा मानसिक, शारीरिक और नैतिक पतन हो रहा है। हमारी जो प्राचीन सभ्यता थी वास्तविक सभ्यता थी और उसीसे हमारा उद्धार हो सकता है। ३३० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य २॥)

४७—स्वास्थ्य-साधन

लेखक—अध्यापक श्रीरामदास गौड़ एम० ए०

इस ग्रंथमें रोगकी मीमांसा, रोगीके लक्षण, मिथ्योपचार-विमर्श और प्राकृतोपचार-दिग्दर्शन इत्यादि विषयकी व्याख्या बड़ी ही विद्वत्तासे की गयी है।

यह ग्रन्थ प्रत्येक गृहस्थको अपने घरमें रखना चाहिये। प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें राष्ट्रीय भाषा हिन्दीमें यह ग्रन्थ बिलकुल नया और बहुत ही विचारपूर्ण लिखा गया है। पौने पांच सौ पृष्ठकी कई चित्रोंसे विभूषित पुस्तकका मूल्य ३)। सजिल्द ३॥)

४८—वाणिज्य या व्यवसाय-प्रवेशिका

लेखक—श्रीशिवसहाय चतुर्वेदी

प्रस्तुत पुस्तकमें व्यवसाय आरम्भ करनेके प्रारम्भिक ज्ञानको प्रायः सभी बातें बड़ी सरल भाषामें बतायी गयी हैं। व्यवसाय करनेवाले प्रत्येक मनुष्यको इस पुस्तकका अवश्य अध्ययन करना चाहिये। प्रायः पौने दो सौ पृष्ठोंकी पुस्तकका दाम ॥=)

४९—उर्दू कविता कलाप

उर्दूके शेरोंमें जो लालित्य और मनोहरता है प्रायः सभी पढ़े-लिखोंके दिलोंको खींच लेती है और आनन्दके हिलोरे हृदयमें तरङ्ग मारने लगते हैं। हम अपने उन हिन्दी-पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ जो फारसी लिपिसे अनभिज्ञ हैं, किन्तु उर्दू-कवियोंकी कविताका रसास्वादन करना चाहते हैं यह उर्दूके प्रसिद्ध-प्रसिद्ध शायरोंके पद्योंका चुना हुआ संग्रह भेंट करते हैं। मूल्य ॥=)

४३—रामचरितमानसकी भूमिका

लेखक—श्रीरामदास गौड़ एम०ए०

यह पुस्तक क्या है, गुसांई तुलसीदासकृत रामचरितमानस की कुञ्जी है। इसके पांच खण्ड हैं। १ ले खण्डमें "शिक्षा और व्याकरण" है। २ रे खण्डमें "मानस शङ्कावली" है। इसमें शङ्काओंके समाधान प्रश्न और उत्तरके रूपमें दिये गये हैं। ३ रे खण्डमें "मानस-कथा-कौमुदी" है। इसमें कथाओंका संग्रह उसका पूरा विवरण देकर किया गया है। ४ थे खण्डमें "मानस-शब्द-सरोवर" है। शब्दोंका कोष दिया गया है। ५ वें खण्डमें तुलसीदासजीकी जीवनी गुसांईजीका चित्र और उनके हाथकी लिखी रामायणकी फोटो दी गई है। पुस्तक बड़ी ही उपयोगी बनी है। मूल्य २) रेशमी जिल्द ३॥)

४४—उषाकाल

लेखक—पण्डित हरिनारायण आपटे

इस उपन्यासमें वीरकेशरी शिवाजीके जन्मके पहलेकी मराठा जातिकी अवस्था तथा हिन्दुओंकी मनोवृत्तिका इतना उत्तम दिग्दर्शन कराया गया है कि पढ़ते ही बनता है। यह दो भागोंमें ११४० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य ४॥) रेशमी सुनहली जिल्द ६॥)

४५—सभ्यता-महारोग उसका निदान व निवारण

अ० श्रीसुन्दरलालजी

अङ्गरेजी साहित्यके विख्यात लेखक एडवर्ड कारपेन्टरकी प्रसिद्ध पुस्तक सिविलिजेशन, इट्स काज एण्ड क्योरका अनुवाद है। इसमें आजकलकी "सभ्यता" का बहुत ही अच्छा विवेचन किया गया है। हम लोग जिस सभ्यताके पीछे लग रहे हैं, उससे हमारा मानसिक, शारीरिक और नैतिक पतन हो रहा है। हमारी जो प्राचीन सभ्यता थी वास्तविक सभ्यता थी और उसीसे हमारा उद्धार हो सकता है। ३३० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य २)

४७—स्वास्थ्य-साधन

लेखक—अध्यापक श्रीरामदास गौड़ एम० ए०

इस ग्रंथमें रोगकी मीमांसा, रोगीके लक्षण, मिथ्योपचार-विमर्श और प्राकृतोपचार-दिग्दर्शन इत्यादि विषयकी व्याख्या बड़ी ही विद्वत्तासे की गयी है।

यह ग्रन्थ प्रत्येक गृहस्थको अपने घरमें रखना चाहिये। प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें राष्ट्रीय भाषा हिन्दीमें यह ग्रन्थ बिलकुल नया और बहुत ही विचारपूर्ण लिखा गया है। पौने पांच सौ पृष्ठकी कई चित्रोंसे विभूषित पुस्तकका मूल्य ३) सजिल्द ३॥)

४८—वाणिज्य या व्यवसाय-प्रवेशिका

लेखक—श्रीशिवसहाय चतुर्वेदी

प्रस्तुत पुस्तकमें व्यवसाय आरम्भ करनेके प्रारम्भिक ज्ञानको प्रायः सभी बातें बड़ी सरल भाषामें बतायी गयी हैं। व्यवसाय करनेवाले प्रत्येक मनुष्यको इस पुस्तकका अवश्य अध्ययन करना चाहिये। प्रायः पौने दो सौ पृष्ठोंकी पुस्तकका दाम ॥=)

४९—उर्दू कविता कलाप

उर्दूके शेरोंमें जो लालित्य और मनोहरता है प्रायः सभी पढ़े-लिखोंके दिलोंको खींच लेती है और आनन्दके हिलोरे हृदय-में तरङ्ग मारने लगते हैं। हम अपने उन हिन्दी-पाठकोंके मनो-रञ्जनार्थ जो फारसी लिपिसे अनभिज्ञ हैं, किन्तु उर्दू-कवियोंकी कविताका रसास्वादन करना चाहते हैं यह उर्दूके प्रसिद्ध-प्रसिद्ध शायरोंके पद्योंका चुना हुआ संग्रह भेंट करते हैं। मूल्य ॥=)

५०—प्राकृतिक सौन्दर्य

लेखक—डा० कल्याणसिंह शेखावत बी० ए० ।

सर जान लवकके The Beauty of Nature का रूपान्तर, जिन्होंने लवक महोदयके ग्रन्थोंका अवलोकन किया है, वे भली-भांति जानते हैं कि उनकी लेखनीमें कितना माधुर्य तथा सरलता भरी हुई है। उनकी वर्तमान पुस्तक भी आपकी एक बड़ी ही अलौकिक रचना है। आपने इस पुस्तकमें प्रकृतिकी शोभाका वर्णन इस खूबीके साथ किया है कि पढ़ते ही बनता है। मूल्य २)

५१—चित्रमय हरिश्चन्द्र

इस पुस्तकमें सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्रकी कथा चित्रोंमें वर्णन की गयी है। पुस्तकमें एक तरफ कथाका सार दिया गया है और दूसरी तरफ उसी घटनाका चित्र दिया गया है जिससे चित्रोंको देखकर ही सम्पूर्ण कथा समझमें आ सकती है। पुस्तकमें २० इकरंगे चित्र हैं, पुस्तकके ऊपर तिरंगा मनोहर चित्र दिया गया है। पुस्तक बालकों और स्त्रियोंके बड़े कामकी है। मूल्य ॥) सजिल्द १।)

५२—लेखांजलि

लेखक—पं० महावीर प्रसादजी द्विवेदी ।

लेखकसे ही इस पुस्तककी उपयोगिताका पता जान लीजिये। यह पण्डितजीके लिखे अनेकों अद्भुत अद्भुत निबन्धोंका संग्रह है। संग्रह इतना सुन्दर और उपयोगी है कि हर एक व्यक्तिके लिये बड़े कामका हो गया है। भाषा बड़ी ही सरल व सरस है। कई एक लेख ऐसे हैं जिनसे बड़ी विचित्र बातें मालूम हो जाती हैं। कोई भी निबन्ध आरम्भ करके बिना समाप्त किये आप पुस्तक हाथसे रख नहीं सकते। पुस्तक पठनीय है। मूल्य सुन्दर सजिल्दका १॥) मात्र।